श्री श्री रामकृष्ण कथामृत - 5

प्रथम खण्ड

श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग

प्रथम परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण का बलराम-मन्दिर में भक्तसंगे प्रेमानन्द में नृत्य)

रात्रि के 8/9 बजे होंगे— दोलयात्रा (होली) के सात दिन पश्चात्। राम, मनोमोहन, राखाल, नित्यगोपाल प्रभृति भक्तगण उन्हें घेरे हुए हैं। सब ही हरिनाम-संकीर्त्तन करते-करते मस्त हो गए हैं। कई एक भक्तों की भावावस्था हुई है। नित्यगोपाल का भावावस्था में वक्ष:स्थल रक्तिमवर्ण का हो गया है। सब के बैठ जाने पर मास्टर (श्री म) ने ठाकुर को प्रणाम किया। देखा— राखाल लेटे हुए हैं, भावाविष्ट और बाह्यज्ञानशून्य। ठाकुर उनकी छाती पर हाथ रखकर 'शान्त हो, शान्त हो' कह रहे हैं। राखाल की यह द्वितीय भावावस्था है। वे कलकत्ता में पिता के साथ रहते हैं, बीच-बीच में ठाकुर के दर्शन करने चले जाते हैं। इसी समय ये कुछ दिन श्यामपुकुर में विद्यासागर महाशय के स्कूल में पढ़े थे।

ठाकुर ने मास्टर से दक्षिणेश्वर में कहा था, ''मैं कलकत्ता में बलराम के घर जाऊँगा, तुम आना।'' इसलिए वे उनका दर्शन करने आए हैं।

28वाँ फाल्गुन, चैत्र कृष्णा-सप्तमी; शनिवार, 11 मार्च, 1882 ईसवी। श्रीयुक्त बलराम ठाकुर को निमन्त्रण देकर लाए हैं।

अब भक्त बरामदे में बैठकर प्रसाद पा रहे हैं। बलराम दासवत् खड़े हुए हैं। देखने से लगता नहीं कि वे इस घर के कर्त्ता हैं।

मास्टर अभी-अभी नए-नए आने लगे हैं। अभी तक उनका भक्तों के संग आलाप नहीं हुआ। केवल दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र के संग आलाप हुआ था।

•

(सर्वधर्म-समन्वय)

(11 मार्च, 1882 के) कई दिन बाद ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में शिव-मन्दिर की सीढ़ियों के ऊपर भावाविष्ट हुए बैठे हैं। समय 4/5 का होगा। मास्टर पास बैठे हैं।

कुछ देर पहले ठाकुर अपने कमरे में फर्श पर बिछे हुए बिस्तरे के ऊपर विश्राम कर रहे थे। अब भी ठाकुर की सेवा के लिए सर्वदा पास में कोई नहीं रहता। हृदय के जाने के पश्चात् ठाकुर को कष्ट होता है। कलकत्ता से मास्टर के आने पर वे उनके साथ बातें करते-करते श्री राधाकान्त के मन्दिर के सम्मुखस्थ शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर आकर बैठे थे। किन्तु मन्दिर को देखकर हठात् भावाविष्ट हो गए हैं।

ठाकुर जगन्माता के संग बात कर रहे हैं। कह रहे हैं,

''माँ, सब ही कहते हैं— मेरी घड़ी ठीक चलती है। ईसाई, ब्रह्मज्ञानी, हिन्दू, मुसलमान सब ही कहते हैं, मेरा धर्म ठीक है। किन्तु माँ, किसी की भी तो घड़ी ठीक नहीं चलती। तुम्हें कौन ठीक समझ सकेगा? फिर भी व्याकुल होकर पुकारने पर तुम्हारी कृपा होने से सब पथों द्वारा तुम्हारे पास पहुँचा जाता है। माँ, ईसाई गिरजे में तुम्हें कैसे पुकारते हैं, एक बार दिखाइयो! किन्तु माँ, भीतर जाने पर लोग क्या कहेंगे? यदि कुछ हँगामा हो? और फिर (मुझे) यदि काली-मन्दिर में घुसने न दें? तो फिर गिरजे के द्वार से ही दिखाइयो।''

•

(भक्तों के संग भजनानन्द में— राखाल-प्रेम— 'प्रेम की सुरा')

और एक दिन (मार्च, 1882 में ही) ठाकुर अपने कमरे में छोटी खाट के ऊपर बैठे हैं। आनन्दमयमूर्त्ति — हास्यवदन। श्रीयुक्त कालीकृष्ण* मास्टर के संग आए।

कालीकृष्ण जानते नहीं कि उनको उनके मित्र कहाँ पर ले जा रहे हैं। बन्धु ने उन्हें बताया था, 'कलार की दुकान पर चलना है तो मेरे संग आओ; वहाँ पर एक मटका भर मद है।' मास्टर ने आकर प्रणाम के बाद ठाकुर को वही समस्त निवेदन कर दिया जो मित्र (कालीकृष्ण) से कहा था। ठाकुर भी हँसने लगे।

ठाकुर बोले,

"भजनानन्द, ब्रह्मानन्द, ये आनन्द ही सुरा हैं— प्रेम की सुरा। मानव-जीवन का उद्देश्य है ईश्वर में प्रेम होना, ईश्वर को प्यार करना। भक्ति ही सार है। ज्ञान-विचार करके ईश्वर को जानना बड़ा ही कठिन है।"

यह कहकर ठाकुर गाना गाने लगे—

के जाने काली केमन, षड़्दर्शने ना पाय दर्शन॥
आत्मारामेर आत्मा काली, प्रमाण प्रणवेर मतन।
से जे घटे घटे विराज करे इच्छामयीर इच्छा जेमन॥

कालीर उदरे ब्रह्माण्ड-भाण्ड प्रकाण्ड ता बुझो केमन।
जे मन शिव बुझे छेन कालीर मर्म अन्य केवा जाने तेमन॥

मूलाधारे सहस्रारे सदा योगी करे मनन।
काली पद्म-बने हंससने हंसीरूपे करे रमण॥

प्रसाद भासे लोके हासे सन्तरणे सिन्धु तरण।
आमार बुझेछे मन प्राण बुझे ना; धरबे शशी होये बामन॥

[भावार्थ— कौन जानता है काली कैसी हैं, षड्दर्शनों में भी उनका दर्शन नहीं मिलता। आत्माराम की आत्मा काली है, प्रमाण प्रणव की न्यायीं हैं। इच्छामयी की जैसी इच्छा, वे घट-घट में विराजती हैं। माँ काली के पेट में प्रकाण्ड

---

* कालीकृष्ण भट्टाचार्य बाद में विद्यासागर के कॉलिज में संस्कृत भाषा और साहित्य के प्रधान अध्यापक हो गए थे।

ब्रह्माण्ड-बर्तन जानते हो कैसे है! महाकाल शिव ने काली का मर्म जैसा जान लिया है, वैसा मर्म अन्य और कौन जान सकता है! मूलाधार और सहस्रार में योगी सदा मनन करते हैं। काली पद्मबन में हंस के सहित हंसी रूप में रमण करती हैं। प्रसाद तैर रहा है, जगत हँसता है कि वह तैरकर सिन्धु पार करना चाहता है। मेरे प्राण तो समझ गए हैं किन्तु मन नहीं समझा है। वह (मन) बौना होकर शशि को पकड़ना चाहता है।]

ठाकुर श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं,

''ईश्वर को प्यार करना— यही है जीवन का उद्देश्य; जैसे वृन्दावन के गोप-गोपियाँ, राखालगण श्रीकृष्ण को प्यार करते थे। जब श्रीकृष्ण मथुरा में चले गए, तो राखालगण उनके विरह में रोते फिरते थे।''

यह कहकर ठाकुर ऊर्ध्व दृष्टि करके गाना गाने लगे—

देखे एलाम एक नवीन राखाल,
नवीन तरुर डाल धरे, नवीन वत्स कोले करे,
बोले, कोथा रे भाई कानाई।
आबार, का बोई कानाई बेरोय ना रे
बोले कोथा रे भाई, आर नयन-जले भेसे जाय।

[भावार्थ— एक नए राखाल को देखकर आया हूँ। वह नूतन तरु की डाली पकड़े हुए है, नूतन वत्स को गोद में लिए कहता है, ''कहाँ हो रे भाई कन्हाई ?'' फिर 'क' मात्र ही कह पाता है, 'कन्हाई' पूरा कह नहीं पाता। कहता है, ''कहाँ हो रे भाई ?'' और उसके नयनों से जल बह रहा है।]

ठाकुर का प्रेम भरा गाना सुनकर मास्टर के चक्षुओं से जल आ रहा है।

●

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण भक्त-मन्दिर में— प्राणकृष्ण के घर)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ता में शुभागमन किया है। श्रीयुक्त प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय के श्यामपुकुर के मकान के दोतल के बैठकखाने में भक्तों के संग बैठे हैं। अभी-अभी भक्तों के संग बैठकर प्रसाद पाया है। आज है **2 अप्रैल, 1882 ईसवी**, रविवार— 21वाँ चैत्र, 1288, चैत्र शुक्ला चतुर्दशी; अब प्राय: 1/2 बजे होंगे। काप्तेन उसी मुहल्ले में ही रहते हैं; ठाकुर की इच्छा है कि इस घर में विश्राम करने के पश्चात् काप्तेन के घर में उनके दर्शन करके, 'कमलकुटीर' नामक गृह में श्रीयुक्त केशवसेन के दर्शन करते हुए जाएँगे। वे प्राणकृष्ण के बैठकखाने में बैठे हैं; राम, मनोमोहन, केदार, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र (सुरेन्द्र के भाई), राखाल, बलराम, मास्टर प्रभृति भक्तगण उपस्थित हैं।

मुहल्ले के बाबू और अन्यान्य निमन्त्रित व्यक्ति भी हैं, ठाकुर क्या कहते हैं— सुनने के लिए सब जन ही उत्सुक हैं।

ठाकुर कहते हैं,

"ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। यही जगत उनका ऐश्वर्य है।

"किन्तु ऐश्वर्य देखकर ही सब भूल जाते हैं, जिनका ऐश्वर्य है उनको नहीं खोजते। कामिनी-काञ्चन भोग करने सब जाते हैं; किन्तु दु:ख, अशान्ति ही अधिक है। संसार है मानो विशालाक्षी का द, नौका के दह (भंवर) में एक बार पड़ने पर फिर रक्षा नहीं। कंटीली झाड़ी की भाँति एक छूटता है तो और एक फँस जाता है। गोरख-धन्धे में एक बार घुसने पर निकलना मुश्किल है। मनुष्य मानो जल-भुन जाता है।"

एक भक्त— अब उपाय?

(उपाय— साधुसंग और प्रार्थना)

श्रीरामकृष्ण— उपाय है— साधुसंग और प्रार्थना।

"वैद्य के पास बिना गए रोग ठीक नहीं होता। साधुसंग एक दिन

करने से नहीं होता, सर्वदा ही आवश्यक है; रोग लगा ही रहता है और फिर वैद्य के पास बिना रहे नाड़ी-ज्ञान नहीं होता, साथ-साथ घूमना पड़ता है। तभी पता लगता है कि कौन-सी कफ की नाड़ी है, कौन-सी पित्त की नाड़ी है।''

भक्त— साधुसंग से क्या उपकार होता है?

श्रीरामकृष्ण— ईश्वर पर अनुराग हो जाता है। उनके ऊपर प्यार हो जाता है। व्याकुलता के बिना आए कुछ भी नहीं होता। साधुसंग करते-करते ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल हो जाता है। जैसे घर में किसी को असुख हो तो सर्वदा ही मन व्याकुल हुआ रहता है— किसी प्रकार रोगी चंगा हो जाए। और यदि किसी का कर्म छूट जाता है, वह व्यक्ति जैसे ऑफिस से ऑफिस में घूमता-फिरता है, उसी प्रकार व्याकुल होना चाहिए। यदि किसी ऑफिस में कह देते हैं कि कोई जगह खाली नहीं है, फिर दोबारा अगले दिन आकर पूछता है, आज क्या कोई जगह खाली हुई है?

''और एक उपाय है— व्याकुल होकर प्रार्थना। वे जो अपने जन हैं, उन्हें कहना चाहिए, 'तुम कैसे हो, दर्शन दो, दर्शन देना ही होगा— तुमने मुझे पैदा क्यों किया है?' सिखों ने कहा था कि ईश्वर दयामय हैं। मैंने उनसे कहा था, 'दयामय क्यों कहूँ? उन्होंने हमारी सृष्टि की है, जिससे हमारा मंगल होता है। यदि वे वही करते हैं तो फिर उसमें क्या आश्चर्य! माँ-बाप बच्चे का पालन करते हैं, तो उसमें फिर दया ही क्या? वह तो करना ही होगा, इसीलिए तो उनसे जोर करके प्रार्थना करनी चाहिए। वे तो अपनी माँ, अपने बाप हैं! लड़का यदि खाना-पीना छोड़ देता है, बाप-माँ तीन वर्ष पूर्व ही उसका हिस्सा छोड़ देते हैं। और फिर जब लड़का पैसे माँगता है, और पुनः पुनः कहता है, 'माँ, तेरे दोनों पाँवों में पड़ता हूँ, मुझे दो पैसे दे', तब माँ लाचार होकर, उसकी व्याकुलता देखकर, पैसे फेंक देती है।

''साधुसंग करने से और भी एक उपकार होता है। सत्-असत् विचार आता है। सत्— नित्य पदार्थ अर्थात् ईश्वर। असत् अर्थात् अनित्य। असत्य पथ पर मन के जाते ही विचार करना चाहिए। ज्यों ही हाथी दूसरे के केले के वृक्ष को खाने के लिए सूण्ड बढ़ाता है, त्यों ही महावत अंकुश मारता है।''

पड़ोसी— महाशय, पाप की वृद्धि क्यों होती है ?

श्रीरामकृष्ण— उनके जगत में सब तरह के (लोग) हैं। साधु लोग भी उन्होंने बनाए हैं, दुष्ट लोग भी उन्होंने किए हैं। सद्बुद्धि वे ही देते हैं, असद्बुद्धि भी वे ही देते हैं।

(पापी का दायित्व और कर्मफल)

पड़ोसी— तब तो फिर पाप करने पर हमारे ऊपर कोई दायित्व नहीं रहता ?

श्रीरामकृष्ण— ईश्वर का जो नियम है कि पाप करने पर उसका फल तो पाना ही पड़ेगा। मिर्च खाने पर उसकी झाल नहीं लगेगी ? सेजोबाबू (मथुरबाबू) ने अपनी युवावस्था में बहुत कुछ किया था, तभी मृत्यु के समय कई तरह के रोग हुए। छोटी आयु में इतना पता नहीं लगता। कालीबाड़ी में भोग पकाने के लिए बहुत–सी सुन्दर लकड़ी होती है। गीली लकड़ी पहले तो अच्छी जलती है, तब अन्दर जो इतना जल है पता भी नहीं लगता। लकड़ी के जलकर खत्म होने के समय जितना जल होता है, पीछे खिसककर आ जाता है और फच–फच करके चूल्हे की आग बुझ जाती है। इसीलिए काम, क्रोध, लोभ इत्यादि से सावधान होना चाहिए। देखो ना, हनुमान ने क्रोध करके लंका जला दी थी। बाद में याद आया, अशोक वन में सीता हैं। तब छटपटाने लगा, सीता को कहीं कुछ हो न जाए।

पड़ोसी— तो फिर ईश्वर ने दुष्ट लोग क्यों बनाए हैं ?

श्रीरामकृष्ण— उनकी इच्छा, उनकी लीला। उनकी माया में विद्या भी है, अविद्या भी है। अन्धकार का प्रयोजन है, अन्धकार रहने पर आलोक की और भी महिमा प्रकाशित होती है। काम, क्रोध, लोभ चाहे बुरी चीजें हैं, फिर उन्होंने दी हैं क्यों ? क्योंकि महत् लोग तैयार करेंगे। इन्द्रियाँ जीतने पर महत् होता है। जितेन्द्रिय क्या नहीं कर सकता ? ईश्वर–लाभ तक उनकी कृपा से कर सकता है। और फिर दूसरी ओर देखो, काम से उनकी सृष्टि–लीला चल रही है।

"दुष्ट जनों का भी प्रयोजन है। एक तालुके (इलाके) की प्रजा बहुत ही

दुर्दान्त (उद्दण्ड) हो गई थी। तब गोलक चौधुरी को भेजा गया। उसके नाम से प्रजाजन काँपने लगे— इतना कठोर शासन! सब कुछ ही आवश्यक है। सीता जी ने कहा, 'राम! अयोध्या में यदि सब ही अट्टालिकाएँ होतीं तो अच्छा होता, बहुत से घर देख रही हूँ भग्न और पुराने हैं।' राम ने कहा, 'सीता! सब ही मकान सुन्दर रहें तो मिस्त्री लोग क्या करेंगे'? *(सब का हास्य)*। ईश्वर ने सब तरह का रचा है— अच्छे वृक्ष, विष वृक्ष, और फिर आगाछा (मोथा) भी बनाया है। जानवरों में भले-मन्दे सब हैं— बाघ, सिंह, साँप सब हैं।''

(गृहस्थ में भी ईश्वर-लाभ होता है— सब की ही मुक्ति होगी)

पड़ोसी— महाशय, गृहस्थ में रहते हुए क्या भगवान को पाया जाता है?

श्रीरामकृष्ण— अवश्य पाया जाता है। तो भी जो कहा था, साधुसंग और सर्वदा प्रार्थना करनी चाहिए। उनके निकट क्रन्दन करना चाहिए। मन का समस्त मैल धुल जाने पर उनका दर्शन होता है। मन तो मानो मिट्टी-पुती लोहे की सूई है— ईश्वर चुम्बक-पत्थर है, मिट्टी बिना गए चुम्बक के संग योग नहीं होता। रोते-रोते सूई की मिट्टी धुल जाती है; सूई की मिट्टी अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, पापबुद्धि, विषयबुद्धि। मिट्टी धुलते ही सूई को चुम्बक खींच लेगा— अर्थात् ईश्वर-दर्शन होगा। चित्तशुद्धि होने पर उनकी प्राप्ति होती है। ज्वर हुआ है, शरीर में बहुत-सा विष है, उसमें कुनीन से क्या काम होगा? गृहस्थ में होगा क्यों नहीं? वही— साधुसंग, रो-रो कर प्रार्थना, बीच-बीच में निर्जन में वास। थोड़ा-सा घेरा न लगाया जाए तो फुटपाथ के पौधों को गाय-बकरी खा लेती हैं।

पड़ोसी— जो गृहस्थ में हैं, तब तो फिर उनका भी होगा?

श्रीरामकृष्ण— सब की ही मुक्ति होगी। तो भी गुरु के उपदेश के अनुसार चलना चाहिए। टेढ़े रास्ते पर जाने से लौटने में कष्ट होगा। मुक्ति बहुत देर में होती है। सम्भव है इस जन्म में भी नहीं हुई, और शायद अनेक जन्मों के पश्चात् हुई। जनकादि ने गृहस्थ में भी कर्म किया था। ईश्वर को सिर पर रखकर काम करते थे। नर्तकी जैसे सिर पर बर्तन रखकर नाचती है। और,

देखा नहीं, पश्चिम (उत्तर प्रदेश, पंजाब) की औरतें— सिर पर पानी का घड़ा है, हँसते-हँसते बातें करते-करते जाती हैं।

पड़ोसी— आप ने गुरु के उपदेश के लिए कहा है। गुरु कैसे पाऊँ?

श्रीरामकृष्ण— जो कोई भी मनुष्य गुरु नहीं हो सकता। बहादुरी काठ स्वयं भी तरती चली जाती है, बहुत-से जीव जन्तु भी उस पर चढ़ कर जा सकते हैं। हाबाते काठ (हल्की लकड़ी) के ऊपर चढ़ने पर लकड़ी भी डूब जाती है, जो चढ़ता है वह भी डूब जाता है। इसीलिए ईश्वर युग-युग में लोकशिक्षा के लिए गुरुरूप में अवतीर्ण होते हैं। सच्चिदानन्द ही गुरु हैं।

"ज्ञान किसे कहते हैं, और मैं कौन हूँ? ईश्वर ही कर्ता और सब अकर्ता— इसका नाम है ज्ञान। मैं अकर्ता हूँ। उनके हाथ का यन्त्र हूँ। इसीलिए माँ से कहता हूँ, 'माँ! तुम यन्त्री, मैं यन्त्र; तुम घरणी, मैं घर; मैं गाड़ी, तुम इञ्जीनियर; जैसे चलाती हो, वैसे ही चलता हूँ; जैसे करवाती हो, वैसे ही करता हूँ; जैसे बुलवाती हो, वैसे ही बोलता हूँ; नाहं नाहं, तुंहुं तुंहुं। (मैं नहीं, मैं नहीं; तू ही, तू ही)।"

●

तृतीय परिच्छेद

(कमलकुटीर में श्रीरामकृष्ण और श्रीयुक्त केशवसेन)

श्रीरामकृष्ण काप्तेन के घर होकर श्रीयुक्त केशवसेन के 'कमलकुटीर' नामक मकान में आए हैं। साथ में राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, मास्टर प्रभृति अनेक भक्त हैं। सब द्वितल के हॉल कमरे में बैठे। श्रीयुक्त प्रताप मजुमदार और श्रीयुक्त त्रैलोक्य प्रभृति ब्राह्म भक्तगण भी उपस्थित हैं।

ठाकुर श्रीयुक्त केशव को बहुत प्यार करते हैं। जब बेलघर के बाग में वे सशिष्य साधन-भजन कर रहे थे, अर्थात् 1875 ईसवी में माघोत्सव के पश्चात्— उन्हीं दिनों में एक दिन ठाकुर बाग में जाकर उनसे मिले थे। संग में उनका भाञ्जा हृदयराम था। बेलघर के इसी बाग में (ठाकुर ने)

उनसे कहा था,

"तुम्हारी ही पूँछ झड़ गई है; अर्थात् तुम सब त्याग करके गृहस्थ के बाहर भी रह सकते हो, और फिर गृहस्थी में भी रह सकते हो; जैसे मेंढक के बच्चे की पूँछ झड़ जाने पर वह जल में भी रह सकता है, और जमीन पर भी रह सकता है।"

फिर दक्षिणेश्वर, कमलकुटीर, ब्राह्मसमाज इत्यादि स्थानों पर अनेक बार ठाकुर ने बातों ही बातों में उनको उपदेश दिया था,

"नाना पथों द्वारा, नाना धर्मों से ईश्वर-लाभ हो सकता है; बीच-बीच में निर्जन में साधन-भजन करके भक्ति-लाभ करके गृहस्थ में रहा जाता है; जनकादि ब्रह्मज्ञान-लाभ करके संसार में थे; व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए; तभी वे दर्शन देते हैं; तुम जो करते हो— निराकार-साधन, वह बहुत अच्छा है। ब्रह्मज्ञान होने पर ठीक-ठीक बोध हो जाएगा; ईश्वर सत्य और सब अनित्य; ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या। सनातन हिन्दू धर्म में साकार-निराकार दोनों ही मानते हैं; नाना प्रकार से ईश्वर की पूजा करते हैं; शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर। रोशनचौकी वालों में से एक व्यक्ति केवल पौं को पकड़कर ही बजाता है चाहे उसकी बंसी के सात छिद्र हैं; किन्तु और एक व्यक्ति है, उसके भी सात छिद्र हैं, वह नाना रागरागिणियाँ बजाता है।

"तुम लोग साकार नहीं मानते, तो उसमें कुछ क्षति नहीं है; निराकार में निष्ठा रहने से ही हुआ। फिर भी साकारवादियों का आकर्षण मात्र ही लोगे। माँ कहकर उन्हें पुकारने से भक्ति-प्रेम और भी बढ़ता है। कभी दास्य, कभी सख्य, कभी वात्सल्य, कभी मधुर भाव। कोई कामना नहीं है, उनको प्यार करता हूँ; यही तो सुन्दर है। इसका नाम है अहेतुकी भक्ति। रुपया-पैसा, मान-इज्जत कुछ भी नहीं चाहता; केवल तुम्हारे पादपद्मों में भक्ति चाहिए। वेद, पुराण, तन्त्रों में एक ईश्वर की ही बात है और उनकी लीला की कथा है; ज्ञान-भक्ति दोनों ही हैं। गृहस्थ में दासीवत् रहोगे; दासी सब काम

करती है, किन्तु उसका मन पड़ा रहता है देश में। मालिक के बच्चों को पालती है; कहती है, 'मेरा हरि, मेरा राम', किन्तु जानती है लड़का मेरा नहीं है। तुम लोग जो निर्जन में साधन कर रहे हो, यह बहुत अच्छा है; उनकी कृपा होगी। राजा जनक ने निर्जन में कितना साधन किया था! साधन करने पर ही तो संसार में निर्लिप्त हुआ जाता है।

"तुम सब के उपकार के लिए वक्तृता देते हो, किन्तु ईश्वर-लाभ करके, ईश्वर-दर्शन करके वक्तृता देने पर उपकार होता है। उनका आदेश बिना पाए लोकशिक्षा देने पर उपकार नहीं होता। ईश्वर-प्राप्ति बिना किए उनका आदेश नहीं मिलता। ईश्वर-प्राप्ति जो हो गई है उसका लक्षण है— बालकवत्, जड़वत्, उन्मादवत्, पिशाचवत् हो जाता है; जैसे शुकदेवादि। चैतन्यदेव कभी बालकवत्, कभी उन्मादी की भाँति नृत्य किया करते थे— हँसते, रोते, नाचते, गाते। पुरीधाम में जब थे, तब अनेक समय जड़समाधि में रहते।"

(श्रीयुक्त केशव की हिन्दू धर्म के ऊपर उत्तरोत्तर श्रद्धा)

इसी प्रकार बहुत स्थानों पर श्रीयुक्त केशवचन्द्र सेन को श्रीरामकृष्ण ने बातों ही बातों में नाना उपदेश दिए थे। बेलघर के बाग में **प्रथम दर्शन के पश्चात्** केशव ने 28 मार्च, 1875 ईसवी, रविवार 'मिरर' संवादपत्र में लिखा था;*—

"हमने थोड़े दिन हुए, दक्षिणेश्वर के परमहंस रामकृष्ण का बेलघर के

---

* We met not long ago Paramahansa of Dakshineswar, and were charmed by the depth, penetration and simplicity of his spirit. The never-ceasing metaphors and analogies in which he indulged, are most of them as apt as they are beautiful. The characteristics of his mind are the very opposite to those of Pandit Dayananda Saraswati, the former being too gentle, tender and contemplative, as the later is sturdy, masculine and polemical.

— Indian Mirror, 28th March, 1875.

Hinduism must have in it a deep source of beauty, truth and goodness to inspire such men as these.

— Sunday Mirror, 28th March, 1875.

बाग में दर्शन किया है। उनकी गम्भीरता, अन्तर्दृष्टि, बालक-स्वभाव देखकर हम मुग्ध हो गए हैं। वे शान्त स्वभाव, कोमल प्रकृति हैं, और देखने से बोध होता है कि सर्वदा योग में रहते हैं। अब हमें बोध हो रहा है कि हिन्दू धर्म का गम्भीरतम प्रदेश अनुसन्धान कर लेने पर कितना सौन्दर्य, सत्य और साधुत्व दिखाई दे जाता है। वैसा न हो तो परमहंस की न्यायीं ईश्वरीय भाव में भावित योगीपुरुष कैसे दिखाई देता?''

1876 जनवरी में फिर माघोत्सव आ गया, उन्होंने टाऊनहॉल में वक्तृता दी; विषय था— ब्राह्मधर्म और हमने क्या सीखा है—(Our Faith and Experiences)— उसमें भी हिन्दुधर्म के सौन्दर्य की बातें* अनेक कही थीं।

श्रीरामकृष्ण उनको जैसा प्यार करते थे, केशव भी उनकी वैसी ही भक्ति करते थे। प्राय: प्रतिवर्ष ब्राह्मोत्सव के समय और अन्यान्य समय भी केशव दक्षिणेश्वर जाया करते और उनको कमलकुटीर में ले आया करते। कभी-कभी एकाकी कमलकुटीर के द्वितल के उपासना-कक्ष में उन्हें परम अन्तरंग भाव से खूब भक्ति में भरपूर होकर ले जाते और एकान्त में ईश्वर की पूजा करके आनन्द मनाते।

केशव 1879 के भाद्रोत्सव के समय श्रीरामकृष्ण को फिर बेलघर के तपोवन में निमन्त्रण करके ले गए थे। 15 सितम्बर, सोमवार। और फिर 21 सितम्बर को कमलकुटीर के उत्सव में योगदान करने ले गए। इसी समय श्रीरामकृष्ण के समाधिस्थ होने पर ब्राह्मभक्तों के संग उनका फोटो लिया गया था। ठाकुर खड़े हुए, समाधिस्थ हैं। हृदय ने पकड़ रखा है।

---

* If the ancient Vedic Aryan is gratefully honoured today for having taught us the deep truth of the Nirakar or the bodiless Spirit, the same loyal homage is due to the later Puranic Hindu for having taught us religious feelings in all their breadth and depth.

"In the days of the Vedas and the Vedanta, India was all communion (Yoga). In the days of the Puranas, India was all emotion (bhakti). The highest and best feelings of religion have been cultivated under the guardianship of specific divinities"

— 'Our Faith and Experiences'
Lectures delivered in January, 1876.

22 अक्तूबर छठी कार्त्तिक, महाष्टमी— नवमी के दिन केशव ने दक्षिणेश्वर जाकर उनका दर्शन किया।

1879, 29 अक्तूबर, बुधवार; 13वीं कार्त्तिक 1286, कोजागर पूर्णिमा को दोपहर एक बजे के समय केशव भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर फिर गए थे। स्टीमर के साथ एक बजरा, छः नौकाएँ, दो छोटी डिंगिएँ (नावें) थीं, प्रायः 80 जन भक्त थे। साथ में थी पताका, पुष्प-पल्लव, खोल-करताल और भेरी। हृदय स्वागत करके केशव को स्टीमर से लाए थे गाना गाते-गाते— 'सुरधनीर तीरे हरि बोले के, बुझि प्रेममाता निताई एसेछे!'* ब्राह्मभक्त भी पञ्चवटी से कीर्त्तन करते-करते उनके संग आने लगे। 'सच्चिदानन्द विग्रह रूपानन्द घन!' उनके मध्य ठाकुर बीच-बीच में समाधिस्थ हो रहे हैं। इसी दिन सन्ध्या के बाद बाँधाघाट पर पूर्ण चन्द्र के आलोक में केशव ने उपासना की थी।

उपासना के पश्चात् ठाकुर ने कहा, तुम लोग बोलो, 'ब्रह्म-आत्मा-भगवान';'ब्रह्म-माया-जीव-जगत';'भागवत्-भक्त-भगवान'। केशवादि ब्राह्मभक्त उसी चाँदनी में भागीरथी के तीर पर समस्वर से श्रीरामकृष्ण के संग-संग वे सब मन्त्र भक्ति से भरकर उच्चारण करने लगे। फिर श्रीरामकृष्ण ने जब कहा, "बोलो 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव';" तब केशव ने आनन्द में हँसते-हँसते कहा, "महाशय, अब इतनी दूर नहीं; 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव' यदि हम कहते हैं तो लोग हमें कट्टर कहेंगे!" श्रीरामकृष्ण भी हँसने लगे और बोले, "ठीक, तो तुम लोग (ब्राह्मभक्त) जहाँ तक बोल सकते हो, वही बोलो।"

कुछ दिन पश्चात् **13 नवम्बर** 28 कार्त्तिक, **1879** कालीपूजा के बाद राम, मनोमोहन, गोपाल मित्र ने दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के प्रथम दर्शन किए।

1880 ईसवी में एक दिन गर्मियों में राम और मनोमोहन कमलकुटीर में केशव को मिलने आए थे। उनकी यह जानने की बड़ी इच्छा थी कि केशवबाबू ठाकुर को कैसा समझते हैं। उन्होंने बताया कि केशवबाबू से पूछने पर उन्होंने कहा था, "दक्षिणेश्वर के परमहंस सामान्य नहीं हैं, इस

---

* गंगा के तीर पर कौन हरि बोल रहा है, लगता है प्रेम में मस्त निताई आ रहा है।

समय पृथ्वी पर इतना बड़ा व्यक्ति कोई नहीं है। ये इतने सुन्दर, इतने असाधारण व्यक्ति हैं कि इनको अति सावधानी से बहुत सम्भालकर रखना चाहिए; देखभाल न करने से इनकी देह नहीं रहेगी; जैसे सुन्दर मूल्यवान वस्तु को ग्लास-केस (काँच के बक्से) में रखना चाहिए।''*

इसके कुछ दिन पश्चात् **1881 माघोत्सव** के समय जनवरी में केशव श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने दक्षिणेश्वर गए। तब राम, मनोमोहन, जयगोपाल सेन प्रभृति अनेक जन उपस्थित थे।

1803 शक, पहला श्रावण 1288 (बंगला) साल, शुक्रवार, **15 जुलाई, 1881**, केशव फिर श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर से स्टीमर में ले गए।

1881 नवम्बर में मनोमोहन के घर जब ठाकुर ने शुभागमन किया और उत्सव हुआ तब भी केशव निमन्त्रित थे और उन्होंने उत्सव में योगदान किया था। श्रीयुक्त त्रैलोक्य प्रभृति ने गाना गाया था।

1881 दिसम्बर में राजेन्द्रमित्र के घर श्रीरामकृष्ण निमन्त्रित होकर आए। श्रीयुक्त केशव भी गए थे। यह घर ठनठने बेचु चैटर्जी स्ट्रीट में है। राजेन्द्र राम और मनोमोहन के मौसा जी थे। राजेन्द्र ने राम, मनोमोहन, ब्राह्मभक्त राजमोहन और केशव को भी संवाद दिया था और निमन्त्रित किया था।

केशव को जब खबर मिली थी तब वे भाई अघोरनाथ के शोक में अशौच ग्रहण किए हुए थे। प्रचारक भाई अघोर ने 24वीं अग्रहायण 8 दिसम्बर, बृहस्पतिवार को लखनऊ में देहत्याग किया था। सबने सोचा

---

* पहला ज्येष्ठ, 14 मई, 1875, श्रीरामकृष्ण फिर दोबारा बेलघर के बाग में आए। Bharat Ashram Libel Suit समाप्त हुआ 30 अप्रैल, 1875, 18वाँ वैशाख 1282 (बंगला) साल। केशव तब तक उसी बाग में थे।

1880, श्रीरामकृष्ण कामारपुकुर में आठ मास तक थे, 3री मार्च, बुधवार, 21वीं फाल्गुन से 10 अक्तूबर, 1880, 25वीं आश्विन तक। इस बीच शिहोड़, श्यामबाजार के कथापाठ में कीर्त्तनानन्द हुआ। लौटते समय कोतुलपुर के सज्जनों के घर सप्तमी-पूजा में आरती देखी। रास्ते में केशव के भेजे ब्राह्मभक्त के संग मेल हुआ। केशव चिन्तित थे, ठाकुर को कई महीने देखा नहीं, इसलिए।

था कि शायद केशव आ नहीं सकेंगे। केशव संवाद पाकर बोले, ''यह कैसी बात! परमहंस महाशय आएँगे और मैं नहीं जाऊँगा! अवश्य जाऊँगा। अशौच है, इसलिए मैं अलग जगह पर खाऊँगा।''

मनोमोहन की माता ठाकुराणी (दादी) परमभक्तिमती श्रीमती श्यामासुन्दरी देवी ने ठाकुर के लिए खाना परोसा था। राम खाने के समय खड़े थे। जिस दिन राजेन्द्र के घर श्रीरामकृष्ण ने शुभागमन किया था, उसी दिन अपराह्न में सुरेन्द्र ने उनको लेकर चीना बाजार में उनकी फोटो खिंचवाई थी— ठाकुर समाधिस्थ खड़े हैं।

उत्सव के दिन महेन्द्र गोस्वामी ने भागवत-पाठ किया था।

1882 जनवरी माघोत्सव के समय सिमूलिया ब्राह्मसमाज में उत्सव हुआ। ज्ञान चौधुरी के मकान पर, दालान में और आँगन में उपासना और कीर्त्तन हुआ। श्रीरामकृष्ण और केशव निमन्त्रित होकर उपस्थित थे। इसी स्थान पर ठाकुर ने नरेन्द्र का गाना प्रथम सुना था और उन्हें दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा था।

1882 ईसवी, 23 फरवरी; 12वीं फाल्गुन, बृहस्पतिवार को केशव भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण के दक्षिणेश्वर में फिर दर्शन करने आए। संग में थे जोसेफ कुक, अमरीकन पादरी मिस पिगट। ब्राह्मभक्तों के साथ केशव ठाकुर को स्टीमर में ले गए। कुक साहब ने श्रीरामकृष्ण की समाधि की अवस्था देखी। श्रीयुक्त नगेन्द्र इसी जहाज में उपस्थित थे। उनके मुख से समस्त सुनकर मास्टर ने तीन दिन के मध्य दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के प्रथम दर्शन किए थे।

दो मास पश्चात् अप्रैल में श्रीरामकृष्ण कमलकुटीर में केशव को देखने आए। उसी का ही थोड़ा-सा विवरण इस परिच्छेद में दिया गया है।

(श्रीरामकृष्ण का केशव के प्रति स्नेह और जगन्माता के निकट नारियल डाबचीनी की मन्नत)

आज कमलकुटीर की उसी बैठक में ठाकुर श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग बैठे हैं— 2 अप्रैल, 1882; 21वाँ चैत्र, रविवार, 1288 (बंगला साल);

समय 5 अपराह्न। केशव अन्दर के कमरे में थे, उन्हें संवाद दिया गया। उन्होंने कुरता-चादर पहनकर आकर प्रणाम किया। उनके भक्त बन्धु कालीनाथ वसु पीड़ित थे, उन्हें देखने जा रहे थे। ठाकुर के आ जाने से केशव का फिर जाना नहीं हुआ। ठाकुर कहते हैं—

''तुम्हें बहुत से काम हैं, फिर समाचार पत्रों में भी तो लिखना होता है; वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) जाने का अवसर नहीं है, जभी मैं ही तुम्हें देखने के लिए आ गया हूँ। तुम्हारा असुख सुनकर मैंने डाबचीनी (कच्चा नारियल और चीनी) की मन्नत मानी थी; माँ से कहा था, 'माँ! केशव को यदि कुछ हो जाएगा, तो फिर मैं कलकत्ता जाने पर किसके संग बातें करूँगा'।''

श्रीयुक्त प्रताप आदि ब्राह्मभक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण ने बहुत-सी बातें कीं। निकट मास्टर को बैठे हुए देखकर वे (ठाकुर) केशव से कहते हैं, ''ये क्यों वहाँ (दक्षिणेश्वर) नहीं जाते? ज़रा पूछो तो भाई; इतना ये कहते हैं, स्त्री-पुत्रों के ऊपर मन नहीं है!''

मास्टर केवल एक मास से कुछ ही अधिक दिन से ठाकुर के पास यातायात करने लगे हैं। पिछले दिनों जाने में कुछ दिन विलम्ब हुआ है। तभी ठाकुर इस प्रकार कह रहे हैं। ठाकुर ने कह दिया था, आने में देर हो, तो मुझे पत्र लिख दोगे।

ब्राह्मभक्तों ने श्रीयुक्त सामाध्यायी को दिखलाकर ठाकुर से कहा, ये पण्डित हैं, वेदादि शास्त्र खूब पढ़े हुए हैं।

ठाकुर कहते हैं— हाँ, इन की आँखों के द्वारा इनके भीतर का दिखाई दे रहा है; जैसे काँच के दरवाजे में से कमरे के भीतर की वस्तुएँ दिखाई देती हैं।

श्रीयुक्त त्रैलोक्य गाना गा रहे है। गाना गाते-गाते ही सन्ध्या का दीपक जलाया गया, गाना चलता रहा। गाना सुनते-सुनते ठाकुर हठात् खड़े हो गए— और माँ का नाम करते-करते समाधिस्थ! कुछ प्रकृतिस्थ होने पर निज ही नृत्य करते-करते गाना गाने लगे—

सुरा पान करि ना आमि, सुधा खाइ जय काली बोले,
मन-माताले माताल करे, मद-माताले माताल बोले।

गुरु दत्त बीज लये प्रवृत्ति ताय मशला दिये,
ज्ञान शुँड़ीते चोयाय भाँटी, पान करे मोर मन माताले।

मूल मन्त्र यन्त्र भरा, शोधन करि बोले तारा,
प्रसाद बोले एमन सुरा पेले चतुर्वर्ग मेले।

[भावार्थ— मैं (सुरा) नहीं पीता। 'जय काली' बोलकर अमृत-सुधा पीता हूँ। मन जब मस्त हो जाता है तो मतवाला बना देता है। शराब के नशे में शराबी कहलाता है। गुरु द्वारा दिया गया बीज लेकर, उसमें प्रवृत्ति का मसाला लगाकर ज्ञान कलवार द्वारा भट्ठी में चुआकर (टपका कर) पीने से मेरा मन मतवाला हो रहा है। यन्त्र (शरीर) को मूलमन्त्र से भर कर मैं 'तारा' बोलकर उसको शुद्ध करता हूँ। प्रसाद कहते हैं, ऐसी सुरा पीने पर चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) मिल जाते हैं।]

श्रीयुक्त केशव को ठाकुर स्नेहपूर्ण नयनों से देखते हैं। जाने कितने अपने जन हैं; और जैसे डर रहे हैं कि केशव फिर किसी और के न हो जाएँ; अर्थात् संसार के न हो जाएँ! उनकी ओर देखकर फिर दूसरा गाना गाने लगे—

कथा बोलते डराई; ना बोललेओ डराई।
मने सन्द होय; पाछे तोमा धने हाराई हाराई॥
आमरा जानि जे मन तोर; दिलाम तोके, सेइ मन्तोर।
एखन मन तोर।
आमरा जे मंत्रे विपदेते तरि तराई॥

[भावार्थ— बात कहते भी डरती हूँ, न कहने से भी डरती हूँ। (हे राधे!) मन में भय हो रहा है कि कहीं पीछे तुम्हारे-जैसे धन को खो न बैठूँ। हम जानती हैं कि तुम्हारा जैसा मन है, वही मन्त्र तुम्हें दिया है; हम ने तो जिस मन्त्र से विपद में नाव पार की है, वही मन्त्र तुम्हारा हुआ, अब आगे तुम्हारी इच्छा।]

"मैं जानता हूँ कि जो तेरा मन है; तुम्हें मैंने वही मन्त्र दिया है; अब तेरा मन (तुम्हारी इच्छा) जो हो।" अर्थात् सब त्याग करके भगवान को पुकारो। वे ही सत्य हैं और सब अनित्य; उनको प्राप्त नहीं किया तो कुछ भी नहीं हुआ! यही है महामन्त्र।

(ठाकुर) फिर बैठकर भक्तों के साथ बातें करते हैं।

उन्हें जलपान करवाने का उद्योग होने लगा। हॉल कमरे के एक तरफ एक ब्राह्मभक्त पियानो बजा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण सहास्यवदन हैं;

बालक की न्यायीं पियानो के निकट जाकर खड़े हुए देख रहे हैं। थोड़े समय पश्चात् ही अन्त:पुर में उनको ले जाया गया। जलपान करेंगे। और स्त्रियाँ भी प्रणाम करेंगी।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण की जलसेवा हो गई। अब वे गाड़ी पर चढ़े। सब ब्राह्मभक्त गाड़ी के निकट खड़े हैं। कमलकुटीर से गाड़ी दक्षिणेश्वर-मन्दिर की ओर चली।

द्वितीय खण्ड

दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर में केदार का उत्सव)

दक्षिणेश्वर-मन्दिर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण केदार आदि भक्तों के संग बातें कर रहे हैं। आज रविवार, अमावस्या, 29वाँ श्रावण, 1289 (बंगला) साल; 13 अगस्त, 1882 ईसवी है। समय लगभग पाँच होगा।

श्रीयुक्त केदार चैटर्जी का घर हालि शहर में है। ये सरकारी अकाँऊण्टेण्ट का काम करते थे। ढाका में अनेक दिन थे; उस समय श्रीयुक्त विजय गोस्वामी उनके साथ सर्वदा श्रीरामकृष्ण के विषय में बातें किया करते थे। ईश्वर की बातें सुनने से उनकी आँखें अश्रुपूर्ण हो जाती थीं। पहले वे ब्राह्मसमाजी थे।

ठाकुर अपने कमरे के दक्षिण के बरामदे में भक्तों के संग बैठे हैं। राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर (श्री म) प्रभृति अनेक भक्त उपस्थित हैं। केदार ने उत्सव किया है। सारा दिन आनन्द में बीत रहा है। राम एक उस्ताद को लाए, वे गाना गा रहे थे। गाने के समय ठाकुर समाधिस्थ होकर कमरे में छोटी खाट पर बैठे थे। मास्टर और अन्यान्य भक्तगण उनके चरणतले बैठे थे।

(समाधि-तत्त्व और सर्वधर्म-समन्वय—
हिन्दू, मुसलमान और ईसाई)

ठाकुर बातें करते-करते समाधि-तत्त्व समझा रहे हैं। कहते हैं, ''सच्चिदानन्द-लाभ हो जाने पर समाधि होती है। तब कर्म-त्याग हो जाता है। मैं उस्ताद (गायक) का नाम ले रहा हूँ, उस समय यदि उस्ताद आकर उपस्थित हो जाते हैं, तब फिर उनका नाम लेने का क्या प्रयोजन है? मधुमक्खी भनभन कब तक करती है? जब तक कि फूल पर नहीं बैठती। किन्तु साधक के लिए कर्म-त्याग करने से नहीं होगा। पूजा, जप, ध्यान, सन्ध्या, कवचादि*, तीर्थ सब ही करने चाहिएँ।

''प्राप्ति के पश्चात् यदि कोई विचार करता है, तो वह है जैसे मधुमक्खी मधुपान करती-करती आध-आध (अस्फुट स्वर से) गुन-गुन करती है।''

उस्ताद ने सुन्दर गाने गाए थे। ठाकुर प्रसन्न हुए हैं। उनसे कह रहे हैं, ''जिस मनुष्य में एक बड़ा गुण है, जैसे संगीत विद्या, उसमें ईश्वर की शक्ति विशेषरूप से है।''

उस्ताद— महाशय, किस उपाय से उन्हें प्राप्त किया जाता है?

श्रीरामकृष्ण— भक्ति ही सार है। ईश्वर तो सर्वभूतों में हैं, तो फिर भक्त किसको कहता हूँ? जिसका मन सर्वदा ईश्वर में रहता है। और, अहंकार-अभिमान रहने से नहीं होता। 'मैं' रूपी टीले पर ईश्वर का कृपारूप जल नहीं ठहरता, बह जाता है। मैं यन्त्र हूँ।

(केदार आदि भक्तों के प्रति)— ''सब पथों द्वारा उन्हें पाया जाता है। सब धर्म ही सत्य हैं। मतलब है छत पर चढ़ना। तुम पक्की सीढ़ियों से भी चढ़ सकते हो, लकड़ी की सीढ़ियों से भी चढ़ सकते हो, बाँस की सीढ़ियों से भी चढ़ सकते हो; और रस्सी से भी चढ़ सकते हो। और फिर गाँठदार बाँस (बिना छिले बाँस) के द्वारा भी चढ़ सकते हो।

---

* कवच = a metrical form of words believed to possess power of protection or occult power, a spell, a charm.

"यदि कहो, उनके धर्म में बहुत सी भूलें हैं, कुसंस्कार हैं, मैं कहता हूँ भूल चाहे रहे ही, सब धर्मों में ही भूल है। सब ही सोचते हैं मेरी घड़ी ही ठीक है। व्याकुलता रहने से ही हुआ; उनके ऊपर प्यार, आकर्षण रहने से ही हुआ। वे तो अन्तर्यामी हैं; अन्तर का आकर्षण, व्याकुलता देख लेते हैं। मन में सोचो एक पिता के कई लड़के हैं, बड़े लड़कों में से कोई बाबा (पिता), कोई पापा आदि स्पष्ट कह कर उनको पुकारता है। और फिर अति शिशु (छोटा लड़का) 'बा' अथवा 'पा' कहकर पुकारता है। जो 'बा' या 'पा' ही बोल सकते हैं क्या पिता उनके ऊपर क्रोध करेंगे? पिता जानता है कि वे मुझ को ही पुकार रहे हैं, किन्तु ठीक उच्चारण नहीं कर सकते। बाप के लिए सब लड़के ही समान हैं।

"और फिर भक्तगण उनको नाना नामों से पुकारते हैं, एक व्यक्ति को ही पुकार रहे हैं। एक तालाब के चार घाट हैं। हिन्दू लोग एक घाट से जल पीते हैं और कहते हैं जल; मुसलमान और एक घाट से पीते हैं और कहते हैं पानी, अंग्रेज़ और एक घाट से पीते हैं और कहते हैं वाटर, और फिर एक अन्य व्यक्ति एक घाट पर कहता है aqua (एक्वा)।

"एक ईश्वर— उनके नाना नाम।"

●

द्वितीय परिच्छेद

(सर्कस रंगालय में— गृहस्थ और अन्यान्य कर्मचारियों की कठिन समस्याएँ और श्रीरामकृष्ण)

श्रीरामकृष्ण गाड़ी करके श्यामपुकुर में विद्यासागर के स्कूल के द्वार पर आए। समय तीन का होगा। गाड़ी में मास्टर को बिठा लिया। राखाल और अन्य दो-एक भक्त गाड़ी में पहले से हैं। आज बुधवार, 15 नवम्बर, 1882 ईसवी; 30वाँ कार्त्तिक, शुक्ला पञ्चमी। गाड़ी क्रमशः चितपुर के मार्ग से गढ़ के मैदान की ओर जा रही है।

श्रीरामकृष्ण आनन्दमय हैं— मतवाले की न्यायीं— गाड़ी के एक बार इधर, एक बार उधर मुख बढ़ा-बढ़ा कर बालक की तरह देखते हैं और पथिकों को लक्ष्य करके भक्तों से बातें करते हैं। मास्टर से बोले, ''देखो, सब लोगों को निम्नदृष्टि देख रहा हूँ। पेट के लिए सब जा रहे हैं— ईश्वर की ओर दृष्टि नहीं है।''

श्रीरामकृष्ण आज विलसन-सर्कस देखने के लिए गढ़ के मैदान में जा रहे हैं। मैदान में जाकर टिकट खरीदा गया। आठ आने का अर्थात् अन्तिम श्रेणी का टिकट। भक्त ठाकुर को ले ऊँचे स्थान पर चढ़कर एक बेंच के ऊपर बैठ गए। ठाकुर आनन्द से कहते हैं, ''वाह, यहाँ तो बहुत सुन्दर दिखाई दे रहा है।''

रंगस्थल पर नाना रूप के खेल अनेक क्षण तक देखे। गोलाकार रास्ते पर घोड़ा दौड़ रहा है। घोड़े की पीठ पर बीबी एक पैर पर खड़ी हो जाती है। और फिर बीच-बीच में सामने बड़े-बड़े लोहे के रिंग (चक्र) हैं। रिंग के निकट आकर जब घोड़ा रिंग के नीचे दौड़ता है, बीबी घोड़े की पीठ से छलाँग मारकर रिंग के बीच से होकर घोड़े की पीठ पर फिर एक पाँव पर खड़ी हो जाती है। घोड़ा पुनः पुनः तेजी से उसी गोलाकार पथ पर दौड़ने लगा, बीबी भी फिर-फिर उसी प्रकार पीठ पर खड़ी हो जाती है।

सर्कस समाप्त हो गया। ठाकुर भक्तों के संग उतर कर मैदान में

गाड़ी के पास आ गए। सर्दी हो गई है। सब्ज बनात ओढ़े मैदान में खड़े हुए बातें करते हैं, भक्त निकट खड़े हैं। एक भक्त के हाथ में बटुआ (मसाले की छोटी थैली) है। उसमें मसाला विशेषत: कबाबचीनी है।

(पहले साधन, तत्पश्चात् गृहस्थ; अभ्यासयोग)

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कहते हैं,

''देखा, बीबी कैसे एक पाँव पर घोड़े के ऊपर खड़ी है, और घोड़ा वन्-वन् करके (तेजी से) दौड़ता है! कितना कठिन है, बहुत दिन तक अभ्यास किया है, तभी तो हुआ! तनिक-सा असावधान होने पर हाथ-पाँव टूट जाएँगे, और मृत्यु भी हो सकती है। गृहस्थ करना इसी प्रकार कठिन है। बहुत साधन-भजन करने पर ईश्वर की कृपा से कोई-कोई कर पाता है। अधिकांश व्यक्ति नहीं कर सकते। गृहस्थ करने पर और भी बद्ध हो जाता है, और भी डूब जाता है, मृत्युयन्त्रणा होती है! कोई-कोई, जैसे जनक आदि ने बहुत तपस्या के बल पर गृहस्थ किया था। जभी साधन-भजन बहुत आवश्यक है, वह न हो तो संसार में अच्छी तरह नहीं रहा जाता।''

(बलराम-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण)

श्रीरामकृष्ण गाड़ी में बैठे। गाड़ी बागबाजार में बसुपाड़े में बलराम के घर के द्वार पर पहुँची, ठाकुर भक्तों के संग दोतल की बैठक में जाकर बैठ गए। सन्ध्या की बत्ती जला दी गई है। ठाकुर सर्कस की बातें कर रहे हैं। बहुत-से भक्त समवेत हुए हैं, उनके संग बहुत-सी ईश्वरीय बातें हो रही हैं। मुख में अन्य और कोई भी बात नहीं है, केवल ईश्वर की बात है।

(Sri Ramakrishna, the Caste-system and the problem of the Untouchables solved)

जाति-भेद के सम्बन्ध में बात चली। ठाकुर बोले,

''एक उपाय से जाति-भेद हट सकता है। वह उपाय है भक्ति। भक्त की

जाति नहीं होती। भक्ति होने से ही देह, मन, आत्मा सब शुद्ध हो जाते हैं। गौर, निताई हरिनाम देने लगे, और चाण्डाल तक सभी को गोद दी। भक्ति बिना ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं है। भक्ति होने पर चाण्डाल चाण्डाल नहीं है। अस्पृश्य जाति भक्ति होने से शुद्ध, पवित्र हो जाती है।''

(संसारी बद्धजीव)

श्रीरामकृष्ण संसारी (गृही) बद्धजीव की बातें बताते हैं,

''वे मानो रेशम के कीड़े हैं, इच्छा करें तो अपने कोए को काटकर बाहर आ सकते हैं, किन्तु यत्न करके कोआ तैयार करते हैं, छोड़कर आ नहीं सकते, उसी में ही मृत्यु हो जाती है। और जैसे घूर्णि में मछली*; जिस पथ से प्रवेश करती है, उसी पथ से बाहर आ सकती है। किन्तु जल के मिष्ट शब्द और अन्य-अन्य मछलियों के संग क्रीड़ा होने के कारण इसी में भूल कर रह जाती है, बाहर आने की चेष्टा भी नहीं करती। लड़कों-बच्चों की तुतली वाणी मानो जल-कल्लोल का मधुर शब्द होता है। मछली अर्थात् जीव, परिवार वर्ग। तो भी दो-एक दौड़ कर भाग निकलती हैं, उन्हें कहते हैं मुक्त जीव।''

ठाकुर गाना गाते हैं :—

एमनि महामायार माया रेखेछे कि कुहक करे।
ब्रह्मा विष्णु अचैतन्य जीवे कि जानिते पारे॥

बिल कोरे घुणि पाते मीन प्रवेश कोरे ताते।
गतायातेर पथ आछे तबु मीन पालाते ना रे॥

[भावार्थ— महामाया ने ऐसी माया कर रखी है कि ब्रह्मा, विष्णु भी बेहोश हो गए हैं। फिर जीव तो क्या समझ सकता है? गड्ढा बना कर मीन उस में घुस जाती है और आने-जाने का रास्ता होते हुए भी वह मीन उसमें से भागती नहीं।]

---

* घूर्णि में मछली = पानी के बहाव से मछलियाँ पकड़ने के लिए बाँस की छपटियों के बाँध बनाए जाते हैं। उनमें बड़े-बड़े छिद्र रखे जाते हैं। मछलियाँ पानी के साथ उनमें घुस जाती हैं किन्तु पानी उस तरफ से निकल जाता है, वहाँ छोटे छिद्र होते हैं। मछलियाँ उसी बाँध में रह कर मरती जाती हैं।

ठाकुर फिर और कहते हैं,

"जीव मानो दाल है, चक्की के अन्दर पड़ गया है, पिस जाएगा। तो भी कुछ एक दाने जिन्होंने मेख (खूँटी) पकड़ रखी है, वे नहीं पीसे जाते। जभी खूँटी अर्थात् ईश्वर के शरणागत होना चाहिए। उन्हें पुकारो, उनका नाम करो, तभी मुक्ति है। वैसा न हो तो कालरूप चक्की में पीसा जाएगा।"

ठाकुर फिर और गाने लगे :—

पड़िये भवसागरे डुबे मा तनुर तरी।
माया-झड़ मोह तूफान क्रमे बाढ़े गो शंकरी॥
एके मन-माझी अनाड़ी, ताहे छ'जन गोंयार दाँड़ि,
कुबातासे दिये पाड़ि, हाबुडुबु खेये मरी।
भेंगे गेलो भक्तिर हाल, छिड़े पड़लो श्रद्धार पाल,
तरी होलो वानचाल उपाय कि करी;—
उपाय ना देखि आर, अकिञ्चन भेवे सार;
तरंगे दिये साँतार, श्री दुर्गा नामेर भेला धरि॥

[भावार्थ— माँ, भवसागर में पड़कर यह तनु-नौका डूब रही है। हे शंकरि, माया का झड़ और मोह का तूफान क्रमशः बढ़ रहे हैं। एक तो मन-माझी अनाड़ी है, उस पर छः खेवैये गंवार हैं। कुबातास (तूफान) में पड़कर 'हा बु ड़ बु' करता हुआ मर रहा हूँ। भक्ति-डाँड टूट गया है और श्रद्धा का पाल फट गया है, तभी नौका बेकाबू है, अब क्या उपाय करूँ? और उपाय नहीं दिखता, अतः अकिञ्चन होकर तरंगों पर तैरता हुआ श्री दुर्गानाम रूपी 'भेले' (सहारे) को पकड़ता हूँ।]

[स्त्री-बच्चों के प्रति कर्त्तव्य (Duty to wife and children)]

विश्वासबाबू बहुत देर से बैठे थे, अब उठकर चले गए। उनके पास बहुत रुपया था, किन्तु चरित्र मलिन होने के कारण सब उड़ा दिया है। अब स्त्री, कन्या आदि किसी को भी नहीं देखते। बलराम द्वारा उनकी चर्चा करने पर ठाकुर बोले,

"वह तो लक्ष्मीछाड़ा, दरिद्र है। गृहस्थ के कर्त्तव्य हैं, ऋण हैं— देव-ऋण,

पितृ-ऋण, ऋषि-ऋण; और फिर परिवार वालों के ऋण हैं। सती स्त्री हो तो उस का प्रतिपालन करना, सन्तान आदि का प्रतिपालन जब तक योग्य न हों।

"साधु ही केवल संचय नहीं करेगा। 'पंछी और दरवेश' संचय नहीं करता। किन्तु मादा पक्षी बच्चा होने पर संचय करती है, चूजे के लिए चोंच में आहार लाती है।"

बलराम— अब विश्वासबाबू की साधुसंग करने की इच्छा है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— साधु का कमण्डलु चार धाम घूम आता है, किन्तु जैसा कड़वा होता है, वैसा ही रहता है। मलय की हवा जिस पेड़ को लगती है, वह सारा चन्दन हो जाता है। किन्तु सेमल, पीपल और आमड़ा (एक खट्टा फल hog-plum), ये वृक्ष चन्दन नहीं बनते। कोई-कोई गाँजा खाने के लिए साधुसंग करते हैं। *(हास्य!)* साधु गाँजा खाते हैं कि ना! तभी उनके निकट बैठकर गाँजा बना देते हैं और प्रसाद पाते हैं। *(सब का हास्य)*।

●

तृतीय परिच्छेद

(षड्भुज-दर्शन और श्री राजमोहन के घर शुभागमन— नरेन्द्र)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण गढ़ के मैदान में जिस दिन सर्कस देखने गए थे, उसके अगले दिन ही उन्होंने फिर कलकत्ता में शुभागमन किया है— बृहस्पतिवार, **16 नवम्बर, 1882 ईसवी**; कार्तिक शुक्ला षष्ठी, पहला अग्रहायण। आते ही प्रथम गराणहाट* में षड्भुज-महाप्रभु के दर्शन किए। यह वैष्णव साधुओं का अखाड़ा है, महन्त हैं श्री गिरिधारी दास। षड्भुज-महाप्रभु की सेवा बहुत दिनों से चल रही है। ठाकुर ने दर्शन शाम को किए।

सन्ध्या के कुछ समय पश्चात् ठाकुर सिमुलिया निवासी श्रीयुक्त राजमोहन के घर गाड़ी से आए। ठाकुर ने सुना है कि यहाँ पर नरेन्द्र प्रभृति लड़के मिलकर ब्राह्मसमाज की उपासना करते हैं। इसीलिए देखने आए हैं। मास्टर (श्री म) और अन्य दो-एक भक्त संग में हैं। श्रीयुक्त राजमोहन पुराने भक्त हैं।

(ब्राह्मभक्त और सर्वत्याग अथवा संन्यास)

ठाकुर नरेन्द्र को देखकर आनन्दित हुए और बोले, ''तुम लोगों की उपासना देखूँगा।'' नरेन्द्र गाना गाने लगे। श्रीयुक्त प्रिय प्रभृति लड़के कोई-कोई उपस्थित थे।

अब उपासना हो रही है। लड़कों में एक उपासना करते हैं। वे प्रार्थना करते हैं कि ठाकुर जैसे सब छोड़कर तुम्हारे में मग्न हो जाऊँ! ठाकुर श्रीरामकृष्ण को देखने से बोध होता है कि उन्हें उद्दीपन हुआ है। जभी सर्वत्याग की बातें कहते हैं। मास्टर ठाकुर के खूब नजदीक बैठे थे, वे ही केवल सुन पाए, ठाकुर अति मृदुस्वर में कहते हैं, ''ता आर होयेछे।'' (वह तो फिर हो गया है।)

श्रीयुक्त राजमोहन ठाकुर को जलपान के लिए घर के अन्दर ले जाते हैं।

---

* गराणहाट अब नीमतला स्ट्रीट है।

चतुर्थ परिच्छेद

(श्रीयुक्त मनोमोहन और श्रीयुक्त सुरेन्द्र के घर श्रीरामकृष्ण)

अगला रविवार, 19 नवम्बर, 1882 ईसवी। श्री जगद्धात्री पूजा है, सुरेन्द्र ने निमन्त्रण किया है। वे अन्दर-बाहर कर रहे हैं कि कब ठाकुर आते हैं। मास्टर को देखकर वे बोले, ''तुम आ गए हो, और वे कहाँ हैं ?'' इसी समय ठाकुर की गाड़ी आ गई। निकट ही श्रीयुक्त मनोमोहन का निवास स्थान है, ठाकुर प्रथम वहाँ पर उतरे, वहाँ पर थोड़ा विश्राम करके सुरेन्द्र के घर में आएँगे।

मनोमोहन की बैठक में ठाकुर कह रहे हैं,

''जो अकिञ्चन, जो दीन होता है, उसकी भक्ति ईश्वर की प्रिय वस्तु है। जैसे खल मिली सानी गाय को प्रिय है। दुर्योधन ने इतना रुपया-ऐश्वर्य दिखाया, किन्तु उसके घर भगवान नहीं गए। वे विदुर के घर गए। वे भक्त-वत्सल हैं; वत्स के पीछे जैसे गाय भागती है, उसी प्रकार वे भक्त के पीछे-पीछे जाते हैं।''

ठाकुर गाना गाते हैं —

जे भाव लागि परम योगी, योग करे युग-युगान्तरे।
होले भावेर उदय लय से जेमन लोहाके चुम्बके धरे॥

[भावार्थ— जिस भाव के लिए परमयोगी युग-युगान्तर तक योग करते हैं, उस भाव के उदित होने पर 'वे' ऐसे खींच लेते हैं जैसे चुम्बक लोहे को।]

''चैतन्यदेव के कृष्ण नाम से अश्रु बहने लगते थे। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। मनुष्य मन में चाहे तो ईश्वर-लाभ कर सकता है। किन्तु कामिनी-काञ्चन भोग करने में ही मस्त है। सिर पर मणि रहते हुए भी साँप मेंढक खा कर मरता है।

''भक्ति ही सार है। ईश्वर को विचार करके कौन जान सकता है ? मेरा प्रयोजन है भक्ति से। उनके अनन्त ऐश्वर्य को जानने की मुझे क्या जरूरत ? एक बोतल मद से यदि मैं मतवाला हो जाता हूँ तो कलवार की

दुकान में कितने मन शराब है, इस खबर से मेरा क्या प्रयोजन? एक लोटे जल से मेरी तृष्णा शान्त हो सकती है; पृथ्वी पर कितना जल है, इस खबर का मुझे प्रयोजन नहीं।''

[सुरेन्द्र का भाई और सदरवाला (जज) का पद— जाति-भेद (Caste system and problem of untouchables solved— Theosophy)]

श्रीरामकृष्ण अब सुरेन्द्र के मकान पर आए। आकर दोतल की बैठक में बैठ गए। सुरेन्द्र के मंझले भाई जज भी उपस्थित हैं। अनेक भक्त कमरे में इकट्ठे हुए हैं। ठाकुर सुरेन्द्र के भाई से कहते हैं,

''आप जज हैं, यह तो अच्छा है; यह जान रखें कि सब ईश्वर की शक्ति है। बड़ा पद उन्होंने ही दिया है, तभी हुआ है। लोग सोचते हैं हम बड़े आदमी हैं, छत पर का जल सिंह के मुखवाले नाले से गिरता है तो लगता है सिंह ही मुख से जल निकाल रहा है। किन्तु देखो, जल कहाँ का है। कहाँ आकाश में मेघ होता है, वही जल छत पर पड़ता है, फिर बहकर नाली में जाता है, तब फिर सिंह के मुख द्वारा निकलता है।''

सुरेन्द्र के भाई— महाशय, ब्राह्मसमाज में स्त्री-स्वाधीनता की बात कहते हैं और कहते हैं जाति-भेद उठा दो; ये सब आप को कैसे लगते हैं?

श्रीरामकृष्ण— ईश्वर के ऊपर नूतन अनुराग होने पर ऐसा ही होता है। आँधी-तूफान आने पर धूल उड़ती है, कौन-सा आम का पेड़ है और कौनसा इमली का, पता नहीं लगता। आँधी थमने पर तब पता लगता है। नवानुराग की आँधी थम जाने पर क्रमशः पता लगता है कि ईश्वर ही श्रेय, नित्य पदार्थ है और सब अनित्य है। साधुसंग और तपस्या बिना किए इस सब की धारणा नहीं होती। पखावज के बोल मुख से बोलने से क्या होगा; हाथ में लाना बड़ा कठिन है। केवल लेक्चर देने से क्या होगा, तपस्या चाहिए, तब ही धारणा होगी।

''जाति-भेद? केवल एक उपाय से जाति-भेद हट सकता है। और वह है भक्ति। भक्त की जाति नहीं होती। अस्पृश्य जात शुद्ध हो जाती

है— चाण्डाल की भक्ति होने पर फिर वह चाण्डाल नहीं रहता। चैतन्यदेव ने चाण्डाल तक को गोद दी थी।

"ब्रह्मज्ञानी हरि-नाम करते हैं, बहुत भला है। व्याकुल होकर पुकारने से उनकी कृपा होगी, ईश्वर-लाभ होगा।

"सब पथों द्वारा ही उन्हें पाया जाता है। एक ईश्वर को नाना नामों से पुकारते हैं। जैसे एक घाट का जल हिन्दू पीते हैं और कहते हैं जल, अन्य एक घाट पर ईसाई पीते हैं और कहते हैं वाटर, अन्य एक घाट पर मुसलमान पीते हैं और कहते हैं पानी।"

सुरेन्द्र के भाई— महाशय, थिओसफी कैसी लगती है?

श्रीरामकृष्ण— सुना था कि शायद उससे अलौकिक शक्ति (miracles) होती है। देवमोड़ल के घर में एक पिशाचसिद्ध देखा था। पिशाच कितनी ही कुछ-कुछ चीजें ला देता। अलौकिक शक्ति लेकर क्या करूँगा? उसके द्वारा क्या ईश्वर-लाभ होता है? ईश्वर यदि न प्राप्त हो तो सब ही मिथ्या है।

तृतीय खण्ड

मणिमल्लिक के ब्राह्मोत्सव में ठाकुर श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता में श्रीयुक्त मणिलाल मल्लिक के सिन्दुरियापटी के मकान पर भक्तों के संग शुभागमन किया है। वहाँ पर ब्राह्मसमाज का प्रति वर्ष उत्सव होता है। अब शाम के चार बजे होंगे। यहाँ पर आज ब्राह्मसमाज का वार्षिक उत्सव है। 26 नवम्बर, 1882 ईसवी। श्रीयुक्त विजयकृष्ण गोस्वामी और बहुत-से ब्राह्मभक्त और श्री प्रेमचन्द बड़ाल और गृहस्वामी के अन्यान्य बन्धु आए हैं। मास्टर प्रभृति भी संग हैं।

श्रीयुक्त मणिलाल ने भक्तों की सेवा के लिए बहुत आयोजन किया हुआ है। प्रह्लादचरित्र-कथा होगी। तत्पश्चात् ब्राह्मसमाज की उपासना होगी। अन्त में भक्त लोग प्रसाद पाएँगे।

श्रीयुक्त विजय अभी भी ब्राह्मसमाज में शामिल हैं। वे आज की उपासना करेंगे। उन्होंने अभी तक गैरिक (गेरुआ) वस्त्र नहीं धारण किया है।

कथक महाशय प्रह्लाद-चरित्र सुना रहे हैं। पिता हिरण्यकशिपु हरि की निन्दा करते हैं और पुत्र प्रह्लाद को बार-बार उत्पीड़ित करते हैं। प्रह्लाद हाथ जोड़ कर हरि के निकट प्रार्थना करते हैं और कहते हैं, ''हे हरि, पिता को सुमति दो''। ठाकुर श्रीरामकृष्ण यह बात सुनकर रो रहे हैं। श्रीयुक्त विजय आदि भक्त ठाकुर के निकट बैठे हैं। ठाकुर की भावावस्था हो गई है।

(श्री विजय गोस्वामी प्रभृति ब्राह्मभक्तों को उपदेश—
ईश्वर-दर्शन और आदेश-प्राप्ति, तब फिर लोकशिक्षा)

कुछ देर प्रश्चात् विजय आदि भक्तों से कहते हैं,

''भक्ति ही सार है। उनका नामगुणकीर्त्तन सर्वदा करते-करते भक्ति प्राप्त होती है। आहा! शिवनाथ की कैसी भक्ति है! मानो रस में डूबा हुआ छानाबड़ा (रसगुल्ला) है।

''मन में इस प्रकार सोचना ठीक नहीं है कि मेरा धर्म ही ठीक है; और अन्य सभी का धर्म गलत है। सब पथों द्वारा ही उन्हें पाया जाता है। आन्तरिक व्याकुलता रहने से ही हुआ। अनन्त पथ— अनन्त मत।

''देखो! ईश्वर को देखा जाता है। वेद में कहा है 'अवाङ्मनसोगोचर' (वे वाणी, मन से अगोचर) हैं। इसका अर्थ है— विषय से आसक्त मन से वे अगोचर हैं। वैष्णवचरण कहते, वे शुद्धमन, शुद्धबुद्धि के गोचर हैं।* जभी तो साधु-संग, प्रार्थना, गुरु का उपदेश— इन सब का प्रयोजन है। तभी चित्तशुद्धि होती है। तब उनका दर्शन होता है। गँदले जल में निर्मली डालने से वह साफ हो जाता है। तब मुख दिखता है। मैले दर्पण में मुख दिखाई नहीं देता।

''चित्तशुद्धि के पश्चात् भक्ति प्राप्त करने पर ही उनकी कृपा से उनका दर्शन होता है। दर्शन के पश्चात् आदेश पाने पर फिर लोकशिक्षा दी जाए। पहले से ही लेक्चर देना ठीक नहीं। एक गाने में है—

भावछो कि मन एकला बोसे,
अनुराग बिने कि चाँद गौर आसे।
आजन्मटा झाँट दिलि ना,
(मन्दिरे) चामचिका एगारजना
तारा दिवा निशि करले थाना,
मन्दिरे तोर माधव नाई रे—
(पेदो) तुई शाँक फूके गोल करलि शेषे।

[भावार्थ— अरे मन, अकेले बैठे क्या सोच रहे हो? बिना 'अनुराग' के क्या

---

* मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:।
बन्धाय विषयासंगि मोक्षे निर्विषयं स्मृतम॥ — मैत्रायणी उपनिषद्

गौर-चाँद आएँगे? तुमने जन्मभर (हरि प्रेम में) डुबकी नहीं लगाई। तुम्हारे मन्दिर में ग्यारह चमगादड़ें दिवानिशि गोलमाल कर रही हैं। तुमने मन्दिर में माधव की स्थापना तो की नहीं, यूँ ही शंख फूँक-फूँक कर शोर मचा रखा है।]

"हृदय-मन्दिर को पहले साफ करना चाहिए— यदि ठाकुर-प्रतिमा लानी है, पूजा का आयोजन करना है। कोई आयोजन नहीं, भों-भों करके शंख बजाना— इससे क्या होगा?"

अब श्रीयुक्त विजय गोस्वामी वेदी पर बैठकर, ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना करते हैं। उपासना के अन्त में वे ठाकुर के निकट आकर बैठ गए।

श्रीरामकृष्ण *(विजय के प्रति)*— अच्छा! तुम लोग इतना पाप-पाप क्यों कहते हो? एक सौ बार 'मैं पापी, मैं पापी' कहने से, वैसा ही हो जाता है। ऐसा विश्वास करना चाहिए कि उनका नाम लिया है— मुझे फिर पाप और कैसा? वे हमारे बाप-माँ हैं; उनसे कहो कि हमने जो पाप किए हैं, अब फिर नहीं करेंगे। और उनका नाम करो, उनके नाम से समस्त देह-मन पवित्र करो— जिह्वा को पवित्र करो।

●

द्वितीय परिच्छेद

(बाबूराम प्रभृति के संग फ्री विल के सम्बन्ध में बातें— तोतापुरी का आत्महत्या का संकल्प)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में शाम के समय अपने कमरे के पश्चिम के बरामदे में बातें कर रहे हैं। साथ बाबूराम, मास्टर (श्री म), रामदयाल प्रभृति हैं। **दिसम्बर, 1882 ईसवी**। बाबूराम, रामदयाल और मास्टर आज रात को रहेंगे। सर्दियों की (बड़े दिनों की) छुट्टियाँ हुई हैं। मास्टर आगामी कल भी रहेंगे। बाबूराम नए-नए आने लगे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— ईश्वर सब कर रहे हैं, यह ज्ञान हो जाने पर जीवन्मुक्त हो जाता है। केशवसेन शम्भुमल्लिक के संग आया था, मैंने उससे कहा था, वृक्ष का पत्ता तक भी तो ईश्वर की इच्छा के बिना नहीं हिलता। स्वाधीन इच्छा (Free-will) कहाँ है ? सब ही ईश्वर के अधीन है। नागा (तोतापुरी) इतना बड़ा ज्ञानी था, वह ही जल में डूबने गया था। यहाँ पर ग्यारह महीने था, रोग-यन्त्रणा से पीड़ित होकर गंगा जी में डूबने गया था। घाट के निकट बहुत-सा कछार था, जितना जाता, घुटने-जल से और अधिक नहीं मिलता; तब फिर समझ गया; समझने पर लौट आया। मुझे एक बार खूब पागलपन सवार हुआ था, तभी गले पर छुरी मारने लगा था। इसीलिए तो कहता हूँ— ''माँ! मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री; मैं रथ, तुम रथी; जैसे चलाती हो वैसे ही चलता हूँ— जैसे करवाती हो वैसे ही करता हूँ।''

ठाकुर के कमरे में गाना हो रहा है। भक्त गा रहे हैं—

1. हृदि-वृन्दावने वास यदि करो कमलापति।
ओहे भक्तिप्रिय, आमार भक्ति होबे राधासति॥
मुक्ति कामना आमारि, होबे वृन्दे गोपनारी,
देह होबे नन्देरपुरी, स्नेह होबे मा यशोमती॥
आमाय धरो-धरो जनार्दन, पापभार गोवर्धन,
कामादि छः कंसचरे ध्वंस करो सम्प्रति॥

बाजाये कृपा बाँशरी, मनधेनुके वश करि,
तिष्ठ हृदि-गोष्ठे पुराओ इष्ट एइ मिनति॥

आमार प्रेमरूप जमुना-कूले, आशा वंशी वटमूले,
स्वदास भेवे सदय-भावे, सतत करो बसति॥

यदि बोलो राखाल-प्रेमे, बन्दी थाकि व्रजधामे,
तबे ज्ञानहीन राखाल तोमार, दास होबे हे दाशरथि॥

[भावार्थ— हे कमलापति, आप यदि हृदय रूपी वृन्दावन में निवास करो, तो अरे ओ भक्तिप्रिय, मेरी भक्ति होगी सती राधा के प्रति! मेरी मुक्ति की कामना गोपनारी होगी और देह होगी नन्द की पुरी, इस में स्नेह होगा यशोदा माता। हे जनार्दन! तुम मेरे पापों के भार रूपी गोवर्धन को धारण करो। मेरे कामादि छह कंस के चरों को अब जल्दी ही ध्वंस कर दो। अपनी कृपा-बंसरी बजाकर मनरूप धेनु को वश में कर लो और मेरी यही विनती है कि आप हृदय रूप गोष्ठ में रहकर मेरा इष्ट-दर्शन पूरा करो। मेरे प्रेमरूप जमुना के तट पर, आाशा के वंशीवट के तले अपने दास पर सस्नेह सदय भावना से सदा-सर्वदा वास करो। यदि कहो कि ग्वालों के प्रेम में मैं ब्रजधाम में बन्दी रहता हूँ तब तो यह ज्ञान हीन राखाल (ग्वाला) तुम्हारा दास बन जाएगा।]

2. आमार प्राणपिंजरेर पाखि, गाओ ना रे।
ब्रह्मकल्पतरु मूले बोसे रे पाखि, विभुगुण गाओ देखि, (गाओ गाओ),
आर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, सुपक्व फल खाओ ना रे।

[भावार्थ— मेरे प्राणपिंजरे के पक्षी, गाओ रे। अरे पक्षी, ब्रह्मकल्पतरु के ऊपर बैठकर विभु-गुण गाओ तो थोड़ा-सा, (गाओ-गाओ)। धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष रूप पके हुए फल खाओ ना रे!]

नन्दन बाग के श्रीनाथ मिश्र बन्धुओं समेत आए हैं। ठाकुर उनको देखकर कहते हैं,

''यही तो! इनकी आँखों के द्वारा इनके भीतर का सब दिखाई दे रहा है! शीशे के द्वार के भीतर की जैसे सब चीज़ें दिखाई देती हैं।''

श्रीनाथ, श्रीयज्ञनाथ, ये लोग नन्दन बाग के ब्राह्म-परिवार में शामिल हैं। इन के घर में प्रतिवर्ष ब्राह्मसमाज का उत्सव हुआ करता था। उत्सव

देखने ठाकुर पीछे गए थे।

सन्ध्या के पश्चात् ठाकुर-मन्दिर में आरती होने लगी। कमरे में छोटी खाट पर बैठे हुए ठाकुर ईश्वर-चिन्तन करने लगे। क्रमशः भावाविष्ट हो गए। भाव उपशम होने पर कहते हैं, ''माँ, उसको भी खींच लो। वह इतने दीन भाव में रहता है! तुम्हारे पास आता-जाता है।''

ठाकुर भाव में बाबूराम की कैसी-कैसी बातें बता रहे हैं! बाबूराम, मास्टर, रामदयाल प्रभृति बैठे हैं। रात के 8/9 बजे होंगे। ठाकुर समाधि-तत्त्व बता रहे हैं— जड़समाधि, चेतनसमाधि, स्थितसमाधि, उन्मनासमाधि।

(विद्यासागर और चंगेज़ खाँ— ईश्वर क्या निष्ठुर? श्रीरामकृष्ण का उत्तर)

सुख-दुःख की बातें हो रही हैं। ईश्वर ने इतना दुःख क्यों बनाया है?

मास्टर— विद्यासागर क्षोभ (अभिमान) करके कहते हैं, 'ईश्वर को पुकारने की क्या आवश्यकता है! देखो, चंगेज़ खाँ ने जब लूटपाट आरम्भ की थी, तब बहुत-से लोगों को बन्दी बना लिया, क्रमशः प्रायः एक लाख बन्दी जमा हो गए। तब सेनापतियों ने आकर कहा— महाशय, इन्हें क्या खिलाएँ? इन्हें साथ रखना हमारे लिए विपद है। क्या किया जाए? छोड़ देने में भी विपद है। तब चंगेज़ खाँ बोला, तो फिर क्या किया जाए; उन सब का वध कर दो। तभी कचाकच करके काटने का हुकुम हो गया। इस हत्याकाण्ड को तो ईश्वर ने देखा है? कहाँ, थोड़ा-सा भी तो निवारण नहीं किया। वे यदि हैं तो रहें, मुझे उनकी कोई आवश्यकता नहीं लगती। मेरा तो कोई भी उपकार नहीं हुआ।'

श्रीरामकृष्ण— ईश्वर का कार्य क्या जाना जाता है कि वे किस उद्देश्य से कर रहे हैं? वे सृष्टि, पालन, संहार सब ही, समस्त ही करते हैं। वे क्यों संहार करते हैं, हम क्या समझ सकते हैं? मैं कहता हूँ, माँ मुझे समझने की आवश्यकता नहीं, अपने चरणों में भक्ति देना। मनुष्य-जीवन का उद्देश्य यह भक्ति-प्राप्ति ही है। और सब माँ जानती हैं। बाग में आम खाने आया हूँ; कितने वृक्ष, कितनी डालें, कितने करोड़ पत्ते हैं, बैठे-बैठे इन सब का हिसाब

करने का मेरा क्या प्रयोजन है! मैं आम खाता हूँ, वृक्ष के पत्तों के हिसाब की मुझे जरूरत नहीं है।

ठाकुर के कमरे में फर्श पर आज रात को बाबूराम, मास्टर और रामदयाल सोए।

गम्भीर रात, दो-तीन बजे होंगे। ठाकुर के कमरे का प्रकाश निब गया। वे अपने बिस्तर पर बैठे हुए भक्तों के साथ बीच-बीच में बातें कर रहे हैं।

(श्रीरामकृष्ण और बाबूराम, मास्टर प्रभृति— दया और माया— कठिन साधन और ईश्वर-दर्शन)

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर प्रभृति भक्तों के प्रति)*— देखो, दया और माया, ये दो पृथक् वस्तुएँ हैं। माया माने आत्मीयों की ममता; जैसे बाप-माँ, भाई-बहन, स्त्री-पुत्र के ऊपर प्यार। दया माने सर्वभूतों में प्यार, समदृष्टि। किसी के अन्दर यदि दया देखो, जैसे विद्यासागर, उसे समझोगे ईश्वर की दया है। दया से सर्वभूतों की सेवा होती है। माया भी ईश्वर की है। माया द्वारा वे आत्मीयजनों की सेवा करवा लेते हैं। फिर भी एक बात है; माया से अज्ञानी बना रहता है और बद्ध होता है। किन्तु दया से चित्तशुद्धि होती है। क्रमश: बन्धनमुक्ति हो जाती है।

"चित्तशुद्धि न हो तो भगवान-दर्शन नहीं होता। काम, क्रोध, लोभ इत्यादि जीत लेने पर उनकी कृपा होती है; तब दर्शन होता है। तुम लोगों को अति गुह्य बात बताता हूँ, काम जीतने के लिए मैंने बहुत से काण्ड किए थे। यहाँ तक कि आनन्द-आसन के चारों ओर 'जय काली, जय काली' बोलकर अनेक बार प्रदक्षिणा की थी। मैं जब दस-ग्यारह वर्ष का था तब देश गया था, उसी समय वह अवस्था (समाधि-अवस्था) हुई थी, मैदान में से जाते-जाते जो दर्शन किए थे, उससे विह्वल हो गया था। ईश्वर-दर्शन के कुछ लक्षण हैं। ज्योति दिखाई देती है, आनन्द होता है; छाती के भीतर अनारवत् (पटाखों की

तरह) गुर-गुर करके महावायु उठती है।''

दूसरे दिन बाबूराम, रामदयाल घर लौट गए। मास्टर ने वह दिन-रात भी ठाकुर के साथ ही बिताए। उस दिन उन्होंने ठाकुर-मन्दिर में ही प्रसाद पाया।

•

तृतीय परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर में मारवाड़ी भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण)

शाम हो गई है। मास्टर और दो-एक भक्त बैठे हैं। कितने ही मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। वे कलकत्ते में व्यापार करते हैं। वे ठाकुर से आकर कहते हैं, आप हमें कुछ उपदेश दें। ठाकुर हँसते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मारवाड़ी भक्तों के प्रति)*— देखो, 'मैं और मेरा' ये दो अज्ञान हैं। हे ईश्वर, तुम ही कर्त्ता हो और तुम्हारा ये सब है, इसका नाम है ज्ञान। फिर 'मेरा' किस तरह कहोगे? बाग का 'सरकार' कहता है, मेरा बाग है; किन्तु यदि कोई गलती हो जाती है तब मालिक भगा देता है, तब तो इतना भी साहस नहीं होता कि निजी आम के सन्दूक को भी बाग के बाहर ले आए। काम, क्रोध आदि हटने वाले नहीं हैं; ईश्वर की ओर मोड़ फिरा दो। कामना, लोभ करना ही हो तो ईश्वर को पाने की कामना और लोभ करो। विचार करके

उन्हें भगा दो। हाथी अन्य का केले का पेड़ खाने लगता है तो महावत अंकुश मारता है।

"तुम लोग तो व्यवसाय करते हो, पता ही है कि क्रमशः उन्नति होती है। कोई पहले अरण्ड का कोलहु लगाता है, फिर और अधिक रुपया होने पर कपड़े की दुकान करता है। वैसे ही ईश्वर के पथ पर आगे बढ़ना चाहिए। बढ़ जाने पर, बीच-बीच में कुछ दिन निर्जन में रहकर और अधिक उन्हें पुकारो।

"फिर क्या है, जानते हो? समय न आने पर कुछ नहीं होता। किसी-किसी का भोग-कर्म बहुत शेष रहता है। इसीलिए देर से होता है। कच्ची अवस्था में फोड़े को काटने पर विपरीत फल होता है। पकने पर, मुँह बन जाने पर ही तब डॉक्टर काटता है। बच्चे ने कहा था, मैं जब सो जाऊँ और बाह्य आए तो तुम मुझे उठा देना। माँ ने कहा, बेटा, बाह्य ही तुम्हें उठा देगा, मुझे उठाना नहीं पड़ेगा।" *(सब का हास्य)*।

(मारवाड़ी भक्त और व्यवसाय में मिथ्या बोलना— राम-नाम-कीर्त्तन)

मारवाड़ी भक्त ठाकुर की सेवा के लिए कभी-कभी मिठाई, फल, थालमिश्री आदि लाते हैं। थालमिश्री में गुलाब की सुगन्ध होती है। किन्तु ठाकुर वे सब चीजें प्रायः सेवन नहीं करते। कहते हैं, उन्हें बहुत कुछ मिथ्या बातों द्वारा रुपया बनाना पड़ता है। इसीलिए उपस्थित मारवाड़ियों को बातों ही बातों में उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— देखो, व्यापार करने में सत्य बात की रक्षा नहीं रहती। व्यवसाय में तेज़ी-मन्दी रहती है। नानक जी की कहानी में है— वे कहते हैं, 'असाधु के द्रव्य-भोजन करने गया तो देखा कि वे सब खून से लिप्त हैं! साधुओं को शुद्ध चीज़ें देनी चाहिएँ। मिथ्या उपायों से कमाई करके वस्तु नहीं देनी चाहिए। सत्यपथ पर ही ईश्वर मिलते हैं।*

---

* सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
सत्यमेव जयते नानृतम्। (मुण्डकोपनिषद्— 3/1/5-6)

"सर्वदा उनका नाम करना चाहिए। कार्य के समय मन को उनके निकट रख देना चाहिए। जैसे मेरी पीठ पर फोड़ा हुआ है, सब काम करता हूँ, किन्तु मन फोड़े की ओर ही रहता है। राम–नाम लेना बढ़िया है। जो राम दशरथ का बेटा, वही फिर जगत सृष्टि करता है; और सब भूतों में है और अति निकट है— अन्तर बाहर।

"वही राम दशरथ का बेटा, वही राम घट–घट में लेटा,
वही राम जगत पशेरा, वही राम सब से नियारा।"

चतुर्थ खण्ड

बेलघर-ग्राम में गोबिन्द मुखोपाध्याय के घर में श्रीरामकृष्ण नरेन्द्रादि भक्तों के संग में कीर्त्तनानन्द में

प्रथम परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण ने बेलघर के श्रीयुक्त गोबिन्द मुखर्जी के घर में शुभागमन किया है। आज रविवार, 7वाँ फाल्गुन; 18 फरवरी, 1883 ईसवी; माघ शुक्ला द्वादशी, पुष्या नक्षत्र। नरेन्द्र, राम आदि भक्त आए हैं, पड़ोसी आए हैं। प्रात: 7/8 के समय से पहले ही ठाकुर ने नरेन्द्रादि के संग में संकीर्त्तन में नृत्य किया था।

(बेलघरवासी को उपदेश— क्यों प्रणाम— क्यों भक्तियोग)

कीर्त्तन के अन्त में सब ही बैठ गए। अनेक जन ही ठाकुर को प्रणाम कर रहे हैं। ठाकुर बीच-बीच में कह रहे हैं, ''ईश्वर को प्रणाम करो।'' और फिर कह रहे हैं,

''वे ही सब होकर रह रहे हैं, किन्तु किसी-किसी जगह पर उनका अधिक प्रकाश होता है, जैसे साधु में। यदि कहो, दुष्ट व्यक्ति भी तो है, बाघसिंह भी है; तो फिर बाघ नारायण को आलिंगन करने का प्रयोजन नहीं, दूर से प्रणाम करके चले जाना चाहिए। और फिर जल को ही देखो, कोई जल पिया जाता है,

किसी जल से पूजा की जाती है, किसी जल से नहाया जाता है। और फिर किसी जल से केवल आँचान-शौचान[1] होता है।

पड़ोसी— जी, वेदान्तमत क्या है?

श्रीरामकृष्ण— वेदान्तवादी कहते हैं 'सोऽहं'— ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या : मैं भी मिथ्या। केवल वे परब्रह्म ही हैं।

"किन्तु 'मैं' तो जाता नहीं; जभी मैं उनका दास, मैं उनकी सन्तान, मैं उनका भक्त, यह अभिमान बहुत अच्छा है।

"कलियुग में भक्तियोग ही अच्छा है। भक्ति द्वारा भी उनको प्राप्त किया जाता है। देहबुद्धि रहने पर ही विषयबुद्धि होती है। रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द— ये सब विषय हैं। विषयबुद्धि जाना बड़ा कठिन है। विषयबुद्धि के रहने पर 'सोऽहं' नहीं होता।[2]

"त्यागियों की विषयबुद्धि कम होती है, संसारी लोग सर्वदा ही विषयचिन्ता लिए रहते हैं, इसीलिए संसारियों के लिए दासोऽहम्।"

(बेलघर के वासी और पापवाद)

पड़ोसी— हम पापी हैं, हमारा क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण— उनका नामगुण-कीर्त्तन करने पर देह के सब पाप पलायन कर जाते हैं। देह रूप वृक्ष पर पाप रूप पक्षी है; उनका नाम-कीर्त्तन जैसे ताली बजाना है। तालियाँ बजाने पर जैसे वृक्ष के ऊपर के सब पक्षी उड़ जाते हैं, उसी प्रकार उनके नामगुण-कीर्त्तन से सभी पाप चले जाते हैं।[3]

"और भी देखो, मैदान के तालाब का जल सूर्य के ताप से अपने आप सूख जाता है। वैसे ही उनके नामगुण-कीर्त्तन से पापरूप तालाब का जल अपने आप सूख जाता है।

---

1 आँचान शौचान = खाने के बाद कुल्ला। पाखाने के बाद शौच करना।

2 अव्यक्ता हि गतिर्दुखं देहवद्भिरवाप्यते। (गीता 12/5)

3 मामेकं शरणं व्रज, अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि। (गीता 18/66)

''रोज अभ्यास करना चाहिए। सर्कस में देखा था— घोड़ा दौड़ रहा है, उसके ऊपर बीबी एक पैर से खड़ी हुई है। कितने अभ्यास से वैसा हुआ है!

''और उन्हें देखने के लिए अन्ततः कभी-कभी क्रन्दन करो।

''ये ही दो उपाय हैं— अभ्यास और अनुराग, अर्थात् उनको देखने के लिए व्याकुलता।''

(बेलघर के वासी का षट्चक्र का गान और श्रीरामकृष्ण की समाधि)

बैठकखाने के दोतल वाले कमरे के बरामदे में ठाकुर भक्तों के संग में प्रसाद पा रहे हैं; समय एक बजा है। सेवा समाप्त होते न होते नीचे के आँगन में एक भक्त ने गाना आरम्भ कर दिया—

जागो जागो जननी,
मूलाधारे निद्रागत कतो दिन गत होलो कुलकुण्डलिनी।*

ठाकुर गान सुनकर समाधिस्थ। शरीर समस्त स्थिर, हाथ प्रसाद-पात्र के ऊपर जैसा था, चित्रार्पितवत् रह गया। खाना फिर और नहीं हुआ। अनेक क्षण पश्चात् भाव का कुछ उपशम होने पर कह रहे हैं, ''मैं नीचे जाऊँगा, मैं नीचे जाऊँगा।''

एक भक्त उन्हें अति सावधानी से नीचे ले जा रहे हैं।

प्रांगण में ही सुबह नाम-संकीर्त्तन और प्रेमानन्द में ठाकुर का नृत्य हुआ था। अभी तक भी सतरंजी (दरी) और आसन बिछे हुए हैं। ठाकुर अभी भी भावाविष्ट हैं; गायक के निकट आकर बैठ गए। गायक ने अब तक गाना थाम दिया था। ठाकुर अति दीन भाव में कह रहे हैं, ''बाबू, और एक बार माँ का नाम सुनूँगा।''

गायक फिर दोबारा गाना गा रहे हैं—

जागो जागो जननी,
मूलाधारे निद्रागत कतो दिन गत होलो कुलकुण्डलिनी।

---

* जागो जागो माँ, मूलाधार में सोए हुए तुम्हें कितने दिन हो चुके हैं, माँ कुलकुण्डलिनी।

स्वकार्यसाधने चलो मा शिरोमध्ये,
परम शिव यथा सहस्रदलपद्मे,
करि षट्चक्र भेद (मागो) घुचाओ मनेर खेद, चैतन्यरूपिणि।

[जागो, जागो माँ कुलकुण्डलिनी, मूलाधार में तुम्हें सोए हुए कितने दिन हो गए हैं। माँ, तुम अपने कार्य-साधन के लिए सिर के बीच में चलो, जहाँ पर सहस्रदलपद्म में परम शिव विराजमान हैं। मेरी माँ, हे चैतन्यरूपिणी माँ, षट्चक्र भेद कर मेरे मन का खेद समाप्त कर दो।]

गान सुनते-सुनते ठाकुर फिर भावाविष्ट।

●

द्वितीय परिच्छेद

(ठाकुर दक्षिणेश्वर में अमावस्या के दिन भक्तों के संग में— राखाल के प्रति गोपाल-भाव)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में अपने कमरे में राखाल, मास्टर आदि दो-एक भक्तों के संग बैठे हुए हैं। आज शुक्रवार, 26वाँ फाल्गुन; **9 मार्च, 1883** ईसवी; माघ की अमावस्या, समय प्रात: 8/9 का होगा।

अमावस्या के दिन, ठाकुर को सर्वदा ही जगन्माता का उद्दीपन होता है। वे कह रहे हैं,

"ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। माँ ने अपनी महामाया में मुग्ध कर रखा है। मनुष्यों के भीतर देखो, बद्धजीव ही अधिक मिलेंगे। इतना कष्ट-दु:ख पाते हैं तो भी उसी 'कामिनी-काञ्चन' में आसक्ति है। कंटीली घास खाने से ऊँट के मुँह से धड़-धड़ खून बहता है, फिर भी कंटीली घास खाता है। प्रसववेदना के समय स्त्रियाँ कहती हैं, अरी बहन, अब पति के पास नहीं जाऊँगी; और फिर भूल जाती हैं।

"देखो, उनको कोई नहीं खोजता। अनानास (pineapple) को

छोड़कर लोग उसके पत्ते खाते हैं।''

भक्त— जी, संसार में वे क्यों रख देते हैं?

(संसार क्यों? निष्काम कर्म द्वारा चित्तशुद्धि के लिए)

श्रीरामकृष्ण— संसार कर्म-क्षेत्र है, कर्म करते-करते फिर ज्ञान होता है। गुरु ने कहा है, ये सब कर्म करो, ये सब कर्म मत करो। वे फिर निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं*। कर्म करते-करते मन का मैल कट जाता है। भले डॉक्टर के हाथ में पड़कर औषध खाते-खाते जैसा भी रोग क्यों न हो, भला-चंगा हो जाता है।

''क्यों वे संसार से छोड़ते नहीं? रोग हट जाएगा, तब छोड़ देंगे। कामिनी-काञ्चन के भोग करने की इच्छा जब चली जाएगी, तब छोड़ेंगे। हस्पताल में नाम लिखवा लेने के बाद भागकर आ नहीं सकता। रोग में कसर रहने पर डॉक्टर नहीं छोड़ेंगे।''

•

ठाकुर आजकल यशोदा की न्यायीं वात्सल्यरस में सर्वदा आप्लुत (डूबे) हुए रहते हैं। इसीलिए राखाल को निकट संग में रखा हुआ है। ठाकुर का राखाल के सम्बन्ध में गोपाल-भाव है। जैसे माँ की गोद में छोटा बच्चा जाकर बैठता है, राखाल भी ठाकुर की गोद पर भार देकर बैठते हैं— जैसे स्तन पी रहे हैं।

(श्रीरामकृष्ण का भक्तों के संग में गंगा में बान बाढ़-दर्शन)

ठाकुर इसी भाव में बैठे हैं, उस समय किसी ने आकर संवाद दिया कि बाढ़ आ रही है। ठाकुर, राखाल, मास्टर आदि सब बाढ़ देखने के लिए पञ्चवटी की ओर दौड़ने लगे। पञ्चवटी के किनारे पर आकर सब बाढ़

---

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन॥ (गीता— 2/47)

देख रहे हैं। समय प्राय: साढ़े दस होगा। एक नौका की अवस्था देखकर ठाकुर कह रहे हैं, "देखो, देखो, उस नौका की अवस्था जाने क्या होती है।"

अब ठाकुर पञ्चवटी के रास्ते पर मास्टर, राखाल आदि के संग बैठ गए।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— अच्छा, बाढ़ कैसे होती है?

मास्टर धरती पर रेखा खींचकर पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य, मध्याकर्षण, ज्वार-भाटा; पूर्णिमा, अमावस्या, ग्रहण इत्यादि समझाने की चेष्टा करते हैं।

(श्रीरामकृष्ण बाल्यकाल में और पाठशाला में—
The yogi is beyond all finite relations of
number, quantity, cause and effect)

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— बस खत्म करो; समझ नहीं सकता हूँ; सिर चक्कर खाता है! टन् टन् करता है! अच्छा, इतनी दूर की बातें कैसे जान ली हैं?

"देखो, मैं बचपन में चित्र अच्छे आँक सकता था; किन्तु अङ्कगणित गोरख-धन्धा लगता! अङ्क-गणना नहीं कर सका।"

अब ठाकुर अपने कमरे में लौट आए हैं। दीवार पर टँगी हुई यशोदा की छवि देखकर कह रहे हैं, "छवि ठीक नहीं बनी, बिल्कुल मानो 'मेलेनीमासी' (मालिन मौसी) बना दी है।"

•

(श्री अधरसेन का प्रथम दर्शन और बलि की बात)

मध्याह्न-सेवा के बाद ठाकुर ने थोड़ा विश्राम किया है। अधर तथा अन्य भक्त क्रमश: आकर जमा हो गए हैं। अधरसेन ठाकुर का यह प्रथम दर्शन कर रहे हैं। अधर का मकान कलकत्ता में बेनेटोला में है। वे डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं, वयस 29-30 है।

(अवस्था और अहिंसा)

अधर *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— महाशय, मुझे एक बात पूछनी है; बलिदान (बलि) करना क्या अच्छा है? इससे तो जीव-हिंसा होती है।

श्रीरामकृष्ण— विशेष-विशेष अवस्था में, शास्त्र में है, बलि दी जा सकती है। 'विधिवादीय' बलि में दोष नहीं है। जैसे अष्टमी में एक बकरा। किन्तु सब अवस्थाओं में होता नहीं। मेरी जब ऐसी अवस्था थी, खड़ा होकर बलि नहीं देख सकता था। माँ का प्रसादी माँस इस अवस्था में खा नहीं सकता था। जभी तो उंगली से लेकर तनिक-सा छूकर मस्तक पर तिलक लगा लेता हूँ; कहीं पीछे माँ क्रोध करें।

"और फिर ऐसी अवस्था हो जाती है कि देखता हूँ सर्वभूतों में ईश्वर हैं, च्युँटियों में भी वे हैं। इस अवस्था में हठात् किसी प्राणी के मरने पर यह सान्त्वना होती है कि उसकी देहमात्र विनष्ट हुई है। आत्मा की मृत्यु नहीं*।"

(अधर को उपदेश— 'अधिक विचार करो ना')

"अधिक विचार करना ठीक नहीं है, माँ के पादपद्मों में भक्ति होने से ही हुआ। अधिक विचार करने से सब गड़बड़ हो जाता है। इस स्थान पर तालाब का जल ऊपर-ऊपर से पियो, बड़ा साफ जल मिलेगा। अधिक नीचे हाथ द्वारा हिलाने से जल गँदला हो जाता है। इसीलिए उनके निकट भक्ति की प्रार्थना करो। ध्रुव की भक्ति सकाम थी। राज्य के लोभ के लिए तपस्या की थी। किन्तु प्रह्लाद की थी निष्काम, अहेतुकी भक्ति।"

भक्त— ईश्वर किस प्रकार से प्राप्त होते हैं?

श्रीरामकृष्ण— इसी भक्ति के द्वारा। किन्तु उनके निकट ज़ोर करना चाहिए। दर्शन नहीं देते तो गले पर छुरी मार लूँगा— इसका नाम है भक्ति का तम।

भक्त— ईश्वर को क्या देखा जाता है?

---

* "न हन्यते हन्यमाने शरीरे।" (गीता— 2/20)

श्रीरामकृष्ण— हाँ, अवश्य देखा जाता है। निराकार, साकार, दोनों ही दिखते हैं। साकार चिन्मयरूप दर्शन होता है। और फिर साकार मनुष्य में भी वे प्रत्यक्ष होते हैं। अवतार को देखना जो है ईश्वर को देखना भी वही है। ईश्वर ही युग-युग में मनुष्य-रूप में अवतीर्ण होते हैं।*

---

* "धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।" (गीता— 4/8)

पञ्चम खण्ड

श्रीरामकृष्ण सींथी के ब्राह्मसमाज में ब्राह्मभक्तों के संग

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने श्रीयुक्त वेणीपाल के सींथी के बागान में शुभागमन किया है। आज सींथी के ब्राह्मसमाज का छ:माही महोत्सव है। रविवार, चैत्र पूर्णिमा, 10वाँ वैशाख; 22 अप्रैल, 1883 ईसवी; तीसरा प्रहर। अनेक ब्राह्मभक्त आए हैं; भक्तगण ठाकुर को घेरकर दक्षिण के दालान में बैठे हैं। सन्ध्या के बाद आदिसमाज के आचार्य श्रीयुक्त बेचाराम उपासना करेंगे।

ब्राह्मभक्त बीच-बीच में ठाकुर से प्रश्न कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त— महाशय, उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण— उपाय है अनुराग, अर्थात् उनको प्यार करना। और प्रार्थना करना।

ब्राह्मभक्त— अनुराग या प्रार्थना?

श्रीरामकृष्ण— अनुराग पहले, पीछे प्रार्थना।

डाको देखि मन डाकार मत केमन श्यामा थाकते पारे।

[भावार्थ— हे मन! आन्तरिक पुकार से पुकारो तो देखूँ फिर माँ कैसे रह सकती हैं?]

श्रीरामकृष्ण ने सुर के साथ इसी गाने को गाया।

"और सर्वदा ही उनका नाम-गुणगान, कीर्त्तन और प्रार्थना करनी

चाहिए। पुराना लोटा रोज माँजना चाहिए, एक बार माँजने से क्या होगा? और विवेक, वैराग्य— संसार अनित्य, यह बोध चाहिए।''

(ब्राह्मभक्त और संसार त्याग— संसार में निष्काम कर्म)

ब्राह्मभक्त— संसार-त्याग क्या ठीक है?

श्रीरामकृष्ण— सब के लिए संसार-त्याग नहीं है। जिनका भोगान्त नहीं हुआ है, उनके लिए संसार-त्याग नहीं है। दो आना मद से क्या मतवाला होता है?

ब्राह्मभक्त— तो फिर वे संसार (गृहस्थी) करेंगे?

श्रीरामकृष्ण— हाँ, वे निष्काम कर्म करने की चेष्टा करेंगे। हाथों में तेल मलकर कटहल तोड़ेंगे। बड़े मनुष्य के घर की दासी सब काम करती है, किन्तु मन गाँव में पड़ा रहता है; इसी का नाम है निष्काम कर्म।* इसी का नाम है मन से त्याग। तुम लोग मन से त्याग करोगे, संन्यासी बाहर का त्याग और फिर मन से त्याग, दोनों ही करेगा।

(ब्राह्मभक्त और भोगान्त— विद्यारूपिणी स्त्री का लक्षण— वैराग्य कब होता है?)

ब्राह्मभक्त— भोगान्त किस प्रकार हो?

श्रीरामकृष्ण— कामिनी-काञ्चन भोग है। जिस कमरे में इमली का आचार और जल का मटका हो, उस कमरे में प्रलाप (विकार, पागलपन) का रोगी रहे तो मुश्किल है! रुपया-पैसा, मान-इज्जत, देहसुख इत्यादि भोग एक बार बिना हुए— भोग का अन्त बिना हुए— सबको ईश्वर के लिए व्याकुलता नहीं आती।

ब्राह्मभक्त— स्त्री जाति खराब है या हम खराब हैं?

श्रीरामकृष्ण— विद्यारूपिणी स्त्री भी है, और फिर अविद्यारूपिणी स्त्री भी है। विद्यारूपिणी स्त्री भगवान की ओर ले जाती है; और अविद्यारूपिणी ईश्वर को भुलवा देती है, संसार में डुबा देती है।

---

* यत्करोषि यदश्नासि... कुरुष्व मदर्पणम्। (गीता— 9/27)

"उनकी महामाया से यह जगत, संसार है। इसी माया के भीतर विद्यामाया-अविद्यामाया दोनों ही हैं। विद्यामाया का आश्रय कर लेने पर साधुसंग, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, वैराग्य इत्यादि होते हैं। अविद्यामाया— पञ्चभूत और इन्द्रियों के विषय— रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द; और जितनी भी भोग की वस्तुएँ; ये सब ईश्वर को भुलवा देती हैं।"

ब्राह्मभक्त— अविद्या यदि अज्ञान (बेहोशी) पैदा करती है तो फिर उन्होंने अविद्या बनाई ही क्यों?

श्रीरामकृष्ण— उनकी लीला; अन्धकार न रहे तो आलोक की महिमा समझी नहीं जाती। दु:ख न हो तो सुख समझा नहीं जाता। 'मन्द'-ज्ञान के रहने पर ही तब 'भला'-ज्ञान होता है।

"और फिर यह है, छिलका है तभी आम बढ़ता है और पकता है। आम के तैयार हो जाने पर ही तब छिलका फेंका जाता है! मायारूप छाल के रहने पर ही तो धीरे-धीरे ब्रह्मज्ञान होता है। विद्यामाया, अविद्यामाया आम के छिलके की भाँति हैं; दोनों ही आवश्यक हैं।"

ब्राह्मभक्त— अच्छा, साकार-पूजा, मिट्टी से गढ़े देवता की पूजा, ये सब क्या ठीक हैं?*

श्रीरामकृष्ण— तुम साकार नहीं मानते, अच्छा है; तुम्हारे लिए मूर्त्ति नहीं, भाव है। तुम लोग आकर्षण ही लो जैसे कृष्ण के ऊपर राधा का आकर्षण; प्यार। साकारवादी जैसे माँ काली, माँ दुर्गा की पूजा करते हैं, 'माँ', 'माँ' करके कितना पुकारते हैं, कितना प्यार करते हैं, उसी भाव को तुम लोग लोगे, मूर्त्ति को चाहे नहीं भी मानो।

ब्राह्मभक्त— वैराग्य कैसे होता है? फिर सबको क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण— भोग की शान्ति बिना हुए वैराग्य नहीं होता। छोटे बच्चे को खाना और गुड़िया (खिलौना) देकर खूब भुला लिया जाता है। किन्तु जब खाना हो गया और खिलौने से खेलना हो गया, तब 'माँ जाऊँगा' कहता है। माँ के पास न ले जाया जाए तो गुड़िया दूर फेंक देता है और चीत्कार करके रोता है।

---

* 'मृण्मय आधार में चिन्मयी देवी'— केशव को उपदेश।

(सच्चिदानन्द ही गुरु— ईश्वर-लाभ के बाद सन्ध्या आदि कर्म-त्याग)

ब्राह्मभक्त गुरुवाद के विरोधी हैं। जभी ब्राह्मभक्त इस सम्बन्ध में बातें कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त— महाशय, गुरु बिना क्या ज्ञान नहीं होगा?

श्रीरामकृष्ण— सच्चिदानन्द ही गुरु हैं। यदि मनुष्य, गुरुरूप में चैतन्य करता है तो समझोगे सच्चिदानन्द ही यह रूप धारण किए हुए हैं। गुरु जैसे सेथो (साथी); हाथ पकड़कर ले जाते हैं। भगवान-दर्शन हो जाने पर फिर गुरु-शिष्य बोध नहीं रहता। 'से बड़ो कठिन ठाँइ, गुरु-शिष्य देखा नाइ'। जभी तो शुकदेव को जनक ने कहा, 'यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो पहले गुरु-दक्षिणा दे दो।' क्योंकि ब्रह्म-ज्ञान हो जाने पर फिर गुरु-शिष्य भेदबुद्धि नहीं रहेगी। जब तक ईश्वर-दर्शन नहीं होता, तब तक ही गुरु-शिष्य सम्बन्ध है।

क्रमशः सन्ध्या हो गई। ब्राह्मभक्तों में से किसी-किसी ने ठाकुर से कहा, "लगता है आपको अब सन्ध्या करनी होगी।"

श्रीरामकृष्ण— ना, वैसा कुछ नहीं है। वह सब तो पहले-पहले कुछ-कुछ कर लेना चाहिए। उसके पश्चात् फिर कोशाकुशि (अर्घा-अर्घी) अथवा नियम आदि का प्रयोजन नहीं रहता।

•

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण और आचार्य श्री बेचाराम— वेदान्त और ब्रह्मतत्त्व-प्रसंग)

सन्ध्या होने पर आदिसमाज के आचार्य श्रीयुक्त बेचाराम ने वेदी पर बैठकर उपासना की। बीच-बीच में ब्राह्मसंगीत और उपनिषद् से पाठ होने लगा। उपासना के अन्त में श्रीरामकृष्ण के संग बैठकर आचार्य बहुत-सा आलाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। आप क्या कहते हैं?

(साकार-निराकार, चिन्मयरूप और भक्त)

आचार्य— जी, निराकार जैसे electric current (बिजली-प्रवाह) है, आँखों से देखा नहीं जाता किन्तु अनुभव किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, दोनों ही सत्य हैं। साकार, निराकार दोनों ही सत्य। केवल निराकार बोलना कैसा है, जानते हो? जैसे 'रोशनचौकी' का एक व्यक्ति 'पों' ही पकड़े रहता है— उसकी बंशी में सात छिद्र होते हुए भी। किन्तु और एक व्यक्ति को देखो, कितनी राग-रागिणियाँ बजाता है। उसी प्रकार साकारवादीगण; देखो, ईश्वर का कितने प्रकार से सम्भोग करते हैं— शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर— नाना भावों में।

"बात क्या है, जानते हो?— अमृतकुण्ड में किसी भी प्रकार से गिरना। वह स्तव करके ही हो अथवा किसी ने धक्का मारा है और तुम कुण्ड में गिर पड़े हो, एक ही फल है। दोनों जन ही अमर होगे।[1]

"ब्राह्मभक्तों के लिए जल और बर्फ की उपमा ठीक है। सच्चिदानन्द है जैसे अनन्त जलराशि। महासागर का जल, ठण्डे देशों में स्थान-स्थान पर जैसे बर्फ का आकार धारण कर लेता है, उसी प्रकार भक्ति-हिम से वे ही सच्चिदानन्द (सगुण ब्रह्म) भक्त के लिए साकार रूप धारण कर लेते हैं। ऋषियों ने उन्हीं अतीन्द्रिय चिन्मय रूप के दर्शन किए थे और फिर उनके संग में बातें की थीं। भक्त के प्रेम शरीर[2], 'भागवतीतनु' द्वारा उन्हीं चिन्मय रूप का दर्शन होता है।

"और फिर है, ब्रह्म अवाङ्मनसोगोचर। ज्ञान-सूर्य के ताप से साकार

---

1 अमृतकुण्ड— ब्रह्मैवेदममृतं, पुरस्ताद् ब्रह्म, पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण।
अधश्चोर्ध्वञ्च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्॥ —मुण्डकोपनिषद् 2,2,11

2 नारद बोले, मुझे शुद्धा सर्वमयी भागवतीतनु प्राप्त हो गया है।
प्रयुज्यमाने मयि तां शुद्धां भागवती तनुम्।
आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतत् पांचभौतिकः॥ — श्रीमद्भागवत 1-6-29

बर्फ गल जाती है। ब्रह्मज्ञान के बाद, निर्विकल्प समाधि के पश्चात् फिर वे ही अनन्त, वाक्यमन के अतीत, अरूप, निराकार ब्रह्म!

"ब्रह्म का स्वरूप मुख से नहीं बोला जाता, चुप हो जाता है। अनन्त को कौन मुख से समझाएगा? पक्षी जितना ही ऊपर चढ़ता है, उसके ऊपर और भी है, आप क्या कहते हैं?"

आचार्य— जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार की बात ही है।

(निर्गुण ब्रह्म 'अवाङ्गमनसोगोचरम्'— त्रिगुणातीतम्)

श्रीरामकृष्ण— नमक का पुतला सागर मापने गया था, लौट कर फिर खबर नहीं दी। एक मत में है— शुकदेव आदि ने दर्शन-स्पर्शन किए थे, डुबकी नहीं लगाई थी।

"मैंने विद्यासागर से कहा था, सब वस्तुएँ झूठी हो गई हैं, किन्तु ब्रह्म उच्छिष्ट (झूठा) नहीं हुआ[1], अर्थात् ब्रह्म क्या है, कोई मुख से बोल नहीं सका है। मुख से बोलते ही वस्तु झूठी हो जाती है। विद्यासागर पण्डित थे, सुनकर बड़े खुश हुए।

"केदार(नाथ) के उधर सुना है, बर्फ से ढके पहाड़ हैं। अधिक ऊँचा चढ़ जाने पर फिर लौटना नहीं होता। अधिक ऊँचाई पर क्या है, वहाँ जाने पर कैसी अवस्था होती है— जो ये सब बातें जानने के लिए गए हैं, उन्होंने लौट आकर फिर खबर नहीं दी।

"उनका दर्शन हो जाने पर मनुष्य आनन्द में विह्वल हो जाता है, चुप हो जाता है।[2] कौन खबर देगा? समझावे कौन?

"सात ड्योढ़ियों के परे राजा है। प्रत्येक ड्योढ़ी पर एक-एक व्यक्ति यहाँ ऐश्वर्यवान् बैठा हुआ है। प्रत्येक ड्योढी पर शिष्य पूछता है, क्या यही राजा है? गुरु भी कह देते हैं, नहीं; नेति-नेति। सातवीं ड्योढी पर जाकर जो

---

1 अचिन्त्यम् अव्यपदेश्यम् अद्वैतम्॥ — माण्डूक्य उपनिषद्

2 यतो वाचो निवर्त्तन्ते। अप्राप्य मनसा सह। (तैत्तिरीय उपनिषद्, ब्रह्मवल्ली)

देखा, एकदम अवाक्[1]— आनन्द में विह्वल हो गया। फिर पूछना नहीं पड़ा, 'क्या यही राजा हैं?' देखते ही सब संशय चले गए।''

आचार्य— जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार ही सब है।

श्रीरामकृष्ण— जब वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं, तब उन्हें सगुण ब्रह्म, आद्याशक्ति कहता हूँ। जब वे तीनों गुणों के अतीत होते हैं, उन्हें निर्गुण ब्रह्म, वाक्य-मन के अतीत कहा जाता है; परब्रह्म।

''मनुष्य उनकी माया में पड़कर स्वरूप को भूल जाता है। वह जो बाप के अनन्त ऐश्वर्य का अधिकारी है, वह भूल जाता है। उनकी माया है त्रिगुणमयी। ये तीनों गुण ही डाकू हैं। सर्वस्व हरण कर लेते हैं; स्वरूप को भुला देते हैं। सत्त्व, रज, तम हैं तीन गुण। इनमें से सत्त्वगुण ही ईश्वर का पथ दिखला देता है। किन्तु ईश्वर के पास यह सत्त्वगुण भी नहीं ले जा सकता।

> ''कोई धनी वनपथ से जा रहा था, तब तीन डाकुओं ने आकर उसे घेर लिया और उसका सर्वस्व छीन लिया। सब कुछ छीन लेने पर एक डाकू बोला, 'इसको बचाकर फिर क्या होगा? इसे मार डालो'; यह कहकर उसे काटने के लिए बढ़ा। दूसरे डाकू ने कहा, 'मार डालने की जरूरत नहीं है, इसको आगे-पीछे से बाँधकर यहाँ पर ही पड़ा रहने दिया जाए। तो फिर पुलिस को खबर न दे सकेगा।' यह कहकर उसे बाँध, छोड़कर चले गए। कुछ देर बाद तीसरा डाकू वापस आया। आकर बोला, 'हाय! तुम्हें बहुत कष्ट हो रहा है ना? मैं तुम्हारे बन्धन खोल देता हूँ।' बन्धन खोलने के बाद उस व्यक्ति को साथ लेकर डाकू पथ दिखाता हुआ चलने लगा। सरकारी रास्ते के निकट आकर बोला, 'इसी पथ पर चलते जाओ, अब तुम अनायास में ही अपने घर जा सकोगे।' वह आदमी बोला, 'यह क्या महाशय, आप भी चलें, आपने मेरा कितना उपकार किया है। आपके हमारे घर जाने पर हम कितने आनन्दित होंगे।' वह डाकू बोला, 'नहीं, मैं वहाँ नहीं जा सकता,

---

1 छिद्यन्ते सर्वसंशया... तस्मिन् दृष्टे परावरे। (मुण्डक उपनिषद्— 2/2/8)

पुलिस पकड़ लेगी।' यह कहकर पथ दिखलाकर चला गया।

"प्रथम डाकू तमोगुणी था, जिसने कहा था, 'इसको बचाकर फिर क्या होगा; मार डालो।' तमोगुण से विनाश होता है। दूसरा डाकू रजोगुणी था, रजोगुण से मनुष्य संसार में बद्ध होता है; नाना कामों में जड़ित हो जाता है। रजोगुण ईश्वर को भुलवा देता है। सत्त्वगुण ही केवल ईश्वर का पथ दिखा देता है। दया, धर्म, भक्ति इत्यादि सत्त्वगुण से होते हैं। सत्त्वगुण मानो सीढ़ियों का अन्तिम धाम (पाद) है; उसके परे ही छत है। मनुष्य का स्वधाम होता है परब्रह्म। त्रिगुणातीत बिना हुए ब्रह्मज्ञान नहीं होता।"

आचार्य— सब बातें सुन्दर हुईं!

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— भक्त का स्वभाव कैसा होता है, जानते हो? मैं कहूँ तुम सुनो, तुम बोलो मैं सुनूँ। तुम आचार्य हो, कितने लोगों को शिक्षा देते हो। तुम जहाज हो, हम छोटी नाव हैं। *(सब का हास्य)*।

●

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण हरिकीर्त्तनानन्द में— हरिभक्ति-प्रदायिनी सभा में और रामचन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता के काँसारीपाड़ा हरिभक्ति प्रदायिनी सभा में शुभागमन किया है; रविवार, 31वाँ वैशाख, 1290 (बंगला) साल, शुक्ला सप्तमी और संक्रान्ति; **13 मई, 1883 ईसवी**। आज सभा का वार्षिक उत्सव हो रहा है। मनोहरसाईं का कीर्त्तन हो रहा है।

'मान' इस विषय पर गाना हो रहा है। सखियाँ श्रीमती से कह रही हैं—

'मान क्यों किया है, तब तो लगता है तू कृष्ण का सुख नहीं चाहती।'

श्रीमती कहती हैं—

'चन्द्रावली के कुञ्ज में जाने के लिए नहीं। वहाँ पर क्यों जाना ? वह तो सेवा नहीं जानती!'

•

अगले रविवार (20-5-1883) रामचन्द्र के घर में फिर कीर्त्तन हो रहा है, 'माथुर गान'। ठाकुर आए हैं। वैशाख शुक्ला चतुर्दशी; 7वाँ ज्येष्ठ। माथुर गान हो रहा है, श्रीमती कृष्ण के विरह में अनेक बातें बोल रही हैं।

> बालिका अवस्था से ही श्याम को देखना चाहती थी। सखि, दिन गिनते-गिनते मेरी उंगलियों के नाखून घिस गए हैं।
>
> देख, उन्होंने जो माला दी थी, वह माला सूख गई है, किन्तु मैंने फेंकी नहीं है।
>
> कृष्णचन्द्र का उदय कहाँ पर हुआ है ? वह चन्द्र, मान रूप राहु के भय से, लगता है, चला गया है।
>
> हाय! उसी कृष्ण-मेघ के फिर अब कब दर्शन होंगे; क्या फिर दर्शन होगा ?

हे बन्धु, प्राण भरकर तुम्हें कभी भी देख नहीं पाई; एक तो दो ही आँखें हैं, उस पर पलकें, उस पर अश्रुधारा!

उनके सिर पर मोरपंख मानो स्थिर बिजली है। उसी मेघ को देखकर मोर पंख उठाकर नृत्य किया करते थे।

सखि, यह प्राण तो रहेगा नहीं— ''इस देह को तमाल वृक्ष की डाल पर रख देना और मेरे शरीर पर कृष्णनाम लिख देना!''

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं,

''वे और उनका नाम अभेद; जभी श्रीमती इस प्रकार कह रही हैं। जो राम वही नाम।''

ठाकुर भावाविष्ट होकर इस माथुर कीर्त्तन के गाने को सुन रहे हैं। गोस्वामी कीर्त्तनिया ये समस्त गाने गा रहे हैं।
आगामी रविवार को फिर दक्षिणेश्वर-मन्दिर में यही गान होगा। और उसके अगले रविवार को फिर अधर के घर में यही कीर्त्तन होगा।

●

चतुर्थ परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के मन्दिर में अपने कमरे में खड़े हुए हैं और भक्तों के संग बातचीत कर रहे हैं। आज रविवार है, 14वाँ ज्येष्ठ, कृष्ण पञ्चमी; **27 मई, 1883** ईसवी; समय 9 का होगा। भक्त लोग क्रमशः आ-आकर जमा हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर आदि भक्तों के प्रति)*— विद्वेष-भाव अच्छा नहीं होता— शाक्त, वैष्णव, वैदान्तिक— ये झगड़ा करते हैं, यह तो ठीक नहीं। पद्मलोचन वर्धमान के सभा-पण्डित थे; सभा में विचार हो रहा था— शिव बड़े हैं या ब्रह्मा बड़े हैं। पद्मलोचन ने सुन्दर कहा था— मैं नहीं जानता, मेरे साथ शिव का भी परिचय नहीं है, ब्रह्मा का भी नहीं है। *(सब का हास्य)*।

"व्याकुलता रहने पर सब पथों द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जाता है। किन्तु निष्ठा रहनी अच्छी है। निष्ठाभक्ति का और भी एक नाम है अव्यभिचारिणी भक्ति, जैसे एक डाल वाला वृक्ष सीधा बढ़ता है। व्यभिचारिणी भक्ति, जैसे पाँच डालों वाला वृक्ष। गोपियों की ऐसी निष्ठा थी कि वृन्दावन के मोहनचूड़ा और पीत धड़ा (पीला वस्त्र) पहने हुए गोपालकृष्ण को छोड़ और किसी को पसन्द नहीं करेंगी। मथुरा में जब राजवेश, सिर पर पगड़ी वाले कृष्ण के दर्शन किए तब उन्होंने घूँघट निकाल लिया। और बोलीं— ये फिर कौन हैं? इनके साथ बातें करके हम क्या द्विचारिणी बनेंगी?

"स्त्री जो स्वामी की सेवा करती है, वह भी निष्ठाभक्ति है; देवर, जेठ को खिलाती है, पाँव धोने के लिए जल देती है, किन्तु स्वामी के साथ और सम्बन्ध होता है। उसी प्रकार अपने धर्म में भी निष्ठा हो सकती है। इस कारण अन्य धर्म से घृणा नहीं करेगा। वरन् उनके संग में मिष्ट व्यवहार करेगा।"

ठाकुर गंगास्नान करके काली-मन्दिर में गए हैं। संग मास्टर हैं। ठाकुर पूजा के आसन पर बैठे हुए माँ के पादपद्मों में फूल दे रहे हैं, बीच-बीच में अपने सिर पर भी दे रहे हैं और ध्यान कर रहे हैं।

(जगन्माता की पूजा और आत्मपूजा— 'विपदनाशिनी' मन्त्र और नृत्य)

काफी देर के बाद ठाकुर आसन पर से उठे। भाव में विभोर हैं, नृत्य कर रहे हैं और मुख से माँ का नाम कर रहे हैं। कह रहे हैं 'माँ विपदनाशिनी गो, विपदनाशिनी'! देह धारण करने से ही दुःख-विपद है, तभी लगता है जीव को सिखाने के लिए उन्हें 'विपदनाशिनी' यह महामन्त्र उच्चारण करके कातर होकर पुकार रहे हैं।

(पूर्वकथा— श्रीरामकृष्ण और झामापुकुर के नकुड़ बाबाजी)

अब ठाकुर अपने कमरे के पश्चिमी बरामदे में आकर बैठ गए हैं। अभी तक भावावेश है। पास राखाल, मास्टर, नकुड़ वैष्णव आदि हैं। नकुड़ वैष्णव को ठाकुर 28-29 वर्षों से जानते हैं। जब वे प्रथम कलकत्ता में आकर झामापुकुर में थे और घर-घर में पूजा करते हुए फिरते थे तब कभी-कभी नकुड़ वैष्णव की दुकान पर आकर बैठा करते और आनन्द किया करते थे। पेनेटी में राघव पण्डित के महोत्सव के उपलक्ष्य में नकुड़ बाबाजी अब ठाकुर का प्रायः प्रतिवर्ष दर्शन करते हैं। नकुड़ वैष्णवभक्त हैं, वे भी कभी-कभी महोत्सव करते हैं। नकुड़ मास्टर के पड़ोसी हैं। ठाकुर जब झामापुकुर में थे, तब गोबिन्द चटर्जी के घर में रहते थे। वह पुराना घर नकुड़ ने मास्टर को दिखाया था।

(श्रीरामकृष्ण जगन्माता के नाम-कीर्त्तनानन्द में)

ठाकुर भावावेश में गाना गा रहे हैं—

कीर्त्तन

1. सदानन्दमयी काली (महाकालेर मनोमोहिनी)।
   तुमि आपन सुखे आपनि नाचो मा, आपनि दाओ मा करतालि॥
   आदिभूता सनातनी, शून्यरूपा शशी भालि।
   ब्रह्माण्ड छिलो ना जखन (तुई), मुण्डमाला कोथाय पेलि॥

सबे मात्र तुमि मा यन्त्री, आमरा तोमार तन्त्रे चलि।
जेमन कराओ तेमनि करि मा, जेमन बोलाओ तेमनि बोलि॥
निर्गुणे कमलाकान्त दिये बोले मा गालागालि।
सर्वनाशी धरे असि, धर्माधर्म दुटो खेलि॥

[भावार्थ— हे सदानन्दमयी काली, महाकाल की मनमोहिनी, तुम अपनी खुशी में स्वयं नाचती हो और स्वयं ही ताली बजाती हो। तुम आदिभूता सनातनी हो, शून्य-रूपा हो, तुम्हारे मस्तक पर चन्द्रमा सुशोभित है। जब ब्रह्माण्ड नहीं था तब तुम ने यह मुण्डमाला कहाँ से ली थी? सब लोग तो तुम्हारे केवल यन्त्र हैं, मैं तुम्हारे शासन में चलता हूँ। जैसे कराती हो, वैसे करता हूँ; जैसे बुलवाती हो, वैसे बोलता हूँ। अरी निर्गुणे माँ, कमलाकान्त अब गाली देकर कहता है कि अब की बार तो उस सर्वनाशिनी ने तलवार पकड़ ली है और धर्म-अधर्म दोनों को खा लिया है।]

2. आमार मा त्वं हि तारा तुमि त्रिगुणधरा परात्परा।
आमि जानि मा ओ दीन-दयामयी तुमि दुर्गमेते दुखहरा।
तुमि सन्ध्या तुमि गायत्री, तुमि जगद्धात्री, गो मा
तुमि अकूलेर त्राणकर्त्री सदाशिवेर मनोहरा।
तुमि जले तुमि स्थले, तुमि आद्यमूले गो मा
आछो सर्वघटे अक्षपुटे, साकार आकार निराकारा।

[भावार्थ— हे तारा, तुम ही मेरी माँ हो। तुम तीनों गुणों को धारण करने वाली और सबसे बड़े से बड़ी (परात्परा) हो। ओ माँ दीन-दयामयी, मैं जानता हूँ, तुम कठिनाई में दुःख हरण करती हो। तुम ही सन्ध्या, गायत्री, जगत की धात्री हो। तुम ही हे माँ, अभाव वाले की रक्षा करने वाली, सदाशिव के मन को हरने वाली हो। तुम्हीं जल में, तुम्हीं स्थल में, तुम्हीं हे माँ! आदि के मूल में हो। माँ, तुम सब घटों का प्रत्यक्ष आधार होते हुए भी साकार, आकार, निराकार हो।]

3. गोलमाले माल रयेछे, गोल छेड़े माल बेछे नाओ।
['गोलमाल' में 'माल' है, गोल (गड़बड़) छोड़कर 'माल' छाँट लो।]

4. मन चले जाइ, आर काज नाइ, तारार ओ तालुके रे।
[हे मन, यहाँ पर और काम नहीं है, चलो चलें तारों के उस ताल्लुके।]

5. पड़िये भवसागरे, डोबे मा तनुर तरी;
माया झड़ मोह तुफान क्रमे बाड़े गो शंकरी।*

[हे माँ शंकरी, भवसागर में पड़कर तो शरीर रूपी नाव डूब रही है, माया-मोह के झड़-तूफान तो क्रमश: बढ़ते ही जा रहे हैं।]

6. माये पोये दुटो दुखेर कथा कइ।
कारुर हाथीर उपर छइ, कारुर्चिड़ेर उपर खासा दइ।

[आओ माँ, हम दोनों माँ-बेटा दु:ख की दो-चार बातें करें। किसी के तो हाथी के ऊपर छप्पर है, किसी के चिड़वे के ऊपर बढ़िया दही है।]

श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं—

"गृहस्थियों के सामने केवल दु:ख की बातें अच्छी नहीं होतीं। आनन्द मनाना चाहिए। जिन्हें अन्न का अभाव रहता है, वे तो चाहे दो दिन उपवास कर सकते हैं, और जिन्हें खाने में ज़रा देर हो जाती है वे बीमार हो जाते हैं; उनके निकट केवल रोने की बातें, दु:ख की बातें करना ठीक नहीं।

"वैष्णवचरण कहा करता था, केवल पाप-पाप— यह सब क्या है ? आनन्द मनाओ।"

ठाकुर आहार के पश्चात् थोड़ा-सा विश्राम भी नहीं कर सके थे कि मनोहरसाईं गोस्वामी आ उपस्थित हुए।

(श्री राधा के भाव में महाभावमय श्रीरामकृष्ण— ठाकुर या गौरांग)

गोस्वामी पूर्वराग कीर्त्तन गान कर रहे हैं। थोड़ा-सा सुनते-सुनते ही

---

* पूरा गाना पृष्ठ 27 पर देखें।

ठाकुर राधा के भाव में भावाविष्ट हो गए।

प्रथम ही गौर चन्द्रिका-कीर्त्तन करते हैं—

'हथेली पर हाथ— चिन्तित— गोरा— आज क्यों चिन्तित?
लगता है राधा के भाव में भावाविष्ट हो गए हैं।'

गोस्वामी फिर और गाना गा रहे हैं—

घरेर बाहिरे, दण्डे शतबार, तिले तिले आइसे जाय।
किवा मन उचाटन, निःश्वास सघन, कदम्ब कानने चाय॥
(राइ एमन केने वा होइलो गो!)

[भावार्थ— (राधा) घर के बाहर सैंकड़ों बार खड़ी होती हैं, क्षण-क्षण में आती-जाती हैं। मन उचाट हो रहा है और गहरे श्वास-प्रश्वास लेती हुई कदम्ब-कानन की ओर देख रही हैं। (राधा ऐसी क्यों हो गईं हैं!)]

गाने की यह लाइन सुनकर ठाकुर श्रीरामकृष्ण की महाभाव की अवस्था हो गई है। देह का कुरता फाड़कर फेंक दिया।

कीर्त्तनिया जब गाते हैं— शीतल तछु अंग।
तनु परशे, अमनि अवश अंग!*

महाभाव में ठाकुर को कम्पन हो रहा है!

(केदार की ओर देखकर)— ठाकुर कीर्त्तन के सुर में कह रहे हैं, "प्राणनाथ, हृदयवल्लभ, तुम कृष्ण को ला दो; सुहृद (मित्र) का ही तो यह काम है; या तो ला दो, नहीं तो मुझे ले चलो; तुम्हारी चिरदासी हो जाऊँगी।"

गोस्वामी कीर्त्तनिया ठाकुर की महाभाव की अवस्था देखकर मुग्ध हो गए हैं। वे हाथ जोड़कर कह रहे हैं, "मेरी विषयबुद्धि समाप्त कर दीजिए।"

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— 'साधु ने वासा पकड़ लिया है।' तुम इतने बड़े रसिक हो; तुम्हारे भीतर से मीठा रस निकल रहा है!

गोस्वामी— प्रभो, मैं चीनी ढोने वाला बैल हूँ, चीनी का स्वाद कहाँ ले पाया हूँ?

---

* उनके शीतल अंग, दुर्बल स्पर्श से, झट बेबस हो गए।

फिर और कीर्त्तन चलने लगा। कीर्त्तनिया श्रीमती की दशा का वर्णन कर रहे हैं— 'कोकिल— कुलकुर्वति कलनादम्।'

[कोकिला सुमिष्ट कलनाद कर रही है।]

कोयल का कलनाद सुनकर श्रीमती को शायद ब्रजध्वनि याद आ रही है। जभी जैमिनी का नाम कर रही हैं। और कह रही हैं,

'सखि, कृष्ण-विरह में यह प्राण नहीं रहेगा,
देह को तमाल वृक्ष की डाल पर रख देना।'

गोस्वामी ने राधाश्याम-मिलन-गान गाकर कीर्त्तन समाप्त किया।

षष्ठ खण्ड

कलकत्ता में
बलराम और अधर के घर में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर–मन्दिर से कलकत्ता आए हैं। बलराम के घर से अधर के घर जाएँगे। उसके बाद राम के घर जाएँगे। अधर के घर में मनोहरसाँई का कीर्त्तन होगा। राम के घर में कथकता (प्राचीन कथा का संगीतादि के साथ व्याख्यान) होगी। आज शनिवार, 20वाँ ज्येष्ठ, कृष्णा द्वादशी; 2 जून, 1883 ईसवी।

ठाकुरबाड़ी में आते–आते राखाल और मास्टर आदि भक्तों से कह रहे हैं, "देखो, उनके ऊपर प्यार आने पर पाप–टाप सब पलायन कर जाते हैं, सूर्य के ताप से जैसे मैदान के तालाब का जल सूख जाता है।"

(संन्यासी और गृहस्थ की विषयासक्ति)

"विषय के ऊपर, कामिनी–काञ्चन के ऊपर, प्यार रहने से नहीं होता। संन्यास लेने पर भी नहीं होता यदि विषयासक्ति रहे। जैसे थूक फेंक कर फिर दोबारा थूक चाटना"

कुछ देर बाद गाड़ी में ठाकुर और कहते हैं,

"ब्रह्मज्ञानी साकार नहीं मानते। *(सहास्य)* नरेन्द्र कहता है, 'पुत्तलिका'

(मूर्तिपूजा)! और भी कहता है, ये अभी भी काली-मन्दिर जाते हैं।"

●

(श्रीरामकृष्ण और नरलीला-दर्शन और आस्वादन)

ठाकुर बलराम के घर पर आए हैं।

ठाकुर हठात् भावाविष्ट हो रहे हैं। लगता है, देख रहे हैं, ईश्वर ही जीव-जगत होकर रह रहे हैं, ईश्वर ही मनुष्य होकर फिर रहे हैं।

जगन्माता से कह रहे हैं—

"माँ, अब यह क्या दिखला रही हो! ठहरो; और फिर कितना कुछ राखाल-वाखाल के द्वारा क्या दिखाती हो! रूप-टूप सब उड़ गए हैं। फिर माँ, मनुष्य तो केवल गिलाफ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। चैतन्य तो तुम्हारा ही (है)।

"माँ, आजकल ब्रह्मज्ञानी लोगों को मिष्टरस नहीं मिलता। आँखें शुष्क, मुख सूखा हुआ! प्रेम, भक्ति बिना हुए कुछ भी नहीं हुआ।

"माँ तुम से कहा था, एक व्यक्ति साथी बना दो, मेरे जैसा। तभी लगता है, राखाल को दिया है।"

●

(अधर के घर में हरि-कीर्त्तनानन्द में)

ठाकुर अधर के घर में आए हैं। मनोहरसाँई-कीर्त्तन का आयोजन हो रहा है।

अधर के बैठकखाने में अनेक भक्त और पड़ोसी ठाकुर का दर्शन करने आए हैं। सब की इच्छा है कि ठाकुर कुछ बोलें।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— संसार और मुक्ति, दोनों में ही ईश्वर की इच्छा है। उन्होंने ही संसार में बेहोश करके रखा हुआ है; और वे ही जब

इच्छा करके पुकारेंगे तब मुक्ति होगी। लड़का खेलने गया है, खाने के समय माँ पुकारती है।

"जब वे मुक्ति देंगे तब साधुसंग करवा लेंगे। और फिर उनको पाने के लिए व्याकुलता कर देंगे।"

पड़ोसी— महाशय, किस प्रकार की व्याकुलता?

श्रीरामकृष्ण— काम चले जाने पर व्यक्ति को जैसे व्याकुलता हो जाती है! वह जिस प्रकार रोज ऑफिसों में घूमता है और पूछता है— अजी, कोई काम खाली है? व्याकुलता होने पर छटपटाता है; कैसे ईश्वर को पाऊँ!

"मूछें चढ़ाई हुई, पाँव पर पाँव रखकर बैठे हैं, पान चबा रहे हैं, कोई चिन्ता नहीं, ऐसी अवस्था में ईश्वर-लाभ नहीं होता!"

पड़ोसी— साधुसंग होने पर क्या ऐसी व्याकुलता हो सकती है?

श्रीरामकृष्ण— हाँ, हो सकती है; किन्तु नास्तिक (पाखण्डी) को नहीं होती। साधु का कमण्डलु चारों धाम करके आने पर भी जैसा कड़वा था, वैसा ही कड़वा रहता है!

अब कीर्त्तन आरम्भ हो गया है! गोस्वामी कलह-संवाद गा रहे हैं।

श्रीमती कहती हैं, सखि प्राण जा रहा है, कृष्ण को ला दे!

सखि— राधे, कृष्ण-मेघ बरस रहा था, किन्तु तूने मान-रूप झंझावात से मेघ को उड़ा दिया है। तू कृष्ण के सुख में सुखी नहीं है; तो फिर मान क्यों करती है?

श्रीमती— सखि, मान तो मेरा नहीं है। जिसका मान है उसके संग चला गया है।

ललिता श्रीमती की ओर से दो बातें कहती है।

सबने मिलकर प्रीति कर ली,
किसी ने उसे (प्रीति को) दिखाया घाट पर या मैदान में,
विशाखा ने दिखाया है चित्रपट पर!

अब कीर्त्तन में गोस्वामी कह रहे हैं कि सखियाँ राधाकुण्ड के

निकट श्री कृष्ण की खोज करने लगीं। तत्पश्चात् यमुना के किनारे श्री कृष्ण-दर्शन; श्री दाम, सुदाम, मधुमंगल के साथ, वृन्दा के साथ श्री कृष्ण की बातें; श्री कृष्ण का योगीवेश में जटिला-संवाद, राधा का भिक्षा-दान; राधा का हाथ देखकर योगी का ज्योतिष लगाना और विपत्ति का कहना।

कीर्त्तन समाप्त हो गया। ठाकुर श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में बातें कर रहे हैं— कात्यायनी-पूजा के आयोजन में जाने की बात।

(The humanity of Avatars)

श्रीरामकृष्ण— गोपियों ने कात्यायनी की पूजा की थी। सब ही उस महामाया आद्याशक्ति के अधीन हैं। अवतार आदि पर्यन्त माया का आश्रय करके ही फिर लीला करते हैं। जभी वे आद्याशक्ति की पूजा करते हैं। देखो ना, 'राम सीता के लिए कितना रोए थे! 'पञ्च भूतेर फाँदे, ब्रह्म पड़े काँदे।' (पञ्चभूत के बन्धन, ब्रह्म करे क्रन्दन।)

''हिरण्याक्ष का वध करके वराह अवतार बाल-बच्चे लेकर रह रहे थे। आत्म विस्मृत होकर (अपने को भूलकर) उन्हें स्तन पिला रहे थे! देवताओं ने परामर्श करके शिव को भेज दिया। शिव ने शूल के आघात से वराह की देह काट दी; तब वे स्वधाम को चले गए। शिव ने पूछा था— तुम अपने को क्यों भूले हुए हो? उस पर उन्होंने कहा था, मैं बड़ा बढ़िया हूँ!''

अधर के घर से अब ठाकुर राम के घर में जा रहे हैं। वहाँ पर कथक ब्राह्मण के मुख से उद्धव-संवाद* सुना। राम के घर में केदार आदि भक्तगण उपस्थित थे।

•

* श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत, द्वितीय भाग— पञ्चम खण्ड, प्रथम परिच्छेद

द्वितीय परिच्छेद

दक्षिणेश्वर में मणिरामपुर और बेलघर के भक्तों के संग में

(श्रीरामकृष्ण-कथित निज चरित)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में अपने कमरे में कभी खड़े होकर, कभी बैठकर भक्तों के साथ बातें कर रहे हैं। आज रविवार, **10 जून, 1883 ईसवी**; ज्येष्ठ शुक्ला पञ्चमी; समय 10 का होगा। राखाल, मास्टर, लाटु, किशोरी, रामलाल, हाजरा आदि अनेक ही हैं।

ठाकुर अपने चरित्र की पूर्व कहानी वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— वहाँ गाँव में बचपन में पुरुष-स्त्री, मुझे सब पसन्द करते थे। मेरा गाना सुनते। और फिर मैं लोगों की नकल कर सकता था, वही सब लोग देखते और सुनते। उनके घरों के बड़े मेरे लिए खाने की चीजें रख देते थे। किन्तु कोई अविश्वास नहीं करता था। सब ही देखते जैसे घर का लड़का है।

"किन्तु मैं सुख पर लट्टू था। खूब अच्छी सुखी गृहस्थी देखता तो आना-जाना करता। जिस घर में दु:ख-विपद देखता, वहाँ से भागता।

"लड़कों में से एक-दो को भला जन देखने पर खूब प्यार करता। किसी के संग दोस्ती करता। किन्तु अब वे लोग घोर विषयी हैं। अब वे कोई-कोई यहाँ पर आते हैं, आकर कहते हैं, 'ओ माँ! पाठशाला में जैसा देखा था, यहाँ पर भी ठीक वैसा ही देख रहे हैं'।

"पाठशाला में शुभंकरी (गणित) के सवालों से चक्कर आते थे। किन्तु चित्र सुन्दर आंक सकता था; और छोटे-छोटे देवता सुन्दर गढ़ सकता था।"

(Fond of charitable houses; and of Ramayana and Mahabharata— सदाव्रत, अतिथिशालाओं का शौकीन; तथा रामायण और महाभारत का)

"सदाव्रत, अतिथिशाला, जहाँ पर देखता, वहाँ जाकर बहुत देर तक खड़ा होकर देखा करता।

"कहीं पर रामायण या महाभारत का पाठ हो रहा है तो वहाँ पर बैठकर सुनता था। किन्तु यदि कोई ढोंग करके पढ़ता था, तो फिर उसकी नकल किया करता, और अन्य लोगों को सुनाता था।

"औरतों का ढंग अच्छी तरह समझ सकता था। उनकी बातें, सुर, नकल किया करता। बालविधवा बाप को उत्तर देती है, 'जाती हूँ।' बरामदे में औरतें पुकारती हैं 'ओ तपसे मछलीवाले (छोटी मछली वाले)!' कुचलन स्त्री को पहचान सकता था। विधवा ने सिर पर सीधी माँग निकाली हुई है और बड़े अनुराग से देह पर तेल मला हुआ है! लज्जा कम है, बैठने का तरीका ही अलग।

"रहने दो ये विषयियों की बातें।"

रामलाल को गाना गाने के लिए कह रहे हैं। श्रीयुक्त रामलाल गा रहे हैं—

1. कि रणे नाचिछे वामा नीरद बरणी,
   शोणित सायरे जेनो भासिछे नव नलिनी।

   [रणभूमि में यह कौन मेघवरणी नाच रही है, जैसे रुधिर-सरोवर में नव नलिनी तैर रही हो।]

अब रामलाल रावण-वध के बाद मन्दोदरी का विलाप-गान गा रहे हैं—

2. कि करले हे कान्त! अबलारि प्राण कान्त,
   होय ना ताहा शान्त ए प्राणान्त बिने।
   (होय) कर्ता कनक-राज्ये, आज जे धराशय्ये,
   ऐ देखे तोमार भार्ये धैर्य होय केमने।

(ओ) जार यम करे दासत्व, एम्नि आधिपत्य
स्वर्ग मर्त्य माझे कारु देखिने—
इन्द्रादिर ओ ठाकुराणी, तोमार आज से राणी
होलाम कांगालिनी एखन ए भुवने।
नवीन जटाधारी, विपिन विहारी
सब हाराले ताय मनुष्यज्ञाने।
(ओ) जार पद अभिलाषी, ईशान श्मशानवासी
ब्रह्मा अभिलाषी सेइ रतने—
(राजा) किछु ना मानिले, यदि ओ शुनेछिले
पाषाणी होय मानवी, सेइ रामेर चरणे॥

[भावार्थ— हे कान्त! तुम ने यह क्या किया? मुझ अबला के प्राणों के कान्त, अब ये प्राणान्त बिना हुए शान्त नहीं होंगे। जो सोने की लंका के मालिक थे, आज वे धराशायी भी हैं, यह देखकर तुम्हारी पत्नी कैसे धैर्य रख सकती है? जिसका यमराज दासत्व करते थे, और ऐसा आधिपत्य था आपका जो स्वर्ग और मर्त्य में किसी ने नहीं देखा। इन्द्र आदि की स्त्रियों की भी जो ठाकुराणी थी, तुम्हारी आज वह रानी मैं इस भुवन में फकीरनी हो गई हूँ। वन बिहारी, नवीन जटाधारी को तुम ने मनुष्य समझ कर अपना सब कुछ गँवा लिया है। जिसके चरणों के अभिलाषी श्मशान वासी ईशान (शिव) हैं, ब्रह्मा हैं, उसी रतन को तुम ने कुछ भी नहीं माना, यद्यपि तुमने सुन लिया था कि इन्हीं राम के चरणों के स्पर्श से पाषाणी (अहिल्या) मानवी हो गई थी।]

(राम-नाम में श्रीरामकृष्ण विह्वल— गोपी-प्रेम)

अन्तिम गाना सुनते-सुनते ठाकुर आँसू बहा रहे हैं और कह रहे हैं— ''मैंने झाउतले में बाह्य करने जाते हुए सुना था, नौका का माँझी नौका पर यही गान गा रहा था; झाउतले में जब तक बैठा था केवल रो रहा था; मुझे पकड़-पकड़कर कमरे में लाए थे।''

3. शुनेछि राम तारक ब्रह्म, मानुष नय राम जटाधारी।
पति कि नाशिते वंश, सीते तार करे छो चुरि॥

[सुना है राम तारक ब्रह्म हैं, जटाधारी राम मनुष्य नहीं हैं।

हे पति, क्या आप ने वंश का नाश करने के लिए ही उनकी सीता को चुराया है ?]

अक्रूर श्री कृष्ण को रथ में बिठाकर मथुरा ले जा रहे हैं, देखकर गोपियों ने रथ के पहियों को जकड़ कर पकड़ लिया और कोई-कोई रथ के पहियों के सामने लेट गईं। वे अक्रूर को दोष दे रही हैं। श्री कृष्ण जो अपनी इच्छा से जा रहे हैं, वे नहीं जानतीं।

4. धोरो ना धोरो ना रथचक्र, रथ कि चक्रे चले,
जे चक्रेर चक्री हरि जार चक्रे जगत चले।
धोरो ना धोरो ना बाजी, ए बाजी नय भेल्किबाजी
फुरालो प्रेमेर बाजी, (आज) बाजी भोर होलो गोकुले।
मिछे दोषो रे सारथि, ए सारथि असार अति,
बिना रथीर अनुमति, कारो कोथा रथ अम्नि चले।

[(श्री कृष्ण जब अक्रूर जी के संग वृन्दावन से मथुरा जाने के लिए रथ पर सवार हो गए, तो गोपियों ने रथ के पहिए पकड़ लिए ताकि रथ हिल न सके। तब अक्रूर जी बोले—) रथ-चक्र को मत पकड़ो, मत पकड़ो। क्या रथ पहियों से चलता है ? जिस रथ के चक्री (सुदर्शनचक्र-धारी) स्वयं हरि (विष्णु) हैं, जिनके चक्र (शासन, शक्ति) से जगत चलता है, उनके रथ के घोड़ों को मत पकड़ो, मत पकड़ो। ये वाजी (घोड़े) नहीं हैं, यह जादूगरी है। अब प्रेम की बाजी समाप्त हो गई है, (आज) गोकुल में यह प्रेम की बाजी पूरी हो गई है। अरी, तुम सारथि को व्यर्थ में दोष न लगाओ, यह सारथि अति असार (शक्तिहीन) है। बिना रथी की अनुमति से क्या कभी किसी का रथ यूँ ही चलता है!]

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— गोपियों का कैसा प्यार, कैसा प्रेम! श्रीमती ने अपने हाथ से श्री कृष्ण का चित्र आंका था, किन्तु पाँव नहीं बनाए, कहीं फिर वे मथुरा में न चले जाएँ।

"मैं ये सब गाने बचपन में बहुत गाता था। एक-एक यात्रा (गीति नाटक) का समस्त पाला (अभिनय) गा सकता था। कोई-कोई कहता मैं

कालीयदमन-यात्रा के दल में था।''

एक भक्त नई ओढ़नी (चादर) ओढ़कर आए हैं। राखाल का बालक स्वभाव, कैंची लाकर उनकी चादर का छिला (सूत-फुंदने) काटने लगते हैं। ठाकुर बोले, ''क्यों काटता है ? रहने दे, शॉल की भाँति सुन्दर लग रहे हैं। हाँ भई, इसका क्या दाम है ?'' तब विलायती चादरों का दाम कम था। वे भक्त बोले— एक रुपया छः आने जोड़ा। ठाकुर बोले, ''अजी, क्या कहते हो! जोड़ा! एक रुपया छः आने जोड़ा!''

कुछ क्षण पश्चात् ठाकुर भक्त से कह रहे हैं, ''जाओ, जाकर गंगा नहाओ। इनको तेल दे रे।''

स्नान के बाद उनके लौट आने पर ठाकुर ने ताक (shelf) से एक आम लेकर उन्हें दिया। कह रहे हैं—

यह आम इसको देता हूँ; ये तीन श्रेणी (डिग्रियाँ) पास किए हैं। अच्छा, तुम्हारा भाई अब कैसा है ?

भक्त— हाँ, उनको दवा अच्छी लगी है, अब असर कर ले तो ठीक हो।

श्रीरामकृष्ण— उसके लिए किसी काम की व्यवस्था कर दे सकते हो ? अच्छा है, तब तो तुम मुरब्बी (रक्षक) बन जाओगे।

भक्त— ठीक हो जाने पर सब सुविधा हो जाएगी।

•

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण मणिरामपुर के भक्तों के संग में)

ठाकुर आहार के बाद छोटी खाट पर तनिक बैठे हैं, अभी भी विश्राम का अवसर नहीं मिला है। भक्तों का समागम होने लगा। प्रथम मणिरामपुर से एकदल भक्त आए। एकजन पी०डब्ल्यू०डी० (P.W.D.) में काम

करते थे, अब पैंशन पाते हैं। एक भक्त उन्हें लेकर आए हैं। क्रमशः बेलघर से एक दल भक्त आ गए। श्रीयुक्त मणिमल्लिक आदि भक्तगण भी क्रमशः आ गए।

मणिरामपुर के भक्त कह रहे हैं—

"आप के विश्राम में व्याघात हुआ।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

"ना, ना, ये सब तो रजोगुण की बातें हैं— 'वे अब सोएँगे'!"

चाणक मणिरामपुर; यह नाम सुनकर ठाकुर को अपने बचपन के सखा श्री राम का उद्दीपन हो आया। ठाकुर कह रहे हैं—

"श्री राम की दुकान तुम्हारे वहाँ पर है। उस देश (कामारपुकुर) में श्री राम मेरे संग पाठशाला में पढ़ा करता था। उस दिन यहाँ पर आया था।"

मणिरामपुर के भक्त कह रहे हैं किस उपाय से भगवान को प्राप्त किया जाता है, हम लोगों पर थोड़ी-सी दया करके बतलाइए।

(मणिरामपुर के भक्तों को शिक्षा— साधन-भजन करो और व्याकुल होओ)

श्रीरामकृष्ण— थोड़ा-सा साधन-भजन करना चाहिए।

" 'दूध में मक्खन है', केवल कहने से ही नहीं होता, दूध का दही जमा कर मन्थन करके, मक्खन निकालना चाहिए। इसीलिए बीच-बीच में थोड़ा निर्जन चाहिए।* कुछ दिन निर्जन में रहकर भक्ति प्राप्त करके, तदुपरान्त जहाँ पर भी, रहो। जूता पाँव में पहन कर कंटक-वन में भी अनायास जाया जाता है।

"प्रधान बात है विश्वास। जैसा भाव वैसा लाभ, मूल वही है विश्वास। विश्वास हो जाने पर फिर भय नहीं।"

मणिरामपुर के भक्त— जी, क्या गुरु का प्रयोजन है?

---

* योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः। (गीता— 7/10)

श्रीरामकृष्ण— बहुतों को प्रयोजन होता है।* किन्तु गुरुवाक्य पर विश्वास करना चाहिए। गुरु को ईश्वर समझने पर ही तब होता है। तभी तो वैष्णवगण कहते हैं गुरु— कृष्ण— वैष्णव।

''उनका नाम सर्वदा ही करना चाहिए। कलियुग में नाम-माहात्म्य है। अन्नगत प्राण हैं, जभी योग नहीं होता। ताली बजाकर उनका नाम करने से पाप रूपी पक्षी भाग जाता है।

''सत्संग सर्वदा ही आवश्यक है। गंगा के जितना ही निकट जाओगे, उतनी ही शीतल हवा पाओगे; अग्नि के जितना ही पास जाओगे, उतना ही उत्ताप पाओगे।

''धीमा तिताला होने से नहीं चलता। जिनकी संसार में भोग की इच्छा है वे कहते हैं, 'होगा, कभी न कभी ईश्वर को पाएगा!'

''मैंने केशवसेन से कहा था, लड़के को व्याकुल देखकर उसका पिता तीन वर्ष पूर्व ही उसका हिस्सा दे देता है।

''माँ (खाना) पका रही है, गोद का लड़का लेटा हुआ है। माँ मुख में चुसनी दे गई है; जब चुसनी फेंक कर चीत्कार करके लड़का रोता है तब माँ हाँडी उतार कर गोद में लेकर बच्चे को स्तन पिलाती है। ये सब बातें केशव से कही थीं।

''कलि में, कहते हैं, एक दिन एक रात रोने पर ईश्वर के दर्शन होते हैं।

''मन में अभिमान करोगे, और कहोगे, तुमने मुझे बनाया है; दर्शन देना ही होगा।

''संसार में ही रहो चाहे कहीं पर भी रहो, ईश्वर मन को ही देखते हैं। विषयासक्त मन भीगी हुई दियासलाई जैसा होता है, कितना ही घिसो नहीं जलती। एकलव्य ने मिट्टी के द्रोण अर्थात् अपने गुरु की मूर्ति सामने रखकर बाण-शिक्षा ली थी।

''आगे बढ़ो;— लकड़हारे ने आगे जाकर देखा था, चन्दन-काठ,

---

* गुरु का प्रयोजन = आचार्यवान् पुरुषो वेद। (छान्दोग्योपनिषद्— 6/14/2)

चाँदी की खान, सोने की खान, आगे और भी देखे हीरे, मणियाँ।

"जो अज्ञानी हैं, वे जैसे मिट्टी की दीवारों के घर के भीतर रह रहे हैं। अन्दर वैसा प्रकाश नहीं है, और फिर बाहर की कोई वस्तु देख नहीं सकता। ज्ञान प्राप्त करके जो संसार में रहता है, वह जैसे काँच के घर के भीतर रह रहा है। अन्दर भी प्रकाश है और बाहर भी प्रकाश है। भीतर की चीजें भी देख लेता है और बाहर की चीज़ें भी देख लेता है।"

(ब्रह्म और जगन्माता एक)

"एक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वही परब्रह्म 'मैं' को जब तक रख देते हैं, तब तक दिखलाते हैं कि वे आद्याशक्ति-रूप में सृष्टि, स्थिति, प्रलय कर रहे हैं।

"जो ब्रह्म हैं, वे ही आद्याशक्ति हैं। एक राजा ने कहा था कि मुझे एक बात में ज्ञान देना होगा। योगी बोला— अच्छा, तुम एक वाणी में ही ज्ञान पाओगे। कुछ देर उपरान्त राजा के निकट हठात् एक जादूगर आ गया। राजा ने देखा, वह आकर केवल दो ही उँगलियाँ घुमा रहा है, और कह रहा है, 'राजा, यह देख, यह देख'। राजा अवाक् होकर देखता है। कुछ क्षण बाद देखता है वे दो उँगलियाँ एक ही उँगली हो गई है। जादूगर एक ही उँगली घुमाते-घुमाते कहता है, 'राजा, यह देख, राजा यह देख।' अर्थात् ब्रह्म और आद्याशक्ति पहले तो दो लगते हैं। किन्तु ब्रह्मज्ञान होने पर फिर दो नहीं रहते! अभेद! एक! जिस एक का दो नहीं है— अद्वैतम्।"

●

चतुर्थ परिच्छेद

(बेलघर के भक्तों के संग में)

बेलघर से गोबिन्द मुखोपाध्याय आदि भक्तगण आए हैं। ठाकुर ने जिस दिन उनके घर में शुभागमन किया था, उस दिन वे गायक का 'जागो जागो जननी' गाना सुनकर समाधिस्थ हो गए थे। गोबिन्द उसी गायक को भी लाए हैं। ठाकुर गायक को देखकर आनन्दित हुए हैं और कहते हैं, तुम कुछ गान करो। गायक गा रहे हैं—

1. दोष कारु नय गो मा, आमि स्वखात सलिले डूबे मरि श्यामा।

[भावार्थ— हे माँ श्यामा, दोष किसी का नहीं है, मैं अपने खोदे हुए कुएँ में डूब कर स्वयं मर रहा हूँ।

2 छूँसना रे शमन आमार जात गियेछे।
यदि बोलिस ओरे शमन जात गेलो किसे,
केले सर्वनाशी आमाय संन्यासी करेछे।

[हे यम, मुझे मत छूना (क्योंकि) मेरी जात चली गई है। यदि कहो कि जात कैसे गई तो हे यम सुनो, सर्वनाशी ने मुझे संन्यासी बना दिया है।]

(रागिनी मूलतान)

3 जागो जागो जननी,
मूलाधारे निद्रागत कतो दिन गत होलो कुल कुण्डलिनी।
स्वकार्य साधने चलो मा शिर मध्ये,
परम शिव जथा सहस्र दल पद्मे,
करि षड्चक्र भेद घुचाओ मनेर खेद, चैतन्यरूपिणी।

[हे जननी, जागो, जागो। कुल कुण्डलिनी को मूलाधार में निद्रागत हुए कितने दिन हो गए! अब स्वकार्य साधन के लिए माँ सिर के मध्य सहस्रदल पद्म वाले स्थान की ओर चलो जहाँ शिव विराजमान हैं। हे चैतन्यरूपिणी, षड्चक्र का भेदन कर मेरे मन का दु:ख मिटाओ।]

श्रीरामकृष्ण— इस गाने में षड्चक्र-भेदन की बात है। ईश्वर बाहर भी हैं, अन्तर में भी हैं। वे भीतर रहकर मन की नाना अवस्थाएँ कर रहे हैं। षड्चक्र-भेद हो जाने पर माया का राज्य छोड़कर, जीवात्मा परमात्मा के संग में एक हो जाता है। इसी का नाम है ईश्वर-दर्शन।

"माया के द्वार छोड़े बिना ईश्वर-दर्शन नहीं होता। राम, लक्ष्मण और सीता एक संग में जा रहे हैं। सब के आगे राम, मध्य में सीता, पीछे लक्ष्मण हैं। जैसे सीता के बीच में रहने से लक्ष्मण राम को नहीं देख पाते हैं, वैसे ही बीच में माया के रहने से जीव ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकता।

(मणिमल्लिक के प्रति)— किन्तु ईश्वर की कृपा हो जाने पर माया द्वार छोड़ देती है। जैसे दरबान कहते हैं, बाबू हुकम कर दें— उसके लिए द्वार छोड़ देता हूँ।*

"वेदान्त मत और पुराण मत। वेदान्त मत कहता है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है' अर्थात् जगत सब भूल, स्वप्नवत् है। किन्तु पुराण मत अथवा भक्तिशास्त्र कहता है कि ईश्वर ही चौबीस तत्त्व होकर रह रहे हैं। उनकी अन्तरे-बाहरे पूजा करो।

"जब तक 'मैं'-बोध उन्होंने रखा हुआ है तब तक सब ही है। फिर स्वप्नवत् तो कह नहीं सकते। नीचे आग जल रही है, जभी हाँडी के भीतर दाल, भात, आलू, पटल सब टग्बग् (खद् खद्) कर रहे हैं— उछल रहे हैं और जैसे कह रहे हैं, 'मैं हूँ, मैं उछल रहा हूँ'। यह शरीर जैसे हाँडी है; मन, बुद्धि जल हैं; इन्द्रियाँ विषय हैं जैसे दाल, भात, आलू, पटल। अहं (मैं) जैसे उनका अभिमान है, मैं (अहं) टग्बग् (खद्-खद्) कर रहा है! और सच्चिदानन्द अग्नि है।

"इसीलिए तो भक्तिशास्त्र में, इसी संसार को ही 'मजे की कुटिया' कहा है। रामप्रसाद के गाने में है 'यह संसार धोखे की टट्टी है'। जभी एक व्यक्ति ने जवाब दिया था 'यह संसार मजे की कुटिया है'। काली का भक्त 'जीवन्मुक्त नित्यानन्दमय'। भक्त देखता है, जो ईश्वर हैं वे ही माया हुए हैं।

---

* मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेताम् तरन्ति ते। (गीता— 7/14)

वे ही जीव-जगत हुए हैं। ईश्वर—माया—जीव— जगत, एक देखता है। कोई-कोई भक्त समस्त राममय देखता है। राम ही सब होकर रह रहे हैं। कोई राधाकृष्णमय देखता है। कृष्ण ही ये चौबीस तत्त्व होकर रह रहे हैं। हरा चश्मा पहन लेने पर सब हरा ही देखता है।

''किन्तु भक्तिमत में शक्ति विशेष है। राम ही सब होकर रह रहे हैं किन्तु कहीं पर अधिक शक्ति है और कहीं पर कम शक्ति है। अवतार में उनका प्रकाश एक प्रकार का होता है और फिर जीव में और ही एक प्रकार का। अवतार की भी देहबुद्धि होती है। शरीर धारण करने पर ही माया रहती है। सीता के लिए राम रोए थे। किन्तु अवतार इच्छा करके अपनी आँखों पर पट्टी बाँध लेता है। जैसे लड़के आँख-मिचौनी खेलते हैं। किन्तु माँ के पुकारते ही खेल बन्द हो जाता है। जीव की बात अलग है। जिस कपड़े से आँखें बँधी हुई हैं वह कपड़ा पीठ पर आठ स्क्रुओं (पेंचों) से बँधा हुआ है— आठ पाशों से*। लज्जा, घृणा, भय, जाति, कुल, शील, शोक, जुगुप्सा (निन्दा)— ये हैं अष्ट पाश। गुरु के बिना खोले नहीं खुलते।''

पञ्चम परिच्छेद

(बेलघर के भक्त को शिक्षा— व्याकुल होकर अर्जी देना— ठीक भक्त का लक्षण)

बेलघर का भक्त— आप हम पर कृपा करें।

श्रीरामकृष्ण— सब के भीतर ही वे रह रहे हैं। किन्तु गैस कम्पनी में अर्जी भेजो। तुम्हारे घर के संग में योग हो जाएगा।

''किन्तु व्याकुल होकर अर्जी (prayer-प्रार्थना) करनी चाहिए। ऐसा है कि तीन प्रेम— आकर्षण एक साथ होने पर, ईश्वर-दर्शन होता है— 'सन्तान के ऊपर माँ का आकर्षण, सती स्त्री का पति के ऊपर आकर्षण और

---

* घृणा, लज्जा, भयं, शंका (शो ?) जुगुप्सा, चेती पञ्चमी।
कुलं, शीलं तथा जातिरष्टो पाशाः प्रकीर्त्तिताः॥ — कुलार्णवतन्त्र

विषयी का विषय के ऊपर आकर्षण'।

"ठीक भक्त के लक्षण हैं। वह गुरु का उपदेश स्थिर मन होकर सुनता है। सपेरे के गाने को अजगर स्थिर होकर सुनता है; किन्तु नाग नहीं। और एक विशेष लक्षण है; ठीक भक्त की धारणा-शक्ति होती है। खाली काँच पर छवि का निशान नहीं पड़ता, किन्तु स्याही पुते शीशे के ऊपर छवि बन जाती है, जैसे फोटोग्राफ; भक्ति रूपी स्याही।

"और एक लक्षण है। ठीक भक्त जितेन्द्रिय होता है, कामजयी होता है। गोपियों में काम नहीं था।

"तुम लोग गृहस्थी में हो, तो रहो ना; इस से तो साधना में और भी सुविधा है, जैसे किले में से युद्ध करना। जब शव-साधना करते हैं तब बीच-बीच में वह शव 'हाँ' करके डराता है। जभी चावल, भुने चने रखने चाहिएँ। उसके मुख में बीच-बीच में देने चाहिएँ। शव के शान्त होने पर ही तब निश्चिन्त होकर जप कर सकोगे। जभी परिवार वालों को ठण्डा रखना चाहिए। उनके खाने-पीने की व्यवस्था कर देनी चाहिए, तभी साधन-भजन की सुविधा होती है।

"जिनका कुछ भोग बाकी है, वे गृहस्थी में रहकर ही उन्हें पुकारेंगे। निताई की व्यवस्था थी, 'मागुर माछेर झोल, युवती नारीर कोल, बोल हरि बोल!' (मागुर मछली की रसेदार तरकारी, युवती नारी का साथ— और बोल हरि बोल।)

"ठीक-ठीक त्यागी की अलग बात है— मधुमक्खी फूल के अतिरिक्त और कहीं नहीं बैठेगी। चातक के पास 'सब जल धूर' हैं; कोई भी जल नहीं पियेगा, केवल स्वाती नक्षत्र की वृष्टि के जल के लिए 'हाँ' किए (मुँह खोले) रहता है। ठीक-ठीक त्यागी और कोई आनन्द नहीं लेगा, केवल ईश्वर का आनन्द लेगा। मधुमक्खी केवल फूल पर बैठती है। ठीक-ठीक त्यागी साधु है जैसे मधुमक्खी। गृही भक्त हैं जैसे साधारण मक्खियाँ, सन्देश पर भी बैठती हैं और फिर सड़े, गले घाव पर भी बैठती हैं।

"तुम लोग इतना कष्ट करके यहाँ पर आए हो, तुम लोग ईश्वर को

खोजते हुए फिर रहे हो। सब लोग बाग को देखकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, बाग के कर्त्ता का अनुसन्धान दो-एक जन ही करते हैं। जगत का सौन्दर्य ही देखते हैं, कर्त्ता को नहीं खोजते।''

(हठयोग, राजयोग और बेलघर के भक्त— षड्चक्र-भेद और समाधि)

(गायक को दिखाकर)— ''इन्होंने षड्चक्र का गाना गाया है। ये समस्त योग की बातें हैं। हठयोग और राजयोग। हठयोगी शरीर की कुछ कसरतें करता है; उद्देश्य होता है सिद्धियाँ, दीर्घ आयु होगी; आठों सिद्धियाँ होंगी; यही सब उद्देश्य। राजयोग का उद्देश्य भक्ति, प्रेम, ज्ञान, वैराग्य होता है। राजयोग ही अच्छा है।

''वेदान्त की सप्तभूमि और योगशास्त्र का षड्चक्र बहुत मिलता है। वेद की प्रथम तीन भूमि और उनका मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर। इन तीन भूमियों में गुहा, लिंग, नाभि में मन का वास है। मन जब चौथी भूमि पर चढ़ता है अर्थात् अनाहत पद्म में आता है, जीवात्मा को तब दीपशिखा की न्यायीं दर्शन होता है, और ज्योति-दर्शन होता है। साधक कहता है— 'यह क्या! यह क्या!'

''पाँचवीं भूमि पर मन के चढ़ने पर, केवल ईश्वर की बातें ही सुनने की इच्छा होती है। यहाँ पर विशुद्ध चक्र है। छठी भूमि और आज्ञाचक्र एक हैं। वहाँ पर मन के चले जाने पर ईश्वर-दर्शन होता है। किन्तु जैसे लालटेन के भीतर प्रकाश है— छू नहीं सकते, क्योंकि बीच में काँच व्यवधान है।

''राजा जनक पाँचवीं भूमि पर से ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया करते थे। वे कभी पाँचवीं, कभी छठी भूमि पर रहते थे।

''षड्चक्र (छठा चक्र)-भेदन के पश्चात् सातवीं भूमि है। वहाँ पर मन के चले जाने पर मन का लय हो जाता है। जीवात्मा, परमात्मा एक हो जाता है; समाधि होती है। देहबुद्धि चली जाती है; बाहरी होश नहीं रहती (बाह्यशून्य हो जाता है); नाना ज्ञान चले जाते हैं; विचार बन्द हो जाता है।

''त्रैलंग स्वामी ने कहा था, विचार में अनेक बोध होता है; नाना बोध

होता है। समाधि होने पर अन्त में इक्कीस दिन के पश्चात् मृत्यु हो जाती है।

"किन्तु कुलकुण्डलिनी का जागरण हुए बिना चैतन्य नहीं होता।"

(ईश्वर-दर्शन के लक्षण)

"जिसने ईश्वर-लाभ कर लिया है, उसका लक्षण है। वह हो जाता है बालकवत्, उन्मादवत्, जड़वत्, पिशाचवत्। और उसको ठीक बोध हो जाता है कि 'मैं यन्त्र हूँ और वे यन्त्री हैं; वे ही कर्त्ता हैं और सब अकर्त्ता।' सिखों ने जैसे कहा था, पत्ता भी जो हिलता है वह भी ईश्वर की इच्छा है। राम की इच्छा से ही सब हो रहा है, यह बोध! जुलाहे ने जैसे कहा था, 'राम की इच्छा से कपड़े का दाम एक रुपया छ: आना, राम की इच्छा से ही डाका पड़ा; राम की इच्छा से ही डाकू पकड़े गए, राम की इच्छा से ही मुझ को पुलिस ले गई, और फिर राम की इच्छा से ही मुझ को छोड़ दिया।"

सन्ध्या प्राय: आगता। ठाकुर ने एक बार भी विश्राम नहीं किया। भक्तों के संग में अविश्रान्त हरि-कथा हो रही है। अब माणिरामपुर और बेलघर के भक्तगण और अन्य भक्त उन्हें भूमिष्ठ होकर प्रणाम करके, ठाकुर-मन्दिर में भगवान-दर्शन करके अपने-अपने स्थानों पर लौट रहे हैं।

सप्तम खण्ड

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में

प्रथम परिच्छेद

(तान्त्रिक भक्त और संसार— निर्लिप्त का भय)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने दक्षिणेश्वर-मन्दिर में अपने घर में आहार के उपरान्त कुछ विश्राम किया। अधर और मास्टर ने आकर प्रणाम किया। एक तान्त्रिक भक्त भी आए हैं। ठाकुर के पास आजकल राखाल, हाजरा, रामलाल आदि रहते हैं। आज रविवार, 17 जून, 1883 ईसवी— 4था आषाढ़— ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— संसार में होगा क्यों नहीं? किन्तु है बड़ा कठिन। जनकादि ज्ञान-लाभ करके संसार में आए थे। तब भी भय! निष्काम संसारी को भी भय होता है। भैरवी को देखकर जनक ने मुख नीचा कर लिया था; स्त्री-दर्शन में संकोच हुआ था! भैरवी बोली, जनक! मैं देख रही हूँ— तुम्हें तो अभी तक भी ज्ञान नहीं हुआ है; तुम्हें अभी भी स्त्री-पुरुष-बोध है।

"काजल के कमरे में रहने पर कितना भी सयाना क्यों न हो, थोड़ा-सा ही क्यों न हो, काला दाग शरीर पर लगेगा ही।

"देखता हूँ, संसारी भक्त जब रेशमी कपड़ा पहन कर पूजा करता है तब सुन्दर भाव होता है; यहाँ तक कि जलपान तक एक भाव रहता है। उसके पश्चात् वही अपनी मूर्ति; फिर से वही रज, तम।

"सत्त्व गुण में भक्ति होती है। किन्तु भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज,

भक्ति का तम है। भक्ति का सत्त्व, विशुद्ध सत्त्व है। इसके होने पर— ईश्वर के अतिरिक्त और किसी में भी मन नहीं रहता; केवल इस देह की जितने से रक्षा होती है उतना ही मन शरीर के ऊपर रहता है।''

(परमहंस त्रिगुणातीत और कर्मफल के अतीत— पाप-पुण्य के अतीत— केशवसेन और दल)

''परमहंस तीनों गुणों के अतीत होता हैं।* उसके भीतर तीन गुण हैं और फिर नहीं हैं— बिलकुल बालक, किसी भी गुण के वश में नहीं। जभी छोटे-छोटे बच्चों को परमहंस लोग अपने पास आने देते हैं, क्योंकि उनके स्वभाव का आरोप करेंगे।''

''परमहंस संचय नहीं कर सकता। यह बात संसारियों के लिए नहीं है, उन्हें परिवार वालों के लिए संचय करना चाहिए।''

तान्त्रिक भक्त— परमहंस का क्या पापपुण्य-बोध रहता है ?

श्रीरामकृष्ण— केशवसेन ने यही बात पूछी थी। मैंने कहा था और अधिक कहने से तुम्हारा दल-वल नहीं रहेगा। केशव बोले, तो फिर रहने दें महाशय।

''पाप-पुण्य क्या है, जानते हो ? परमहंस-अवस्था में देखता है वे ही सुमति देते हैं— वे ही कुमति देते हैं। कडुआ-मीठा फल होता है कि नहीं ? किसी वृक्ष पर मीठा फल, किसी वृक्ष पर कडुआ या खट्टा फल होता है। उन्होंने मीठे आम के वृक्ष किए हैं और खट्टे आमड़े का वृक्ष भी किया है।''

तान्त्रिक भक्त— जी हाँ, पहाड़ के ऊपर गुलाब के खेत देखे जाते हैं। जितनी दूर नजर जाती है केवल गुलाब के खेत!

श्रीरामकृष्ण— परमहंस देखता है, यह सब उनकी माया का ऐश्वर्य है— सत्, असत्; भला, मन्द; पाप, पुण्य। वह बड़ी दूर की बात है। उस अवस्था में दल-वल नहीं रहता।

---

* माञ्च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥ (गीता- 14/26)

(तान्त्रिक भक्त व कर्मफल, पाप-पुण्य— sin and responsibility)

तान्त्रिक भक्त— किन्तु कर्मफल तो है ?

श्रीरामकृष्ण— वह भी है। अच्छा कर्म करने पर सुफल, मन्दा कर्म करने पर कुफल होता है; मिर्च खाने पर झाल (चरचरा) नहीं लगेगा ? यह सब उनकी लीला है, खेल है।

तान्त्रिक भक्त— हमारे लिए क्या उपाय है ? कर्म का फल तो है ?

श्रीरामकृष्ण— रहे न कर्मफल। उनके भक्तों की अलग बात है। यह कहकर गाना गाते हैं—

मन रे कृषि काज जानो ना।
एमन मानव जमिन रइलो पतित, आबाद करले फलतो सोना॥
काली नामे दाओ रे बेड़ा फसले तछरूप होबे ना॥
शे जे मुक्त केशीर शक्त बेड़ा, तार काछेते यम घेंसे ना॥
गुरुदत्त बीज रोपण करे, भक्ति बारि सेंचे देना॥
एका यदि ना पारिश मन, रामप्रसाद के संगे नेना॥

[भावार्थ— हे मन, तुम किसानी का काम नहीं जानते। ऐसी सुन्दर मानव-ज़मीन पड़ी की पड़ी रह गई है। यदि खेती करके आबाद करते, तो सोना फलता। अरे भाई, काली-नाम की बाड़ लगा दो, फसल खराब नहीं होगी। वह बाड़ तो मुक्त केशी माँ की बड़ी सशक्त बाड़ है, उसके निकट यम नहीं आ सकता। गुरु द्वारा दिया गया बीज उस में बो कर भक्ति-जल से सींच दो। ओ मन! अकेले नहीं कर सकते तो रामप्रसाद को संग में ले लो।]

फिर और गाना गा रहे हैं—

शमन आसबार पथ घुचेछे, आमार मनेर मन्द घुचे गेछे।
(ओरे) आमार घरेर नवद्वारे चारि शिव चौकि रयेछे॥
एक खूंटिते घर रयेछे, तिन रज्जुते बाँधा आछे।
सहस्रदल कमले श्रीनाथ अभय दिये बोसे आछे॥

[भावार्थ— यमराज के आने का रास्ता बन्द हो गया है, मेरे मन का सन्देह चला गया है। अरे भाई, मेरे घर के नवद्वारों पर चार शिव चौकीदार हैं। एक स्तम्भ पर घर टिका हुआ है और तीन रस्सियों से वह बँधा हुआ है। सहस्रदल कमल

(सिर) पर श्रीनाथ अभय देकर बैठे हुए हैं।]

"काशी में ब्राह्मण ही मरे अथवा वेश्या ही मरे शिव हो जाएगा।

"जब हरिनाम से, कालीनाम से, रामनाम से आँखों में जल आता है तब सन्ध्या-कवच आदि का कुछ भी प्रयोजन नहीं रहता। कर्म-त्याग हो जाता है। कर्म का फल उसके पास नहीं जाता।"

ठाकुर फिर और गाना गा रहे हैं—

भाविले भावेर उदय होय।
जेमनि भाव, तेमनि लाभ, मूल से प्रत्यय।
काली पद सुधाह्रदे चित्त जदि रय, जदि चित्त डुबे रय।
तबे पूजा होम जाप यज्ञ किछुइ किछु नय॥

[भावार्थ— चिन्तन से 'भाव' का उदय होता है। अरे जैसा भाव, वैसा लाभ। मूल है वही प्रत्यय (विश्वास)। काली-चरण रूपी सुधा-सरोवर में चित्त यदि रमे, यदि चित्त डूबा रहे तो पूजा-होम-जप-यज्ञ— ये कुछ भी नहीं हैं।]

ठाकुर फिर और गा रहे हैं—

त्रिसन्ध्या जे बोले काली, पूजा सन्ध्या से कि चाय।
सन्ध्या तार सन्धाने फिरे, कभु संधि नाहि पाय॥
गया-गंगा प्रभासादि काशी-कांची केबा चाय।
काली काली बोले आमार अजपा यदि फुराय॥

[भावार्थ— जो व्यक्ति त्रिसन्ध्या काली का नाम लेता रहता है, उसको सन्ध्या-वन्दना की चाह (आवश्यकता) नहीं रहती। स्वयं सन्ध्या उस व्यक्ति की तलाश में रहती है, पर कभी भी मिलने का अवसर नहीं पाती। काली-नाम निरन्तर लेता हुआ यदि मेरा शरीर छूट जाए तो काशी, कांची, प्रभास, गया, गंगा आदि की कोई चाह नहीं रहती।

"उनमें मग्न हो जाने पर फिर असत्‌बुद्धि, पापबुद्धि नहीं रहती।"

तान्त्रिक भक्त— आपने जो कहा है, 'विद्या का मैं' रहता है।

श्रीरामकृष्ण— विद्या का 'मैं', भक्त का 'मैं', दास-'मैं', भला 'मैं' रहता है। बदजात 'मैं' चला जाता है। *(हास्य)*।

तान्त्रिक भक्त— जी, हमारे अनेक संशय चले गए।
श्रीरामकृष्ण— आत्मा का साक्षात्कार होने पर सब सन्देह नष्ट हो जाते हैं।

(तान्त्रिक भक्त और भक्ति का तम— खोखला संशय— अष्टसिद्धि)

''भक्ति का तम लाओ। बोलो,— क्या! मैंने राम कहा है, काली कहा है, मेरा फिर कैसा बन्धन; मेरा फिर कैसा कर्मफल!''

ठाकुर फिर और गा रहे हैं—

आमि दुर्गा दुर्गा बोले मा यदि मरि।
आखेरे ए दीने ना तारो केमने, जाना जाबे गो शंकरी॥
नाशि गो ब्राह्मण, हत्या करि भ्रूण, सुरापानादि विनाशी नारी।
ए सब पातक ना भाबि तिलेक, (ओ मा) ब्रह्मपद निते पारि॥

[भावार्थ— माँ, यदि मैं दुर्गा-दुर्गा बोलता हुआ मरता हूँ तो तुम हे शंकरी! इस दीन को कैसे नहीं तारोगी, मैं देख लूँगा। गो-ब्राह्मण का नाश, भ्रूण-हत्या, गर्भपात, मदिरापान, स्त्री-विनाश आदि इन सब पापों की मुझे तिल भर भी परवाह नहीं है। ओ माँ! मैं ब्रह्मपद पा सकता हूँ।]

श्रीरामकृष्ण फिर और कह रहे हैं—

''विश्वास! विश्वास! विश्वास! गुरु ने कह दिया है, राम ही सब होकर रह रहे हैं; 'वही राम घट-घट में लेटा!' कुत्ता रोटी खाता हुआ जा रहा है। भक्त कहता है, 'राम! ठहरो, ठहरो, रोटी पर घी चुपड़ दूँ!' ऐसा गुरु-वाणी पर विश्वास।

''सार रहित लोगों को विश्वास नहीं होता! सर्वदा ही संशय! आत्मा का साक्षात्कार बिना हुए सब संशय नहीं जाते।*

''शुद्धाभक्ति— जिसमें कोई कामना न रहे। उस भक्ति द्वारा उन को शीघ्र पाया जाता है।

''अणिमा आदि सिद्धियाँ— ये सब कामनाएँ हैं। कृष्ण ने अर्जुन से कहा था— भाई, अणिमा आदि सिद्धियों में से एक के भी रहने पर ईश्वर-

* छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ... तस्मिन् दृष्टे परावरे। (मुण्डक उपनिषद् 2/2/8)

लाभ नहीं होता; थोड़ी-सी शक्ति तो बढ़ सकती है।''

तान्त्रिक भक्त— जी, तान्त्रिक क्रिया आजकल क्यों नहीं फलती?

श्रीरामकृष्ण— सर्वांगीण नहीं होती, और भक्तिपूर्वक नहीं होती; जभी नहीं फलती।

अब ठाकुर बातें समाप्त कर रहे हैं। कह रहे हैं—

भक्ति ही सार है; ठीक भक्त को कोई भय-भावना नहीं है। माँ सब जानती हैं। बिल्ली चूहे को एक तरह से पकड़ती है किन्तु अपने बच्चे को और ही एक प्रकार से पकड़ती है।

●

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण बलराम-मन्दिर में राखाल, मास्टर आदि के संग)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ता में बलराम के घर शुभागमन किया है। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल भी हैं। ठाकुर को भावावेश हुआ है। आज है ज्येष्ठ-कृष्णा-पञ्चमी; सोमवार, 12वाँ आषाढ़; **25 जून, 1883 ईसवी**; समय प्राय: पाँच।

श्रीरामकृष्ण *(भावाविष्ट)*— देखो, आन्तरिक पुकारने पर स्वस्वरूप को देख लिया जाता है। किन्तु जितनी विषय-भोग की वासना रहती है, उतनी कमी रहती है।

मास्टर— जी, आप जैसे कहते हैं छलाँग लगानी चाहिए।

श्रीरामकृष्ण *(आनन्दित होकर)*— इया (यही तो)!

सब चुप हैं। ठाकुर फिर और बातें करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— देखो, सब को ही आत्मदर्शन हो सकता है।

मास्टर— जी, किन्तु ईश्वर कर्त्ता हैं, वे जिस घर में जैसा करवाते हैं— किसी को चैतन्य कर देते हैं, किसी को अज्ञानी बनाकर (बेहोश) रखते हैं।

(स्वस्वरूप-दर्शन, ईश्वर-दर्शन या आत्मदर्शन का उपाय— आन्तरिक प्रार्थना— नित्यलीलायोग)

श्रीरामकृष्ण— ना। उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करनी चाहिए। आन्तरिक होने पर वे प्रार्थना सुनेंगे ही सुनेंगे।

एक भक्त— जी हाँ, 'मैं' जो है, जभी प्रार्थना करनी होगी।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— लीला को पकड़-पकड़ कर नित्य में जाना चाहिए, जैसे सीढ़ी पकड़कर छत पर चढ़ना। नित्य-दर्शन के उपरान्त नित्य से लीला में आकर रहना चाहिए— भक्ति-भक्त लेकर। यही तो है पक्का मत।

"उनके हैं नाना रूप, नाना लीला— ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत-लीला। वे मनुष्य होकर, अवतार होकर युग-युग में आते हैं, प्रेम-भक्ति सिखाने के लिए। देखो ना, चैतन्यदेव! अवतार के भीतर ही उनका प्रेम-भक्ति आस्वादन किया जाता है। उनकी अनन्त लीला है— किन्तु हमें जरूरत है प्रेम और भक्ति की। हमें तो दूध ही चाहिए। गाय के थनों से ही दूध आता है। अवतार हैं गाय के स्तन।"

ठाकुर क्या यही कह रहे हैं कि मैं अवतीर्ण हुआ हूँ, मेरा दर्शन करने से ही ईश्वर-दर्शन करना हो जाता है? चैतन्यदेव की बात कहकर क्या ठाकुर अपनी बात की ओर इंगित कर रहे हैं?

•

तृतीय परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर और भक्त-मन्दिर में नाना भावों में श्रीरामकृष्ण)

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-देवालय में शिव-मन्दिर की सीढ़ियों पर बैठे हुए हैं। ज्येष्ठ मास, 1883; खूब गरमी पड़ी है, तनिक पीछे सन्ध्या होगी। बरफ इत्यादि लेकर मास्टर आए हैं। ठाकुर को प्रणाम करके उनके चरणों के मूल में शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर बैठ गए।

(J.S. Mill and Sri Ramakrishna; limitations of man— a conditioned being— जे० एस० मिल और श्रीरामकृष्ण; मनुष्य की सीमाएँ— शर्ताधीन जीव)

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— मणिमल्लिक का नातजमाई (husband of a grand daughter) आया था। उस ने किसी पुस्तक* में पढ़ा है— ईश्वर उतना ज्ञानी और सर्वज्ञ नहीं लगता। तो फिर इतना दु:ख क्यों? और यह जो जीव की मृत्यु होती है, एकदम मार डालने से भी तो चलता है, धीरे-धीरे अनेक कष्ट देकर मारना क्यों? जिसने पुस्तक लिखी है उसने तो यहाँ तक भी कहा है कि मैं होता तो उससे बढ़िया सृष्टि कर सकता था।

मास्टर 'हॉ' करके (मुँह बाए हुए) ठाकुर की बात सुन रहे हैं और चुप हैं। ठाकुर फिर और बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— उन्हें क्या समझा जाता है जी? मैं भी कभी उन्हें अच्छा सोचता हूँ, कभी मन्द। उन्होंने अपनी महामाया के भीतर हमें रखा हुआ है। कभी वे होश में रखते हैं, कभी वे बेहोश कर देते हैं। एक बार वह अज्ञान चला जाता है, और फिर घेर लेता है। तालाब काही से ढका हुआ है, ढेला मारने से थोड़ा-सा जल दिखाई दे जाता है; और फिर थोड़े क्षणों बाद ही (काही) नाचते-नाचते आकर उस थोड़े से जल को ढक लेती है।

"जब तक देहबुद्धि है तब तक ही सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु, रोग-

---

* Johan Stuart Mill's Autobiography. (Mill, 1806—1873)

शोक हैं। ये सब देह के ही हैं; आत्मा के नहीं। देह की मृत्यु पर, हो सकता है, वे अच्छे स्थान पर ले जा रहे हैं— जैसे प्रसव-वेदना के बाद सन्तान-प्राप्ति। आत्मज्ञान हो जाने पर सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु स्वप्नवत् बोध होते हैं।

"हम क्या समझेंगे? एक सेर के लोटे में क्या दस सेर दूध समाता है? नमक का पुतला समुद्र मापने जाकर फिर आकर खबर नहीं देता। गल कर मिल गया।"

('छिद्यन्ते सर्व संशयाः तस्मिन् दृष्टे परावरे')

सन्ध्या हो गई। देवताओं की आरती हो रही है। ठाकुर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की छोटी खाट पर बैठे हुए जगन्माता का चिन्तन कर रहे हैं। राखाल, लाटु, रामलाल, किशोरी गुप्त आदि भक्तगण हैं। मास्टर आज रात को रहेंगे। कमरे के उत्तर के छोटे बरामदे में ठाकुर एक भक्त के साथ एकान्त में बातें कर रहे हैं। कह रहे हैं,

"भोर में और शेष रात को ध्यान करना अच्छा है; और प्रतिदिन सन्ध्या के होने पर।"

किस प्रकार ध्यान करना चाहिए— साकार ध्यान, अरूप ध्यान, इत्यादि सब बतला रहे हैं।

कुछ क्षण बाद ठाकुर पश्चिम के गोल बरामदे में बैठे हुए हैं। रात के 9 बजे होंगे। मास्टर पास बैठे हुए हैं, राखाल आदि कभी-कभी कमरे के भीतर आ-जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— देखो, यहाँ पर जो-जो आएँगे सब के संशय मिट जाएँगे, क्या कहते हो?

मास्टर— जी हाँ।

इस समय गंगावक्ष पर काफी दूर मल्लाह नौका ले जा रहा है और गाना गा रहा है। उस गीत-ध्वनि ने मधुर अनाहत ध्वनि की न्यायीं अनन्त आकाश में से होकर गंगा के प्रशस्त वक्ष (छाती) को मानो स्पर्श करके

ठाकुर के कर्णकुहरों में प्रवेश किया। ठाकुर तुरन्त भावाविष्ट हो गए। सारा शरीर कण्टकित। ठाकुर मास्टर का हाथ पकड़कर कह रहे हैं,

"देख, देख, मुझे रोमाञ्च हो रहा है। मेरी देह पर हाथ लगाकर देख!"

वे उस प्रेमाविष्ट कण्टकित देह को स्पर्श करके अवाक् रह गए। 'पुलके पूरित अंग'! उपनिषद् में यह बात है कि वे विश्व में, आकाश में 'ओतप्रोत' हुए हैं, वे ही क्या शब्दरूप में श्रीरामकृष्ण को स्पर्श कर रहे हैं! ये ही क्या 'शब्द ब्रह्म' हैं।*

कुछ क्षण बाद ठाकुर फिर और बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— जो-जो यहाँ पर आते हैं, उनके संस्कार हैं; क्या कहते हो?

मास्टर— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— अधर का संस्कार था।

मास्टर— उसका भी फिर कहना!

श्रीरामकृष्ण— सरल होने पर, ईश्वर शीघ्र प्राप्त होते हैं। फिर दो पथ हैं, सत् और असत्। सत् पथ को लेकर चलते जाना चाहिए।

मास्टर— जी हाँ, धागे में तनिक-सा भी रेशा रहने पर वह सूई में नहीं पुरेगा।

(सर्वत्याग क्यों ?)

श्रीरामकृष्ण— खाने के साथ बाल मुँह में पड़ने पर, मुख में से सब कुछ ही फेंक देना पड़ता है।

मास्टर— किन्तु आपने जैसे कहा, जिन्होंने भगवान-दर्शन कर लिया है, उनका असत् कुछ नहीं कर सकता। खूब ज्ञानाग्नि में केले का पेड़ तक भी जल जाता है।

●

---

* 'एतस्मिन्नुखल्वक्षरे गार्ग्याकाश ओतश्च प्रोतश्चेति'॥ —बृहदारण्यक—3/8/11

शब्दः खे पौरुषं नृषु। (गीता- 7/8)

(श्रीरामकृष्ण और श्री कवि कंकण— अधर के घर में चण्डी का गाना)

और एक दिन ठाकुर कलकत्ते में बेनेटोला में अधर के घर में आए हैं। आषाढ़ शुक्ला दशमी; **14 जुलाई 1883**, शनिवार। अधर ठाकुर को राजनारा'ण का चण्डी-गान सुनवाएँगे। राखाल, मास्टर आदि संग हैं। मन्दिर के दालान में गाना हो रहा है। राजनारा'ण गा रहे हैं—

अभय पदे प्राण सँपेछि।
आमि आर कि यमेर भय रेखेछि॥
काली नाम महामन्त्र आत्मशिरशिखाय बेंधेछि।
आमि देह बेचे भवेर हाटे, श्रीदुर्गानाम किने एनेछि॥
कालीनाम कल्पतरु हृदये रोपण करेछि।
एबार शमन एले हृदय खुले देखबो ताइ बोसे आछि॥
देहेर माझे छ'जन कुजन, तादेर घरे दूर करेछि।
आमि जयदुर्गा श्री दुर्गा बोले यात्रा करे बोसे आछि॥

[भावार्थ— मैंने अभय चरणों में प्राण सौंप दिया है। अब क्या मुझे यम का भय है? कालीनाम महामन्त्र अपने सिर की शिखा (चोटी) में बाँध लिया है। (मैं) देह को भव की हाट में बेचकर दुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ। कालीनाम रूपी कल्पतरु को मैंने हृदय में आरोपित कर लिया है। इस बार यम के आने पर हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसीलिए बैठा हूँ। देह में छह जन कुजन (दुर्जन) हैं, उनको भी घर से दूर कर दिया है। मैं 'जय दुर्गा, श्री दुर्गा' बोलकर यात्रा समाप्त किए बैठा हूँ।]

ठाकुर थोड़ा-सा सुनते ही सुनते भावाविष्ट होकर खड़े हो गए और सम्प्रदाय (मण्डली) के साथ मिलकर गाना गा रहे हैं।

ठाकुर आखर (नया तोड़ा) दे रहे हैं,
"ओ माँ, राखो माँ।"
आखर देते-देते एकदम समाधिस्थ— बाह्यशून्य, निस्पन्द! खड़े हुए हैं। गायक फिर और गा रहे हैं—

समर आलो करे कार कामिनी!
सजल जलद जिनिया काय, दशने प्रकाशे दामिनी॥
एलाय चाँचर चिकुर-पाश, सुरासुर माझे ना करे त्रास,

अट्टहासे दानव नाशे, रण प्रकाशे रंगिणी॥

किबा शोभा करे श्रमज बिन्दु, घनतनु घेरि कुमुदबन्धु,
अमिय सिन्धु हेरिया इन्दु, मलिन ए कोन मोहिनी॥

ए कि असम्भव भव पराभव, पदतले शवसदृश नीरव,
कमलाकान्त करो अनुभव, के बोटे ओ गजगामिनी॥

[भावार्थ— किसकी कामिनी समर (आँगन) को आलोकित कर रही है?— जिसका शरीर सजल मेघ जैसा है और दाँतों में बिजली चमक रही है— जो अपने पास घुँघरू वाले केश बिखेर कर सुर-असुरों के मध्य भी तनिक-सा नहीं भयभीत होती। और अट्टहास करती हुई, दानवों का नाश करती हुई रण में यह रंगिणी प्रकाशित हो रही है। श्रम से निकले बिन्दु घन-शरीर रूपी कुमुदों को घेर कर कैसी शोभा दे रहे हैं! अमृत सागर-रूप चन्द्र देख कर यह कौन मोहिनी मलिन हो गई है? क्या यह असम्भव है कि इनके चरणों के नीचे शव की भाँति भव को पराभूत करने वाले शिव चुपचाप लेटे हुए हैं? कमलाकान्त सोचते हैं कि यह गजगामिनी फिर कौन है?]

ठाकुर फिर समाधिस्थ!

गान समाप्त होने पर दालान से जाकर ठाकुर अधर के दोतल के बैठकखाने में भक्तों के संग बैठ गए। नाना ईश्वरीय प्रसंग होता है। कोई-कोई भक्त अन्त:सार फल्गुनदी हैं, ऊपर भाव का कोई प्रकाश नहीं है, ऐसी सब बातें भी हो रही हैं।

●

चतुर्थ परिच्छेद

बलराम-मन्दिर में ईश्वर-दर्शन की कथा

(जीवन का उद्देश्य— the end of life)

और एक दिन **18 अगस्त, 1883 ईसवी**; 2रा भाद्र, शनिवार; तीसरा प्रहर— बलराम के घर में आए हैं। ठाकुर अवतार-तत्त्व समझा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— अवतार लोकशिक्षा के लिए भक्ति-भक्त लेकर रहते हैं। जैसे छत पर चढ़कर सीढ़ियों से आना-जाना करते हैं। अन्य मनुष्य छत पर चढ़ने के लिए भक्ति-पथ पर रहेंगे, जब तक ज्ञान-लाभ नहीं हो जाता, जब तक सब वासनाएँ ना चली जाएँ। सब वासनाओं के जाने पर ही छत पर चढ़ा जाता है। दुकानदार जब तक हिसाब नहीं मिला लेता तब तक नहीं सोता। बही में हिसाब ठीक करने पर ही सोता है।

(मास्टर के प्रति)— ''छलाँग मारने पर होगा ही होगा! छलाँग मारने पर होगा ही होगा।

''अच्छा, केशवसेन, शिवनाथ आदि जो उपासना करते हैं, तुम्हें कैसा बोध होता है ?''

मास्टर— जी, आप जैसे कहते हैं, वे लोग बाग का वर्णन ही करते हैं; किन्तु बाग के मालिक का दर्शन करने की बातें बहुत कम बोलते हैं। प्राय: बाग के वर्णन से आरम्भ और उसी पर ही शेष।

श्रीरामकृष्ण— ठीक! बाग के मालिक को खोजना और उनके संग में आलाप करना ही तो (असली) कार्य है। ईश्वर-दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है।*

बलराम के मकान पर होकर अब अधर के घर पर आए हैं। सन्ध्या के उपरान्त अधर के बैठकखाने में नाम-संकीर्तन और नृत्य कर रहे हैं।

---

* आत्मा वा अरे द्रष्टव्य: श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो...॥ — बृहदारण्यक—2/4/5

वैष्णवचरण कीर्तनिया गाना गा रहे हैं। अधर, मास्टर, राखाल आदि उपस्थित हैं।

(अधर के मकान पर कीर्त्तनानन्द और अधर के प्रति उपदेश)

कीर्त्तनान्ते ठाकुर भावाविष्ट हुए बैठे हैं, राखाल से कह रहे हैं—

''यहाँ का (अपनी ओर इंगित करके) श्रावण मास का जल नहीं है। श्रावण मास का जल खूब हुड़-हुड़ करके (मूसलाधार) आता है और निकल जाता है। यहाँ पर पाताल-फोड़ा-शिव है, बिठाया हुआ शिव नहीं। तू नाराज होकर दक्षिणेश्वर से चला आया, मैंने माँ से कहा कि माँ, इसका अपराध न लियो।''

श्रीरामकृष्ण क्या अवतार हैं ?— पाताल फोड़ा शिव ?

और फिर अधर से भावाविष्ट होकर कह रहे हैं,

''अरे भाई ! तुम जो नाम कर रहे थे, उसी का ही ध्यान करो।''

यह कहकर अधर की जिह्वा अंगुलि द्वारा स्पर्श की और जिह्वा पर कुछ लिख दिया। यही क्या अधर की दीक्षा हो गई ?

●

पञ्चम परिच्छेद

(आद्याशक्ति और अवतार-तत्त्व)

और एक दिन ठाकुर दक्षिणेश्वर-मन्दिर में दक्षिणपूर्व वाले बरामदे की सीढ़ियों पर बैठे हुए हैं। संग में हैं राखाल, मास्टर, हाजरा। ठाकुर हँसी करते-करते बाल्यकाल की बहुत-सी बातें बतला रहे हैं।

(दक्षिणेश्वर में समाधिस्थ श्रीरामकृष्ण और जगन्माता के संग में उनकी बातें)

ठाकुर समाधिस्थ। सन्ध्या हो गई। अपने कमरे की छोटी खाट पर बैठे हैं और जगन्माता के साथ बातें कर रहे हैं। कह रहे हैं—

''माँ, इतना हंगामा क्यों करती हो? माँ, वहाँ पर क्या जाऊँ? मुझे ले जाओगी तो जाऊँगा!''

ठाकुर की किसी भक्त के घर में जाने की बात हुई थी। जभी क्या जगन्माता की आज्ञा के लिए इस प्रकार बोल रहे हैं?

जगन्माता के साथ श्रीरामकृष्ण फिर और बातें कर रहे हैं। अब किसी अन्तरंग भक्त के लिए, लगता है, प्रार्थना कर रहे हैं। कह रहे हैं—

''माँ, उसको शुद्ध (stainless) कर दो। अच्छा माँ, उसे एक कला क्यों दी?''

ठाकुर थोड़ा-सा चुप रहे। फिर और बातें कर रहे हैं,

''ओ! समझ गया, उससे ही तेरा काज होगा!''

सोलह कला की एक कला शक्ति से तेरा काम होगा अर्थात् लोकशिक्षा होगी, यही बात क्या ठाकुर कह रहे हैं?

अब भावाविष्ट अवस्था में मास्टर आदि से आद्याशक्ति और अवतार-तत्त्व कह रहे हैं।

''जो ब्रह्म हैं, वे ही शक्ति हैं। उन्हें ही माँ कहकर पुकारता हूँ। जब वे निष्क्रिय होते हैं तब उन्हें ब्रह्म कहता हूँ, और जब सृष्टि, स्थिति, संहार-कार्य

करते हैं, तब उनको शक्ति कहता हूँ। जैसे स्थिर जल, और जल पर लहरें बन रही हों। शक्ति-लीला से ही अवतार होते हैं। अवतार प्रेम-भक्ति सिखाने आते हैं। अवतार जैसे गाय का थन हैं। दूध थनों से ही प्राप्त होता है।

''मनुष्य में वे अवतीर्ण होते हैं। जैसे घुटि (गहरे गड्ढे) में मछलियाँ आकर जमा हो जाती हैं।

कोई-कोई भक्त सोच रहे हैं, श्रीरामकृष्ण क्या अवतारी पुरुष हैं? जैसे श्री कृष्ण, चैतन्यदेव, Christ (क्राइस्ट)?

अष्टम खण्ड

श्रीयुक्त अधर की बाड़ी— राखाल, ईशान आदि भक्तों के संग में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

[बालक का विश्वास, अस्पृश्य जाति (the untouchables) और शंकराचार्य— साधु का हृदय]

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता में अधर के मकान पर शुभागमन किया है। ठाकुर अधर के बैठकखाने में बैठे हुए हैं। तीसरा प्रहर है। राखाल, अधर, मास्टर, ईशान* आदि और मुहल्ले के अनेक जन उपस्थित हैं।

श्रीयुक्त ईशान मुखोपाध्याय को ठाकुर प्यार करते थे। वे Accountant General's Office (अकाउन्टेण्ट जनरल के दफ्तर) में सुपरिन्टेण्डेण्ट थे। पैन्शन लेने पर वे दान-ध्यान, धर्म-कर्म लेकर रहते और कभी-कभी ठाकुर के दर्शन करते। मछुआ बाजार स्ट्रीट में उनके

---

* ईशान के पुत्र सब ही पढ़े-लिखे, विद्वान हैं। ज्येष्ठ— गोपाल डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट हुए थे। मध्यम— श्रीशचन्द्र डिस्ट्रिक्ट जज हुए थे। श्रीयुक्त सतीश नरेन्द्र के सहपाठी थे, सुन्दर पखावज बजा सकते थे। वे गाजीपुर में सरकारी कर्मचारी थे, उनके ही वासस्थान पर नरेन्द्र प्रव्रज्या-अवस्था में कुछ दिन थे और वहाँ रहकर उन्होंने पवहारी बाबा का दर्शन किया था। भाइयों मेंसे एक और श्रीयुक्त गिरीश ने कलकत्ता विश्वविद्यालय के असिस्टेण्ट रजिस्ट्रार का काम अनेक दिन किया था।

ईशान इतना दान करते थे कि अन्त में ऋणी होकर अति कष्ट में पड़े थे। उनकी मृत्यु के अनेक वर्ष पूर्व उनको पत्नीवियोग हो गया था।

ईशान प्राय: बीच-बीच में भाटपाड़ा में जाकर निर्जन में साधन किया करते थे।

घर ठाकुर ने एक दिन आकर नरेन्द्र आदि भक्तों के संग आहार आदि किया था और प्राय: सारा दिन थे। उसी उपलक्ष्य में ईशान ने बहुत-से लोगों को निमन्त्रित किया था। —(प्रथम भाग)

श्रीयुक्त नरेन्द्र के आने की बात थी, किन्तु वे नहीं आ सके। ईशान पैन्शन लेने के पश्चात् ठाकुर के पास दक्षिणेश्वर प्राय: ही आते-जाते रहते हैं और बीच-बीच में भाटपाड़ा में गंगातीर पर निर्जन में ईश्वर-चिन्तन करते हैं। अब भाटपाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करने की बात थी।

आज शनिवार है, 22 सितम्बर, 1883 ईसवी; छठा आश्विन।

श्रीरामकृष्ण *(ईशान के प्रति)*— अपनी वही कहानी कहो तो; लड़के ने चिट्ठी भेजी थी।

ईशान *(सहास्य)*— एक लड़के ने सुना कि ईश्वर ने हमारी सृष्टि की है। तभी उसने प्रार्थना करने के लिए ईश्वर को एक पत्र लिखकर डाकखाने में डाल दिया। पता दिया— स्वर्ग। *(सब का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— देखा! ऐसा बालक-जैसा विश्वास[1] हो तभी होता है। *(ईशान के प्रति)*— और वही कर्मत्याग की कथा?

ईशान— भगवान की प्राप्ति हो जाने पर सन्ध्यादि कर्म छूट जाते हैं। गंगा के किनारे सब सन्ध्या कर रहे हैं, एक व्यक्ति नहीं कर रहा। उससे पूछने पर वह बोला, मेरा अशौच[2] है, सन्ध्या करनी नहीं है। मरण-अशौच और जन्म-अशौच दोनों ही हुए हैं— अविद्या माँ की मृत्यु हुई है, आत्माराम का जन्म हुआ है।

श्रीरामकृष्ण— और आत्मज्ञान हो जाने पर जातिभेद नहीं रहता, वही कथा?

---

1 The kingdom of heaven is revealed unto babes but is hidden from the wise and the prudent — Bible

2 मृता मोहमयी माता जातो बोधमय: सुता।
सूतकद्वयसंप्राप्तो कथं सन्ध्यामुपास्महे॥

हृदाकाशे चिदादित्य: सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं सन्ध्यामुपास्महे॥ — मैत्रेयी उपनिषत्, अध्याय-2

ईशान— काशी में गंगास्नान करके आचार्य शंकर सीढ़ियों पर चढ़ रहे हैं— तब एक कुत्तों के पालने वाले चाण्डाल को सामने देख कर बोले, अरे तूने मुझे छू लिया। चाण्डाल बोला, महाराज! तुमने भी मुझे नहीं छुआ— मैंने भी तुम्हें नहीं छुआ; आत्मा सबका ही अन्तर्यामी और निर्लिप्त है। शराब पर सूर्य का प्रतिबिम्ब और गंगाजल पर सूर्य का प्रतिबिम्ब— क्या इन दोनों में भेद है?[1]

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— और वह समन्वय की कथा, सब मतों द्वारा ही उनको प्राप्त किया जाता है?[2]

ईशान *(सहास्य)*— हरि-हर की एक ही धातु है, केवल प्रत्यय का भेद है, जो हरि हैं वे ही हर हैं। विश्वास रहने पर ही हुआ।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— और वह कथा भी— साधु का हृदय सब से बड़ा।

ईशान *(सहास्य)*— सब से बड़ी है पृथ्वी, उसकी अपेक्षा बड़ा सागर, उसकी अपेक्षा बड़ा आकाश। किन्तु भगवान विष्णु ने एक पद में स्वर्ग, मर्त्य, पाताल— त्रिभुवन को अधिकार में कर लिया था। वही विष्णुपद साधु के हृदय के बीच है! जभी तो साधु का हृदय है सब से बड़ा।

ये सब बातें सुनकर भक्तगण आनन्द कर रहे हैं।

●

---

1 सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥ (गीता— 6, 29)

2 ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्। (गीता— 4, 11)

द्वितीय परिच्छेद

(आद्याशक्ति की उपासना से ही ब्रह्म-उपासना— ब्रह्म और शक्ति अभेद Identity of God the Absolute and God the Creater, Preserver and Destroyer)

ईशान भाटपाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करेंगे। गायत्री ब्रह्म मन्त्र। विषयबुद्धि के बिल्कुल जाए बिना ब्रह्मज्ञान नहीं होता। किन्तु कलियुग में अन्नगत प्राण होने के कारण विषयबुद्धि जाती नहीं! रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द— मन ये सब विषय[1] लेकर सर्वदा ही रहता है। जभी ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते हैं, कलि में वेदमत नहीं चलता। जो ब्रह्म हैं, वे ही शक्ति हैं। शक्ति की उपासना करने से ब्रह्म की उपासना हो जाती है। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं तब उन्हें शक्ति कहते हैं। दो पृथक् चीजें नहीं हैं— एक ही वस्तु।

(The quest of the Absolute and Ishan. The Vedantic position, 'I am He' सोऽहम्)

श्रीरामकृष्ण *(ईशान के प्रति)*— क्यों नेति-नेति करते हुए फिर रहे हो? ब्रह्म के सम्बन्ध में कुछ भी कहा नहीं जाता। केवल कहा जाता है 'अस्ति मात्रम्?'[2] केवलः रामः।

"हम जो कुछ देखते हैं, सोचते हैं, सब ही उसी आद्याशक्ति का, उसी चित्शक्ति का ऐश्वर्य है— सृष्टि, पालन, संहार; जीव-जगत; और फिर ध्यान, ध्याता, भक्ति, प्रेम— सब उनका ऐश्वर्य है।

"किन्तु ब्रह्म और शक्ति अभेद। लंका से लौट आने पर हनुमान राम का स्तव करते हैं। कहते हैं, 'हे राम! तुम ही परब्रह्म हो, और सीता हैं तुम्हारी

---

1 क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥ (गीता— 12, 5)

2 नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।
अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदति॥ (कठोपनिषद्—2/3— 12,13)

शक्ति। किन्तु तुम दोनों अभेद हो।' जैसे साँप और उसकी तिर्यग्-गति— साँप जैसी गति सोचते ही साँप को सोचना होगा; और साँप को सोचते ही साँप की गति को भी सोचना पड़ेगा। दूध सोचते ही दूध के रंग को सोचना पड़ता है, धवलत्व। दूध जैसा सफेद अर्थात् धवलत्व ख्याल आते ही दूध का विचार होता है। जल की हिमशक्ति सोचते ही जल का ख्याल करना होता है, और फिर जल का विचार करते ही जल की हिमशक्ति को सोचना पड़ता है।

"यही आद्याशक्ति या महामाया ब्रह्म को ढके रखती है। आवरण हटते ही 'जो था', 'वही हो गया'। 'मैं ही तुम', 'तुम ही मैं'!

"जब तक आवरण रहता है, तब तक वेदान्तवादियों का सोऽहं अर्थात् 'मैं ही वही परब्रह्म' यह बात ठीक नहीं जँचती। जल की ही तरंगें हैं, तरंगों का कोई जल नहीं। जब तक आवरण है तब तक 'माँ-माँ' कहकर पुकारना अच्छा है। तुम माँ, मैं तुम्हारी सन्तान; तुम प्रभु, मैं तुम्हारा दास। सेव्य-सेवक भाव ही अच्छा है। इसी दास-भाव से फिर और सब भाव आते हैं— शान्त, सख्य आदि। मालिक यदि दास को प्यार करे, और फिर तब उसको कहे— आ, मेरे पास बैठ; तू जो है, मैं भी वही हूँ। किन्तु दास यदि मालिक के पास अपने आप बैठने जाए तो मालिक नाराज़ नहीं होगा क्या?"

(आद्याशक्ति और अवतार-लीला और ईशान— What is Maya ? वेद, पुराण, तन्त्र का समन्वय)

"अवतार-लीला— यह समस्त चित् शक्ति का ऐश्वर्य है। जो ब्रह्म हैं, वे ही फिर राम, कृष्ण, शिव हैं।"

ईशान— हरि, हर एक धातु, केवल प्रत्यय का भेद। *(सब का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, एक के अतिरिक्त दूसरा कुछ नहीं। वेद में कहा है, ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्म; पुराण में कहा है, ॐ सच्चिदानन्द कृष्ण; और फिर तन्त्र में कहा है, ॐ सच्चिदानन्द शिव।

ये ही चित्शक्ति, महामायारूप में सब को अज्ञान में रखती हैं। अध्यात्म-रामायण में है, जितने ऋषियों ने राम का दर्शन किया, केवल यही बात ही

कही, 'हे राम, अपनी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न करना'*।

ईशान— यह माया क्या है?

श्रीरामकृष्ण— जो कुछ देखते हो, सुनते हो, चिन्ता करते हो, सब ही माया है। एक बात में कहना हो तो कामिनी-काञ्चन ही माया का आवरण है।

"पान खाना, मछली खाना, तम्बाकू खाना (पीना), तेल मलना, इन सब में दोष नहीं। केवल इन सबका त्याग करने से क्या होगा? कामिनी-काञ्चन-त्याग ही प्रयोजनीय है। वही त्याग ही त्याग है। गृही लोग कभी-कभी निर्जन में जाकर साधन-भजन करके, भक्ति-लाभ करके मन से त्याग करेंगे। संन्यासी लोग बाहर का त्याग और मन से त्याग, दोनों ही करेंगे।

[Keshab Chandra Sen and Renunciation (केशवचन्द्र सेन और त्याग)— 'नवविधान' और निराकारवाद— Dogmatism कट्टरपन]

"केशवसेन से कहा था, जिस कमरे में जल का मटका, और अचार तथा इमली हो, उस कमरे में विकार (प्रलाप) का रोगी रहने से कैसे चंगा हो सकता है? बीच-बीच में निर्जन में जाना चाहिए।"

एकजन भक्त— महाशय, नवविधान कैसी है, मानो दाल-खिचड़ी जैसी।

श्रीरामकृष्ण— कोई-कोई कहता है आधुनिक है। मैं सोचता हूँ, ब्रह्मज्ञानियों का ईश्वर क्या कोई और एक ईश्वर है? कहते हैं नव विधान, नूतन विधान; वह होगा। जैसे छः दर्शन हैं, षड्दर्शन, वैसे ही एक और कोई कुछ होगा।

"किन्तु निराकारवादियों की भूल क्या है, जानते हो? भूल यही है कि वे कहते हैं 'वे निराकार हैं, और सब मत गलत हैं'।

---

* अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः। (गीता— 5, 15)
दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥ (गीता— 7, 14)

"मैं जानता हूँ, वे साकार, निराकार दोनों ही हैं, और भी कितना कुछ हो सकते हैं। वे सब कुछ ही हो सकते हैं।[1]

[God in the 'untouchables' (अछूतों में भगवान)]

(ईशान के प्रति)— "वही चित्शक्ति, वही महामाया चौबीस तत्त्व[2] होकर रह रही है। मैं ध्यान कर रहा था; ध्यान करते-करते मन रस्के के घर में चला गया! रस्के मेहतर है। मन से कहा, ठहर साले! यहाँ पर ही रह। माँ ने दिखला दिया, उसके घर के व्यक्ति सब खोल मात्र फिर रहे हैं, भीतर वही है एक कुलकुण्डलिनी, एक षट्चक्र!

"वह आद्याशक्ति स्त्री है या पुरुष? मैंने उस देश (कामारपुकुर) में देखा था, लाहाओं के घर में काली-पूजा हो रही है। माँ के गले में जनेऊ पहनाया हुआ है। किसी ने पूछा, माँ के गले में जनेऊ क्यों? जिसके घर की देवी थी, उसने पूछने वाले से कहा, भाई! तूने माँ को ठीक पहचाना है किन्तु मैं कुछ नहीं जानता कि माँ पुरुष हैं या स्त्री।[3]

"ऐसा कहा है कि वही महामाया शिव को झट से खा गई। माँ के भीतर षट्चक्र का ज्ञान हो जाने पर शिव माँ के उरु (जाँघ) से बाहर निकल आए। तब शिव ने तन्त्र की सृष्टि की।

"उसी चित्शक्ति, उसी महामाया के शरणागत होना चाहिए।"

ईशान— आप कृपा करें।

---

1 नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप। (गीता— 10, 40)

2 महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।
इन्द्रियाणि दशैकञ्च पञ्च चेन्द्रियगोचराः॥ (गीता— 13/5)

3 तद्वा एतदक्षरं गार्ग्यदृष्टं द्रष्ट्रश्रुतं श्रोत्रमतं मन्त्रविज्ञातम्
विज्ञातृ नान्यदतोऽस्ति द्रष्ट्र नान्यदतोऽस्ति श्रोतृ
मन्तृ नान्यदतोऽस्ति विज्ञातृ...॥ (बृहदारण्यकोपनिषद्— 3/8/11)

[ईशान को शिक्षा, 'डुबकी लगाओ'— गुरु का क्या प्रयोजन— ब्राह्मण, पण्डित, शास्त्र और ईशान— mere Book-learning]

श्रीरामकृष्ण— सरलभाव से बोलो— हे ईश्वर, दर्शन दो, और क्रन्दन करो; और बोलो, हे ईश्वर, कामिनी-काञ्चन से मन को अलग कर दो!

"और डुबकी लगाओ। ऊपर-ऊपर बहने से या तैरने से क्या रत्न मिलता है? डुबकी लगानी चाहिए।

"गुरु के पास से पता ले लेना चाहिए। कोई व्यक्ति बाणलिंग शिव खोज रहा था। किसी ने फिर बतला दिया, अमुक नदी के किनारे जाओ, वहाँ पर एक वृक्ष देखोगे, उसी वृक्ष के निकट एक भँवर है, उसी स्थान पर डुबकी मारनी होगी, तब बाणलिंग शिव मिल जाएगा। इसीलिए गुरु से पता जान लेना चाहिए।"

ईशान— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— सच्चिदानन्द ही गुरुरूप में आते हैं।* कोई यदि मनुष्य-गुरु के पास से दीक्षा लेता है तो उनको मनुष्य मानने से कुछ नहीं होगा। उनको साक्षत् ईश्वर मानना होगा, तभी तो मन्त्र में विश्वास होगा। विश्वास होने पर ही सब हो गया! शूद्र (एकलव्य) ने मिट्टी के द्रोण बनाकर वन में बाण-शिक्षा ली थी। मिट्टी के द्रोण को साक्षात् द्रोणाचार्य मानकर पूजा करता था; उससे ही बाण-शिक्षा में सिद्ध हो गया।

"और तुम ब्राह्मणों, पण्डितों को लेकर अधिक झँझट मत किया करो। उन्हें तो चिन्ता है दो पैसे पाने की।

"मैंने देखा है, ब्राह्मण स्वस्त्ययन करने के लिए आया है, चण्डीपाठ या कुछ और पाठ कर रहा है, और देखा है अधिक पन्ने उलट जाएँगे। *(सब का हास्य)*।

"अपने को मारने के लिए एक नहरनी ही काफी है। अन्य को मारने के लिए ही ढाल-तलवार— शास्त्रादि का प्रयोजन है।

---

* पिताऽसि लोकस्य चराचरस्य, त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्। (गीता— 11/43)

"नाना शास्त्रों का भी कोई प्रयोजन नहीं।[1] यदि विवेक न हो तो केवल पाण्डित्य से कुछ नहीं होता। षट्शास्त्र पढ़ने पर भी कुछ नहीं होता। निर्जन में, गोपन में रो-रो कर उनको पुकारो, वे ही सब कर देंगे।"

•

(गोपन में साधन— शुचिबाई और ईशान)

ईशान भाटपाड़ा में पुरश्चरण करने के लिए गंगा के किनारे आठ छप्परों वाली कुटीर बनवा रहे हैं; यह बात ठाकुर ने सुनी है।

श्रीरामकृष्ण *(अधीर-से होकर, ईशान के प्रति)*— अरे हाँ, क्या घर तैयार हो गया है ? बात तो यह है कि ऐसे समस्त कार्यों का लोगों को जितना ही न पता लगे उतना ही अच्छा होता है। जो सत्त्वगुणी हैं, वे लोग मन में, बन में, कोने में ध्यान करते हैं और कभी मसहरी के भीतर ध्यान करते हैं।

ईशान हाजरा महाशय को बीच-बीच में भाटपाड़ा ले जाते हैं। हाजरा महाशय शुचिबाई (छूतवहमी) की भाँति आचरण करते हैं। ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने उनको वैसा करने से मना किया था।

श्रीरामकृष्ण *(ईशान के प्रति)*— और देखो, अधिक छूतछात का आचरण मत करो। एक साधु को बड़ी प्यास लगी, भिश्ती (माशकी) जल लेकर जा रहा था, उसने साधु को जल देना चाहा। साधु ने कहा— तुम्हारा डोल[2] (चमड़े की मशक) क्या साफ है ?
भिश्ती ने कहा, 'महाराज, मेरा डोल तो खूब साफ है, किन्तु तुम्हारे डोल के भीतर तो मलमूत्र, अनेक प्रकार का मैला है। इसीलिए कहता हूँ, मेरे डोल से

---

1 उत्तमा तत्त्वचिन्तैव मध्यमं शास्त्रचिन्तनम्।
अधमा मन्त्रचिन्ता च तीर्थचिन्ताधमाधमा। (मैत्रेयी उपनिषद्— 2,12)

2 नवद्वारमलस्रावं सदाकाले स्वभावजम्।
दुर्गन्धं दुर्म्मलोपेतं स्पृष्ट्वा स्नानं विधीयते। (मैत्रेयी उपनिषद्)

जल पी लो; इससे दोष नहीं होगा। तुम्हारा डोल अर्थात् तुम्हारी देह में, तुम्हारे पेट में मैल है।'

"और उनके नाम पर विश्वास करो। वैसा होने पर फिर तीर्थ आदि का प्रयोजन नहीं होगा।"

यह कहकर ठाकुर भाव में विभोर होकर गाना गाते हैं :—

(सिद्धावस्था में कर्मत्याग)

गया गंगा प्रभासादि काशी कांची केबा चाय।
काली काली काली बोले अजपा यदि फुराय॥
त्रिसन्ध्या जे बोले काली, पूजा सन्ध्या से कि चाय।
सन्ध्या तार सन्धाने फिरे कभु संधि नाहि पाय॥
दया व्रत दान आदि आर किछु ना मने लय।
मदनेर यागयज्ञ ब्रह्ममयीर रांगा पाय॥
काली नामेर एतो गुण केबा जानते पारे ताय।
देवादिदेव महादेव जांर पंचमुखे गुण गाय॥

[भावार्थ— काली-नाम निरंतर लेते हुए यदि मेरा शरीर छूट जाए तो फिर गया, काशी, कांची, प्रभास, गया, गंगा आदि की कोई चाह नहीं होती। जो व्यक्ति त्रिसन्ध्या काली का नाम लेता रहता है, उसको सन्ध्या-वन्दना की चाह नहीं रहती। स्वयं सन्ध्या उस व्यक्ति की तलाश में रहती है, पर कभी भी मिलने का अवसर नहीं पाती। दया, व्रत, दान आदि किसी में उसकी रुचि नहीं रहती। मदन (कवि) का यागयज्ञ तो सब ब्रह्ममयी के रक्त चरण ही हैं। जिस काली-नाम का गुणगान स्वयं देवादिदेव महादेव पाँच मुखों से किया करते हैं, उस नाम का रहस्य भला कौन जान सकता है?]

ईशान यह सब सुनकर चुप हैं।

(ईशान को शिक्षा; बालक की न्यायीं विश्वास— जनक की भाँति पहले साधना, तब फिर गृहस्थ में ईश्वर-लाभ)

श्रीरामकृष्ण *(ईशान के प्रति)*— और कुछ खोंच-मोच (सन्देह) हो तो पूछ लो।

ईशान— जी, आपने जो कहा था, विश्वास।

श्रीरामकृष्ण— ठीक विश्वास के द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जाता है। और, पूरी तरह से (ईश्वरीय बातों पर) विश्वास करने पर और भी शीघ्र होता है। गाय यदि छाँट-छाँट कर खाती है, तो फिर दूध कम देती है; सब प्रकार के घास-पत्ते खाने पर वह हुड़-हुड़ करके (अधिक) दूध देती है।

''राजकृष्ण बैनर्जी के लड़के ने कहानी सुनाई थी कि किसी व्यक्ति को आदेश हुआ कि देख, इस भेड़ में ही अपना इष्ट देख। उसने उसी पर विश्वास कर लिया। सर्वभूतों में जो वे ही हैं।

''गुरु ने भक्त से कह दिया था कि 'राम ही घट-घट में लेटा'। भक्त का ऐसा ही विश्वास हो गया। जब एक कुत्ता रोटी मुँह में लेकर भागता है, तब भक्त घी का बर्तन लेकर पीछे-पीछे दौड़ता है और कहता है, 'राम तनिक ठहरो, रोटी पर घी नहीं लगा'।

''अच्छा, कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास! कहता 'ॐ कृष्ण! ॐ राम!' इस मन्त्र के उच्चारण कर लेने पर करोड़ों सन्ध्याओं का फल होता है!

''और फिर मुझ से कृष्णकिशोर कान में कहता, किसी से मत कहना, मुझे सन्ध्या-टन्ध्या अच्छी नहीं लगती!

''मुझे भी ऐसा ही होता है। माँ दिखला देती हैं कि वे ही सब होकर रह रही हैं। शौच के पश्चात् झाउतले से पञ्चवटी की ओर आ रहा हूँ; देखता हूँ एक कुत्ता साथ आ रहा है। तब पञ्चवटी के पास एक बार आकर खड़ा होता हूँ; सोचता हूँ माँ शायद इसके द्वारा कुछ कहलवाएँगी।

''जभी तुम ने जो कहा; विश्वास* से सब मिल जाता है।''

●

---

* सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥ (गीता— 18, 66)

[The difficult problem of the householder and the Lord's grace— (गृहस्थी की कठिन समस्या और प्रभु की कृपा)]

ईशान— किन्तु मैं तो गृहस्थ में रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण— रहो ही क्यों न, उनकी कृपा* होने पर असम्भव सम्भव हो जाता है। रामप्रसाद ने गाने में गाया था, 'यह संसार धोखे की टट्टी है'। उनको किसी ने उत्तर दिया था और एक गाने के बहाने से—

एइ संसार मजार कुटि, आमि खाइ दाइ आर मजा लुटि।
जनक राजा महातेजा तार वा किसे छिलो त्रुटि।
से जे एदिक-ओदिक दुदिक रेखे, खेयेछिलो दूधेर बाटि॥

[भावार्थ— यह संसार मजे की कुटिया है। मैं खाता-पीता और मौज करता हूँ। राजा जनक बड़े तेजस्वी थे। उन्हें क्या कोई कमी थी? वे इधर-उधर दोनों ओर रखते थे और दूध का कटोरा पीते थे।]

''किन्तु पहले निर्जन-गोपन में साधन-भजन करके, ईश्वर-प्राप्त करके संसार में रहने से 'राजा जनक' बना जाता है। वैसा न करे तो कैसे बनेगा?

''देखो न, कार्त्तिक, गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती सब ही हैं; किन्तु शिव कभी समाधिस्थ हैं, कभी राम-राम करते हुए नृत्य करते हैं।''

---

* With man it is impossible, but nothing is impossible with the Lord— Christ.

नवम खण्ड

दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग बैठे हुए हैं। राखाल, मास्टर, राम, हाजरा आदि भक्तगण उपस्थित हैं। हाजरा महाशय बाहर बरामदे में बैठे हैं। आज रविवार है, 23 सितम्बर, 1883 ईसवी; भाद्र-कृष्णा-सप्तमी।

नित्यगोपाल, तारक आदि भक्तगण राम के घर में रहते हैं। उनको उन्होंने बड़े प्यार-सम्मान से रखा हुआ है।

राखाल बीच-बीच में श्रीयुक्त अधरसेन के मकान पर जाकर रहते हैं। नित्यगोपाल सर्वदा ही भाव में विभोर रहते हैं। तारक की भी अवस्था अन्तर्मुख है; वे लोगों के साथ आजकल अधिक बात नहीं करते।

(श्रीरामकृष्ण की चिन्ता— नरेन्द्र के लिए)

ठाकुर अब नरेन्द्र की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(एकजन के प्रति)*— नरेन्द्र तुम्हें भी लाइक (पसन्द) नहीं करता। *(मास्टर के प्रति)* अरे क्यों, अधर के घर नरेन्द्र नहीं आया?

"एक आधार में नरेन्द्र में हैं कितने गुण— गाना-बजाना, लिखना-पढ़ना! उस दिन काप्तेन की गाड़ी से जा रहा था; काप्तेन ने कितना करके

कहा, अपने पास बैठने के लिए। नरेन्द्र उस किनारे पर जाकर बैठा; काप्तेन की ओर मुड़कर भी नहीं देखा।

(शाक्त गौरी पण्डित और श्रीरामकृष्ण)

''खाली पाण्डित्य से क्या होगा? साधन-भजन चाहिए। इंदेश का गौरी— पण्डित भी था, साधक भी था। शाक्त-साधक;— माँ के भाव में बीच-बीच में उन्मत्त हो जाता। बीच-बीच में कहता, 'हा रे रे, रे, निरालम्ब लम्बोदर-जननी, कं यामि शरणम्?' तब पण्डितगण केंचवे बन जाते। मैं भी आविष्ट हो जाता। मेरा आहार देखकर कहता था, क्या तुमने भैरवी को लेकर साधन किया है?

''एक कर्ताभजा ने निराकार की व्याख्या की थी। निराकार अर्थात् नीर का आकार! गौरी उसे सुनकर महाक्रोधित हुआ।

''पहले-पहले कुछ कट्टर शाक्त था; तुलसी के पत्ते को दो लकड़ियों से उठाता— छूता नहीं था *(सब का हास्य)*— उसके बाद घर गया; घर से लौट आकर फिर ऐसा नहीं किया।

''मैंने एक तुलसी का पौधा काली-मन्दिर के सम्मुख रोपण किया था; मर गया। जहाँ पर बकरा बलि होता है, वहाँ पर शायद होती नहीं।

''गौरी बड़ी अच्छी व्याख्या किया करता। 'ए-ऐ!' व्याख्या करता— ऐ शिष्य! वह तुम्हारा इष्ट है! और रावण के दस मुण्डों के लिए कहता, दस इन्द्रियाँ। तमोगुण में कुम्भकर्ण, रजोगुण में रावण और सत्त्वगुण में विभीषण थे। इसीलिए विभीषण ने राम को प्राप्त कर लिया था।''

●

(राम, तारक और नित्यगोपाल)

ठाकुर मध्याह्न-सेवा के बाद थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। कलकत्ता से राम, तारक (शिवानन्द) आदि भक्त आ गए। ठाकुर को प्रणाम करके वे लोग जमीन पर बैठ गए। मास्टर भी जमीन पर बैठे हुए हैं। राम कह रहे हैं, ''हम खोल (मृदंग) बजाना सीख रहे हैं।''

श्रीरामकृष्ण *(राम के प्रति)*— नित्यगोपाल ने बजाना सीखा?

राम— नहीं, यूँ ही थोड़ा साधारण बजा सकता है।

श्रीरामकृष्ण— तारक?

राम— वह अनेक कुछ बजा सकता है।

श्रीरामकृष्ण— तब तो फिर इतना मुख नीचा करके नहीं रहेगा; एक (दूसरी) ओर खूब मन देने पर ईश्वर की ओर उतना नहीं रहता।

राम— मैं सोचता हूँ, मैंने जो सीखा है, वह केवल संकीर्तन के लिए है।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर से)*— तुमने भी शायद गाना सीखा है?

मास्टर *(सहास्य)*— जी नहीं; वैसे ही ऊँ-आँ करता हूँ!

(मेरा बिल्कुल यही भाव है— 'आर काज नाइ ज्ञान विचारे, दे मा पागल करे')

श्रीरामकृष्ण— तुम्हारा वह अभ्यास है? हो, तो कहो मत। 'आर काज नाइ ज्ञान विचारे, दे मा पागल करे।'

''देखो, मेरा तो बिल्कुल यही भाव है।''

•

(हाजरा को उपदेश— सर्वभूतों से प्यार— घृणा और निन्दा त्याग करो)

हाजरा महाशय किसी-किसी से घृणा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(राम आदि भक्तों के प्रति)*— वहाँ (कामारपुकर में) (मैं) एकजन के घर में जाकर प्राय: ही रहता था, वे समवयसी (हमउम्र) थे। वे उस दिन आए थे; यहाँ पर दो-तीन दिन रहे। उनकी माँ उसी प्रकार (हाजरा की

भाँति) सब से घृणा किया करती थी। अन्त में उसी माँ के पाँव में किसी प्रकार कील चुभ गई और पाँव सड़ने लगा। कमरे में इतनी सड़ाँध हो गई कि लोग प्रवेश नहीं कर सकते थे।

"हाजरा से इसीलिए यह बात कहता हूँ कि किसी की निन्दा न करो।"

•

समय प्राय: चार का हो गया। ठाकुर धीरे-धीरे, मुख-हाथ आदि धोने के लिए, झाउतले गए। ठाकुर के कमरे के दक्षिणपूर्व वाले बरामदे में सतरंजी (दरी) बिछा दी गई। वहाँ पर ठाकुर झाउतले से लौटकर बैठेंगे। राम आदि उपस्थित हैं। श्रीयुक्त अधरसेन सुवर्ण वणिक (सुनार जाति के) हैं; उनके मकान पर राखाल ने अन्न ग्रहण किया है, इसलिए रामबाबू ने कुछ कहा था। अधर परमभक्त हैं। वे ही सब बातें हो रही हैं।

सुनारों में किसी-किसी के स्वभाव का एक भक्त हँसी में वर्णन कर रहे हैं और ठाकुर हँस रहे हैं। वे लोग 'रूटीघण्टो' (रोटी और सूखी भुनी तरकारी) पसन्द करते हैं, और व्यंजन हो या न हो। वे खूब उत्तम चावल खाते हैं, और जलपान में फल कुछ न कुछ होना ही चाहिए। वे लोग विलायती अमड़ा (hogplum)पसन्द करते हैं, इत्यादि। यदि घर में भेंट आवे, हिलसा मछली, सन्देश— वही भेंट फिर उनके समधी के घर में जाएगी। वह समधी फिर उसी भेंट को अपने समधी के घर में भेज देगा। इसी प्रकार करते-करते एक हिलसा मछली 15-20 घरों में घूमती रहती है। स्त्रियाँ सब काम करती हैं, किन्तु खाना उड़िया ब्राह्मण पकाता है, किसी के घर एक घण्टा, किसी के घर दो घण्टे, इसी प्रकार। एक उड़िया ब्राह्मण कभी तो 4-5 जगहों पर पकाता है।

श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं, स्वयं कोई मत प्रकाश नहीं कर रहे।

(ठाकुर समाधिस्थ— उनकी जगन्माता के साथ बातें)

सन्ध्या हो गई। आँगन के उत्तर-पश्चिम कोण में श्रीरामकृष्ण खड़े हुए हैं और समाधिस्थ हैं।

अनेक क्षण पश्चात् बाहरी जगत में मन आया। ठाकुर की कैसी आश्चर्य अवस्था! आजकल प्राय: ही समाधिस्थ हो जाते हैं। सामान्य उद्दीपन से बाह्यशून्य हो जाते हैं; भक्तगण जब आते हैं, तब थोड़ी बातचीत करते हैं; नचेत् सर्वदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। पूजा-जप आदि कर्म अब नहीं कर सकते।

(श्रीरामकृष्ण की कर्मत्याग-अवस्था)

समाधि-भंग होने पर खड़े होकर जगन्नाथ के संग बातें कर रहे हैं। कह रहे हैं— 'माँ! पूजा गई, जप गया*; देखो माँ जैसे जड़ मत करो। सेव्य-सेवक भाव में रखो माँ, जिससे बातें कर सकूँ। जैसे तुम्हारा नाम कर सकूँ, और तुम्हारा नामगुण-कीर्त्तन करूँ, गान करूँ, माँ! और शरीर में थोड़ा बल दो माँ, जिससे अपने आप थोड़ा चल सकूँ; जहाँ पर तुम्हारी बातें होती हैं, जहाँ पर तुम्हारे भक्तगण हैं, उन सब जगहों पर जा सकूँ।'

श्रीरामकृष्ण ने आज सुबह काली-मन्दिर में जाकर जगन्माता के श्रीपादपद्मों में पुष्पाञ्जलि दी है। वे फिर जगन्माता के संग में बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

"माँ, आज प्रात: तुम्हारे चरणों में दो फूल दिए थे। सोचा था, अच्छा ही हुआ, फिर (बाहरी) पूजा की ओर मन जा रहा है! किन्तु माँ, फिर ऐसा क्यों हुआ? फिर क्यों जड़-जैसा बना रही हो?"

भाद्र-कृष्णा-सप्तमी। अभी चन्द्र उदित नहीं हुए। रात का अन्धेरा है। श्रीरामकृष्ण अभी भावाविष्ट हैं, इसी अवस्था में ही अपने कमरे की छोटी खाट पर बैठ गए। फिर जगन्माता के साथ और बातें कर रहे हैं।

---

* यस्त्वात्मरतिरेव स्यात्... सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते। (गीता— 3, 17)

(ईशान को शिक्षा— कलि में वेदमत नहीं चलता— मातृभाव में साधन करो)

अब लगता है भक्तों के विषय में माँ से कुछ कह रहे हैं। ईशान मुखोपाध्याय की बात कह रहे हैं। ईशान ने कहा था, मैं भाटपाड़ा में जाकर गायत्री का पुरश्चरण करूँगा। श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था कि कलियुग में वेदमत नहीं चलता। जीव का अन्नगत प्राण है, आयु कम है, देहबुद्धि-विषयबुद्धि पूरी तरह से नहीं जाती। इसीलिए ईशान को मातृ-भाव में तन्त्रमत से साधन करने का उपदेश दिया था और ईशान से कहा था, "जो ब्रह्म हैं, वे ही माँ हैं, वे ही हैं आद्याशक्ति।"

ठाकुर भावाविष्ट होकर कह रहे हैं—

"अब फिर गायत्री का पुरश्चरण! इस छप्पर से उस छप्पर पर छलाँग!... किसने उसको वह बात कह दी है? अपने मन से कर रहा है।... अच्छा, थोड़ा-सा पुरश्चरण करेगा।

(मास्टर के प्रति)— "अच्छा, मेरा यह सब क्या वायु से है या भाव से?"

मास्टर अवाक् होकर देख रहे हैं कि ठाकुर श्रीरामकृष्ण जगन्माता के संग इस प्रकार बातें कर रहे हैं। वे अवाक् होकर देख रहे हैं। ईश्वर हमारे अति निकट है; बाहर भी और फिर अन्तर में भी। ईश्वर अति निकट बिना हुए श्रीरामकृष्ण उनसे धीरे-धीरे कैसे बातें कर रहे हैं!*

●

* तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्।

द्वितीय परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण राखाल आदि भक्तों के संग में)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर के सम्मुख चबूतरे के ऊपर बैठे हुए हैं। जगन्माता का काली-प्रतिमा में दर्शन कर रहे हैं। पास में मास्टर आदि भक्त बैठे हैं। आज है **26 सितम्बर, 1883 ईसवी**, भाद्र-कृष्णा दशमी; तीसरा प्रहर।

कुछ क्षण पहले ठाकुर कह रहे थे—

"ईश्वर के सम्बन्ध में कोई हिसाब नहीं किया जा सकता! उनका अनन्त ऐश्वर्य है! मनुष्य मुख से क्या कहेगा? एक चींटी ने चीनी के पहाड़ के पास जाकर एक दाना चीनी खा ली। उसका पेट भर गया; तब सोचने लगी, अब की बार आकर सारा पहाड़ ही अपने बिल में ले जाऊँगी।

"उनको क्या समझा जाता है! जभी तो मेरा बिल्ली के बच्चे वाला भाव है, माँ जहाँ पर रख देती है। मैं कुछ नहीं जानता। माँ का कितना ऐश्वर्य है, छोटा बच्चा उसे नहीं जानता।"

श्रीरामकृष्ण श्री काली-मन्दिर के चबूतरे पर बैठे हुए स्तव कर रहे हैं, "ओ माँ! ओ माँ! ॐकार रूपिणी माँ! ये लोग कितना क्या-क्या कहते हैं— माँ! कुछ नहीं समझ सकता। कुछ नहीं जानता माँ!— शरणागत! शरणागत! केवल यही करो जिससे तुम्हारे श्रीपादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो माँ! और जैसे अपनी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध मत करो, माँ! शरणागत! शरणागत!"

ठाकुर-मन्दिर की आरती हो गई, श्रीरामकृष्ण कमरे में छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। महेन्द्र फर्श पर बैठे हुए हैं।

महेन्द्र पहले-पहले श्रीयुक्त केशवसेन के ब्राह्मसमाज में सर्वदा जाया करते थे। ठाकुर के दर्शन होने की अवधि से फिर वे वहाँ पर नहीं जाते। श्रीरामकृष्ण सर्वदा जगन्माता के साथ बातें करते हैं; उसे देखकर वे अवाक् रह गए हैं और उनकी सर्व-धर्म-समन्वय की बात

सुनकर और ईश्वर के लिए उनकी व्याकुलता देखकर मुग्ध हो गए हैं।

महेन्द्र ठाकुर के पास प्रायः दो वर्ष से आने-जाने लगे हैं और उनका दर्शन तथा कृपा प्राप्त कर रहे हैं। ठाकुर उन्हें तथा अन्य भक्तों को सर्वदा ही कहते हैं, ईश्वर निराकार और फिर साकार हैं; भक्त के लिए रूप धारण करते हैं। जो निराकारवादी हैं उन्हें वे कहते हैं, तुम लोगों का जैसा विश्वास है उसे ही रखोगे, किन्तु यह जानो कि उनके लिए सब ही सम्भव है; साकार, निराकार; और भी कितना क्या-क्या वे हो सकते हैं।

(श्रीरामकृष्ण और महेन्द्र— साकार-निराकार— ड्यूटि, कर्त्तव्यबोध— भक्त के लिए अविद्या का संसार मृत्यु-यन्त्रणा)

श्रीरामकृष्ण *(महेन्द्र के प्रति)*— तुमने एक को तो पकड़ लिया है— निराकार?

महेन्द्र— जी हाँ, किन्तु आप जैसे कहते हैं, सब ही सम्भव है; साकार भी सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण— सुन्दर; और समझो कि वे चैतन्यरूप में चराचर विश्व में व्याप्त होकर रह रहे हैं।

महेन्द्र— मैं सोचता हूँ वे चेतन के भी चेतयिता हैं।

श्रीरामकृष्ण— अब इसी भाव में ही रहो; खींचतान करके भाव बदलने का प्रयोजन नहीं है। क्रमशः पता लग जाएगा कि वे ही चैतन्य हैं और उनका ही चैतन्य है। वे चैतन्यस्वरूप हैं।

"अच्छा, तुम्हारा रुपये और ऐश्वर्य पर आकर्षण है?"

महेन्द्र— नहीं, किन्तु निश्चिन्त होने के लिए— निश्चिन्त होकर भगवान-चिन्तन करने के लिए है।

श्रीरामकृष्ण— वह तो स्वाभाविक ही है।

महेन्द्र— लोभ? नहीं।

श्रीरामकृष्ण— हाँ— वह है तो ठीक, किन्तु फिर तुम्हारे बच्चों को कौन देखेगा?

"तुम्हें यदि 'मैं अकर्त्ता हूँ' यह ज्ञान हो जाए तो फिर तुम्हारे बच्चों

आदि का क्या प्रबन्ध होगा?

महेन्द्र— सुना है, कर्त्तव्य रहते ज्ञान नहीं होता। कर्त्तव्य मार्तण्ड है!

श्रीरामकृष्ण— अब इसी भाव में रहो; तदुपरान्त जब अपने आप यह कर्त्तव्य-बोध चला जाएगा तब अलग बात है।

सब ही कुछ देर चुप रहे।

महेन्द्र— थोड़ा-सा ज्ञान होने पर तो संसार! वह तो होश में मौत है— जैसे हैजा!

श्रीरामकृष्ण— राम! राम!

मृत्यु के समय होश रहने पर खूब यन्त्रणा बोध होती है; जैसे कॉलेरा (हैजे) में यन्त्रणा होती है— यही बात सम्भवत: महेन्द्र कह रहे हैं। अविद्या का संसार दावानल तुल्य है— जभी लगता है ठाकुर 'राम! राम!' कह रहे हैं।

महेन्द्र— दूसरे लोग इसीलिए प्रलाप (विकार) के रोगी हो जाते हैं, बेहोश हो जाते हैं, मृत्यु-कष्ट बोध नहीं रहता।

श्रीरामकृष्ण— देखना, रुपया रहने से ही क्या होगा! जयगोपाल सेन, इतना रुपया है किन्तु दु:खी है, लड़के उन्हें उतना नहीं मानते।

महेन्द्र— संसार में क्या केवल गरीबी का ही दु:ख है? इधर छ: रिपु हैं; उस पर रोग-शोक।

श्रीरामकृष्ण— और फिर मान-इज्जत। नाम-यश होने की इच्छा।

"अच्छा, मेरा क्या भाव है?"

महेन्द्र— नींद टूटने पर मनुष्य का जो भाव होता है— वही भाव है। ईश्वर के संग में सदा योग है।

श्रीरामकृष्ण— तुम मुझे स्वप्न में देखते हो?

महेन्द्र— हाँ, अनेक बार।

श्रीरामकृष्ण— कैसा? कुछ उपदेश देते हुए देखते हो?

महेन्द्र चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण— यदि मुझे शिक्षा देते हुए देखते हो, तो समझना वे सच्चिदानन्द हैं।

महेन्द्र ने इसके पश्चात् स्वप्न में जो-जो देखा था, वह समस्त वर्णन कर दिया। श्रीरामकृष्ण ने मनोयोग द्वारा सब सुना।

श्रीरामकृष्ण *(महेन्द्र के प्रति)*— यह खूब अच्छा है! तुम और विचार मत लाओ। तुम शाक्त हो।

दशम खण्ड

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर दुर्गापूजा-महोत्सव में

प्रथम परिच्छेद

श्रीयुक्त अधर के मकान पर श्रीनवमी-पूजा के दिन देव-दालान में श्रीरामकृष्ण खड़े हैं। सन्ध्या के बाद श्री श्रीदुर्गा-आरती-दर्शन कर रहे हैं। अधर के मकान पर दुर्गापूजा-महोत्सव है, इसीलिए वे ठाकुर को निमन्त्रण करके लाए हैं।

आज बुधवार है, 10 अक्तूबर, 1883 ईसवी; 24वाँ आश्विन। श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में आए हैं, उनमें बलराम के पिता और अधर के मित्र अवसर-प्राप्त स्कूल इन्सपेक्टर सारदाबाबू आए हैं। अधर ने पड़ोसियों और रिश्तेदारों को पूजा के उपलक्ष्य में निमन्त्रित किया है, वे भी अनेक ही आए हैं।

श्रीरामकृष्ण सन्ध्या-आरती-दर्शन करके भावाविष्ट होकर देव-दालान में खड़े हुए हैं। भावाविष्ट होकर माँ को गाना सुना रहे हैं।

अधर गृही भक्त हैं, और फिर बहुत-से उपस्थित गृही भक्त त्रिताप से तापित हैं। इसीलिए लगता है श्रीरामकृष्ण सब के मंगल के लिए जगन्माता का स्तव कर रहे हैं—

तारो तारिणी! एबार तारो त्वरित करिये,
तपन-तनय-त्रासे त्रासित जाय माँ प्राणी।

जगत अम्बे, जनपालिनी, जन-मोहिनी, जगत जननी।
यशोदा जठरे जन्म लइये, सहाय हरि लीलाय॥

वृन्दावने राधाविनोदिनी, ब्रजवल्लभ विहारकारिणी।
रासरंगिनी रसमयी होये, रास करिले लीलाप्रकाश॥

गिरिजा, गोपजा, गोविन्द मोहिनी, तुमि मा गंगा गतिदायिनी।
गान्धार्विके गौरवरणी गाओये गोलके गुण तोमार॥

शिवे, सनातनी, सर्वाणी ईशानी, सदानन्दमयी, सर्वस्वरूपिणी।
सगुणा, निर्गुणा, सदाशिवप्रिये, के जाने महिमा तोमार!

[भावार्थ— हे तारिणी, मुझे इस बार जल्दी तारो। यमराज के डर से मेरे प्राण निकले जा रहे हैं। हे जगदम्बे, लोकपालिनी, जनमोहिनी, जग-जननी, तुमने यशोदा के गर्भ से जन्म लेकर कृष्णलीला में सहायता की थी। तुम वृन्दावन में विनोद करने वाली राधा थीं, व्रजवल्लभ कृष्ण के साथ विहार करने वाली थीं। रासरङ्गिणी और रसमयी होकर तुमने रास रचकर अपनी लीला प्रकाशित की थी। तुम शिवानी हो, गोपजा हो, तुम गोविन्द-मोहिनी हो, तुम गतिदायिनी माँ गंगा हो, तुम गौरवर्णी हो, गन्धर्वजन इस संसार में तुम्हारा गुणगान करते हैं। माँ! तुम कल्याणदायिनी हो, तुम सनातनी हो, ईशानी हो, सदानन्दमयी हो, सर्वस्वरूपिणी हो, सगुणा हो, निर्गुणा हो, सदाशिव को प्रिय हो, तुम्हारी महिमा कौन जान सकता है?]

(श्रीरामकृष्ण का भावावेश में जगन्माता के संग बातें करना)

श्रीरामकृष्ण अधर के घर में दोतल के बैठकखाने में जाकर बैठ गए। कमरे में बहुत-से निमन्त्रित व्यक्ति आए हुए हैं।

बलराम के पिता और सारदाबाबू आदि निकट बैठे हुए हैं।

ठाकुर अभी भी भावाविष्ट हैं। निमन्त्रित व्यक्तियों को सम्बोधित करके कह रहे हैं, "अरे बाबुओ, मैंने खा लिया है; अब तुम लोग निमन्त्रण खाओ।"

अधर की नैवेद्य-पूजा माँ ने ग्रहण कर ली है, जभी क्या श्रीरामकृष्ण जगन्माता के आवेश में कह रहे हैं, "मैंने खा लिया है, अब तुम लोग प्रसाद पाओ?"

ठाकुर जगन्माता से भावाविष्ट हुए कह रहे हैं, ''माँ, मैं खाऊँ? या तुम खाओगी? माँ कारणानन्दरूपिणी।''

श्रीरामकृष्ण क्या जगन्माता को और अपने आपको एक देख रहे हैं? जो माँ हैं वे ही क्या सन्तानरूप में लोकशिक्षा के लिए अवतीर्ण हुई हैं? जभी क्या ठाकुर 'मैंने खा लिया है' कह रहे हैं?

अब क्या भावावेश में देह के मध्य षट्चक्र, उसके मध्य माँ को देख रहे हैं! जभी तो फिर भाव में विभोर होकर गाना गा रहे हैं—

भुवन भुलाइलि मा हरमोहिनी,
मूलाधारे महोत्पले, वीणावाद्य-विनोदिनी।
शरीर शारीर यन्त्रे सुषुम्नादि त्रय तन्त्रे,
गुण भेदे महामन्त्रे, तिन ग्राम-सञ्चारिणी।
आधार भैरवाकार षड्दले श्रीराग आर,
मणिपुरेते मल्लार, बसन्ते हृद् प्रकाशिनी।
विशुद्धे हिन्दोल सुरे, कर्णाटक आज्ञापुरे,
तान-मान-लयसुरे, त्रिसप्त-सुरभेदिनी।
महामाया मोहपाशे, बद्ध करो अनायासे,
तत्त्व लये तत्त्वाकाशे स्थिर आछे सौदामिनी।
श्री नन्दकुमार कय, तत्त्व ना निश्चय होय,
तव तत्त्व गुणत्रय, काकीमुख आच्छादिनी।

[भावार्थ— माँ! हरमोहिनी, आपने ब्रह्माण्ड को भुला रखा है। माँ! आप मूलाधार महापद्म में वीणा लेकर विनोद करती रहती हो। देही रूप में शरीर रूपी यन्त्र पर अपने महामन्त्र द्वारा सुषुम्नादि तीन तारों पर तीन गुणों को भेदन करके तीनों लोकों में संचार करती रहती हो। आपका आधार (स्वाधिष्ठान) षड्दल पद्म में भैरव के आधार का है। उसे आप श्रीराग रूप में और मणिपुर पद मल्हार राग रूप में और हृदय पद को वसन्त राग रूप में प्रकाशित करती रहती हो। आप विशुद्ध पद हिन्दोल राग के सुर में और आज्ञा पद्म में कर्णाटक के रूप में तान-मान-लय-सुर से त्रिसप्त सुरों का भेदन करती हो। आप महामाया हो। मोहपाश में अनायास (सहज ही) बाँध लेती हो, और स्वयं तत्त्व में लीन होकर तत्त्वाकाश में सौदामिनी (विद्युत्) रूप में स्थिर रहती हो। श्री नन्दकुमार कहते हैं, इस तत्त्व का निश्चय तो नहीं होता किन्तु आप जीव के ज्ञान-मुख को आवृत्त करने वाली हो और आपका तत्त्व है गुणत्रय— सत्त्व, रज, तम।]

गान— भावो कि भेवे प्राण गेलो।
जाँर नामे हरे काल, पदे महाकाल, ताँर केनो कालो रूप होलो॥
कालोरूप अनेक आछे, ए बड़ो आश्चर्य कालो,
जाँर हृदमाझारे राखले परे हृदपद्म करे आलो॥
नामे काली रूपे काली, काल होतेओ अधिक कालो।
ओ रूप जे देखेछे, से मजेछे अन्यरूप लागे ना भालो॥
प्रसाद बोले कुतूहले एमन मेये कोथाय छिलो।
ना देखे नाम शुने काने मन गिये ताय लिप्त होलो॥

[भावार्थ— और क्या सोचूँ? सोचते-सोचते तो प्राण गए— जिसके नाम से मृत्यु-भय चला जाता है, जिसके चरणों में महाकाल हैं; उसका रूप काला क्योंकर हुआ? अनेक काले रूप हैं, किन्तु यह काला रूप तो बड़ा आश्चर्यजनक है कि जिसे हृदय में रख लेने पर हृदय-पद्म आलोकित हो जाता है। वह नाम में काली है, रूप में काली है, वह काले से भी अधिक काली है। जिसने वह रूप (एक बार) देख लिया है उसे अन्य रूप भला नहीं लगता। 'प्रसाद' कुतूहल से कहता है कि ऐसी कन्या कहाँ थी जिसमें बिना देखे भी, नाम सुनने मात्र से ही, मन जाकर लिप्त हो गया है।]

अभया के शरणागत होने पर सब भय चले जाते हैं, इसीलिए सम्भवत: भक्तों को अभय दे रहे हैं और गान गा रहे हैं—

अभय पदे प्राण सँपेछि।
आमि आर कि यमेर भय रेखेछि॥
काली नाम कल्पतरु हृदये रोपण करेछि।
आमि देह बेचे भवेर हाटे, श्रीदुर्गानाम किने एनेछि॥
देहेर मध्ये छ: 'जन कुजन तादेर घरे दूर करेछि।
एबार शमन ऐले हृदय खुले, देखाबो ताइ बोसे आछि॥
कालीनाम महामन्त्र आत्मशिर शिखाय बेंधेछि!
रामप्रसाद बोले दुर्गा बोले, यात्रा करे बोसे आछि॥

[भावार्थ— मैंने अभय चरणों में प्राण सौंप दिया है। अब क्या मुझे यम का भय है? कालीनाम कल्पतरु मैंने हृदय में रोपण कर लिया है। मैं देह को भव की हाट में बेचकर दुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ। देह के बीच जो छ: कुजन (बुरेजन) हैं,

उन्हें घर से दूर कर दिया है। अब यम के आने पर हृदय खोल कर दिखाऊँगा, इसीलिए बैठा हुआ हूँ। कालीनाम–महामन्त्र अपने सिर की शिखा (चोटी) में बाँध लिया है। रामप्रसाद कहते हैं, दुर्गा–नाम लेकर जीने को तैयार हुआ हूँ।]

श्रीयुक्त सारदाबाबू पुत्रशोक में अभिभूत हैं, तभी उनके मित्र अधर उनको ठाकुर के पास लेकर आए हैं। वे गौरांग–भक्त हैं। उनको देखकर श्रीरामकृष्ण को श्री गौरांग का उद्दीपन हुआ है। ठाकुर गा रहे हैं—

आमार अंग केनो गौर (ओ गौर होलो रे!)
कि करले रे धनी, अकाले सकाल कैले (कोइले)
अकालेते बरण धराले॥

एखन तो, गौर होते दिन, बाकि आछे!
एखन तो द्वापर लीला, शेष होय नाई!
एकि होलो रे! कोकिल मयूर, सकलइ गौर।
जे दिके फिराइ आँखि (एकि होलो रे)।
एकि, एकि, गौरमय सकल देखि॥

राइ बुझि मथुराय एलो, ताइ ते अंग गौर होलो!
धनी कुमुरिये पोका छिलो, ताइते आपनार वरण धराइलो।
एखनि जे अंग कालो छिलो, देखते–देखते गौर होलो।
राइ भेवे कि राइ होलाम (एकि रे)।
जे राधामन्त्र जप ना करे, राइ धनी कि आपनार बरण धराय तारे।
मथुराय आमि, कि नवद्वीपे आमि, किछु ठाओराते नारि रे।
एखनओ तो, महादेव अद्वैत होय नाइ (आमार अंग केनो गौर)।
एखनओ तो, बलाइ दादा निताइ होय नाइ,
विशाखा रामानन्द होय नाई।
एखनओ तो, ब्रह्माहरिदास होयनाइ,
एखनओ तो, नारद श्रीवास होय नाइ।
एखनओ तो, मा यशोदा शची होय नाइ।
एकाइ केनो आमि गौर
(जखन बलाइ दादा निताइ होय नाइ तखन)
तबे ताइ बुझि मथुराय ऐलो, ताइते कि अंग आमार गौर होलो।

(अतएव बुझि आमि गौर) एखन तो, पिता नन्द जगन्नाथ होय नाई।
एखन तो श्रीराधिका गदाधर होय नाई।
आमार अंग केनो गौर होलो॥

[भावार्थ— मेरा अंग गौर क्यों हो गया है, यह क्या हुआ है रे! हे धनी (सखी), यह क्या किया! बेसमय में सुबह कर दी, बेसमय में रंग कर दिया है। अभी तो दिन के श्वेत होने में समय है! अभी तो द्वापरलीला समाप्त नहीं हुई है। यह क्या हो गया है रे! कोयल-मोर सब सफेद हैं, जिधर दृष्टि फिराता हूँ। (यह क्या हो गया है रे!) यह क्या है, सबको गौरमय देख रहा हूँ। राइ (राधा) शायद मथुरा में आ गईं हैं, जभी तो अंग गौर हो गया है। धनी (राधा) तिलचट्टा थीं तभी तो अपना रंग पकड़वा दिया है। जो अंग काला था, अब वह देखते-देखते गौर हो गया है। राइ (राधा) की भावना करके क्या राइ (राधा) हो गया हूँ? (यह क्या है रे!)। जो राधामन्त्र जप नहीं करता, राइ धनी (राधा रानी) क्या उस को अपना वरण (रंग)पकड़वाती हैं? मैं मथुरा में हूँ या नवद्वीप में हूँ, मैं कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ भाई! अभी तक भी तो महादेव अद्वैत नहीं बने हैं। (मेरा अंग क्यों गौर हो गया है!) अभी तक भी बलराम दादा निताई नहीं बने हैं, विशाखा रामानन्द नहीं हुईं, ब्रह्मा हरिदास नहीं हुए; नारद श्रीवास नहीं हुए; माँ यशोदा शची नहीं हुईं। मैं अकेला ही क्यों गौर हुआ हूँ? (जब बलाई दादा निताई नहीं हुए।) किन्तु जभी लगता है मैं मथुरा में आ गया हूँ, तभी तो मेरा अंग गौर हुआ है। (इसलिए मैं समझता हूँ मैं गौर हो गया हूँ) पर अभी तक भी पिता नन्द जगन्नाथ नहीं हुए हैं। श्रीराधिका गदाधर नहीं हुईं। मेरा अंग क्यों गौर हो गया है?]

अब श्री गौरांग के भाव में आविष्ट होकर गाना गा रहे हैं। कह रहे हैं, सारदाबाबू इस गाने को बड़ा पसन्द करते हैं—

भाव होबे बै कि रे! (भावनिधि श्रीगौरांगेर)
भावे हासे काँदे नाचे गाय।
वन देखे वृन्दावन भावे; सुरधनी देखे श्री यमुना भावे।
गोरा फुकुरि फुकुरि कांदे;
(जार अन्त:कृष्ण बहिर्गौर)
गोरा आपनार पाय आपनि धरे।
बोले कोथा राई प्रेममयी।

[भावार्थ— भाव के समुद्र श्रीगौरांग का भाव के बिना और क्या है रे! वे भाव में हँसते, रोते, नाचते, गाते हैं। वन को देखकर वृन्दावन की भावना करते हैं, समुद्र देखकर यमुना की भावना करते हैं। जिसके अन्तर में कृष्ण और बाहर गौर-भाव होगा— चैतन्य प्रभु फुफक-फुफक कर रोते हैं। गौरा अपने पैर अपने-आप पकड़ते हैं और कहते हैं, प्रेममयी राधा कहाँ है?]

गान— पाड़ार लोके गोल करे मा, आमाय बोले गौर कलंकिनी।
एकि कइबार कथा कइबो कोथा;
लाजे मलाम ओगो प्राण सजनी।
एकदिन श्रीवासेर बाड़ि, कीर्त्तनेर धूम हुड़ाहुड़ि;
गौरचाँद देन गड़ागड़ि श्रीवास आंगिनाय;
आमि एक पाशे दाँड़िये छिलाम, (एकपाशे नुकाय)
आमि पड़लाम अचेतन होये, चेतन कराय श्रीवासेर रमणी।
एक दिन काजीर दलन, गौर करेन नगर कीर्त्तन,
चण्डालादि जतेक यवन, गौर संगेते;
हरिबोल हरिबोल बोले, चले जान नदेर बाजार दिये,
आमि तादेर संगे गिये, देखेछिलाम रांगा चरण दुखानि।
एक दिन जान्हवीर तटे; गौर चाँद दाँड़ाये घाटे,
चन्द्र सूर्य उभयेते, गौर अंगेते;
देखे गौर रूपेर छवि, भुले गेलो शक्त शैवी,
आमार कलसी पड़े गेलो दैवी, देखेछिलो पाप ननदिनी॥

[भावार्थ— हे माँ, मुहल्ले के लोग शोर करके मुझे 'गौर कलंकिनी' कहते हैं। यह क्या कहने की बात है? कहूँ भी तो कहाँ, ओ मेरी प्राण सजनी, मैं तो लाज के मारे मरी जा रही हूँ। एक दिन श्रीवास के घर कीर्त्तन की धूम मची थी, गौर-चाँद श्रीवास के आँगन में लोटपोट हो रहे थे, मैं एक कोने में एक ओर छिपी खड़ी थी। मैं अचेतन होकर गिर पड़ी तो श्रीवास की रमणी ने मुझे चेतन किया। एक दिन काजी का दलन करने के लिए गौरांग चाण्डाल, यवनादि को साथ लिए नगर-कीर्त्तन कर रहे थे और 'हरिबोल'-'हरिबोल' बोलते हुए नदिया के बाजार से जा रहे थे तो मैंने उनके दोनों लाल चरण देखे थे। एक दिन गंगातट पर गौर-चाँद घाट पर खड़े थे, चन्द्रसूर्य दोनों उनके अंगों पर प्रकट हुए थे। गौर-रूप की वह छवि देख शाक्त और शैव सब भूल गए। मेरी भी कलसी गिर

गई और दुष्ट ननद ने वह देख लिया।]

बलराम के पिता वैष्णव हैं। जभी सम्भवत: अब श्रीरामकृष्ण गोपियों के उद्भ्रान्त (पागल) प्रेम का गाना गा रहे हैं—

श्यामेर नागाल पेलाम ना लो सई।
आमि कि सुखे घरे रई॥
श्याम यदि मोर होतो माथार चूल।
यतन करे बांधतुम बेणी सइ, दिये बकुल फूल॥
श्याम यदि मोर कंकण होतो, बाहु माझे सतत रहितो।
(कंकण नाड़ा दिये चले जेतुम सई) (बाहु नाड़ा दिये)
(श्याम कंकण हाते दिये, चले जेतुम सई) (राजपथे)
श्याम जखन बाजाय ताँर बाँशि
आमि तखन जल लोते यमुनाय आसि॥
(आमि) बनपोड़ा हरिणीर मत इति उति चेये रइ॥

[भावार्थ— श्याम की खोज नहीं मिली हे सखी! मैं क्या घर में खुशी से रह रही हूँ? श्याम यदि मेरे सिर के केश होते तो यत्न (प्यार) से हे सखी, मैं बकुल के फूल उसमें लगाकर वेणी बना लेती। श्याम यदि मेरा कंगन होते तो सर्वदा बाँह में रहते। (अरी सखी, मैं कंगन हिलाते हुए जाती, बाँह झटकते हुए जाती। श्याम रूप कंगन हाथ में पहनकर राजपथ पर चली जाती)। श्याम जब अपनी बाँसुरी बजाते हैं तो मैं यमुना पर जल लेने आ जाती हूँ और मैं भ्रान्त हरिणी की तरह इधर-उधर निहारती रहती हूँ।]

●

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्म समन्वय— बलराम के पिता के संग में बातें)

बलराम के पिता की भद्रक आदि उड़ीसा के नाना स्थानों पर जमींदारी है और उनकी वृन्दावन, पुरी, भद्रक आदि नाना स्थानों पर देवसेवा की अतिथिशालाएँ हैं। वे अन्तिम जीवन में श्री वृन्दावन में श्री श्यामसुन्दर के कुञ्ज में उनकी सेवा लेकर रहते हैं।

बलराम के पिता जी पुरातन वैष्णव हैं। अनेक वैष्णव भक्त लोग शाक्त, शैव और वेदान्तवादियों के संग सहानुभूति नहीं करते; कोई-कोई तो उनके साथ विद्वेष करते हैं। किन्तु श्रीरामकृष्ण इस प्रकार का संकीर्ण मत पसन्द नहीं करते। वे कहते हैं कि व्याकुलता रहने पर सब पथों, सब मतों द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया जाता है। अनेक वैष्णव भक्त बाहर से तो माला, ग्रन्थ-पाठ इत्यादि करते हैं किन्तु भगवान-लाभ के लिए व्याकुलता नहीं होती। इसीलिए, शायद ठाकुर बलराम के पिताजी को उपदेश दे रहे हैं।

(पूर्वकथा— श्रीरामकृष्ण का वैष्णव वैरागी का भेष-ग्रहण और राममन्त्र-ग्रहण)

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— सोचा, क्यों एकघेया (कट्टर) बनूँ। मैंने भी वृन्दावन में वैष्णव वैरागी का भेष लिया था; तीन दिन उसी भाव में था। और फिर दक्षिणेश्वर में राममन्त्र लिया था; बड़ा तिलक, गले में हीरा; और कुछ दिन परे सब दूर कर दिए थे।

(बलराम के पिता को शिक्षा— ईश्वर सगुण, निर्गुण, साकार और फिर निराकार)

''एक व्यक्ति के पास एक तसला था। लोग उसके पास कपड़े रंगवाने के लिए आते। तसले में रंग घुला हुआ था; किन्तु जिसको जिस रंग की जरूरत होती, उसी तसले में कपड़ा डुबाने से वही रंग हो जाता। एक व्यक्ति यह

देखकर अवाक् होकर रंग वाले से कहता है, तुम जिस रंग में रंगते हो वही रंग ही मुझे दे दो।''

ठाकुर क्या कह कह रहे हैं कि सब धर्मों के लोग ही उनके पास आएँगे और चैतन्य-लाभ करेंगे?

श्रीरामकृष्ण फिर और कह रहे हैं,

''एक पेड़ के ऊपर एक बहुरूपी रहता था। एक व्यक्ति ने देखा हरा, दूसरे ने देखा काला, तीसरे ने देखा पीला; इसी प्रकार कई लोगों ने उसे भिन्न-भिन्न रंग का देखा। वे आपस में कहने लगे वह जानवर तो हरा है। कोई कहता लाल है, कोई बोलता पीला है और झगड़ा करने लगे। तब वे सब लोग उसके पास गए जो व्यक्ति पेड़ के नीचे बैठा था। उसने बतलाया मैं इसी पेड़ के नीचे रात-दिन रहता हूँ, मैं जानता हूँ यह बहुरूपी— गिरगिट, है। क्षण-क्षण में रंग बदलता है। और फिर कभी-कभी किसी भी रंग का नहीं रहता।''

श्रीरामकृष्ण क्या कह रहे हैं कि ईश्वर सगुण हैं, नाना रूप धारण करते हैं। और फिर निर्गुण हैं— कोई रंग नहीं, वाक्य मन के अतीत हैं? और वे भक्तियोग, ज्ञानयोग सब पथों द्वारा ही ईश्वर का माधुर्य रसपान करते हैं?

श्रीरामकृष्ण *(बलराम के पिता के प्रति)*— पुस्तकें और मत पढ़ो, किन्तु भक्ति-शास्त्र पढ़ो जैसे 'श्री चैतन्य चरितामृत'।

(राधाकृष्ण-लीला का अर्थ— रस और रसिक— The one thing needful)

''बात तो यही है, उनको प्यार करना, उनका माधुर्य-आस्वादन करना। वे रस हैं, भक्त रसिक है; भक्त ही रस-पान करता है। वे पद्म हैं, भक्त है अलि (भौंरा)। भक्त पद्म का मधुपान करता है।

''भक्त जैसे भगवान के बिना रह नहीं सकता, भगवान भी भक्त न हो तो रह नहीं सकते। तब भक्त रस होते हैं, भगवान रसिक हो जाते हैं; भक्त पद्म

होते हैं, भगवान अलि (भौंरा) हो जाते हैं। वे अपना माधुर्य आस्वादन करने के लिए दो हो जाते हैं, जभी तो राधाकृष्ण-लीला है।

(बलराम के पिता को शिक्षा— तीर्थादि कर्म, गले में माला— भेष-आचार कितने दिन?)

"तीर्थ, गले में माला, आचार इत्यादि पहले-पहले करने चाहिएँ। वस्तु-लाभ हो जाने पर, भगवान-दर्शन होने पर, बाहर का आडम्बर क्रमशः कम हो जाता है। तब उनका नाम ही लेकर रहना और स्मरण, मनन।[1]

"सोलह रुपयों के पैसे ढेर सारे होते हैं, किन्तु सोलह रुपये जब इकट्ठे कर लिए जाते हैं तब इतनी बड़ी ढेरी नहीं दिखती। उनकी जब एक मोहर बना ली जाती है तब कितना कम हो जाता है। और उसके बदले जब एक हीरा ले लिया तब तो लोगों को पता भी नहीं लगता।"[2]

> गले में माला आदि आचार न रहें तो वैष्णव लोग निन्दा करते हैं। इसीलिए क्या ठाकुर कह रहे हैं कि ईश्वर-दर्शन के बाद माला, भेष इत्यादि का बन्धन इतना नहीं रहता? वस्तुलाभ हो जाने पर बाहर के कर्म कम हो जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(बलराम के पिता के प्रति)*— कर्ताभजा वाले कहते हैं प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों का सिद्ध। प्रवर्तक— तिलक लगाता है, गले में माला रखता है; और आचारी होता है। साधक— उनका बाहर का इतना आडम्बर नहीं रहता, जैसे बाऊल। सिद्ध— जिसका पक्का (ठीक) विश्वास है कि ईश्वर हैं। सिद्धों का सिद्ध— जैसे चैतन्यदेव। ईश्वर का दर्शन किया है और सर्वदा कथावार्त्ता-आलाप। सिद्धों के सिद्ध को ही वे लोग साँई कहते हैं। साँई के बाद और कुछ नहीं।

---

1 यत्वामरतिरेव स्यात्... कार्यं न विद्यते। (गीता 3/17)
परे ब्रह्मणि विज्ञाते समस्तैर्नियमैरलम्।
तालवृन्तेन किं प्रयोजनं प्राप्ते मलयमारुते॥

2 A merchantman sold all, wound up his business, and bought a pearl of great price. — Bible

[बलराम के पिता को शिक्षा— सात्त्विक साधना, सब धर्मों का समन्वय और गोंड़ामी (कट्टरता) त्याग करना]

''साधक नाना प्रकार के होते हैं। सात्त्विक साधना गोपन में होती है, साधक साधन-भजन गोपन में करता है, देखने में साधारण व्यक्ति जैसा लगता है, मसहरी के भीतर ध्यान करता है।

''राजसिक साधक बाहर का आडम्बर रखता है, गले में जप की माला, भेष गेरुआ, रेशमी धोती, सोने के दाने (बीच-बीच में) डाली हुई जप की माला। जैसे साइनबोर्ड लगाकर बैठना।''

वैष्णव भक्तों की वेदान्त मत अथवा शाक्त मत के ऊपर इतनी श्रद्धा नहीं होती— बलराम के पिताजी को ऐसे संकीर्ण भाव छोड़ने के लिए ठाकुर उपदेश दे रहे हैं,

श्रीरामकृष्ण *(बलराम के पिता आदि के प्रति)*— कोई धर्म ही हो, कोई मत ही हो; सभी उसी एक ईश्वर को पुकारते हैं; जभी किसी धर्म या किसी मत पर अश्रद्धा या घृणा नहीं करते। वेद में उनको ही कहा है सच्चिदानन्द ब्रह्म; भागवतादि पुराण में उनको ही कहा सच्चिदानन्द कृष्ण; तन्त्र में कहा है सच्चिदानन्द शिव। वही एक सच्चिदानन्द।

''वैष्णवों की नाना श्रेणियाँ हैं। वेद में जिन्हें ब्रह्म कहते हैं, एक दल वैष्णव उनको कहते हैं, अलख निरञ्जन। अलख अर्थात् जिन्हें लक्ष्य नहीं किया जाता, इन्द्रियों के द्वारा नहीं देखा जाता। वे कहते हैं, राधा और कृष्ण अलख के दो बिन्दु हैं।

''वेदान्त मत में अवतार नहीं है, वेदान्तवादी कहते हैं राम, कृष्ण, ये सच्चिदानन्द की दो तरंगें हैं।

''एक के अतिरिक्त दूसरा नहीं है। जो जैसा भी कहे, यदि आन्तरिक ईश्वर को पुकारे तो उसके पास निश्चय पहुँचेगा ही। व्याकुलता रहने से ही हो जाता है।''

श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर भक्तों से ये सब बातें कह रहे थे। अब तनिक प्रकृतिस्थ हुए हैं और कह रहे हैं, ''तुम बलराम के बाप ?''

(बलराम के पिता को शिक्षा— 'व्याकुल होओ')

सब ही थोड़ी देर चुप हैं; बलराम के वृद्ध पिता नि:शब्द हरिनाम की माला–जप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर आदि के प्रति)*— अच्छा, ये लोग इतना जप करते हैं, इतना तीर्थ करते हैं, तो भी ऐसे क्यों हैं ? मानो अट्ठारह महीने का एक वर्ष।

"हरीश से कहा था, काशी जाने की क्या जरूरत यदि व्याकुलता नहीं। व्याकुलता हो जाने पर यहाँ पर ही काशी है।

"इतना तीर्थ, इतना जप करके भी क्यों नहीं होता ?— व्याकुलता नहीं। व्याकुल होकर उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देते हैं।

"यात्रा (गीति–नाटक) के आरम्भ में बड़ा शोरगुल होता है; तब श्रीकृष्ण नहीं दिखाई देते। उसके बाद नारद ऋषि जब व्याकुल होकर वृन्दावन में आकर वीणा बजाते–बजाते पुकारते हैं और कहते हैं, 'प्राण हे गोबिन्द मम जीवन!' तब कृष्ण और ठहर नहीं सकते। गोपों के संग सामने आते हैं और कहते हैं, धवली ठहरो! धवली ठहरो!"

एकादश खण्ड

दक्षिणेश्वर में
कोजागर लक्ष्मी-पूर्णिमा

प्रथम परिच्छेद

[राखाल, बलराम के पिता, वेणीपाल, मास्टर, मणिमल्लिक, ईशान, किशोरी (गुप्त) आदि के संग]

आज मंगलवार, 16 अक्तूबर, 1883 ईसवी; 30 आश्विन। बलराम के पिताजी और अन्य भक्त उपस्थित हैं। बलराम के पिता परम वैष्णव हैं, हाथ में हरिनाम की माला से सर्वदा जप करते हैं।

कट्टर वैष्णवगण अन्य सम्प्रदाय के लोगों को उतना पसन्द नहीं करते। बलराम के पिता श्रीरामकृष्ण के कभी-कभी दर्शन करते हैं, उनका उन सब वैष्णवों वाला भाव नहीं है।

श्रीरामकृष्ण— जिनका उदार भाव होता है वे सब देवताओं को मानते हैं— कृष्ण, काली, शिव, राम इत्यादि।

बलराम के पिता— हाँ, जैसे एक पति; भिन्न पोषाक।

श्रीरामकृष्ण— किन्तु निष्ठा भक्ति भी तो एक है। गोपियाँ जब मथुरा में गई थीं, तब पगड़ी बाँधे हुए कृष्ण को देखकर घूँघट काढ़ लिया था, और कहा, 'ये फिर कौन हैं, हमारे पीत वस्त्रधारी मोहनचूड़ा पहने कृष्ण कहाँ हैं ?'

"हनुमान की भी निष्ठा भक्ति थी। द्वापर युग में जब हनुमान द्वारका में आए तो कृष्ण ने रुक्मिणी से कहा, रामरूप को देखे बिना हनुमान सन्तुष्ट नहीं होंगे। इसीलिए वे रामरूप धारण करके बैठ गए थे।'

(श्रीरामकृष्ण की अद्‌भुत अवस्था— नित्य लीलायोग)

''क्या पता भाई, मेरी तो ऐसी ही अवस्था है। मैं केवल नित्य से लीला में उतर आता हूँ, और फिर लीला से नित्य में चला जाता हूँ।

''नित्य में पहुँचने का नाम है ब्रह्मज्ञान। बड़ा कठिन है। विषयबुद्धि बिल्कुल बिना गए नहीं होता। हिमालय के घर जब भगवती ने जन्म लिया तो पिता को नाना रूपों में दर्शन दिया।[1] हिमालय बोले, माँ, मेरी ब्रह्मदर्शन करने की इच्छा है। तब भगवती बोलीं, पिता यदि आप वह इच्छा करते हैं तो फिर आपको साधुसंग करना होगा। संसार से अलग होकर बीच-बीच में निर्जन में साधु-संग करें।

''उसी एक से ही अनेक हुआ है— नित्य से ही लीला है। एक अवस्था में 'अनेक' चला जाता है, और फिर 'एक' भी चला जाता है— क्योंकि एक होने से ही दो होता है। वे तो उपमारहित हैं— उपमा द्वारा समझाया जाने वाला नहीं है। अन्धकार भी आलोक के मध्य में है। हम जो आलोक देखते हैं वैसा आलोक नहीं— यह जड़ आलोक नहीं।[2]

और फिर जब वे अवस्था बदल देते हैं, जब लीला में मन को उतार लाते हैं— तब देखता हूँ ईश्वर माया, जीव, जगत— वे सब होकर रह रहे हैं।[3]

(ईश्वर कर्त्ता— 'तुम और तुम्हारा')

''और फिर कभी-कभी वे दिखाते हैं उन्होंने ये समस्त जीव, जगत, बनाए हैं— जैसे बाबू और उसका बाग। वे कर्त्ता और उनका ही है यह समस्त जीव-जगत— इसी का नाम तो है ज्ञान। और 'मैं कर्त्ता', 'मैं गुरु', 'मैं पिता'— इसी का नाम है अज्ञान। और मेरा यह समस्त गृह-परिवार, धन, जन हैं— इसका नाम है अज्ञान।

बलराम के पिता— जी हाँ।

---

1 देवी भागवत, सप्तम स्कन्ध — 31, 35-36 अध्याय

2 'यह जड़ आलोक नहीं'— 'तत् ज्योतिषाम् ज्योतिः,
तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद् यदात्मविदो विदुः॥ मुण्डकोपनिषद् — 2-2-9

3 त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः। श्वेताश्वतर— 4-3

श्रीरामकृष्ण— जब तक 'तुम कर्त्ता हो' यह बोध नहीं होता तब तक लौट-लौटकर आना होगा— फिर और जन्म होगा। 'तुम कर्त्ता' बोध हो जाने पर फिर पुनर्जन्म नहीं होगा।

"जब तक 'तुं हूं' नहीं करेगा तब तक छोड़ेगा नहीं! जाना-आना, पुनर्जन्म होगा ही— मुक्ति नहीं होगी। और 'मेरा', 'मेरा' कहने से भी फिर क्या होगा? बाबू का सेवक कहता रहता है, 'यह हमारा बाग, यह हमारी खाट, मेंढ़ है। किन्तु मालिक जब हटा देते हैं, तब अपना आम का सन्दूक ले जाने की भी क्षमता नहीं रहती!'

" 'मैं' और 'मेरा' ने सत्य को आवरण करके रखा हुआ है— पता नहीं लगने देता।"

(अद्वैत ज्ञान और चैतन्य-दर्शन)

"अद्वैत ज्ञान बिना हुए चैतन्य-दर्शन नहीं होता। चैतन्य-दर्शन होने पर ही तब नित्यानन्द होता है। परमहंस अवस्था में ही नित्यानन्द है।

"वेदान्त मत में अवतार नहीं है। उस मत में चैतन्यदेव अद्वैत के एक बुलबुले हैं।

"चैतन्य-दर्शन कैसा? दियासलाई जलने पर अन्धेरे कमरे में जैसे हठात् आलोक हो जाता है, वैसे ही एक-एक बार देखता है।"

(अवतार अथवा मनुष्य रतन)

"भक्ति में अवतार होता है। कर्ताभजा स्त्री मेरी अवस्था देखकर कह गई थी, 'बाबा, भीतर वस्तुलाभ हुआ है, इतना नाचो-नूचो मत; अंगूरों को रूई के ऊपर रखना चाहिए। पेट में बच्चा होने पर सास क्रमश: मेहनत नहीं करने देती! भगवान-दर्शन का लक्षण है, धीरे-धीरे कर्मत्याग हो जाता है। इसी मनुष्य के भीतर मनुष्य रतन (रत्न) है'।

"मेरे खाने के समय वह कहती, 'बाबा, तुम खा रहे हो या किसी को खिला रहे हो?'

"इस 'मैं' ज्ञान ने ही आवरण कर रखा है। नरेन्द्र ने कहा था, यह 'मैं' जितना जाएगा, उनका 'मैं' उतना ही आएगा।' केदार कहता है, कुम्भ (घड़े) के भीतर मिट्टी जितनी ही रहेगी उतना ही उसमें पानी कम हो जाएगा।

"कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, भाई! आठ सिद्धियों में से एक भी सिद्धि के रहने पर मुझको प्राप्त नहीं करोगे। थोड़ी शक्ति तो हो सकती है! गुटिका सिद्धि; झाड़ना; फूँकना; औषध देने वाला ब्रह्मचारी; किन्तु इससे लोगों का तनिक-सा उपकार होता है। क्यों?

"इसीलिए माँ से मैंने केवल शुद्धाभक्ति माँगी थी; सिद्धियाँ नहीं माँगीं।"

बलराम के पिता, वेणीपाल, मास्टर, मणिमल्लिक आदि से यह बात कहते-कहते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए— बाह्यशून्य चित्रार्पित की न्यायीं बैठे हुए हैं।

समाधि-भंग के पश्चात् श्रीरामकृष्ण गान गा रहे हैं—

होलाम जार जन्य पागल, तारे कैइ पेलाम सइ।
ब्रह्मा पागल, विष्णु पागल, और पागल शिव,
तिन पागले युक्ति करे भांगले नवद्वीप
आर एक पागल देखे एलाम वृन्दाबनेर माठे,
राइके राजा साजाये आपनि कोटाल साजे!

[भावार्थ— जिसके लिए पागल हुई हूँ हे सखी, वह तो मुझे नहीं मिला। ब्रह्मा, विष्णु, शिव— तीनों पागल हैं, तीनों पागलों ने सलाह करके नवद्वीप को तोड़ दिया है। और एक पागल को वृन्दावन के मैदान में देखकर आई हूँ, राधा को राजा सजाकर अपने आप कोतवाल बना हुआ है।]

अब श्रीयुक्त रामलाल से गाने के लिए कह रहे हैं। वे गा रहे हैं—पहले तो गौरांग-संन्यास—

कि देखिलाम रे, केशव भारतीर कुटीरे,
अपरूप ज्योति, श्री गौरांग मूरति, दुनयने प्रेम बहे शतधारे,
गौर मत्तमातंगेर प्राय, प्रेमावेशे नाचे गाए,
कभु धराते लुटाय, नयन जले भासे रे,
कांदे आर बोले हरि, स्वर्गमर्त्य भेद करि, सिंहरवे रे;

आबार दन्ते तृण लये, कृतांजलि होए,
दास्य मुक्ति याचेन द्वारे द्वारे।

[भावार्थ— केशव भारती की कुटीर में मैंने कैसी अपूर्व ज्योतिर्मय श्री गौरांग की मूर्त्ति देखी जिसके दोनों नयनों से शतधाराओं में प्रेम बहता है। मस्त हाथी की तरह गौरांग प्रेम के आवेश में नाचते हैं, गाते हैं और कभी धूल में लोट रहे हैं। उनके नेत्रों में अश्रु सुशोभित हैं। वे सिंह-रव से स्वर्गलोक और मर्त्यलोक का भेदन करके रोते हुए हरि को पुकार रहे हैं। फिर दाँतों में तृण लेकर, बद्धांजलि हो, बार-बार दास की मुक्ति माँगते हैं।

चैतन्यदेव की इस 'पागल', प्रेमोन्माद-अवस्था-वर्णन के बाद, ठाकुर के इंगित से रामलाल फिर गोपियों की उन्माद-अवस्था गा रहे हैं—

धोरो ना धोरो ना रथचक्र, रथ कि चक्रे चले,
जे चक्रेर चक्री हरि, जाँर चक्रे जगत चले।*

[भावार्थ— मत पकड़ो, मत पकड़ो; क्या रथ पहियों से चलता है ? इस चक्र के चक्री हरि हैं जिनके चक्कर से जगत् चलता है।]

गान— नवनीरदवर्ण किसे गण्य श्यामचाँद रूप हेरे,
करेते बाँशी अधरे हासि, रूपे भुवन आलो करे॥
जड़ित पीतबसन, जिनि तड़ित करे झलमल,
आन्दोलित चरणावधि हृदिसरोजे बनमाल,
निते युवती-जाति कुल, आलो करे जमुनाकूल,
नन्दकुल चन्द्र जतो चन्द्र जिनि विहरे॥
श्यामगुणधाम पशि, हाम हृदि-मन्दिरे,
प्राण मन ज्ञान सखी हरे निलो बाँशीर स्वरे,
गंगानारायणेर जे दुःख से कथा बोलिबो कारे,
जानते यदि जेते गो सखी जमुनाय जल आनिबारे॥

[भावार्थ— प्रिय श्याम का चाँद-जैसा रूप देखकर अब नव नीरद बादलों का वर्ण किस गिनती में है ? वे हाथ में बंसी, होठों पर हँसी लिए अपने रूप से जगत को रोशन कर रहे हैं। पीतवस्त्र में लिपटे हुए वे मानो बिजली से झलमल

---

* पूरा गाना पृष्ठ 74 पर देखें।

कर रहे हैं। उनके हृदयकमल पर वनमाला चरणों तक झूल रही है और युवा गोपियों के संग यमुना के तट को प्रकाशित करते हुए वे नन्दकुल के चन्द्र अनन्त चन्द्रों को भी लजा रहे हैं। वे, हे सखि, गुणों के धाम वहाँ खड़े हुए अपनी बंसी के स्वर से मेरे प्राण, मन, होश सब हरण करके मेरे हृदय-मन्दिर में प्रवेश कर गए हैं। गंगानारायण कहते हैं कि जो दुःख मुझे है, उसे मैं किससे कहूँ? ओ सखि, तुम यदि यमुना जी के तट पर जल लेने जाती तो अपने-आप समझ जातीं।]

द्वितीय परिच्छेद

(अस्पृश्य जाति हरिनाम से शुद्ध)

"हरिभक्ति हो जाने पर फिर जाति-विचार नहीं रहता। श्रीयुक्त मणिमल्लिक से कह रहे हैं, तुम तुलसीदास की वही बात कहो तो।"

मणिमल्लिक— चातक की प्यास के कारण छाती फटी जाती है— गंगा, यमुना, सरयू और कितनी नदियाँ तथा तालाब हैं, किन्तु वह किसी का भी जल नहीं पिएगा। केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के जल के लिए 'हाँ' किए (ऊपर की ओर मुँह खुला किए) रहेगा।

श्रीरामकृष्ण— अर्थात् उनके पादपद्मों में भक्ति ही सार है और सब मिथ्या है।

[Problem of the untouchables— अस्पृश्य जाति हरिनाम से शुद्ध]

मणिमल्लिक— और भी एक बात तुलसीदास की है— अष्टधातु पारस पत्थर को छूने से सोना बन जाती है। उसी प्रकार सब जातियाँ— चाण्डाल तक, हरिनाम करने से शुद्ध हो जाती हैं। और फिर 'बिना हरिनाम चार जात चामार'। (बिना हरिनाम चारों जातियाँ— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चमार हैं।)

श्रीरामकृष्ण— जिस चमड़े को छूते भी नहीं, वही चमड़ा संस्कारित (शोधन) कर लेने पर मन्दिर में ले जाया जाता है।

"ईश्वर के नाम से मनुष्य पवित्र हो जाता है। जभी नामकीर्त्तन का अभ्यास करना चाहिए। मैंने यदुमल्लिक की माँ से कहा था, जब मृत्यु

आएगी तब वही संसार-चिन्ता ही आएगी। परिवार, लड़के-बच्चों की चिन्ता— विल (इच्छा-पत्र) करने की चिन्ता इत्यादि ही आएगी; भगवान की चिन्ता नहीं आवेगी। उपाय है उनका नाम-जप, नामकीर्त्तन-अभ्यास करना। यह अभ्यास यदि रहे तो मृत्यु के समय उनका ही नाम मुख में आएगा। बिल्ली के पकड़ने पर पक्षी की 'क्याँ-क्याँ' बोली ही निकलेगी, वह तब फिर 'राम- राम', 'हरे कृष्ण' नहीं बोलेगा।

"मृत्यु के समय के लिए तैयार होना अच्छा है। शेष वयस में निर्जन में जाकर केवल ईश्वर-चिन्तन और उनका नाम करना। हाथी नहाकर यदि अस्तबल में चला जाता है तो फिर और धूल, कीचड़ नहीं लगा सकेगा।"

बलराम के पिता, मणिमल्लिक, वेणीपाल, इन सबकी वयस हो गई है;
जभी क्या ठाकुर, उनके विशेष मंगल के लिए, ये सब उपदेश दे रहे हैं?

श्रीरामकृष्ण फिर भक्तों को सम्बोधन करके बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— निर्जन में उनका चिन्तन और नाम करने के लिए क्यों कहता हूँ? संसार में रातदिन रहने पर अशान्ति होती है। देखो ना, एक हाथ जमीन के लिए भाई भाई का खून करके खूनी है। सिख कहते हैं, जमीं, जोरु, जर (जमीन, स्त्री और धन)— इन तीन के लिए ही तो है जितनी भी गड़बड़, अशान्ति।

(रामचन्द्र, संसार और योगवाशिष्ठ— 'मजार कुटि')

"तुम गृहस्थ (संसार) में हो भी, तो क्या भय है? राम ने जब संसार त्याग करने की बात कही, तो दशरथ चिन्तित होकर वशिष्ठ के शरणागत हुए। वशिष्ठ ने राम से कहा, राम! तुम क्यों संसार त्याग करोगे? मेरे संग विचार करो, ईश्वर के बिना क्या संसार है? क्या त्याग करोगे, अथवा क्या ग्रहण करोगे? उनके बिना तो कुछ नहीं है। वे 'ईश्वर, माया, जीव, जगत' सभी रूप में प्रतीयमान हो रहे हैं।"

बलराम के पिता— बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण— साधन के समय यही संसार 'धोखे की टट्टी' है; और फिर ज्ञान-लाभ होने पर, उनके दर्शन होने पर, यह संसार 'मजार कुटि' है।

(अवतार पुरुष में ईश्वर-दर्शन— अवतार चैतन्यदेव)

''वैष्णवग्रन्थ में है— विश्वास से मिलते कृष्ण, तर्क से बहु दूर।

''केवल विश्वास!

''कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास! वृन्दावन में कुएँ से नीच जाति के जल निकालने पर, उसने उससे कहा, तू कह शिव। उसके शिवनाम करने पर तुरन्त जल पी लिया। वह कहता, ईश्वर का नाम किया है, फिर धन देकर प्रायश्चित! यह क्या!

''रोग आदि के लिए तुलसी देता है, यह देखकर कृष्णकिशोर तो अवाक्!

''साधु-दर्शन की बात पर हलधारी ने कहा था, 'फिर क्या देखने जाऊँ— पाँच भूतों के खोल को!' कृष्णकिशोर ने गुस्से से कहा, हलधारी ऐसी बात कहता है! साधु की देह चिन्मय होती है, जानता नहीं!

''काली-मन्दिर के घाट पर हम लोगों से कहा था, तुम लोग कहो— जैसे राम! राम! बोलते-बोलते मेरे दिन कटें।

''मैं कृष्णकिशोर के घर जाता तो मुझे देखकर नृत्य करने लगता।

''रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा था, भाई ! जहाँ पर उर्जिता भक्ति देखोगे, समझना वहाँ पर मैं हूँ।

''जैसे चैतन्यदेव। प्रेम में हँसते, रोते, नाचते, गाते थे। चैतन्यदेव अवतार— ईश्वर अवतीर्ण हुए।''

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं—

भाव होबे बै कि रे भावनिधि श्री गौरांगेर!
भावे हासे काँदे नाचे गान! (फुकुरि फुकुरि कान्दे)*।

[श्री गौरांग तो भाव की निधि हैं। वे भाव में हँसते, रोते, नाचते, गाते हैं और जोर जोर से रोते हैं।]

●

---

* पृष्ठ 128-129 पर पूरा गाना और भावार्थ है।

तृतीय परिच्छेद

[दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग में श्रीरामकृष्ण— नृत्य और भावाविष्ट]

बलराम के पिता, मणिमल्लिक, वेणीपाल आदि ने विदा ली। सन्ध्या के बाद कांसारीपाड़ा की हरिसभा के भक्तगण आए हैं। उनके संग श्रीरामकृष्ण मस्त मातंग (हाथी) की भाँति नृत्य कर रहे हैं।

नृत्य के बाद भावाविष्ट। कहते हैं, मैं थोड़ा-सा अपने आप चलूँगा।

किशोरी भावावस्था में पदसेवा करने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने किसी को स्पर्श करने नहीं दिया।

सन्ध्या के बाद ईशान आए हैं। श्रीरामकृष्ण बैठे हैं— भावाविष्ट। कुछ क्षण बाद ईशान के साथ बातें कर रहे हैं। ईशान की इच्छा गायत्री का पुरश्चरण करने की है।

श्रीरामकृष्ण *(ईशान के प्रति)*— तुम्हारे मन में जो है, वही करो। मन में और संशय तो नहीं?

(कलि में निगम का पथ नहीं— आगम का पथ)

ईशान— मैंने एक तरह से प्रायश्चित के जैसा संकल्प किया था।

श्रीरामकृष्ण— इस पथ द्वारा (आगम के पथ द्वारा) क्या वह नहीं होता? जो ब्रह्म हैं, वे ही शक्ति, काली हैं। मैंने कालीब्रह्म का मर्म जानकर धर्म-अधर्म सब छोड़ दिया है।

ईशान— चण्डी के स्तव में है, ब्रह्म ही आद्याशक्ति हैं। ब्रह्म-शक्ति अभेद।

श्रीरामकृष्ण— इसको मुख से बोलने से नहीं होता, धारणा जब होगी तब ठीक होगा।

"साधना के पश्चात् चित्तशुद्धि हो जाने पर ठीक-ठीक बोध होगा कि वे ही कर्त्ता हैं; वे ही मन-प्राण-बुद्धिरूपा हैं। हम केवल यन्त्र स्वरूप हैं। 'पंके बद्ध करो करि, पंगुके लंघाओ गिरि।'[1]

"चित्तशुद्धि होने पर बोध होगा, पुरश्चरण आदि कर्म वे ही करवाते हैं। 'जार कर्म सेइ करे, लोके बोले करि आमि।'[2]

"उनका दर्शन होने पर सब संशय मिट जाते हैं। तब अनुकूल हवा बहती है। अनुकूल हवा के चलने पर जैसे माँझी पाल उठा कर पतवार पकड़ कर बैठा रहता है और तम्बाकू पीता है, उसी प्रकार भक्त निश्चिन्त हो जाता है।"

●

ईशान के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ एकान्त में बातें कर रहे हैं। पूछ रहे हैं—

"नरेन्द्र, राखाल, अधर, हाजरा— इनके विषय में तुम्हें कैसा बोध होता है, सरल हैं कि नहीं। और मेरे विषय में तुम्हें कैसा बोध होता है?"

मास्टर कह रहे हैं—

"आप सरल और फिर गम्भीर हैं,— आप को समझना बड़ा कठिन है।"

श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।

---

1 तुम हाथी को कीचड़ में बद्ध कर देती हो और पंगु को पहाड़ पार करवा देती हो।

2 जिनका काम है, वे ही करते हैं; लोग कहते हैं कि मैं करता हूँ।

द्वादश खण्ड

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में

प्रथम परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण सर्वदा ही समाधिस्थ; केवल राखाल आदि भक्तों की शिक्षा के लिए उनको लेकर व्यस्त रहते हैं— किस प्रकार उन्हें चैतन्य हो।

उनके कमरे के पश्चिम वाले बरामदे में सब बैठे हुए हैं। प्रात:काल का समय। आज है चौथा पौष, मंगलवार, अग्रहायण चतुर्थी; 18 दिसम्बर, 1883 ईसवी। देवेन्द्रनाथ ठाकुर की भक्ति और वैराग्य की बातों पर वे लोग उनकी प्रशंसा कर रहे हैं। राखाल आदि छोकरे भक्तों से वे कहते हैं—

वे (देवेन्द्रनाथ) अच्छे व्यक्ति हैं; किन्तु जो संसार में प्रवेश न करके बचपन से ही शुकदेव आदि की भाँति रात-दिन ईश्वर का चिन्तन करते हुए कौमार वैराग्यवान् हैं, वे धन्य हैं!

"संसारी लोगों की एक न एक कामना-वासना रहती ही है। इधर भक्ति भी खूब दिखाई देती है। सेजोबाबू (मथुरबाबू) किसी एक मुकदमे में पड़े थे— माँ काली के पास, मुझसे कहा, बाबा, यह अर्घ्य माँ को दे दो तो— मैंने उदार मन से दे दिया।

"रति की माँ की इधर तो कितनी भक्ति! प्राय: आकर कितनी सेवा करती! रति की माँ वैष्णवी थी। कुछ दिन परे ज्योंहि देखा कि मैं माँ काली का

प्रसाद खाता हूँ— त्योंहि आना बन्द कर दिया! एकघेये (कट्टर)! लोगों को देखकर पहले-पहले पहचाना नहीं जाता।''

श्रीरामकृष्ण कमरे में पूर्व की ओर के द्वार के निकट बैठे हैं। शीतकाल, शरीर पर मोलस्किन का रैपर (शॉल) है। हठात् सूर्य-दर्शन और समाधिस्थ। निमेषशून्य! बाह्यशून्य!

यही है क्या गायत्री मन्त्र की सार्थकता— 'तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि'?

अनेक क्षण परे समाधि भंग हुई। राखाल, हाजरा, मास्टर आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(हाजरा के प्रति)*— समाधि, भाव; प्रेम से ही होते हैं। उस ग्राम (श्यामबाजार) में नटवर गोस्वामी के घर में कीर्त्तन हो रहा था— श्री कृष्ण और गोपियों का दर्शन करके समाधिस्थ हो गया! बोध हुआ, मेरा लिंग शरीर (सूक्ष्म शरीर) श्री कृष्ण के पैरों में फिर रहा है!

''जोड़ासाँको-हरिसभा में इसी प्रकार कीर्त्तन के समय समाधि होकर बाह्यशून्य (बेहोश)। उस दिन देहत्याग की सम्भावना थी।''

श्रीरामकृष्ण स्नान करने के लिए गए। स्नान के उपरान्त वही गोपी-प्रेम की बातें करते हैं।

(मणि आदि के प्रति)— गोपी-प्रेम के केवल उसी आकर्षण को ही लेना चाहिए। इस प्रकार के गाने गाओ—

सखि, वह वन कितनी दूर है!
(जहाँ पर मेरा श्याम सुन्दर है।)
(मैं तो अब और चल भी नहीं सकती।)

गान— घरे जाबोई जे ना गो!
जे घरे कृष्ण नामटि करा दाय। (संगिनीया)
[अरी संगिनी, मैं उस घर में नहीं जाऊँगी जहाँ कृष्ण-नाम लेना संकट है।]

●

द्वितीय परिच्छेद

(ठनठने में श्री सिद्धेश्वरी–मन्दिर में श्रीरामकृष्ण)

श्रीरामकृष्ण ने राखाल के लिए श्री सिद्धेश्वरी के पास डाब–चीनी की मन्नत की है। मणि से कह रहे हैं, ''तुम डाब–चीनी के दाम दोगे।''

तीसरे प्रहर श्रीरामकृष्ण राखाल, मणि आदि के संग ठनठने के श्री सिद्धेश्वरी–मन्दिर की ओर गाड़ी में आ रहे हैं। रास्ते में सिमूलिया बाजार है, वहाँ से डाब–चीनी खरीदी गई।

मन्दिर में आकर भक्तों से कह रहे हैं, एक डाब काटकर चीनी डालकर माँ के पास दे दो।

जब मन्दिर में आकर पहुँचे, पुजारीगण मित्रों के साथ काली के सम्मुख ताश खेल रहे थे। ठाकुर यह देखकर भक्तों से कह रहे हैं, ''देख रहे हो, ऐसे स्थान पर ताश खेलना! यहाँ पर तो ईश्वर–चिन्तन करना चाहिए।''

अब श्रीरामकृष्ण यदुमल्लिक के मकान पर आए हैं। उनके पास अनेक बाबू बैठे हुए हैं।

यदु कह रहे हैं, 'आओ–आओ'। परस्पर कुशल पूछने के बाद श्रीरामकृष्ण बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— तुम इतने भाण्ड (मसखरे), मुसाहब (चापलूस) क्यों रखते हो ?

यदु *(सहास्य)*— आप उद्धार करेंगे, इसलिए। *(सब का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण— मुसाहब सोचते हैं बाबू उनको रुपया दे देगा। किन्तु बाबू के पास से रुपया निकलवाना बड़ा कठिन है। एक गीदड़ एक बैल को देखकर उसका साथ नहीं छोड़ता था। वह चरता–फिरता तो वह (गीदड़) भी संग–संग रहता। गीदड़ सोचता था, उसका अण्डकोष लटक रहा है, वह कभी न कभी गिर जाएगा और मैं खा लूँगा। बैल कभी सोता तो वह भी पास ही सो जाता; और जब उठकर चरने लगता तो वह भी संग–संग रहता। कितने ही

दिन इसी प्रकार चले गए, किन्तु कोष नहीं गिरा; तब वह निराश होकर चला गया। *(सब का हास्य)*। मुसाहबों की भी इसी प्रकार की अवस्था होती है।

यदु और उनकी माताजी ने श्रीरामकृष्ण और भक्तों की जलपान-सेवा की।

●

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण मणि के संग में— ज्ञान-भक्ति क्या दोनों ही नहीं होते ?)

बुधवार, **19 दिसम्बर, 1883 ईसवी**; समय 9 का हो गया है। श्रीरामकृष्ण के साथ मणि की बातें हो रही हैं (चतुर्थ भाग, 7वें खण्ड में विवरणित, पञ्चवटी में)।

मणि *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— ज्ञान-भक्ति दोनों ही क्या नहीं होते?

श्रीरामकृष्ण— खूब ऊँचे घर वाले के होते हैं। ईश्वरकोटि के होते हैं जैसे चैतन्यदेव। जीवकोटियों की अलग बात है।

''आलोक (ज्योति) पाँच प्रकार की है। दीप-आलोक, अन्य-अन्य अग्नियों का आलोक, चन्द्र-आलोक, सूर्य-आलोक तथा चन्द्र-सूर्य एक आधार में (चन्द्र और सूर्य का सम्मिलित आलोक)। भक्ति है चन्द्र; ज्ञान है सूर्य।

''कभी-कभी आकाश में सूर्य के अस्त हुए बिना ही चन्द्रोदय दिख जाता है। अवतार आदि में भक्ति-चन्द्र और ज्ञान-सूर्य एक आधार में दिखाई देते हैं।

"सोचने से ही क्या सबको ज्ञान-भक्ति एक आधार में होते हैं? आधार विशेष होता है। किसी बाँस का छिद्र अधिक (बड़ा), किसी बाँस का खूब छोटा होता है। ईश्वर-वस्तु की धारणा क्या हर एक आधार में होती है? एक सेर के लोटे में क्या दो सेर दूध समाता है?"

मणि— क्यों, उनकी कृपा से क्या नहीं होता? वे कृपा करें तो सूई के भीतर से ऊँट जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण— किन्तु कृपा क्या यूँ ही हो जाती है? भिखारी यदि पैसा माँगे, तो दे दिया जाता है। किन्तु एकदम ही यदि रेल का भाड़ा माँगे वह!

मणि निःशब्द खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण भी चुप हैं। हठात् कह रहे हैं—

हाँ निश्चय, किसी-किसी आधार पर उनकी कृपा होने से हो सकता है; दोनों ही हो सकते हैं।

प्रणामपूर्वक मणि बेलतले की ओर जा रहे हैं।

बेलतले से लौटने में दोपहर हो गई। देरी देखकर श्रीरामकृष्ण बेलतले की ओर आ रहे हैं। मणि शतरंजी (दरी), आसन, जल की घटि लेकर लौट रहे हैं, पञ्चवटी के निकट ठाकुर के साथ मेल हुआ। वे तुरन्त भूमिष्ठ होकर ठाकुर को प्रणाम कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— मैं तुम्हें खोजने के लिए जा रहा था। सोचा, इतना समय हो गया है, शायद प्राचीर उलांघकर भाग गया! तुम्हारी आँखें तब जैसी देखी थीं— सोचा, शायद नारायण शास्त्री की भाँति पलायन कर गया। उसके उपरान्त सोचा, नहीं, वह नहीं भागेगा; वह काफी सोच-समझकर कार्य करता है।

•

चतुर्थ परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण मणि आदि भक्तों के संग में)

और फिर रात को श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातें कर रहे हैं। राखाल, लाटु, हरीश आदि हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— अच्छा, कोई-कोई कृष्ण-लीला की अध्यात्म व्याख्या करते हैं; तुम क्या कहते हो?

मणि— नाना मत हैं, वे रहें भी तो क्या? भीष्मदेव की कहानी आप ने बताई थी— शरशय्या पर देहत्याग के समय उन्होंने कहा था, क्यों रोता हूँ? यन्त्रणा के लिए नहीं। जब सोचता हूँ, साक्षात् नारायण अर्जुन के सारथि हुए हैं अथच पाण्डवों के ऊपर इतनी विपत्ति है, उनकी लीला को कुछ भी समझ नहीं सका, तभी रो रहा हूँ।

"और फिर आपने हनुमान की बात बताई थी, हनुमान कहा करते, 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र इत्यादि कुछ नहीं जानता। मैं तो केवल एक राम-चिन्तन करता हूँ।'

"आपने ही तो बतलाया है कि दो वस्तुओं के अतिरिक्त और कुछ नहीं है— ब्रह्म और शक्ति। और कहा है, ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) हो जाने पर ये दोनों ही एक बोध होते हैं; जिस एक का दो नहीं है।"

श्रीरामकृष्ण— हाँ निश्चय; वस्तु लेनी है, वह काँटे वाले वन में से जाकर ही हो या अच्छे रास्ते से जाकर ही हो।

"नाना मत तो हैं ठीक। न्याँग्टा (तोतापुरी) कहता था, मतों के कारण साधु-सेवा नहीं हुई। एक जगह पर भण्डारा हो रहा था। अनेक सम्प्रदायों के साधु आए; सब कहने लगे हमारी सेवा पहले हो, फिर दूसरे सम्प्रदाय की हो। किसी भी प्रकार मीमांसा नहीं हुई; अन्त में सब चले गए। और वेश्याओं को खिलाया गया।"

मणि— तोतापुरी महान् थे।

श्रीरामकृष्ण— हाजरा कहता है ऐसा ही (सामान्य) था। नहीं भाई, बातों की जरूरत नहीं है— सब ही कहते हैं मेरी घड़ी ठीक चलती है।

''देखो, नारायण शास्त्री को किन्तु खूब वैराग्य हो गया था। इतना बड़ा विद्वान् पण्डित— स्त्री-त्याग करके कहीं चला गया। मन से बिल्कुल कामिनी-काञ्चन त्याग करने पर ही तब योग होता है। किसी-किसी का योगी का लक्षण दिखाई देता है।

''तुम्हें षट्चक्र के विषय में कुछ बता देना होगा। योगीजन षट्चक्र-भेदन करके उनकी कृपा से उनका दर्शन करते हैं। षट्चक्र सुना है?''

मणि— वेदान्तमत में सप्तभूमि।

श्रीरामकृष्ण— वेदान्त नहीं; वेद मत। षट्चक्र कैसा है, जानते हो? सूक्ष्म देह के भीतर सब पद्म हैं— योगीजन देख पाते हैं। जैसे मोम के वृक्ष के फल-पत्ते।

मणि— जी हाँ, योगीजन देख पाते हैं। एक पुस्तक में है, एक प्रकार का काँच (magnifier) होता है, उसके अन्दर से देखने पर खूब छोटी वस्तु बड़ी दिखती है। उसी प्रकार योग के द्वारा ये सब सूक्ष्म पद्म दिखाई दे जाते हैं।

•

श्रीरामकृष्ण ने पञ्चवटी के कमरे में रहने के लिए कहा है। मणि उसी कमरे में रात्रिवास कर रहे हैं। **प्रत्यूषे कमरे** में एकाकी गाना गा रहे हैं—

गौर हे आमि साधन-भजन-हीन।
परशे पवित्र करो आमि दीन हीन॥

चरण पाबो पाबो बोले हे,
(चरण तो आर पेलाम ना, गौर!)
आमार आशाय आशाय गेलो दिन!

[हे गौरांग, मैं साधन-भजनहीन हूँ, तुम मुझ दीन-हीन को अपने स्पर्श से पवित्र कर दो। 'तुम्हारे चरण पाऊँगा-पाऊँगा' यह सोचता रहा। हे गौर, चरण तो फिर मिले नहीं और आशा-आशा में ही दिन चले गए।]

हठात् खिड़की की ओर दृष्टि जाने पर देखते हैं श्रीरामकृष्ण खड़े हुए हैं। 'परशे पवित्र करो आमि दीन-हीन!' यह बात सुनकर उनकी आँखें

अश्रुपूर्ण हो गई हैं।

फिर एक और गाना होता है—

आमि गेरुआ वसन अंगेते परिबो,
शंखेर-कुण्डल परि।
आमि योगिनीर बेशे जाबो सेई देशे,
जेखाने निठुर हरि॥

[मैं गेरुए वस्त्र अंगों पर पहनूँगी और शंख के कुण्डल। मैं योगिनी के वेश में उस देश में जाऊँगी जहाँ निष्ठुर हरि हैं।]

श्रीरामकृष्ण के संग में राखाल टहल रहे हैं।

●

अगला दिन शुक्रवार, **21 दिसम्बर**, प्रातःकाल। श्रीरामकृष्ण एकाकी बेलतले पर मणि के साथ बातें कर रहे हैं। साधन की नाना गुह्य बातें, कामिनी-काञ्चन-त्याग की बातें। और कभी-कभी मन ही गुरु होता है, ऐसी बातें कह रहे हैं।

आहार के उपरान्त पञ्चवटी में आए— मनोहर पीताम्बर धारी! पञ्चवटी में दो-तीन वैष्णव बाबा जी आए हैं— उन में एक बाउल हैं। वे वैष्णव से कहते हैं, अपने कौपीन-डोर का स्वरूप बताओ तो ज़रा।

तीसरे प्रहर नानक-पंथी एक साधु आए हैं। हरीश, राखाल भी हैं। साधु हैं निराकारवादी। ठाकुर उनसे साकार का भी चिन्तन करने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण साधु से कह रहे हैं—

"डुबकी मारो; ऊपर-ऊपर तैरने से रत्न नहीं मिलता। और ईश्वर निराकार भी हैं और फिर साकार भी हैं। साकार-चिन्तन करने से शीघ्र भक्ति होती है। तब फिर दोबारा निराकार-चिन्तन। जैसे पत्र पढ़ लेने पर उस पत्र को रख देता है। उसके बाद लिखे के अनुसार काम करता है।"

●

पञ्चम परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में— बलराम के पिता आदि)

आज शनिवार है, 22 दिसम्बर, 1883 ईसवी। अब समय नौ का होगा। बलराम के पिता आए हैं। राखाल, हरीश, मास्टर, लाटु यहाँ पर रहते हैं। श्यामपुकुर के देवेन्द्र घोष आए हैं। श्रीरामकृष्ण दक्षिणपूर्व-बरामदे में भक्तों के संग बैठे हैं।

एकजन भक्त पूछ रहे हैं—

भक्ति कैसे होती है ?

श्रीरामकृष्ण *(बलराम के पिता आदि भक्तों के प्रति)*— आगे बढ़ो। सात ड्योढ़ियों के परे राजा हैं। सब ड्योढ़ियाँ पार हो जाने पर ही तो तब राजा को देखोगे।

"मैंने चानके में अन्नपूर्णा-प्रतिष्ठा के समय (1874-75) द्वारिका बाबू से कहा था— बड़े तालाब में बड़ी-बड़ी मछलियाँ आएँगी। चारा डालो, उसी चारे की गन्ध से बड़ी मछलियाँ आएँगी। एक-एक बार धक्का (heavy noisy stroke) देंगी। प्रेम-भक्ति रूप चारा डालो।

(श्रीरामकृष्ण और अवतार-तत्त्व)

"ईश्वर नरलीला करते हैं। मनुष्य में वे अवतीर्ण होते हैं; जैसे श्री कृष्ण, रामचन्द्र, चैतन्यदेव।

"मैंने केशवसेन से कहा था कि मनुष्य के भीतर उनका अधिक प्रकाश है। मैदान के आलेर (किनारे) की मुण्डेर के भीतर छोटे-छोटे गड्ढे रहते हैं; उन्हें घुटी कहते हैं। घुटी के भीतर मछलियाँ और केंकड़े जमा हो जाते हैं। मछली और केंकड़े खोजने हों तो उसी घुटी के भीतर खोजने चाहिएँ, ईश्वर को खोजना हो तो अवतार के भीतर खोजना चाहिए।

"इसी चौदह पाव (साढ़े तीन हाथ) के मनुष्य के भीतर जगत-माता

प्रकाशित होती हैं। गाने में है—

श्यामा मा कि कल करेछे!
चौद्द पोया कलेर भितरि, कतो रंग देखातेछे।
आपनि थाकि कलेर भितरि, कलघुराय धरे कलडुरि;
कल बोले जे आपनि घुरि, जाने ना के घोरातेछे॥

[भावार्थ— श्यामा माँ ने कैसी कल (मशीन) बना दी है। चौदह पाव (साढ़े तीन हाथ) की कल के भीतर कितने रंग, तमाशे दिखाती है। अपने-आप इस कल के भीतर रहकर कल की डोरी पकड़कर कल को घुमा रही है। किन्तु कल कहती है मैं अपने-आप चल रही हूँ। वह नहीं जानती कौन चला रहा है।

''किन्तु ईश्वर को जानना हो, अवतार को पहचानना चाहो तो साधना का प्रयोजन है। बड़े तालाब में बड़ी-बड़ी मछलियाँ हैं— चारा डालना पड़ता है। दूध में मक्खन है, मन्थन करना पड़ता है। सरसों में तेल है, सरसों को पेरना पड़ता है। मेथि (मेंहदी) से हाथ लाल होते हैं, मेंहदी को पीसना पड़ता है।''

●

(निराकार-साधना और श्रीरामकृष्ण)

भक्त *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— अच्छा, वे साकार हैं या निराकार?

श्रीरामकृष्ण— ठहरो; पहले कलकत्ता तो जाओ तभी तो पता लगेगा, कहाँ पर गढ़ का मैदान, कहाँ एशियाटिक सोसाइटी, कहाँ बंगाल बैंक है।

''खड़दा बामुनपाड़े में जाना हो तो पहले तो खड़दा में पहुँचना होगा।

''निराकार साधना क्यों नहीं होगी; किन्तु बड़ी कठिन है। कामिनी-काञ्चन त्याग बिना हुए नहीं होती। बाहर का त्याग और भीतरी त्याग। विषयबुद्धि का लेश भी रहने से नहीं होगा।

''साकार साधना सहज है। किन्तु वैसी सहज नहीं है।

''निराकार साधना और ज्ञानयोग साधना को भक्तों के पास नहीं बताते। बड़े कष्ट से तनिक-सी भक्ति होती है, सब स्वप्नवत् कहने से भक्ति की हानि

होती है।

''कबीरदास निराकारवादी थे। शिव, काली, कृष्ण को नहीं मानते थे। कबीर कहते— काली चावल, केला खाती हैं; कृष्ण गोपियों की तालियों पर बन्दरनाच नाचते थे। *(सब का हास्य)*।

''निराकार साधक ने पहले शायद दशभुजा दर्शन किया; फिर चतुर्भुज। उसके पश्चात् द्विभुज गोपाल; अन्त में अखण्डज्योतिः का दर्शन करके उसमें ही लीन हो गया।

''दत्तात्रेय, जड़भरत ब्रह्म-दर्शन के पश्चात् लौटे नहीं; ऐसा कहा जाता है।

''एक मत में है शुकदेव ने उसी ब्रह्मसमुद्र की एक बून्द मात्र आस्वादन की थी। समुद्र की हिल्लोल-किल्लोल-दर्शन, श्रवण किए थे; किन्तु समुद्र में डुबकी नहीं मारी थी।

''एक ब्रह्मचारी ने कहा था, केदार के उस ओर जाने पर शरीर नहीं रहता। उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान के बाद फिर शरीर नहीं रहता। इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है।

''प्राचीर के उस पार अनन्त मैदान है। चार मित्रों ने 'दीवार के उस पार क्या है', देखने की चेष्टा की। एक-एक व्यक्ति प्राचीर के ऊपर चढ़ने लगा, और उस मैदान का दर्शन करके 'हा-हा' करके हँसता हुआ दूसरे पार गिरने लगा। तीनों जनों ने कोई खबर नहीं दी। एक ने केवल खबर दी। उसका ब्रह्मज्ञान के बाद भी शरीर रह गया, लोकशिक्षा के लिए— जैसे अवतार आदि का।

''हिमालय के घर पार्वती ने जन्म ग्रहण किया; और पिता को अपने नाना रूप दिखाने लगीं। हिमालय ने कहा, माँ ये तो समस्त रूप देख लिए हैं; किन्तु तुम्हारा एक ब्रह्मरूप है— उसे भी तो एक बार दिखाओ। पार्वती बोलीं, पिताजी, तुम यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो फिर संसार-त्याग करके साधुसंग करना होगा।

"हिमालय किसी तरह भी छोड़ते नहीं हैं। तब पार्वती ने एक बार दिखलाया। देखते ही गिरिराज एकदम मूर्छित हो गए।"

(श्रीरामकृष्ण और भक्तियोग)

"यह जो कहा है, समस्त विचार की बात है। 'ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या' यही विचार है। सब स्वप्नवत्! बड़ा कठिन पथ है। इस पथ में उनकी लीला स्वप्नवत्, मिथ्या हो जाती है। और फिर 'मैं' भी उड़ जाता है। इस पथ में अवतार को भी नहीं मानते। बड़ा ही कठिन है। ऐसी विचार की बातें भक्तों को अधिक नहीं सुननी चाहिएँ।

"जभी तो ईश्वर अवतीर्ण होकर भक्ति का उपदेश देते हैं— शरणागत होने के लिए कहते हैं। भक्ति रहने से, उनकी कृपा से, सब कुछ हो जाता है— ज्ञान-विज्ञान, सब हो जाता है।

"वे लीला कर रहे हैं— वे भक्त के अधीन हैं।

कोनो कलेर भक्तिडोरे आपनि श्यामा बाँधा आछे।

[किसी मशीन की भक्ति की डोरी से श्यामा माँ अपने आप बँधी हुई हैं।]

"कभी ईश्वर चुम्बक होते हैं, भक्त सूई होता है। और फिर कभी भक्त चुम्बक हो जाता है, वे सूई होते हैं। भक्त उनको खींच लेता है— वे हैं भक्तवत्सल, भक्ताधीन।

"एक मत में है यशोदा आदि गोपियाँ पूर्वजन्म में निराकारवादी थीं। उनकी उससे तृप्ति नहीं हुई। वृन्दावन-लीला में जभी तो श्री कृष्ण को लेकर आनन्द किया। श्री कृष्ण एक दिन बोले, तुम्हें नित्यधाम-दर्शन करवाऊँगा, चलो यमुना में स्नान करने चलें। उन्होंने ज्यों ही डुबकी लगाई— त्योंहि एकदम गोलोक-दर्शन हुआ और फिर उसके उपरान्त अखण्डज्योति-दर्शन। यशोदा तब बोलीं, 'कृष्ण रे, यह सब और नहीं देखना चाहती— अब तेरा वही मनुष्य-रूप देखूँगी। तुझे गोद में लूँगी, खिलाऊँगी।'

"इसीलिए तो अवतार में उनका अधिक प्रकाश है। अवतार का शरीर

रहते-रहते उनकी पूजा-सेवा करनी चाहिए।

'से जे कोठार भीतर चोर कोठरी
भोर होले से लुकाबे रे।'

[अरे भाई, वह जो कोठरी के भीतर चोर कोठरी है, भोर होते ही वह उसमें लुक (छिप) जाएगा।]

"अवतार को सब नहीं पहचान पाते। देह धारण करने पर रोग, शोक, क्षुधा, तृष्णा— सब ही होते हैं। लगता है कि वे हमारे जैसे ही हैं। राम सीता के शोक में रोये थे—

'पञ्चभूतेर फाँदे, ब्रह्म पड़े काँदे'

[पञ्चभूत के बन्धन, ब्रह्म करे क्रन्दन।]

"पुराण में है, हिरण्याक्ष के वध के पश्चात् बराह अवतार अपने बच्चे-कच्चे लेकर रह रहे थे— उन्हें स्तनपान करवा रहे थे। *(सब का हास्य)*। स्वधाम जाने का नाम तक भी नहीं। अन्त में शिव ने आकर त्रिशूल द्वारा उनका शरीर नष्ट कर दिया, वे 'हि-हि' करके हँसते हुए स्वधाम चले गए।"

●

षष्ठ परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण, भवनाथ, मणि, लाटु आदि के संग में)

तीसरा प्रहर। भवनाथ आए हैं। कमरे में राखाल, मास्टर, हरीश आदि हैं। शनिवार, **22 दिसम्बर, 1883 ईसवी**।

श्रीरामकृष्ण *(भवनाथ के प्रति)*— अवतार के ऊपर प्यार होने से ही हो जाता है। आहा, गोपियों का कैसा प्यार था!

यह कहकर गोपियों के भाव में गाना गा रहे हैं—

गानः— श्यामा तुमि प्राणेर पराण।

[श्याम, तुम प्राणों के प्राण हो।]

गान— घरे जाबोइ जे ना गो (संगिनीया)।

[हे संगिनी, मैं घर नहीं जाऊँगी।]

गान— से दिन आमि दुयारे दाँड़ाये।

(बँधु जेखन बिपिन जाउ, बिपिन जाउ)

(बँधु इच्छा होय, राखाल होय तोमार बाधा माथाय बोई)

[उस दिन मैं द्वार पर खड़ी थी। (बन्धु आप वन में जा रहे थे, वन में जा रहे थे) (बन्धु, मेरी इच्छा हुई कि राखाल (गोप) बनकर तुम्हारा बोझा मैं अपने सिर पर उठा लूँ!)]

"रास के बीच जब श्री कृष्ण अन्तर्हित हो गए, गोपियाँ एकदम उन्मादिनी हो गईं। वृक्ष देखकर कहने लगीं, 'लगता है तुम तपस्वी हो, तुम ने श्री कृष्ण को निश्चय ही देखा है! वैसा न होता तो तुम निश्चल, समाधिस्थ क्यों हो गए हो?' तिनकों से ढकी हुई पृथ्वी को देखकर कहने लगीं, 'हे पृथ्वी! तुमने निश्चय ही उनका दर्शन किया है, न किया होता तो रोमाञ्चित कैसे हो रही हो? अवश्य तुम ने उनका स्पर्शसुख-सम्भोग किया है।' और फिर माधवी लता को देखकर कहती हैं, 'ओ माधवी, हमें माधव दे!' गोपियों का प्रेमोन्माद!

"जब अक्रूर आए; श्री कृष्ण, बलराम मथुरा जाने के लिए उनके रथ में चढ़ गए, तब गोपियों ने रथ के पहिए पकड़ लिए, जाने नहीं देंगी।"

यह कह कर श्रीरामकृष्ण फिर गाना गाने लगे—

धोरो ना धोरो ना रथचक्र, रथ कि चक्रे चले!

जे चक्रेर चक्री हरि जाँर चक्रे जगत चले!*

[मत पकड़ो, मत पकड़ो, रथ के पहिए मत पकड़ो, यह रथ क्या चक्रों से चलता है? जिस चक्र के चक्री (चलाने वाले) हरि हैं, जिनके चक्र से जगत चलता है, उनसे यह रथ चल रहा है।]

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'रथ क्या चक्र से चलता है'— ये बातें मुझे बड़ी लगती हैं। 'जिस चक्र से ब्रह्माण्ड घूमता है!' रथी की आज्ञा लेकर सारथि चलाता है।

---

* पृष्ठ 74 पर पूरा गाना आया है।

त्रयोदश खण्ड

श्रीयुक्त रामचन्द्र के बागान में श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में

प्रथम परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण आज रामचन्द्र का नूतन बागान देखने जा रहे हैं। 26 दिसम्बर, 1883 ईसवी, बुधवार।

राम ठाकुर को साक्षात् अवतार मानकर पूजा करते हैं। दक्षिणेश्वर में प्राय: बीच-बीच में आते हैं और ठाकुर के दर्शन और पूजा कर जाते हैं। सुरेन्द्र के बागान के पास उन्होंने नया बाग खरीदा है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण देखने के लिए जा रहे हैं।

गाड़ी में मणिलालमल्लिक, मास्टर तथा और भी दो-एक भक्त हैं। मणिलालमल्लिक हैं ब्राह्मसमाजी। ब्राह्म भक्तगण अवतार नहीं मानते।

श्रीरामकृष्ण *(मणिलाल के प्रति)*— उनका ध्यान करना हो तो प्रथम उनके उपाधिशून्य स्वरूप का ध्यान करने की चेष्टा करना उचित है। वे निरुपाधि, वाक्यमन के अतीत हैं। किन्तु इस ध्यान में सिद्ध होना बड़ा कठिन है।

"वे मनुष्य में अवतीर्ण होते हैं, तब ध्यान की खूब सुविधा है।— मनुष्य के भीतर नारायण हैं। यह देह ही तो आवरण है, जैसे लालटेन के भीतर प्रकाश जल रहा है। अथवा दर्पण में बहुमूल्य वस्तु देखता है।"

गाड़ी से उतरकर बाग में पहुँचकर राम और भक्तगणों के संग में ठाकुर प्रथम तुलसीकानन-दर्शन करने जा रहे हैं।

तुलसीकानन देखकर ठाकुर खड़े-खड़े ही कह रहे हैं—

"वाह! सुन्दर जगह है, यहाँ पर बड़ा अच्छा ईश्वर-चिन्तन होता है।"

ठाकुर अब सरोवर के दक्षिण के कमरे में आकर बैठ गए। रामचन्द्र ने थाल में बेदाना (अंगूर), कमलालेबु (सन्तरे) और किञ्चित् मिठाई लाकर ठाकुर को दी। ठाकुर भक्तों के संग आनन्द मनाते-मनाते फलादि खा रहे हैं।

कुछ क्षण परे समस्त बाग की परिक्रमा करते हैं।

●

अब निकटवर्ती सुरेन्द्र के बाग में जा रहे हैं। पैदल थोड़ा-सा जाकर गाड़ी में बैठ गए। गाड़ी द्वारा सुरेन्द्र के बाग में जाएँगे।

जब भक्तों के संग पैदल जा रहे थे तब श्रीरामकृष्ण ने देखा कि बगल के बाग में वृक्ष के नीचे एक साधु एकाकी खाट पर बैठे हैं। देखते ही वे साधु के निकट उपस्थित होकर आनन्द से उनके साथ हिन्दी में बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(साधु के प्रति)*— आप किस सम्प्रदाय के हैं— गिरि या पुरी? कोई उपाधि है?

साधु— लोग मुझे परमहंस कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण— बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया। 'शिवोऽहं' यह सुन्दर है। किन्तु एक बात है। यह सृष्टि, स्थिति, प्रलय— रातदिन हो रही है, उनकी शक्ति से। यह आद्याशक्ति और ब्रह्म अभेद हैं। ब्रह्म के बिना शक्ति नहीं होती। जैसे जल को छोड़कर तरंग नहीं होती। बाजे के बिना बजना नहीं होता।

"जब तक उन्होंने लीला में रखा हुआ है, तब तक दो ही लगते हैं। शक्ति कहने से ही ब्रह्म हैं। जैसे रात बोध होते ही दिन का बोध होता है। ज्ञान-बोध होने पर ही अज्ञान-बोध है।

"और एक अवस्था में वे दिखलाते हैं कि ब्रह्म ज्ञान-अज्ञान के पार हैं, मुख से कुछ कहा नहीं जाता। जो है सो है।"

इस प्रकार कुछ सदालाप हो जाने पर श्रीरामकृष्ण गाड़ी की ओर जा रहे हैं। वे साधु महाराज भी संग-संग उन्हें गाड़ी पर चढ़ाने के लिए आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अनेक दिन के परिचित बन्धु की भाँति, साधु की बाँह के भीतर बाँह डालकर गाड़ी की ओर जा रहे हैं।

साधु महाराज उन्हें गाड़ी पर बिठाकर अपने स्थान पर चले आए।

अब सुरेन्द्र के बागान में श्रीरामकृष्ण आए हैं। भक्तों के संग आसन ग्रहण करके प्रथम उसी साधु की ही बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— वह साधु बढ़िया है। *(राम के प्रति)*— तुम जब जाओगे तब इस साधु को भी दक्षिणेश्वर-बागान में ले आना।

"यह साधु उत्तम है। एक गाने में है— सहज बिना हुए सहज को पहचाना नहीं जाता।

"निराकारवादी— वह तो सुन्दर है। वे निराकार-साकार होकर रह रहे हैं, और भी कितना क्या कुछ! जिनका नित्य है, उन्हीं की लीला है। वे ही वाक्यमन के अतीत जो हैं, वे नानारूप लेकर अवतीर्ण होकर कार्य करते हैं। वे ही 'ॐ' से 'ॐ शिव', 'ॐ काली', 'ॐ कृष्ण' हुए हैं। निमन्त्रण में एक छोटे लड़के को भेज दिया गया— उस का कितना आदर हुआ, क्योंकि वह अमुक का दौहित्र या पौत्र है।"

सुरेन्द्र के बागान में किञ्चित् जलपान करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर की ओर भक्तों के संग में जा रहे हैं।

●

द्वितीय परिच्छेद

दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में— तान्त्रिक भक्त आदि

आज पौष शुक्ला चतुर्थी; दूसरी जनवरी, 1884 ईसवी; 19वाँ पौष, बुधवार, 1290 (बंगला) साल।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में वास कर रहे हैं। आजकल राखाल, लाटु, हरीश, रामलाल, मास्टर दक्षिणेश्वर में रह रहे हैं।

समय तीन बज गए हैं, मणि बेलतले से होकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए उनके 'घर' की ओर आ रहे हैं। वे एक तान्त्रिक भक्त के संग में पश्चिम के बरामदे में बैठे हुए हैं।

मणि ने आकर भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। ठाकुर ने उनको पास बैठने के लिए कहा। लगता है तान्त्रिक भक्त के साथ बातें करते-करते उन्हें भी उपदेश देंगे। श्रीयुक्त महिम चक्रवर्ती ने उस तान्त्रिक भक्त को ठाकुर के दर्शन करने के लिए भेजा है। भक्त ने गेरुआ वस्त्र पहना हुआ है।

श्रीरामकृष्ण *(तान्त्रिक भक्त के प्रति)*— ये समस्त तान्त्रिक साधना के अंग हैं— कपालि पात्र में सुधा पान करना, उसी सुधा को कारणवारि कहते हैं, क्यों जी?

तान्त्रिक— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— ग्यारह पात्र; हैं ना?

तान्त्रिक— तीन तोले भर। शव साधना के लिए।

श्रीरामकृष्ण— मैं तो सुरा छू तक नहीं सकता।

तान्त्रिक— आपका है सहजानन्द। वह आनन्द होने पर तब फिर कुछ नहीं चाहिए।

श्रीरामकृष्ण— और फिर देखो, मुझे जप-तप भी अच्छा नहीं लगता। किन्तु सर्वदा स्मरण-मनन रहता है। अच्छा, वह षड्चक्र क्या है?

तान्त्रिक— जी, वह तो अनेक तीर्थों की न्यायीं है। एक-एक चक्र में शिव-शक्ति रहती है, आँखों से नहीं दिखाई देती; काटने पर भी नहीं निकलती।

पद्म की मृणाल (डण्डी-stalk) शिवलिंग है, पद्म कर्णिका (कमलगट्टों की चपनी के छिद्र) में आद्याशक्ति योनिरूप में है।

मणि चुपचाप समस्त सुन रहे हैं। उनकी ओर देखकर श्रीरामकृष्ण तान्त्रिक भक्त से कुछ पूछ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(तान्त्रिक के प्रति)*— अच्छा, बीज मन्त्र बिना पाए क्या सिद्ध होता है?

तान्त्रिक— होता है; विश्वास से— गुरुवाक्य में विश्वास से।

श्रीरामकृष्ण *(मणि की ओर मुड़कर और उनको इंगित करके)*— विश्वास!

•

तान्त्रिक भक्त के चले जाने पर ब्राह्मसमाजी श्रीयुक्त जयगोपालसेन आए हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे बातें कर रहे हैं। राखाल, मणि आदि भक्तगण पास हैं। अपराह्न।

श्रीरामकृष्ण *(जयगोपाल के प्रति)*— किसी से, किसी मत से विद्वेष नहीं करते। निराकारवादी, साकारवादी सब ही उनकी ओर जा रहे हैं। ज्ञानी, योगी, भक्त सब ही उनको खोज रहे हैं। ज्ञान-पथ के लोग उन्हें कहते हैं ब्रह्म, योगीजन कहते हैं आत्मा, परमात्मा। भक्तलोग कहते हैं भगवान; फिर और यह भी है, नित्य देवता, नित्य दास।

जयगोपाल— सब पथ ही सत्य हैं, यह कैसे पता लगेगा?

श्रीरामकृष्ण— किसी एक ही पथ द्वारा ठीक जा सकने पर उनके पास पहुँचा जाता है। तब सब पथों की खबर पता लग सकती है। जैसे किसी भी तरह से छत पर चढ़ जा सकने पर, काठ की सीढ़ियों से भी उतरा जाता है; पक्की सीढ़ियों से भी उतरा जाता है; एक रस्सी द्वारा भी उतरा जाता है।

"उनकी कृपा होने पर भक्त सब जान सकता है। एक बार उनकी प्राप्ति हो जाने पर सब पता लग सकेगा। एक बार जिस किसी भी तरह से

बड़े बाबू से मिलना चाहिए, बातचीत करनी चाहिए— तब बाबू ही बता देंगे उनके कितने बाग, तालाब, कम्पनी के कागज हैं।''

(ईश्वर-दर्शन का उपाय)

जयगोपाल— किस प्रकार उनकी कृपा होती है?

श्रीरामकृष्ण— उनका नामगुण-कीर्त्तन सर्वदा करना चाहिए, विषय-चिन्ता जितनी हो सके त्याग करनी चाहिए— तुम खेती करने के लिए खेत में बड़े कष्ट से जल लाते हो, किन्तु किनारे की घोग (मुंडेर) के गढ्ढों से सब निकल जाता है। नाला काट कर जल लाने का परिश्रम वृथा हो गया।

''चित्तशुद्धि हो जाने पर, विषयासिक्त चले जाने पर, व्याकुलता आएगी; तुम्हारी प्रार्थना ईश्वर के पास पहुँच जाएगी। टेलिग्राफ के तार के भीतर और कोई वस्तु मिली हुई रहे या छिद्र रहे तो खबर नहीं पहुँचेगी।

''मैं व्याकुल होकर अकेला रोया करता था; 'कहाँ पर हो नारायण!' यही कहकर रोता था। रोते-रोते बेहोश हो जाया करता था— महावायु में लीन!

''योग कैसे होता है? टेलिग्राफ के तार में अन्य वस्तु अथवा छिद्र न रहने पर योग हो जाता है। एकदम विषयासक्ति-त्याग चाहिए।

''कोई भी कामना-वासना नहीं रखते। कामना-वासना रहने पर सकाम भक्ति कहते हैं! निष्काम भक्ति को कहते हैं अहेतुकी भक्ति। तुम प्यार करो चाहे न करो, तब भी तुम्हें प्यार करता हूँ; इसका नाम है अहेतुकी भक्ति।

''बात तो यही है, उनको प्यार करना। खूब प्यार हो जाने पर दर्शन होता है। स्त्री सती का पति के ऊपर आकर्षण, माँ का सन्तान के ऊपर आकर्षण, विषयी का विषय के ऊपर आकर्षण— ये तीन आकर्षण यदि एकत्र हो जाएँ, तो फिर ईश्वर-दर्शन हो जाता है।''

जयगोपाल विषयी व्यक्ति हैं, तभी क्या श्रीरामकृष्ण उन्हीं के उपयोगी ये सब उपदेश दे रहे हैं?

•

तृतीय परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण मणि के प्रति— और विचार मत करो

आज शुक्रवार है, चार जनवरी, 1884 ईसवी— समय चार। श्रीरामकृष्ण पञ्चवटी में बैठे हुए हैं, सहास्यवदन। संग में मणि, हरिपद आदि हैं। श्री आनन्द चैटर्जी की बातें हरिपद के साथ हो रही हैं और घोषपाड़ा के साधन-भजन की बातें।

श्रीरामकृष्ण फिर अपने कमरे में आकर बैठ गए हैं। मणि, हरिपद, राखाल आदि भक्तगण भी उनके साथ रहते हैं, मणि अधिक समय बेलतले में रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— और विचार मत करो। उससे अन्त में हानि होती है। उनको पुकारने के समय एक भाव आश्रय करना चाहिए— सखि-भाव, दासी-भाव, सन्तान-भाव अथवा वीर-भाव।

"मेरा सन्तान-भाव है। यह भाव देखकर मायादेवी रास्ता छोड़ देती हैं— लज्जा से।

"वीर-भाव बड़ा कठिन है। शाक्त और वैष्णव बाउलों का होता है। उस भाव में ठीक (स्थिर) रहना बड़ा कठिन है। और फिर है— शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य।"

(मणि के प्रति)— "तुम्हें कौन-सा भाव अच्छा लगता है?"

मणि— सब भाव ही अच्छे लगते हैं।

श्रीरामकृष्ण— सब भाव तो सिद्ध अवस्था में अच्छे लगते हैं। उस अवस्था में कामगन्ध नहीं रहेगी। वैष्णव शास्त्र में चण्डीदास और रजकिनी (धोबिन) की कथा है— उनका प्यार काम की गन्ध से विवर्जित था।

"इस अवस्था में प्रकृति-भाव। अपने में पुरुष का बोध नहीं रहता। रूप गोस्वामी ने, मीराबाई स्त्री है, इस कारण उनके साथ मिलना नहीं चाहा। मीरा ने कहलवा भेजा— 'श्री कृष्ण ही एक मात्र पुरुष हैं; वृन्दावन में सब ही उसी पुरुष की दासियाँ हैं; गोस्वामी का पुरुष-अभिमान करना क्या ठीक है'?"

●

सन्ध्या के पश्चात् मणि फिर से श्रीरामकृष्ण के चरणों में बैठे हुए हैं। संवाद आया है कि श्रीयुक्त केशवसेन का रोग बढ़ गया है। उन्हीं की बात के प्रसंग में ब्राह्मसमाज की बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— हाँ जी, उनके वहाँ क्या केवल लेक्चर देना है ? या ध्यान भी है ? वे लोग इसे शायद उपासना कहते हैं।

"केशव ने पहले ईसाई धर्म, ईसाई मत का खूब चिन्तन किया था।— उस समय और उससे पहले देवेन्द्र ठाकुर (टैगोर) के वहाँ पर थे।"

मणि— केशवबाबू यदि पहले से ही यहाँ पर आते तो फिर समाज के संस्कारों को लेकर इतने व्यस्त न होते। जाति-भेद हटाना, विधवा-विवाह, दूसरी जाति में विवाह, स्त्री-शिक्षा इत्यादि सामाजिक कर्म लेकर इतने चिन्तित नहीं होते।

श्रीरामकृष्ण— केशव अब काली मानता है— चिन्मयी काली— आद्याशक्ति। और माँ-माँ बोलकर उनका नामगुण-कीर्त्तन करता है।

"अच्छा, ब्राह्मसमाज क्या इसी प्रकार बाद में खड़ा रहेगा ?

मणि— इस देश की मिट्टी ऐसी नहीं है। ठीक जो है, वही रहेगा।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, सनातन धर्म— ऋषियों ने जो कहा है, वही ठहरेगा। किन्तु ब्राह्मसमाज और वैसे सम्प्रदाय भी थोड़े-थोड़े रहेंगे। सब ही ईश्वर की इच्छा से हो रहा है।

तीसरे प्रहर कलकत्ता से कितने ही भक्त आए थे। उन्होंने ठाकुर को अनेक गाने सुनाए थे। उनमें से एक गाने में है—

'माँ' तुमने हमें लाल चुसनी देकर भुला रखा है; हम लोग जब चुसनी फेंक कर तुम्हारे लिए चीत्कार करेंगे तब तुम हमारे पास निश्चय ही दौड़ कर आ जाओगी।'

श्रीरामकृष्ण *(मणि के प्रति)*— उन्होंने, केवल लाल चुसनी का गाना गाया।

मणि— जी, आपने केशवसेन से लाल चुसनी की बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण— हाँ; और चिदाकाश की बात और भी अनेक बातें होतीं; और आनन्द होता। गाना, नृत्य होता।

चतुर्दश खण्ड

दक्षिणेश्वर में
मणिलाल आदि भक्तों के संग में

प्रथम परिच्छेद

आज रविवार है, 27वाँ फाल्गुन; 9 मार्च, 1884 ईसवी। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में मणिलालमल्लिक, सींथी के महेन्द्र कविराज, बलराम, मास्टर, भवनाथ, राखाल, लाटु, अधर, महिमाचरण, हरीश, किशोरी (गुप्त), शिवचन्द्र आदि बहुत-से भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। अभी तक गिरीश, काली, सुबोध आदि नहीं आए। शरत्, शशी ने तो दो-एक बार ही दर्शन किया है। पूर्ण, छोटे नरेन आदि ने भी उन्हें अभी तक नहीं देखा है।

श्रीरामकृष्ण के हाथ पर पट्टी बँधी हुई है। रेलिंग के किनारे पर गिरकर हाथ टूट गया था— तब भाव में विभोर हो गए थे। हाथ को टूटे अभी थोड़ा समय ही हुआ है, सर्वदा ही हाथ में यन्त्रणा है।

किन्तु इस अवस्था में भी प्राय: समाधिस्थ रहते हैं और भक्तों को गम्भीर तत्त्वकथा बताते हैं।

एक दिन यन्त्रणा में रो रहे थे, झट समाधिस्थ हो गए। समाधि के पश्चात् प्रकृतिस्थ होकर महिमाचरण आदि भक्तों से कह रहे हैं—

"बाबू, सच्चिदानन्द-लाभ न हुआ तो कुछ भी नहीं हुआ। व्याकुलता के बिना नहीं होगा। मैं रोते-रोते पुकारा करता और कहता— ओ हे दीनानाथ, मैं

भजन-साधनहीन हूँ, मुझे दर्शन देना ही होगा।''

उसी दिन रात को फिर महिमाचरण, अधर, मास्टर आदि बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(महिमाचरण आदि के प्रति)*— एक है अहेतुकी भक्ति, इसे यदि अभ्यास द्वारा सिद्ध कर सको।

और फिर अधर से कह रहे हैं— इस हाथ के ऊपर तनिक हाथ फेर सकते हो?

•

मणिलालमल्लिक और भवनाथ एग्जिबीशन (प्रदर्शिनी, नुमाइश) की बातें कर रहे हैं— 1883-84 ईसवी, एशियाटिक् म्युजियम के निकट हुई थी। वे कह रहे हैं— कितने राजाओं ने सब बहुमूल्य वस्तुएँ भेजी हैं। सोने की खाट इत्यादि— एक देखने की वस्तु है।

(श्रीरामकृष्ण और धन, ऐश्वर्य)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति, सहास्य)*— हाँ, जाने पर एक बड़ा लाभ होता है। ये सब सोने की वस्तुएँ, राजाओं-महाराजाओं की चीज़ें देखकर 'छि:', 'छि:' भाव हो जाता है। यह भी बड़ा भारी लाभ है। जब मैं कलकत्ता में आता था, हृदय मुझे लाट साहब का घर दिखाया करता था— 'मामा, वह देखो, लाट साहब का घर, बड़े-बड़े स्तम्भ।' माँ ने दिखा दिया, बहुत सारी मिट्टी की ईंटें ऊँची करके सजाई हुई हैं।

''भगवान और उनका ऐश्वर्य। ऐश्वर्य दो दिन के लिए होता है, भगवान ही सत्य हैं; जादूगर और उसका जादू! जादू देखकर सब अवाक् हो जाते हैं किन्तु सब मिथ्या है; जादूगर ही सत्य है। बाबू और उसका बाग। बाग देखकर बाग के मालिक बाबू को ढूँढना चाहिए।''

मणिमल्लिक *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— और फिर कितनी बड़ी इलैक्ट्रिक लाइट दी है। तब हमारे मन में लगता है कि वे कितने बड़े हैं जिन्होंने

इलैक्ट्रिक लाइट बनाई है!

श्रीरामकृष्ण *(मणिलाल के प्रति)*— और फिर एक मत में है, वे यह सब कुछ होकर रह रहे हैं; और फिर जो कहता है वह भी वे ही हैं। ईश्वर, माया, जीव, जगत्।

•

म्युजियम की बात चली।

(श्रीरामकृष्ण और साधुसंग— योगी की छवि)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— मैं एक बार म्युजियम (अजायबघर, अद्भुतागार) में गया था; वहाँ देखा सब कुछ ईंट-पत्थर हो गया है, जानवर पत्थर हो गया है। देखा, संग का गुण क्या है! वैसे ही सर्वदा साधुसंग करने से वही हो जाता है।

मणिमल्लिक *(सहास्य)*— आपको वहाँ पर (प्रदर्शिनी में) एक बार जाने से हमारे लिए 10/15 वर्ष के लिए उपदेश की सामग्री मिल जाती।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्या, उपमा के लिए?

बलराम— नहीं, यहाँ-वहाँ जाने से हाथ ठीक नहीं होगा!

श्रीरामकृष्ण— मेरी इच्छा है कि दो छवियाँ मुझे मिल जाएँ। एक छवि— योगी धूनि जलाकर बैठा हुआ है; और एक छवि— योगी गाँजे की चिलम मुख से खींचता है और वह दप् करके जल उठती है।

"ऐसी छवियों से खूब सुन्दर उद्दीपन होता है। जैसे सोला* का शरीफा (सीताफल) देखने से सच्चे शरीफे का उद्दीपन होता है।

"किन्तु योग का विघ्न है— कामिनी-काञ्चन। इसी मन के शुद्ध हो जाने पर योग होता है। मन का वास कपाल में (आज्ञाचक्र में) है, किन्तु दृष्टि लिंग, गुह्य (गुदा, मलद्वार), नाभि में होती है— अर्थात् कामिनी-काञ्चन में!

---

* सोला = एक जल का पौधा जिसका तना सुखाने पर बहुत हल्का हो जाता है और जिसे चीर-चीर कर विवाह का माँर टोप आदि बनाया जाता है, खुखड़ी।

साधन करने पर इसी मन की ऊर्ध्व दृष्टि हो जाती है।

"क्या साधन करने से मन की ऊर्ध्व दृष्टि होती है?— सर्वदा साधुसंग करने पर सब पता लग सकता है।

"ऋषि सर्वदा या तो निर्जन में, नहीं तो साधुसंग में रहते थे— तभी वे अनायास ही कामिनी-काञ्चन त्याग करके ईश्वर में मन का योग कर लेते थे— निन्दा, भय कुछ नहीं।

"त्याग करने के लिए ईश्वर के निकट पुरुषार्थ के लिए प्रार्थना करनी चाहिए— जो मिथ्या लगने लगे उसका तत्क्षण त्याग करना।

"ऋषियों में यही पुरुषार्थ था। इसी पुरुषार्थ के द्वारा ऋषियों ने इन्द्रियाँ जय कर ली थीं।

"कछुआ यदि हाथ-पाँव भीतर घुसा लेता है तो चार टुकड़े कर डालने पर भी हाथ-पाँव बाहर नहीं करता!

"संसारी व्यक्ति कपटी होता है— सरल नहीं होता। मुख से कहता है ईश्वर को प्यार करता हूँ किन्तु विषय में जितना आकर्षण होता है, कामिनी-काञ्चन में जितना प्यार होता है, उसका अति अल्प अंश भी ईश्वर की ओर नहीं देता। अथच मुख से बोलता है ईश्वर को प्यार करता हूँ।"

(मणिमल्लिक के प्रति)— "कपटता छोड़ो।"

मणिलाल— मनुष्य के सम्बन्ध में या ईश्वर के सम्बन्ध में?

श्रीरामकृष्ण— सब प्रकार से। मनुष्य के लिए भी और ईश्वर के लिए भी; कपटता नहीं करते।

"भवनाथ कितना सरल है! विवाह करके आकर मुझसे कहता है, स्त्री के ऊपर मेरा इतना स्नेह क्यों होता है? आह! वह बड़ा सरल है!

"फिर स्त्री के ऊपर प्यार नहीं होगा? यही तो जगन्माता की भुवन-मोहिनी माया है। स्त्री ऐसी लगती है मानो पृथ्वी पर ऐसा अपना और कोई व्यक्ति नहीं होगा— अपना व्यक्ति, जीवन-मरण में, इस काल में, परकाल में।

"इसी स्त्री को लेकर मनुष्य क्या-क्या दुःख नहीं भोग करता! तब भी

सोचता है कि ऐसा अपना और कोई नहीं है। कैसी दुरवस्था है! बीस रुपया महीना वेतन— तीन बच्चे हो गए हैं— उनको अच्छी तरह से खिलाने की शक्ति नहीं है, घर की छत से पानी गिरता है, मरम्मत करने को पैसा नहीं है— लड़के को नई किताब खरीद कर नहीं दे सकता— लड़के को यज्ञोपवीत नहीं दे सकता— इससे आठ आने, उससे आठ आने भिक्षा करता है।

''विद्यारूपिणी स्त्री ही यथार्थ सहधर्मिणी है। पति को ईश्वर के पथ पर जाने में विशेष सहायता करती है। दो-एक बच्चों के पश्चात् दोनों जन भाई-बहिन की भाँति रहते हैं। दोनों जन ही ईश्वर के भक्त हैं— दास-दासी। उनका गृहस्थ, विद्या का गृहस्थ (संसार) है। ईश्वर ही एकमात्र अपने व्यक्ति हैं— अनन्तकाल के अपने। सुख-दुःख में उनको नहीं भूलता— जैसे पाण्डवगण थे।''

(संसारी भक्त और त्यागी भक्त)

''संसारियों का ईश्वर-अनुराग क्षणिक होता है— जैसे तप्त कढ़ाही पर जल पड़ते ही 'छौं' कर उठता है और उसके बाद ही सूख जाता है।

''संसारी व्यक्तियों का भोग की ओर मन रहता है— उसी के कारण वह अनुराग, वह व्याकुलता नहीं होती।

''एकादशी तीन प्रकार की है। प्रथम— निर्जला एकादशी, जल तक नहीं पिएगा। वैसा ही पूर्णत्यागी फकीर, एकदम सब भोग-त्याग।

द्वितीय— दूध-सन्देश खाता है— भक्त जैसे घर में सामान्य भोग रख लेता है। तृतीय— पूरी-सब्जी खाकर एकादशी— पेट भरकर खाता है; और चाहे दो रोटियाँ दूध में भिगोकर रख देता है कि पीछे खाएगा।

''लोग साधन-भजन करते हैं, किन्तु मन कामिनी-काञ्चन में, मन भोग की ओर रहता है, तभी साधन-भजन ठीक नहीं होता।

''हाजरा यहाँ पर बहुत जप-तप किया करता; किन्तु घर में स्त्री, बाल-बच्चे, जमीन सब थे, साथ-साथ जप-तप भी करता, भीतर ही भीतर दलाली भी करता। ऐसे लोगों की बातों में स्थिरता नहीं होती। अभी कहता है

मछली नहीं खाऊँगा, और फिर खा लेता है।

"रुपये के लिए लोग क्या नहीं कर सकते? ब्राह्मण से, साधु से बोझा वहन करवा सकता है।

"सन्देश सड़ जाता, किन्तु ऐसे व्यक्तियों को मैं नहीं दे सकता था। अन्य लोगों का टट्टी के लोटे से जल ले सकता था, ऐसे लोगों का लोटा छूता नहीं था।

"हाजरा रुपये वाला व्यक्ति देखकर पास बुलाता— बुलाकर बड़ी-बड़ी बातें सुनाता; और फिर उन्हें कहता— राखाल-शाखाल जो सब को देखते हो, वे लोग जप-तप नहीं कर सकते, हो-हो करते-फिरते हैं।

"मैं जानता हूँ यदि कोई पर्वत की गुहा में वास करता है, शरीर पर राख मलता है, उपवास करता है, तरह-तरह की कठोरताएँ करता है, किन्तु भीतर-भीतर विषय में मन है— कामिनी-काञ्चन पर मन है— वैसे व्यक्ति को मैं कहता हूँ धिक्; और जिसका मन कामिनी-काञ्चन पर नहीं है— और खाता-पीता, घूमता है उसे कहता हूँ, धन्य।

(मणिमल्लिक को दिखलाकर)— "इनके घर में साधु की छवि नहीं है। साधुओं की छवि रखने से ईश्वर का उद्दीपन होता है।"

मणिलाल— है, नन्दिनी[1] के कमरे में भक्त मेम की छवि है— मेम प्रार्थना (prayer) कर रही है। और एक छवि है— विश्वास-पहाड़ को पकड़े हुए एक व्यक्ति है, नीचे अतलस्पर्श समुद्र है, विश्वास-पहाड़ को छोड़ने से एकदम अतल जल में गिर जाएगा।

"और एक छवि है— कितनी सारी लड़कियाँ वर आने की प्रतीक्षा में प्रदीपों में तेल भरे जाग रही हैं। जो सो गई हैं, वे देख नहीं पाएँगी।" ईश्वर को वर कहकर वर्णन किया है।"[2]

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— यह तो सुन्दर है।

मणिलाल— और भी छवियाँ हैं— विश्वास का वृक्ष। और पाप-पुण्य की छवि।[3]

---

1 नन्दिनी— मणिमल्लिक की विधवा कन्या, ठाकुर की भक्त।

2 Parable of the Ten Virgins (दस कन्याओं की कथा)

3 Sin and Virtue (पाप और पुण्य)

श्रीरामकृष्ण *(भवनाथ के प्रति)*— सुन्दर हैं सब छवियाँ; तू देखने जाइयो।

कुछ क्षण परे ठाकुर कह रहे हैं—

''एक-एक बार सोचता हूँ— तब वह सब अच्छा नहीं लगता। प्रथम एक बार तो पाप-पाप करना चाहिए, किस प्रकार पाप से मुक्ति हो। किन्तु उनकी कृपा से एक बार यदि प्यार आ जाए, एक बार रागभक्ति यदि आ जाती है तो फिर पाप-पुण्य सब भूल जाते हैं। तब कानून से, शास्त्र से परे चला जाता है। अनुताप करना पड़ेगा, प्रायश्चित करना पड़ेगा, ऐसी भावना फिर नहीं रहती।

''जैसे टेढ़ी नदी के द्वारा बड़े कष्ट से और अनेक क्षण परे गन्तव्य स्थान पर पहुँचता है। किन्तु यदि बाढ़ आ जाए तो सीधे रास्ते से थोड़े ही समय में गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाता है। तब मैदान में भी एक बाँस जल होता है।

''प्रथम अवस्था में बड़ा घूमना पड़ता है, अनेक कष्ट करना पड़ता है।

''रागभक्ति आने पर बड़ा सीधा हो जाता है। जैसे मैदान के ऊपर से धान काटने के पश्चात् जिस तरफ से भी चले जाओ। पहले तो बाड़ (मेड़) के ऊपर से घूम कर जाना पड़ता था, अब चाहे जिस तरह से चले जाओ। यदि कुछ तिनके रहें भी तो जूता पैर में पहनकर चले जाने पर कोई भी कष्ट नहीं होता। विवेक, वैराग्य, गुरुवाक्य में विश्वास— ये सब रहने पर फिर कोई कष्ट नहीं होता।''

•

(श्रीरामकृष्ण और ध्यानयोग, विष्णुयोग— निराकार ध्यान और साकार ध्यान)

मणिलाल *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— अच्छा, ध्यान का क्या नियम है? कहाँ पर ध्यान करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण— हृदय डंकामार जगह है। हृदय में ध्यान हो सकता है, अथवा सहस्रार में, ये सब विधि अनुसार ध्यान हैं— शास्त्र में है। तो भी तुम्हारी जहाँ पर अभिरुचि है वहाँ ध्यान कर सकते हो। सब स्थान ही तो ब्रह्ममय हैं;

कहाँ पर वे नहीं हैं?

"जब बलि से नारायण ने तीन पाँवों में स्वर्ग, मर्त्य, पाताल ढक लिया था तब क्या कोई स्थान बाकी था? गंगातीर जैसा पवित्र है तथा जहाँ पर खराब मिट्टी है वह भी वैसा ही पवित्र है। और फिर यह भी है कि ये समस्त उनकी ही विराट मूर्ति हैं।

"निराकार-ध्यान और साकार ध्यान। निराकार-ध्यान बड़ा कठिन है। उस ध्यान में जो कुछ देखते हो, सुनते हो— सब लीन हो जाएगा; केवल स्व-स्वरूप का चिन्तन रह जाता है। उसी स्वरूप का चिन्तन करके शिव नाचते हैं। 'मैं क्या हूँ', 'मैं क्या हूँ', यह कहकर नाचते हैं।

"इसको कहते हैं शिवयोग। ध्यान के समय कपाल पर दृष्टि रखनी चाहिए— 'नेति-नेति' करके जगत छोड़कर स्व-स्वरूप चिन्तन करना।

"और एक है विष्णुयोग। नासिका के अग्रभाग में दृष्टि; अर्धेक जगत में, अर्धेक अन्तर में। साकार-ध्यान में इसी प्रकार होता है।

"शिव कभी-कभी साकार-चिन्तन करके नाचते हैं। 'राम-राम' बोलते हुए नाचते हैं।"

●

द्वितीय परिच्छेद

(ईश्वर-दर्शन के बाद की अवस्था)

मणिलालमल्लिक पुराने ब्राह्मसमाजी हैं। भवनाथ, राखाल, मास्टर कभी-कभी ब्राह्मसमाज में जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण ॐकार की व्याख्या और ठीक ब्रह्मज्ञान, ब्रह्मदर्शन के बाद होने वाली अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

(अनाहत ध्वनि और परमपद)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— शब्द ब्रह्म, ऋषि-मुणिगण उसी शब्द के

लाभ के लिए तपस्या किया करते थे। सिद्ध होने पर सुन पाते हैं, नाभि में से वही शब्द अपने आप उठता है— अनाहत शब्द।

''एक मत में है, केवल शब्द सुन लेने से क्या होगा? दूर से लहरों का शब्द-कल्लोल (शोर) सुनाई देता है। उसी शब्द-कल्लोल के पीछे-पीछे जाने पर समुद्र पर पहुँचा जा सकता है। जहाँ कल्लोल है वहाँ समुद्र भी है। अनाहत ध्वनि का आश्रय लेकर चलने पर उसके प्रतिपाद्य ब्रह्म जो हैं उनके पास पहुँचा जाता है। उन्हें ही परमपद* कहा है। 'मैं' के रहते उस प्रकार का दर्शन नहीं होता। जहाँ पर 'मैं' भी नहीं, तुम भी नहीं, एक भी नहीं, अनेक भी नहीं; वहाँ पर ही ऐसा दर्शन है।''

(जीवात्मा और परमात्मा की योग समाधि)

''कल्पना करो सूर्य और दस जलपूर्ण घड़े हैं, प्रत्येक घड़े में सूर्य का प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा है। प्रथम तो एक सूर्य और दस प्रतिबिम्ब सूर्य दिखते हैं। यदि नौ घड़े फूट जाते हैं, तो फिर बाकी रहता है एक सूर्य और एक प्रतिबिम्ब सूर्य। एक-एक घड़ा मानो एक-एक जीव है। प्रतिबिम्ब वाले सूर्य को पकड़-पकड़ कर सत्य सूर्य के पास जाया जाता है— जीवात्मा से परमात्मा में पहुँचा जाता है। जीव (जीवात्मा) यदि साधन-भजन करे तो फिर परमात्मा का दर्शन कर सकता है। अन्तिम घड़ा भी फोड़ देने पर क्या रहता है, मुख से बोला नहीं जाता।

''जीव पहले तो अज्ञानी हुआ रहता है। ईश्वर-बोध नहीं, नाना वस्तुओं का बोध— अनेक वस्तुओं का बोध रहता है। जब ज्ञान हो जाता है तब उसे बोध होता है कि ईश्वर सर्वभूतों में हैं। जैसे पाँव में काँटा चुभ जाने पर और एक काँटा खोज कर लाकर उसी काँटे को निकालना। अर्थात् ज्ञान-काँटे द्वारा अज्ञान-काँटे को निकाल फेंकना।

''और फिर विज्ञान हो जाने पर दोनों काँटों को ही फेंक देना— अज्ञान का काँटा और ज्ञान का काँटा। तब ईश्वर के संग निशिदिन बातें, आलाप होता

---

* 'यत्र नादो विलीयते'। 'तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः'।

है— केवल दर्शन नहीं।

"जिस ने दूध की बात केवल सुनी है वह अज्ञानी है; जिस ने दूध देखा है उसे ज्ञान हो गया है। जो दूध पीकर हृष्ट-पुष्ट हो गया है उसे विज्ञान हो गया है।"

अब भक्तों को सम्भवत: अपनी अवस्था समझा रहे हैं। विज्ञानी की अवस्था वर्णन करके शायद अपनी अवस्था बता रहे हैं।

(श्रीरामकृष्ण की अवस्था— श्री मुख-कथित— ईश्वर-दर्शन के बाद की अवस्था)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— ज्ञानी साधु और विज्ञानी साधु में अन्तर है। ज्ञानी साधु के बैठने का ढंग ही अलग होता है। मूँछों पर ताव देकर बैठता है। किसी के आने पर कहता है, 'कैसे आए बाबु, तुम्हें कुछ पूछना है?'

"जो ईश्वर का सर्वदा दर्शन करते हैं, उनके संग में बातें करते हैं— विज्ञानी— उनका स्वभाव अलग है; कभी जड़वत्, कभी पिशाचवत्, कभी बालकवत्, कभी उन्मादवत्।

"कभी समाधिस्थ होकर बाह्यशून्य हो जाता है— जड़वत् हो जाता है।

"ब्रह्ममय देखता है, जभी पिशाचवत्; शुचि-अशुचि बोध नहीं रहता। शायद शौच करता-करता बेर खा रहा है, बालकवत्। स्वप्नदोष के बाद अशुद्धि-बोध नहीं करता— यह सोचकर कि शुक्र से शरीर बना है।

"विष्ठामूत्र-ज्ञान नहीं; सब ब्रह्ममय। भात और दाल कई दिन रखने पर विष्ठा जैसा हो जाता है।

"और फिर उन्मादवत्; उसका तौर-तरीका (चाल-ढाल, रहन-सहन) देखकर लोग सोचते हैं, पागल है।

"और कभी बालकवत्; कोई बन्धन नहीं— लज्जा, घृणा, संकोच आदि।

"ईश्वर-दर्शन के बाद ऐसी अवस्था होती है। जैसे चुम्बक के पहाड़ के निकट से जहाज जा रहा है, जहाज के स्क्रू (पेच), पेरेक (कीलें) अलग होकर खुल जाते हैं। ईश्वर-दर्शन पर फिर काम-क्रोधादि नहीं रहते।

"माँ काली के मन्दिर पर जब बाज (वज्र) गिरा था, तब देखा था स्क्रुओं की टोपियाँ उड़ गई थीं।

"जिन्होंने ईश्वर-दर्शन कर लिया है, उनके द्वारा बच्चों-लड़कों को जन्म देना आदि सृष्टि का काम और नहीं होता। धान बोने से पौधा होता है, किन्तु धान उबालकर बोने से पौधा नहीं होता।

"जिन्होंने ईश्वर-दर्शन किया है, उनका 'मैं' केवल नाममात्र का रहता है, उस 'मैं' के द्वारा कोई भी अन्याय कार्य (अनुचित, पाप कार्य) नहीं होता। नाममात्र रहता है— जैसे नारियल की टहनी का दाग। टहनी झड़ जाती है— तब केवल दाग मात्र रह जाता है।

(ईश्वर-दर्शन पर 'मैं'— श्रीरामकृष्ण और श्रीकेशवसेन)

(भक्तों के प्रति)— "मैंने केशवसेन से कहा, 'मैं' त्याग करो— 'मैं कर्त्ता हूँ'; 'मैं लोगों को शिक्षा देता हूँ'। केशव बोला, 'महाशय, फिर तो दल-वल नहीं रहता।' मैंने कहा, 'बज्जात मैं' त्याग करो।

" 'ईश्वर का दास मैं', 'ईश्वर का भक्त मैं' त्याग नहीं करना पड़ेगा। 'बज्जात् मैं' के होने के कारण 'ईश्वर का मैं' नहीं रहता।

"एक भण्डारी के रहने पर घर का मालिक भण्डार का भार नहीं लेता।"

•

(श्रीरामकृष्ण— मनुष्य-लीला और अवतार-तत्त्व)

(भक्तों के प्रति)— "देखो, इस हाथ में चोट लगने के कारण मेरा स्वभाव उलटता जा रहा है। अब मनुष्य के भीतर ईश्वर का अधिक प्रकाश दिखाई देता है। जैसे कहता हो— मैं मनुष्य के भीतर रहता हूँ, तुम मनुष्य लेकर आनन्द करो।

"वे शुद्ध भक्त के भीतर प्रकाशित हैं— जभी नरेन्द्र, राखाल आदि के लिए इतना व्याकुल होता हूँ।

"जलाशय के किनारे पर छोटे-छोटे गढ़े होते हैं, वहाँ पर ही मछली, केंकड़े आकर जमा हो जाते हैं, वैसे ही मनुष्य के भीतर ईश्वर का प्रकाश अधिक होता है।

"ऐसा कहा है कि शालग्राम से भी मनुष्य बड़ा है— नरनारायण।

"प्रतिमा में उनका आविर्भाव होता है और मनुष्य में नहीं होगा?

"वे नर-लीला करने के लिए मनुष्य के भीतर अवतीर्ण होते हैं, जैसे रामचन्द्र, श्री कृष्ण, चैतन्यदेव। अवतार का चिन्तन करने से ही उनका चिन्तन करना होता है।"

•

ब्राह्मभक्त भगवानदास आए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भगवानदास के प्रति)*— ऋषियों का धर्म सनातन धर्म है, अनन्तकाल से है और रहेगा। इसी सनातन धर्म के लिए निराकार, साकार सब प्रकार की पूजा है; ज्ञान-पथ, भक्ति-पथ सब हैं। अन्यान्य सब धर्म आधुनिक धर्म हैं; कुछ दिन रहेंगे और फिर चले जाएँगे।

पञ्चदश खण्ड

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण— श्री फलहारिणी पूजा और विद्यासुन्दर का गीतिनाटक

प्रथम परिच्छेद

[दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण, राखाल (स्वामी ब्रह्मानन्द), अधर, हरि (स्वामी तुरीयानन्द) आदि भक्तों के संग में]

ठाकुर श्रीरामकृष्ण उसी पूर्वपरिचित कमरे में बैठे हुए हैं; समय ग्यारह का है। राखाल, मास्टर आदि भक्तगण भी उसी कमरे में उपस्थित हैं। गत रात को श्री फलहारिणी काली-पूजा हो गई है; उसी उत्सव के उपलक्ष्य में नाट-मन्दिर में शेष रात्रि में यात्रा (गीतिनाटक) हुई थी— विद्यासुन्दर का गीतिनाटक। श्रीरामकृष्ण ने सुबह मन्दिर में माँ के दर्शन करने पर थोड़ी-सी यात्रा भी सुनी थी। यात्रा वाले स्नान के बाद ठाकुर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आए हैं।

आज शनिवार है, 12वाँ ज्येष्ठ; 24 मई, 1884 ईसवी; अमावस्या।

जो गौरवर्ण लड़का विद्या बना था उसने सुन्दर अभिनय किया था। श्रीरामकृष्ण उसके साथ आनन्द से बहुत-सी ईश्वरीय बातें कर रहे हैं। भक्त आग्रह (उत्सुकता) के साथ सब बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(विद्या अभिनेता के प्रति)*— तुम्हारा अभिनय सुन्दर हुआ है। यदि कोई गाने, बजाने, नाचने या किसी भी एक विद्या में अच्छा होता है, वह

यदि चेष्टा करे तो शीघ्र ही ईश्वर-लाभ कर सकता है।

(यात्रावालों और चानके के सिपाहियों को शिक्षा—
अभ्यासयोग— 'मृत्यु स्मरण कर')

"और तुम जैसे बड़ा अभ्यास करके गाना, बजाना या नाचना सीखते हो, उसी प्रकार ईश्वर में मन के योग का अभ्यास करना चाहिए; पूजा, जप, ध्यान— इनका नियमित अभ्यास करना चाहिए।*

"तुम्हारा क्या विवाह हो गया है? लड़के-बच्चे हैं?"

विद्या— जी एक कन्या गत हो गई है; और एक सन्तान हुई है।

श्रीरामकृष्ण— इसी बीच ही हुई और गई। तुम्हारी इतनी कम आयु! कहते हैं 'सांज सकाले भातार म'लो— कांदबो कत रात' (शाम के समय पति मरा, कितनी रात तक रोऊँगी')! *(सब का हास्य)*।

"संसार का सुख तो देख ही रहे हो। जैसे आमड़ा फल— केवल गुठली और छिलका। खाने से अम्लशूल हो जाता है।

"यात्रावालों का काम करते हो, यह तो सुन्दर है। किन्तु बड़ी यन्त्रणा है। अब कम उम्र है, जभी गोल-गोल चेहरा है। उसके बाद सब पिचक जाएगा। यात्रावाले (गीतिनाटक वाले) प्राय: वैसे ही होते हैं— गाल पिचके, पेट मोटा, बाँह में धागा *(सब का हास्य)*।

"मैंने क्यों 'विद्यासुन्दर' सुना था? देखा— ताल, मान (सुर), गान, सब सुन्दर है। फिर माँ ने दिखला दिया कि नारायण ही यह नाटक वालों का रूप धारण करके गीति-नाटक कर रहे हैं।"

विद्या— जी, काम और कामना में क्या अन्तर है?

श्रीरामकृष्ण— काम जैसे वृक्ष का मूल है, कामना जैसे डाल-पत्ते।

"ये काम, क्रोध, लोभ इत्यादि छ: रिपु एकदम तो जाएँगे नहीं; जभी ईश्वर की ओर मोड़ फिरा देना चाहिए। यदि कामना करनी हो, लोभ करना

---

* 'अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुम् धनञ्जय'। (गीता— 12/9)

हो, तो ईश्वर में भक्ति-कामना करनी चाहिए, और उनके पाने का लोभ करना चाहिए। यदि मद अर्थात् मत्तता करनी हो, अहंकार करना हो तो फिर 'मैं ईश्वर का दास, मैं ईश्वर की सन्तान हूँ', यह कहकर मत्तता और अहंकार करना चाहिए।

"सब मन ताँके न दिले ताँके दर्शन होय ना। (पूरा मन उनको न देने से उनका दर्शन नहीं होता।)"

(भोग के अन्त में योग— भ्रातृस्नेह और संसार)

"कामिनी-काञ्चन में मन व्यर्थ खर्च हो जाता है। इसे (विद्या को) ही देखो ना, लड़के-लड़की हुई हैं, नाटक किया जा रहा है— इन सब नाना कार्यों से ईश्वर में मन का योग नहीं होता।

"भोग रहने से ही योग कम हो जाता है। भोग रहने से फिर ज्वाला। श्रीमद्भागवत में है— अवधूत ने चौबीस गुरुओं में चील को एक गुरु बनाया था। चील के मुख में मछली थी, इसीलिए हजारों कौवों ने उसे घेर लिया, जिधर वह चील मुख में मछली लेकर जाती उधर ही कौवे पीछे-पीछे काँ-काँ करते जाते। जब चील के मुख से मछली हठात् अपने आप गिर पड़ी तब जितने कौवे थे, मछली की ओर गए, चील की ओर नहीं गए।*

"मछली अर्थात् भोग की वस्तु। काक (कौवे)— सब भावनाएँ, चिन्ताएँ। जहाँ पर भोग (भोग की वस्तु) है, वहाँ पर ही भावनाएँ, चिन्ताएँ हैं; भोग त्याग हो जाने पर ही शान्ति है।

"फिर और देखो, अर्थ ही फिर अनर्थ बन जाता है। तुम लोग भाई-भाई हो, अच्छे हो, किन्तु भाई-भाई में हिस्से के लिए गड़बड़ हो जाती है। कुत्ते शरीर की चाटाचाटि करते हैं, परस्पर सुन्दर भाव रहता है। किन्तु कोई गृही यदि थोड़ा-सा भात फेंक देता है तो फिर परस्पर काटना शुरु कर देते हैं।

"बीच-बीच में यहाँ पर आना। *(मास्टर आदि को दिखलाकर)* ये

* सामिषं कुररं जघ्नुर्बलिनोऽन्ये निरामिषाः
तदामिषं परित्यज्य स सुखं समविन्दत॥ श्रीमद्भागवत— 11, 9, 2

लोग आते हैं। रविवार अथवा अन्य छुट्टी में आते हैं।''

विद्या— हमारा रविवार तीन महीने के लिए होता है। श्रावण, भाद्रपद और पौष— वर्षा और धान काटने के समय। जी, आपके पास आएँगे, यह तो हमारा ही सौभाग्य होगा।

''दक्षिणेश्वर आने के समय दो जनों की बात सुनी थी— आपकी और ज्ञानार्णव की।''

श्रीरामकृष्ण— भाइयों के संग में मिलकर रहना। मेल हो तो देखने में और सुनने में सब अच्छा लगता है। नाटक में नहीं देखा? चार जन गाना गाते हैं, किन्तु प्रत्येक यदि भिन्न सुर पकड़े तो नाटक भंग हो जाता है।

विद्या— जाल में बहुत से पक्षी फँस जाते हैं, यदि एक साथ चेष्टा करके एक ओर को जाल ले जाएँ तो फिर बड़ी रक्षा हो जाती है। किन्तु नाना दिशाओं में यदि नाना पक्षी उड़ने की चेष्टा करें तो फिर रक्षा नहीं होती।

''नाटक में भी देखते हैं कि सिर पर कलसी रखे हुए हैं और नाचते हैं।''

श्रीरामकृष्ण— संसार करो, अथच कलसी ठीक रखो, अर्थात् ईश्वर की ओर मन ठीक रखो।

''मैंने चानके में पल्टन के सिपाहियों से कहा था, तुम लोग संसार का कार्य करो, किन्तु कालरूप (मृत्युरूप) ढेंकी* हाथ पर पड़ेगी, इस बात का होश रखो।

''उस देश (कामारपुकुर) में बढ़इयों की स्त्रियाँ ढेंकी द्वारा चिड़वा छड़ती हैं। एक स्त्री पैरों से ढेंकी दबाती है, और दूसरी ओखली में धान हिलाती-डुलाती रहती है। वह होश (ध्यान) रखती है कि जिस से ढेंकी का मूसल हाथ के ऊपर न पड़े। इधर लड़के को स्तन पिलाती है, और एक हाथ से भीगा हुआ धान पतीले में भून लेती है। और साथ ही खरीदार के साथ बातें करती है, 'तुम्हारे पास हमारा इतना बाकी है, दे जाना।'

---

* ढेंकी = अन्न कूटने का एक पैडल वाला यन्त्र। ढेंकली।

"वैसे ही ईश्वर में मन रखकर संसार के नाना कार्य कर सकते हो। किन्तु अभ्यास चाहिए; और होशियार होना चाहिए; जभी दोनों तरफ रखी जाती हैं।"

(आत्मदर्शन वा ईश्वरदर्शन का उपाय— साधुसंग— not science)

विद्या— जी, आत्मा जो देह से अलग है, उसका प्रमाण क्या है?

श्रीरामकृष्ण— प्रमाण? ईश्वर को देखा जाता है; तपस्या करने पर उनकी कृपा से ईश्वरदर्शन होता है। ऋषियों ने आत्मा का साक्षात्कार किया था। साइन्स के द्वारा ईश्वर-तत्त्व नहीं जाना जाता, उस में केवल— इसके साथ उसको मिलाने से यह होता है; और उसके संग में इसके मिलाने पर यह होता है, ऐसी ही सब इन्द्रियग्राह्य वस्तुओं की खबर मिलती है।

"जभी तो इस बुद्धि के द्वारा यह सब समझ में नहीं आता। साधु-संग करना चाहिए। वैद्य के संग में घूमते-घूमते नाड़ी दबाना सीख लेता है।"

विद्या— जी, अब समझा हूँ।

श्रीरामकृष्ण— तपस्या चाहिए, जभी वस्तु-लाभ होगा। शास्त्र के श्लोक मुखस्थ करने से भी कुछ न होगा। 'भाँग-भाँग' मुख से बोलने से तो नशा नहीं होता। भाँग खानी पड़ती है।

"ईश्वरदर्शन की बात लोगों को समझाई नहीं जाती। पाँच वर्ष के बालक को पति-पत्नी के मिलन के आनन्द की बात समझाई नहीं जाती।"

विद्या *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— जी, आत्मदर्शन किस तरह से हो सकता है?

(राखाल के प्रति श्रीरामकृष्ण का गोपाल-भाव)

इसी समय कमरे में राखाल आहार करने बैठते हैं। किन्तु अनेक लोगों के कमरे में होने के कारण इतस्ततः (इधर-उधर) कर रहे हैं। ठाकुर आजकल राखाल का गोपाल-भाव में पालन कर रहे हैं; ठीक जैसे माँ यशोदा का वात्सल्य भाव!

श्रीरामकृष्ण *(राखाल के प्रति)*— खा ले ना रे! ये लोग तो उठ जाएँगे (एक भक्त से) राखाल के लिए बरफ रखो (राखाल के प्रति) तू फिर बन्हुगलि जाएगा? धूप में मत जाइयो।

राखाल आहार करने बैठ गए। ठाकुर फिर दोबारा विद्या अभिनेता, उस यात्रा वाले छोकरे के साथ बातें करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(विद्या के प्रति)*— तुम सब लोगों ने ठाकुरबाड़ी (मन्दिर) में प्रसाद क्यों नहीं पाया? यहाँ पर खाने पर ही (फल) होता।

विद्या— जी, सब के ही लिए तो भाव समान नहीं होता, तभी अलग रसोई हो रही है। सब ही अतिथिशाला में खाना नहीं चाहते।

राखाल खाने के लिए बैठ गए हैं। ठाकुर भक्तों के संग में बरामदे में बैठकर फिर और बातें कर रहे हैं।

द्वितीय परिच्छेद

यात्रावाला और संसार में साधना—
ईश्वरदर्शन का (आत्मदर्शन का) उपाय

श्रीरामकृष्ण *(विद्या अभिनेता के प्रति)*— आत्मदर्शन का उपाय है व्याकुलता। शरीर-मन-वाणी द्वारा उन्हें पाने की चेष्टा। जब अनेक (काफी) पित्त जम जाता है तब पीलिया (jaundice) होता है; सब वस्तुएँ पीली दिखाई देती हैं। पीले के अतिरिक्त और कोई रंग नहीं दिखता।

"तुम लोगों में, नटों में, जो केवल स्त्री ही बनते हैं उनका प्रकृति-भाव हो जाता है। उसी प्रकार ईश्वर का रात-दिन चिन्तन करने पर उनकी ही सत्ता मिल जाती है।

"मन को जिस रंग में रंगवाते हो उसी रंग का हो जाता है। मन धोबी के घर का धुला हुआ कपड़ा है।"

विद्या— तो फिर एक बार धोबी के घर में देना होगा।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, पहले चित्तशुद्धि; तत्पश्चात् मन को यदि ईश्वर-चिन्तन में लगाए रखो तो फिर वही रंग ही हो जाएगा। और यदि गृहस्थ करने, नाटक करने के कार्य में रखो, तो फिर उसी तरह का हो जाएगा।

तृतीय परिच्छेद

हरि (स्वामी तुरीयानन्द) नारा'ण आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण के थोड़ा-सा भी विश्राम करते न करते ही कलकत्ता से हरि, नारायण, नरेन्द्र वन्द्योपाध्याय ('प्रेसिडेन्सी कॉलिज' के संस्कृत-अध्यापक राजकृष्ण वन्द्योपाध्याय के पुत्र) आ गए। घर में अनबन होने से श्यामपुकुर में अलग मकान में स्त्री-पुत्र लेकर रहते हैं। यह व्यक्ति बड़ा सरल है। अब आयु 29-30 होगी। शेष जीवन इन्होंने इलाहाबाद में वास किया था। 58 वर्ष की वयस में इनका शरीर गया था।

ध्यान के समय ये घण्टा-निनाद आदि अनेक प्रकार से सुनते और देखते थे। भूटान, उत्तर-पश्चिम और नाना स्थानों पर उन्होंने खूब भ्रमण किया था। ठाकुर के बीच-बीच में दर्शन करने आते रहते थे।

हरि (स्वामी तुरीयानन्द) तब अपने बागबाजार के घर में भाइयों के संग रहते हैं। जनरल असैम्बली में प्रवेशिका तक पढ़कर आजकल घर में ईश्वर-चिन्तन, शास्त्र-पाठ और योगाभ्यास करते हैं। बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण के दर्शन दक्षिणेश्वर आकर करते हैं। बागबाजार में बलराम के घर में ठाकुर के जाने पर उन्हें भी कभी-कभी बुलवा लेते हैं।

(बौद्ध धर्म की कथा— ब्रह्म बोध-स्वरूप— ठाकुर को तोतापुरी की शिक्षा)

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— बुद्धदेव की बहुत-सी बातें सुनी हैं, वे दस अवतारों में एक अवतार हैं। ब्रह्म अचल, अटल, निष्क्रिय, बोध-स्वरूप हैं। बुद्धि जब इस बोध-स्वरूप में लीन हो जाती है तब ब्रह्मज्ञान होता है; तब

मनुष्य बुद्ध हो जाता है।

"न्याँगटा कहा करता था मन का लय बुद्धि में, बुद्धि का लय बोध-स्वरूप में होता है।

"जब तक अहं रहता है तब तक ब्रह्म-ज्ञान नहीं होता। ब्रह्म-ज्ञान होने पर, ईश्वर का दर्शन हो जाने पर, तब ही अहं अपने बस में आता है; वैसा न हो तो अहं को वश में नहीं किया जाता। अपनी छाया को पकड़ना कठिन है; किन्तु सूर्य के सिर पर आने पर छाया आध हाथ के अन्दर रहती है।"

(बन्द्योपाध्याय को शिक्षा— ईश्वर-दर्शन— उपाय साधु-संग)

भक्त— ईश्वर-दर्शन कैसा होता है ?

श्रीरामकृष्ण— थियेटर में अभिनय नहीं देखा ? लोग सब परस्पर बातें करते हैं, जिस समय पर्दा हट जाता है; तब सबका समस्त मन अभिनय में चला जाता है; फिर बाहर दृष्टि नहीं रहती— इसी का ही नाम समाधिस्थ होना है।

"फिर पर्दा गिरने पर फिर बाहर दृष्टि। मायारूप यवनिका गिर जाने पर ही फिर मनुष्य बहिर्मुख होता है।

(नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय के प्रति)— "तुमने काफी भ्रमण किया है, साधुओं की कुछ बातें बताओ।"

वन्द्योपाध्याय ने भूटान में दो योगी देखे थे, वे लोग आध सेर नीम का रस खाते हैं; ऐसी ही बात कह रहे हैं। और फिर नर्मदा तीर पर एक साधु के आश्रम में गए थे। उस आश्रम में साधु ने पतलून पहने हुए बंगाली बाबू को देखकर कहा था, 'इसके पेट में छुरी है'।

श्रीरामकृष्ण— देखो, साधुओं की छवि घर में रखनी चाहिए; उससे सर्वदा ईश्वर का उद्दीपन होता है।

बन्द्योपाध्याय— आपकी छवि घर में रखी हुई है; और पहाड़ पर साधु की छवि है— हाथ में गांजे की चिलम में आग लगी हुई।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, साधुओं की छवि देखने पर उद्दीपन होता है; सोला

(खखड़ी) का शरीफा देखने पर जैसे वास्तविक शरीफे का उद्दीपन होता है; युवती स्त्री को देखने पर व्यक्ति को जैसे भोग का उद्दीपन हो जाता है।

''जभी तो तुम लोगों से कहता हूँ— सर्वदा ही साधु-संग आवश्यक है।

(बन्द्योपाध्याय के प्रति)— ''संसार में ज्वाला तो देख ही रहे हो। भोग लेने पर ही ज्वाला (आग)। चील के मुख में जब तक मछली थी, तब तक झुण्ड के झुण्ड कव्वे आकर उसको सता रहे थे।

''साधु-संग से शान्ति होती है; मगरमच्छ जल के भीतर बहुत देर तक रहता है; एक-एक बार जल के ऊपर आ जाता है सांस लेने, तब निश्वास लेकर शान्त हो जाता है।''

(नाटकवाला और ईश्वर 'कल्पतरु'— सकाम प्रार्थना की विपत्ति)

नाटकवाला— जी, आपने योग की बात कही है, वह ठीक है। ईश्वर के निकट योग की कामना करने से अन्त में विपत्ति में पड़ना पड़ता है। मन में कितनी प्रकार की कामनाएँ, वासनाएँ उठती हैं, सब कामनाओं से मंगल नहीं होता। ईश्वर कल्पतरु हैं, उनसे जो कामना करके माँगोगे वही आ जाएगा। अब यदि मन में हो कि ये कल्पतरु हैं, अच्छा देखूँ बाघ यदि आ जाए। बाघ की मन में इच्छा करते ही बाघ आ गया; और व्यक्ति को खा डाला।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, यही बोध है कि बाघ आता है।

''और क्या कहूँ, उसी ओर मन रखो, ईश्वर को भूलो मत— सरल भाव से उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देंगे।

''और भी एक बात है— यात्रा (गीतिनाटक) के अन्त में कुछ हरिनाम करके उठा करो। उससे जो गीत गाते हैं और जो सुनते हैं सब लोग ही ईश्वर-चिन्तन करते-करते अपने-अपने स्थानों पर जाएँगे।''

यात्रावालों ने प्रणाम करके विदा ली।

(श्रीरामकृष्ण और गृहस्थाश्रम की भक्तवधुओं को उपदेश)

दो भक्तों की स्त्रियों ने आकर ठाकुर को प्रणाम किया। वे ठाकुर के दर्शन करने आई हैं, इसलिए उपवास किए हुए हैं। दोनों देवरानी, जेठानी हैं— घूँघट निकाले, बहुएँ हैं। वयस 22-23 के बीच, दोनों ही लड़कों की माँ हैं।

श्रीरामकृष्ण *(वधुओं के प्रति)*— देखो, तुम लोग शिव-पूजा करो। किस प्रकार पूजा करनी चाहिए!— 'नित्यकर्म' नामक पुस्तक है, उस पुस्तक में से पढ़कर देख लेना। देवता की पूजा करने के लिए देवताओं का काम बहुत देर तक कर सकोगी— फूल तोड़ना, चन्दन घिसना, देवताओं के बर्तन माँजना, देवताओं का जलपान सजाना— यह सब करना हो तो उस तरफ ही मन रहेगा। हीनबुद्धि, राग, हिंसा इत्यादि चली जाएँगी। दोनों देवरानी-जेठानी जब बातें करोगी, तब भगवान की ही बातें करना।

[Shree Ramakrishna and the value of Image-worship
(श्रीरामकृष्ण और मूर्तिपूजा की आवश्यकता)]

"किसी प्रकार ही हो मन का ईश्वर में योग करना चाहिए। एकदम ही जिससे उन्हें भूल न जाएँ; जैसे तेल की धारा— उसमें फाँक नहीं होती! एक ईंट को या पत्थर को ईश्वर कहकर यदि भक्ति-भाव से पूजा करो तो उससे भी उनकी कृपा से ईश्वर-दर्शन हो सकता है।

"पहले जो कहा था शिव-पूजा— यह सब पूजा करनी चाहिए; फिर पक्का हो जाने पर अधिक दिन पूजा नहीं करनी होती। तब सर्वदा ही मन का योग हुआ रहता है, सर्वदा ही स्मरण-मनन रहता है।"

बड़ी वधु *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— हमें क्या थोड़ा-सा कुछ बोल देंगे?

श्रीरामकृष्ण *(सस्नेह)*— मैं तो मन्त्र नहीं देता। मन्त्र देने पर शिष्य का पाप-ताप लेना होता है। माँ ने मुझे बालक की अवस्था में रखा हुआ है। अब तुम लोग शिव-पूजा जो बता दी है, वही करो। बीच-बीच में आना— पीछे ईश्वर की इच्छा से जो होना है, हो जाएगा। स्नानयात्रा के दिन फिर और आने की चेष्टा करना।

"घर में हरि-नाम करने के लिए मैंने जो कहा था, वह क्या हो रहा है?"

वधु *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— जी, हाँ।

श्रीरामकृष्ण— तुम लोग उपवास करके क्यों आई? खाकर आना चाहिए।

"स्त्रियाँ मेरी माँ का एक-एक रूप हैं कि ना*; जभी उनका कष्ट मैं देख नहीं सकता; वे हैं जगन्माता का एक-एक विशेष रूप। खाकर आओगी, आनन्द में रहोगी।"

यह कहकर श्रीयुक्त रामलाल से बहुओं को बिठाकर जलपान करवाने के लिए आदेश किया। फलहारिणी पूजा का प्रसाद, लुचि (पूरी), नाना तरह के फल, ग्लास भर कर चीनी का पाना (शरबत) और मिठाई उन्होंने पाई।

ठाकुर बोले—

"तुम लोगों ने कुछ खा लिया है, अब मेरा मन शीतल हुआ; मैं स्त्रियों को उपवासी देख नहीं सकता।"

चतुर्थ परिच्छेद

(भक्तों के साथ गुह्य बात— श्रीयुक्त केशवसेन)

श्रीरामकृष्ण शिव (मन्दिर) की सीढ़ी पर बैठे हुए हैं। समय अपराह्ण पाँच का हो गया है; पास ही अधर, डॉक्टर, निताई, मास्टर आदि दो-एक भक्त बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— देखो, मेरा स्वभाव बदल रहा है।

अब कुछ गुह्य बातें कहेंगे। इसलिए सीढ़ी की एक धाप (पद) उतरकर भक्तों के निकट बैठ गए। अब और कुछ कह रहे हैं—

(मनुष्य भगवान की सर्वोत्तम कृति— दैवी अवतार का रहस्य)

"तुम लोग भक्त हो, तुम्हें बतलाने में क्या (डर) है— आजकल ईश्वर का

* स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु। श्री देवी माहात्म्यम्— चण्डी 11, 6

चिन्मयरूप-दर्शन नहीं होता। अब तो उनका साकार नररूप ही हो रहा है। मेरा स्वभाव है ईश्वर का रूप दर्शन-स्पर्शन-आलिंगन करना। अब वे कहते हैं, 'तुमने देह धारण की है; साकार नररूप लेकर आनन्द करो'।

"वे तो सब भूतों में ही हैं, किन्तु मनुष्य के भीतर उनका अधिक प्रकाश है।

"मनुष्य क्या कुछ कम है भाई ? ईश्वर का चिन्तन (मनुष्य) कर सकता है, अनन्त का चिन्तन कर सकता है, अन्य जीव-जन्तु नहीं कर सकते।

"अन्य जीव-जन्तुओं के भीतर, पेड़-पौधों के भीतर, और फिर सर्व-भूतों में वे ही हैं; किन्तु मनुष्य में (उनका) अधिक प्रकाश है।

"अग्नि-तत्त्व सर्वभूतों में है, सब वस्तुओं में है; किन्तु काठ में अधिक प्रकाश है।

"राम ने लक्ष्मण से कहा था, भाई देख, हाथी इतना बड़ा जानवर है; किन्तु ईश्वर-चिन्तन नहीं कर सकता।

"और फिर अवतार में अधिक प्रकाश होता है। राम ने लक्ष्मण से कहा था, भाई, जिस मनुष्य में देखोगे ऊर्जिता भक्ति है; भाव में हँसता, रोता, नाचता, गाता है, वहाँ पर ही मैं हूँ।"

ठाकुर चुप किए हुए हैं। कुछ क्षण पश्चात् फिर और बातें कर रहे हैं।

(श्रीयुक्त केशवसेन पर श्रीरामकृष्ण का प्रभाव)

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, केशवसेन खूब आया करता था। यहाँ पर आकर काफी बदल गया। अब तो बहुत लोग हो गए थे। यहाँ पर अनेक बार दलबल लेकर आया था। और फिर अकेले आने की इच्छा थी।

"केशव का पहले ऐसा साधु-संग नहीं हुआ था।

"कलुटोला वाले मकान में मिला था; हृदय साथ था। केशवसेन जिस कमरे में था, उसी कमरे में मुझे बिठाया। टेबल (मेज) पर कुछ लिख रहा

था, काफी देर बाद कलम रखकर केदारा (कुर्सी) से नीचे उतरकर बैठा; तब मुझे नमस्कार-टमस्कार नहीं किया।

"यहाँ पर बीच-बीच में आता था। मैंने एक दिन भावावस्था में कह दिया था— साधु के सम्मुख पाँव पर पाँव रखकर नहीं बैठते। उससे रजोगुण बढ़ता है। उनके आते ही मैं नमस्कार किया करता, तब क्रमशः वे लोग भूमिष्ठ होकर नमस्कार करना सीखे।"

**(ब्राह्मसमाज में हरि-नाम और माँ का नाम—
भक्त-हृदय में ईश्वर-दर्शन)**

"और केशव से कहा था, 'तुम लोग हरि-नाम करो, कलियुग में उनका नाम-गुण-कीर्त्तन करना चाहिए। तब वे लोग खोल-करताल लेकर करने लगे।*

"हरि-नाम में मेरा और भी विश्वास क्यों हुआ? इसी ठाकुरबाड़ी में बीच-बीच में साधु आते रहते हैं; एक मुलतान का साधु आया था, गंगासागर के लोगों (यात्रियों) के लिए इन्तजार कर रहा था। *(मास्टर को दिखलाकर)* इसकी वयस का साधु था। उसने ही कहा था— उपाय है नारदीय भक्ति।"

**(केशव को उपदेश— कामिनी-काञ्चन मछली गन्ध की डलिया—
साधु-संग फूल की गन्ध— बीच-बीच में निर्जन में साधन)**

"केशव एक दिन आया था; रात को दस बजे तक था। प्रताप और कोई-कोई बोले, आज ठहर जाएँगे; सब वटवृक्ष के नीचे (पञ्चवटी में) बैठे थे। केशव बोले, 'नहीं, काम है, जाना ही होगा।'

"तब मैंने हँसकर कहा था, आँषचुपड़ी (मछली वाली डलिया) की गन्ध के बिना क्या नींद नहीं आएगी? एक मछलीवाली माली के घर में अतिथि हुई थी; मछलियाँ बेचकर आ रही थी; डलिया हाथ में थी। उसको

---

* श्री केशवसेन खोल-करताल लेकर कुछ वर्षों से ब्रह्मनाम कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण के साथ 1875 में साक्षात्कार होने के बाद से विशेष रूप से हरिनाम तथा माँ के नाम का खोल-करताल लेकर कीर्तन करने लगे।

फूलों वाले कमरे में सोने का स्थान दिया गया। बड़ी रात तक फूलों की सुगन्ध से उसे नींद नहीं आई; घर की मालकिन ने उसकी अवस्था देखकर कहा, 'क्यों जी, तुम क्यों छटपट कर रही हो?' वह बोली, 'क्या पता बहन, लगता है इन फूलों की गन्ध से नींद नहीं आ रही है, मेरी वह मछली वाली छबड़ी ला दे सकती हो? तब फिर शायद नींद आ जाएगी।' अन्त में वह माछवाली डलिया लाकर, जल छिड़क कर, नाक के निकट रखकर घुर्राटे लेती हुई सो गई।

"कहानी सुनकर केशव के दल के लोग, हो-हो करके (ठहाका मारकर) हँसने लगे।

"केशव ने सन्ध्या होने पर घाट पर उपासना की। उपासना के बाद मैंने केशव से कहा, "देखो, भगवान ही एक रूप में भागवत हुए हैं, इसलिए वेद, पुराण, तन्त्र आदि की पूजा करनी चाहिए। और फिर एक रूप में वे भक्त हुए हैं, भक्त का हृदय उनका बैठकखाना है; बैठकखाने में जाने पर जैसे बाबू अनायास ही मिल जाते हैं। इसीलिए भक्त की पूजा से भगवान की पूजा होती है।

"केशव और उनके दल के लोगों ने वह बात खूब मन देकर सुनी। पूर्णिमा, चारों ओर चाँद का आलोक। गंगा के कूल पर सीढ़ियों वाले चबूतरे पर सब बैठे हुए हैं। मैंने कहा, सब बोलो, 'भागवत-भक्त-भगवान'।

"तब सब एक सुर से बोले, 'भागवत-भक्त-भगवान'। फिर मैंने और बोला, बोलो, 'ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म'। वे लोग फिर एक सुर से बोले, 'ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म!' उनसे मैंने कहा, जिनको तुम लोग ब्रह्म कहते हो, मैं उन्हें ही माँ कहता हूँ; माँ बड़ा मधुर नाम है।

"जब फिर उन्हें और कहा, अब फिर कहो, 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव'; तब केशव बोले, महाशय इतनी दूर नहीं। तब तो सब मुझे कट्टर वैष्णव सोचेंगे।

"केशव को बीच-बीच में कहता था, तुम लोग जिन्हें ब्रह्म कहते हो, उन्हें ही मैं शक्ति, आद्याशक्ति कहता हूँ। जब वाक्य-मन के अतीत, निर्गुण-निष्क्रिय, तब वेद में उनको ब्रह्म कहा है। जब देखता हूँ कि वे सृष्टि-स्थिति-प्रलय कर रही हैं तब उन्हें शक्ति, आद्याशक्ति आदि कहता हूँ।

"केशव से कहा, संसार में (गृहस्थ में) होना बड़ा कठिन है— जिस कमरे में अचार और इमली तथा जल का मटका है, उसी कमरे में ही विकारी (पागल) रोगी कैसे ठीक हो सकता है? इसीलिए बीच-बीच में साधन-भजन करने के लिए निर्जन में चले जाना चाहिए। तना मोटा हो जाने पर हाथी बाँध दिया जाता है, किन्तु पौधे को बकरी या गाय खा डालती है। जभी केशव ने लेक्चर में कहा, 'तुम लोग पक्के होकर संसार में रहो'।"

(अधर, मास्टर, निताई आदि को उपदेश— 'आगे बढ़ो')

(भक्तों के प्रति)— "देखो, केशव इतना बड़ा पण्डित (विद्वान्)— अंग्रेज़ी में लेक्चर देता, कितने लोग उसको मानते; स्वयं क्वीन (रानी) विक्टोरिया उसके संग में बातें किया करती थी। किन्तु वह जब यहाँ पर आता, तो नंगे शरीर। साधु-दर्शन करने आओ तो हाथ में कुछ लाना चाहिए, तभी फल हाथ में लेकर आता। बिल्कुल अभिमान-शून्य।

(अधर के प्रति)— "देखो, तुम इतने विद्वान् हो और फिर हो डिप्टी, किन्तु तुम खाँदि-फाँदि (नकबैठी) स्त्री के बस में हो। चन्दनकाठ के परे और भी अच्छी-अच्छी वस्तुएँ हैं; चाँदी की खान, उसके बाद सोने की खान, फिर हीरा माणिक। लकड़हारा बन में लकड़ियाँ काट रहा था, तभी ब्रह्मचारी ने उससे कहा, आगे बढ़ो।"

शिव के मन्दिर से उतरकर श्रीरामकृष्ण प्रांगण में से अपने कमरे की ओर आ रहे हैं। संग में अधर, मास्टर आदि भक्तगण हैं। उस समय विष्णु-मन्दिर के सेवक पुजारी श्रीयुक्त रामचैटर्जी ने आकर खबर दी कि श्री श्री माँ की परिचारिका को कॉलरा (हैजा) हो गया है।

रामचैटर्जी *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— मैंने तो दस बजे बता दिया था, आपने सुना नहीं।

श्रीरामकृष्ण— मैं क्या करूँ?

रामचैटर्जी— आप क्या करेंगे? राखाल, रामलाल ये सब तो थे, उन्होंने भी कुछ नहीं किया।

मास्टर— किशोरी (गुप्त) औषध लेने आलमबाजार गया है।

श्रीरामकृष्ण— क्या, अकेला? कहाँ से लाएगा?

मास्टर— और कोई संग में नहीं है। आलमबाजार से लाएगा।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— जो रोगी को देख रहे हैं, उन्हें बता दो कि बढ़ने पर क्या करना होगा; कम हो जाने पर क्या खाना है।

मास्टर— जो आज्ञा।

भक्त वधुओं ने अब आकर प्रणाम किया। उन्होंने विदा ली। श्रीरामकृष्ण ने उनसे फिर कहा—

''शिव-पूजा जैसे बताई है, उसी प्रकार करना। और खा-पीकर आना, नहीं तो मुझे कष्ट होता है। स्नान-यात्रा के दिन फिर आने की चेष्टा करना।''

पञ्चम परिच्छेद

[बन्द्यो को शिक्षा— भार्या (पत्नी) संसार का कारण— शरणागत होओ]

श्रीरामकृष्ण अब पश्चिम के गोल बरामदे में आकर बैठ गए हैं। वन्द्योपाध्याय, हरि, मास्टर आदि पास बैठे हुए हैं। वन्द्योपाध्याय को संसार का कष्ट है, ठाकुर सब जानते हैं।

श्रीरामकृष्ण— देखो, 'एक कौपीन के वास्ते' है जितना भी कष्ट। विवाह करके लड़के-बच्चे हुए हैं, तभी नौकरी करनी पड़ती है; साधु कौपीन के लिए चिन्तित; संसारी चिन्तित भार्या (स्त्री) के लिए। और फिर घर में परस्पर अनबन है, जभी अलग वासस्थान करना पड़ा है। *(सहास्य)* चैतन्यदेव ने निताई से कहा था, सुनो-सुनो नित्यानन्द भाई! संसारी जीवों की कभी गति नहीं है।

मास्टर *(स्वगत)*— ठाकुर शायद अविद्या के संसार की बात कह रहे हैं। 'संसारी जीव' शायद अविद्या के संसार में रहता है।

(मास्टर को दिखलाकर, सहास्य)— "ये भी अलग मकान लेकर रहते हैं। तुम कौन? 'जी, मैं विदेशी'; और तुम कौन? 'जी मैं विरही'। *(सब का हास्य)*। अच्छा मेल होगा।

"किन्तु उनके शरणागत होने पर फिर भय नहीं। वे ही रक्षा करेंगे।"

हरि आदि— अच्छा, अनेकों को उनकी प्राप्ति में इतनी देर क्यों होती है?

श्रीरामकृष्ण— बात क्या है, भोग और कर्म, समाप्त हुए बिना व्याकुलता नहीं आती। वैद्य कहता है, कुछ दिन निकल जाएँ— उसके बाद सामान्य दवा से उपकार होगा।

"नारद ने राम से कहा, 'राम! तुम्हारे अयोध्या में बैठे रहने से रावण-वध कैसे होगा? तुम तो उसी के लिए अवतीर्ण हुए हो!' राम बोले, 'नारद! समय होने दो, रावण का कर्म-क्षय हो जाए; तब फिर उसके वध का उद्योग होगा'।"[1]

[The problem of Evil and Hari (Turiyananda)
दुःख (पाप) की समस्या और हरि (स्वामी तुरीयानन्द)
ठाकुर की विज्ञानी की अवस्था]

हरि— अच्छा, संसार में इतना दुःख क्यों हैं?

श्रीरामकृष्ण— यह संसार उनकी लीला है; खेल की भाँति। इस लीला में सुख-दुःख, पाप-पुण्य, ज्ञान-अज्ञान, भला-मन्दा सब है। दुःख, पाप इत्यादि चले जाने पर लीला नहीं चलती।

"चोर-चोर के खेल में धाई को छूना होता है। खेल के आरम्भ में ही धाई छू लेने से धाई सन्तुष्ट नहीं होती। ईश्वर की (धाई की) इच्छा है कि खेल कुछ देर चले। उसके बाद—

"घुड़ी लक्षेर दुटा एकटा काटे, हेसे दाओ मा, हाथ-चापड़ी[2]।

"अर्थात् ईश्वर-दर्शन करके दो-एक जन बड़ी तपस्या के बाद, उनकी

---

1 अध्यात्म रामायण, अयोध्याकाण्ड।

2 माँ, तुम लाखों में से एक-दो पतंग (गुड्डी) काटती हो और फिर हँसते हुए ताली बजाती हो।]

कृपा से मुक्त होते हैं। तब माँ आनन्द से ताली बजाती हैं, 'वो! काटा!', कहकर।''

हरि— इस खेल में हमारे तो प्राण जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— तुम कौन हो बताओ तो; ईश्वर ही सब होकर रह रहे हैं— माया, जीव, जगत, चौबीस तत्त्व।*

''साँप बनकर खाता हूँ, ओझा बनकर झाड़ता हूँ। वे विद्या, अविद्या— दोनों ही होकर रह रहे हैं। अविद्या माया में अज्ञान होकर रह रहे हैं, विद्या माया में गुरु रूप में ओझा होकर झाड़ते हैं।

''अज्ञान, ज्ञान और विज्ञान। ज्ञानी देखते हैं 'वे ही हैं, वे ही कर्त्ता हैं— सृष्टि, स्थिति, संहार कर रहे हैं'। विज्ञानी देखते हैं, 'वे ही सब होकर रह रहे हैं'।

''महाभाव, प्रेम हो जाने पर देखता है 'उनके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है'!

''भाव के निकट भक्ति फीकी है, भाव पकने पर महाभाव, प्रेम होता है।''

(बन्द्योपाध्याय के प्रति)— ''ध्यान के समय घण्टा-शब्द अब भी क्या सुनते हो?''

बन्द्यो— रोज वही शब्द सुनता हूँ! और फिर रूप-दर्शन भी! एक बार मन पकड़ लेता है तो क्या फिर विराम होता है?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— हाँ, लकड़ी एक बार आग पकड़ लेती है तो फिर निबती (बुझती) नहीं। *(भक्तों के प्रति)*— ये विश्वास की अनेक बातें जानते हैं।

बन्द्यो— मेरा विश्वास बहुत अधिक है।

श्रीरामकृष्ण— कुछ बोलो मत।

---

* त्वं स्त्री त्वं पुमानसि, त्वं कुमार उत वा कुमारी।
त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः॥

— श्वेताश्वतर उपनिषद्— 4,3

बन्द्यो— किसी को गुरु ने गाड़ोल— Ram (मूर्ख) मन्त्र दिया था, और कह दिया था, गाड़ोल (मूर्ख)— Ram ही तेरा इष्ट है।' वह गाड़ोल मन्त्र (Ram) जप करके सिद्ध हो गया था।

"घसियारा राम-नाम करके गंगा-पार हो गया था!"

श्रीरामकृष्ण— अपने घर की लड़कियों को बलराम की स्त्रियों से मिलवाओ।
बन्द्यो— कौन बलराम?
श्रीरामकृष्ण— बलराम को नहीं जानते? बोसपाड़े में उनका घर है।

सरल को देखकर श्रीरामकृष्ण आनन्द में विभोर हो जाते हैं। बन्द्योपाध्याय खूब सरल हैं; निरञ्जन को, सरल होने के कारण, खूब प्यार करते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— तुम्हें निरञ्जन से मिलने के लिए क्यों कहा है? वह सरल है, यह ठीक है कि नहीं, इस बात को देखने के लिए कहा है।

षोडश खण्ड

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का जन्म-महोत्सव—नरेन्द्रादि भक्तों के संग कीर्त्तनानन्द में

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर के उत्तरपूर्व वाले लम्बे बरामदे में गोपीगोष्ठ और सुबल-मिलन-कीर्त्तन सुन रहे हैं। नरोत्तम कीर्त्तन कर रहे हैं। आज रविवार है, 22 फरवरी, 1885 ईसवी; 12वाँ फाल्गुन 1291 (बंगला) साल, शुक्लाष्टमी। भक्तगण उनका जन्म-महोत्सव कर रहे हैं। पिछले सोमवार, फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को उनकी जन्मतिथि गई है। नरेन्द्र, राखाल, बाबूराम, भवनाथ, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र, विनोद, हाजरा, रामलाल, राम, नित्यगोपाल, मणिमल्लिक, गिरीश, सींथी के महेन्द्र कविराज आदि अनेक भक्तों का समागम हुआ है। कीर्त्तन प्रातःकाल से हो रहा है। अब समय आठ का होगा। मास्टर ने आकर प्रणाम किया, ठाकुर ने इंगित करके निकट बैठने के लिए कहा।

कीर्त्तन सुनते-सुनते ठाकुर भावाविष्ट हो रहे हैं। श्रीकृष्ण को गोचारण के लिए आने में देर हो रही है। कोई राखाल (गोप) कह रहा है, माँ यशोदा आने नहीं दे रहीं। बलाई जिद करके कह रहे हैं, मैं सिंगा (तुरही) बजाकर कन्हाई को ले आऊँगा। बलाई का अगाध प्रेम है।

कीर्त्तनिया फिर और गा रहे हैं। श्रीकृष्ण बंसीध्वनि कर रहे हैं। गोपियाँ, गोप, बंसी का रव सुनते हैं; उनमें नाना भाव उदय हो रहे हैं।

ठाकुर बैठे हुए भक्तों के संग में कीर्त्तन सुन रहे हैं। हठात् नरेन्द्र की

ओर उनकी दृष्टि गई। नरेन्द्र पास ही बैठे थे, ठाकुर खड़े हुए ही समाधिस्थ हो गए। वे नरेन्द्र के घुटने पर एक पाँव स्पर्श करके खड़े हुए हैं।

ठाकुर प्रकृतिस्थ होकर फिर बैठ गए। नरेन्द्र सभा से उठकर चले गए। कीर्त्तन चल रहा है।

श्रीरामकृष्ण बाबूराम से आहिस्ते-आहिस्ते कह रहे हैं, ''कमरे में खीर है, नरेन्द्र को जाकर दे दो।''

ठाकुर क्या नरेन्द्र के भीतर साक्षात् नारायण-दर्शन कर रहे थे?

कीर्त्तन के अन्त में श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आ गए हैं और नरेन्द्र को आदर-प्यार करके मिठाई खिला रहे हैं।

गिरीश का विश्वास है कि ईश्वर श्रीरामकृष्ण के रूप में अवतीर्ण हुए हैं।

गिरीश *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— आपके सब कार्य श्रीकृष्ण के जैसे हैं। श्रीकृष्ण जैसे यशोदा के पास नखरे किया करते थे।

श्रीरामकृष्ण— हाँ, श्रीकृष्ण अवतार जो थे। नर-लीला में इसी प्रकार होता है। इधर गोवर्धन पहाड़ उठाया था; और नन्द को दिखा रहे हैं, पीढ़ा उठाकर ले जाने में कष्ट हो रहा है!

गिरीश— समझता हूँ, आपको अब समझ गया हूँ।

(जन्मोत्सव में नव वस्त्र परिधान, भक्तगणों द्वारा की गई सेवा और समाधि)

ठाकुर छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। समय ग्यारह का होगा। राम आदि भक्तगण ठाकुर को नव वस्त्र पहनाएँगे। ठाकुर कह रहे हैं— ''नहीं, नहीं।'' एक अंग्रेज़ी पढ़े हुए व्यक्ति को दिखलाकर कह रहे हैं, ''ये क्या कहेंगे!'' भक्तों के अनेक जिद्द करने पर ठाकुर कह रहे हैं— ''तुम लोग कहते हो तो पहन लेता हूँ।''

भक्त उसी कमरे में ही ठाकुर के अन्न आदि आहार का आयोजन कर रहे हैं।

ठाकुर नरेन्द्र को एक-आध गाना गाने के लिए कह रहे हैं। नरेन्द्र

गा रहे हैं—

निबिड़ आँधारे मा तोर चमके ओ रूपराशि।
ताई योगी ध्यान धरे होये गिरि गुहावाशी॥
अनन्त आँधार कोले, महानिर्वाण हिल्लोले।
चिरशान्ति परिमल अविरल जाय भासि॥
महाकाल रूप धरि, आँधार बसन परि।
समाधि मन्दिरे ओ मा के, तुमि गो एका बोसि॥
अभय पद कमले प्रेमेर बिजली ज्वले।
चिन्मय मुखमण्डले शोभे अट्ट अट्टहासि॥

[भावार्थ— हे माँ, घने अन्धकार में तेरी यह रूपराशि चमक रही है। इसीलिए तो योगी ध्यान करने के लिए गिरि-गुहावासी हुए हैं। अनन्त अन्धकार की गोद में, महानिर्वाण हिलोरे ले रहा है। चिरशान्ति का परिमल निरन्तर बह रहा है। महाकाल का रूप धारण करके, अन्धकार का वस्त्र पहनकर हे माँ, तुम कौन हो जो समाधि-मन्दिर में अकेली बैठी हुई हो। तुम्हारे अभय पदकमलों में प्रेम की बिजली जल रही है, चिन्मय मुखमण्डल पर अट्टहास शोभा दे रहा है।]

नरेन्द्र ने ज्योंहि गाया, 'समाधिमन्दिरे ओ मा के तुमि गो एकाबोसि!' (समाधि-मन्दिर में ओ माँ, तुम अकेली कौन हो जो बैठी हुई हो!) झट ठाकुर बाह्यशून्य, समाधिस्थ हो गए। काफी देर बाद समाधि भंग होने पर भक्तों ने ठाकुर को आहार के लिए आसन पर बिठाया। अभी भी भाव का आवेश है। भात खा रहे हैं किन्तु दोनों हाथों से। भवनाथ से कह रहे हैं, "तू खिला दे।" भाव का आवेश बाकी है तभी अपने हाथ से नहीं खा पा रहे। भवनाथ उन्हें खिला रहे हैं।

ठाकुर ने सामान्य आहार किया। आहार के अन्त में राम बोले, 'नित्यगोपाल इस पत्तल में खाएगा।'

श्रीरामकृष्ण— पत्तल में? पत्तल में क्यों?

राम— यह फिर आप कह रहे हैं! आपकी पत्तल में नहीं खाएगा?

नित्यगोपाल को भावाविष्ट देखकर ठाकुर ने उसको दो-एक ग्रास खिला दिए।

कोन्नगर के भक्तगण नौका करके अब आए हैं। उन्होंने कीर्त्तन करते-करते कमरे में प्रवेश किया। कीर्त्तन के अन्त में वे लोग जलपान करने के लिए बाहर गए। नरोत्तम कीर्त्तनिया ठाकुर के कमरे में बैठे हुए हैं। ठाकुर नरोत्तम आदि से कह रहे हैं—

''इनका तो जैसे डोंगा धकेलने वाला गाना है। गाना ऐसा होगा कि सब नाचने लगेंगे!''

''ऐसे गाने गाने चाहिएँ—

नदे टलमल टलमल करे, गौर प्रेमेर हिल्लोले रे।

[गौर के प्रेम की हिल्लोल से रे भाई, नदिया ग्राम टलमल-टलमल करता (डोलता) है।]

(नरोत्तम के प्रति)— ''उसके संग यह भी कहना चाहिए—

जादेर हरि बोलते नयन झरे, तारा, तारा दुभाई एसेछे रे।
जारा मार खेये प्रेम याचे, तारा तारा, दु'भाई एसेछे रे।
जारा आपनि केंदे जगत् काँदाय, तारा, तारा दु'भाई एसेछे रे।
जारा आपनि मेते जगत्माताय, तारा तारा दु'भाई एसेछे रे।
जारा आचाण्डाले कोल देय, तारा, तारा दु'भाई एसेछे रे॥

[भावार्थ— जिनके हरि कहते-कहते दोनों नयन झरते हैं, वे दो भाई आए हैं रे। जो मार खाकर भी प्रेम माँगते हैं, जो स्वयं रोकर जगत को रुलाते हैं, जो स्वयं मतवाले होकर जगत को मतवाला बनाते हैं और जो चाण्डाल तक को गोद में बिठाते हैं, वे दोनों भाई आए हैं रे!]

और यह भी गाना चाहिए—

गौर निताई तोमरा दु'भाई, परम दयाल हे प्रभु!
आमि ताइ शुने एसेछि हे नाथ;
तोमरा नाकि आचाण्डाले दाओ कोल,
कोले दिये बोलते बोलो हरिबोल।

[भावार्थ— गौर-निताई, तुम दोनों भाई हे प्रभु! परम दयालु हो; हे नाथ मैं वही सुनकर आया हूँ। तुम चाण्डाल तक को गोद में बिठाते हो और गोद में बिठाकर 'हरि-बोल' बुलवाते हो।]

द्वितीय परिच्छेद

(जन्मोत्सव में भक्तों के साथ सम्भाषण)

अब भक्त प्रसाद पा रहे हैं। चिड़वा, मिठाई आदि कई प्रकार का प्रसाद पाकर वे लोग तृप्त हो गए हैं। ठाकुर मास्टर से कह रहे हैं—
''मुखर्जियों को नहीं कहा? सुरेन्द्र से कहो, बाउलों के खाने के लिए कहने को।''

श्रीयुक्त विपिन सरकार आए हैं। भक्त ने कहा, ''इनका नाम विपिन सरकार है।'' ठाकुर उठकर बैठ गए और विनीत भाव में कहा, ''इन्हें आसन दो और पान दो।'' उनसे कह रहे हैं, ''आपके संग बातें नहीं कर पाया; भीड़ बहुत है!''

गिरीन्द्र को देखकर ठाकुर ने बाबूराम से कहा, ''इन्हें एक आसन दो।'' नित्यगोपाल धरती पर बैठे थे, देखकर ठाकुर बोले, ''इसको भी एक आसन दो।''

सींथी के महेन्द्र कविराज आए हैं। ठाकुर सहास्य राखाल को इंगित कर रहे हैं, ''हाथ दिखला दे।''

श्रीयुक्त रामलाल से कह रहे हैं, ''गिरीश घोष के साथ मित्रता कर ले तो फिर थियेटर देख सकेगा।'' *(हास्य)*।

नरेन्द्र हाजरा महाशय के संग बाहर के बरामदे में बड़ी देर तक बातें करते रहे थे। नरेन्द्र के पिता के जाने के बाद घर में बड़ा कष्ट हो गया है। अब नरेन्द्र कमरे में आकर बैठ गए।

(नरेन्द्र के प्रति ठाकुर के नाना उपदेश)

श्रीरामकृष्ण *(नरेन्द्र के प्रति)*— तू क्या हाजरा के पास बैठा था? तू विदेशिनी, वह विरहिणी! हाजरा को डेढ़ हजार रुपये की जरूरत है। *(हास्य)*।

''हाजरा कहता है, 'नरेन्द्र का सोलह आना सत्त्वगुण हो गया है, थोड़ा-सा कुछ लाल रजोगुण है! मेरा विशुद्ध सत्त्व, सत्रह आना है'।'' *(सब का हास्य)*।

''मैं जब कहता हूँ 'तुम केवल विचार करते हो, जभी शुष्क हो।' वह कहता है, 'मैं सौर-सुधा पान करता हूँ, इसलिए शुष्क हूँ।'

''मैं जब शुद्धा भक्ति की बात कहता हूँ, जब कहता हूँ शुद्ध भक्त रुपया-पैसा, ऐश्वर्य कुछ नहीं माँगता; तब वह कहता है— 'उनकी कृपा-बाढ़ के आने पर नदी तो उछल पड़ेगी ही, फिर नहर-गढ़ी भी जल से पूर्ण हो जाएँगी। शुद्धा भक्ति भी होती है, और फिर षडैश्वर्य भी होता है। रुपया-पैसा भी होता है'।''

ठाकुर के कमरे में फर्श पर नरेन्द्रादि अनेक भक्त बैठे हुए हैं; गिरीश भी आकर बैठ गए।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश के प्रति)*— मैं नरेन्द्र को आत्मा का स्वरूप समझता हूँ; और मैं उसका अनुगत हूँ।

गिरीश— आप फिर किसके अनुगत नहीं हैं!

(नरेन्द्र का अखण्ड का घर)

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— उसका मद्दे भाव (पुरुष का भाव) है और मेरा मेदी भाव (प्रकृति भाव) है। नरेन्द्र का ऊँचा घर है— अखण्ड का घर।

गिरीश बाहर तम्बाकू पीने गए।

नरेन्द्र *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— गिरीश घोष के साथ बातचीत हुई, खूब बड़ा व्यक्ति है। आपकी बातें हुई थीं।

श्रीरामकृष्ण— क्या बातें?

नरेन्द्र— आप लिखना-पढ़ना नहीं जानते, हम सब विद्वान् हैं, ऐसी ही बातें हो रही थीं। *(हास्य)*।

(श्रीरामकृष्ण और नरेन्द्र— पाण्डित्य और शास्त्र)

मणिमल्लिक *(ठाकु के प्रति)*— आप तो बिना पढ़े पण्डित हैं।

श्रीरामकृष्ण (*नरेन्द्र आदि के प्रति)*— सच कहता हूँ, मैंने वेदान्त आदि शास्त्र नहीं पढ़े; इस कारण मुझे तनिक-सा भी दु:ख नहीं होता। मैं जानता हूँ, वेदान्त का सार है— ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या। और फिर गीता का सार क्या है ?— गीता दस बार कहने से जो होता है; त्यागी, त्यागी।

"शास्त्र का सार गुरुमुख से जान लेना चाहिए। उसके बाद साधन-भजन। किसी ने चिट्ठी लिखी थी। पत्र बिना पढ़े ही खो गया। तब सब मिलकर खोजने लगे। जब चिट्ठी मिल गई, पढ़कर देखा पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेजने को लिखा था। तब चिट्ठी रख दी और पाँच सेर सन्देश और धोती जुटाने में लग गए। इसी प्रकार शास्त्र का सार जानकर फिर और पुस्तक पढ़ने की क्या जरूरत ? अब साधन-भजन करना*।"

अब गिरीश कमरे में आए।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश के प्रति)*— हाँ जी, तुम लोग मेरी क्या बातें कर रहे थे! मैं तो खाता-पीता रहता हूँ।

गिरीश— आपकी बात क्या कहेंगे हम ? आप क्या साधु हैं ?

श्रीरामकृष्ण— साधु-वाधु नहीं हूँ। मुझे तो सचमुच ही साधुबोध नहीं है।

गिरीश— हँसी-मजाक में भी आपके साथ पार न पा सका।

श्रीरामकृष्ण— मैं लाल किनार की धोती पहनकर जयगोपाल सेन के बागान में गया था। केशवसेन वहाँ पर था। केशव लाल किनार की मेरी धोती देखकर बोला, 'आज तो बड़े रंग हैं, लाल किनार की बहार है।' मैंने कहा, 'केशव के मन को भुलाना होगा, तभी बहार बनाकर आया हूँ।'

अब फिर नरेन्द्र का गाना होगा। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से तानपूरा उतार देने के लिए कहा। नरेन्द्र बड़ी देर तक उस तानपूरे को बाँध रहे हैं। ठाकुर और सब अधीर हो गए हैं।

---

* तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मण:।
नानुध्यायाद् बहूंश्छब्दान् वाचो विग्लापनं हि तत्। (बृहदारण्यकोपनिषद्— 4, 4, 21)

विनोद कह रहे हैं, बाँधना आज होगा, गाना फिर एक दिन होगा। *(सब का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण हँसते हैं और कहते हैं—

''ऐसी इच्छा हो रही है कि यह तानपूरा तोड़ डालूँ। क्या 'टंग-टंग' हो रहा है— और फिर 'ताना नाना नेरे नूम्' होगा।''

भवनाथ— यात्रा (गीतिनाटक) के आरम्भ में ऐसी ही विरक्ति (परेशानी) होती है।

नरेन्द्र *(बाँधते-बाँधते)*— न समझने पर वही होता है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— यह लो, हम सब को ही उड़ा दिया।

(नरेन्द्र का गान और श्रीरामकृष्ण का भावावेश— अन्तर्मुख और बहिर्मुख— स्थिर जल और तरंग)

नरेन्द्र गाना गा रहे हैं। ठाकुर छोटी खाट पर बैठे सुन रहे हैं। नित्यगोपाल आदि भक्तगण फर्श पर बैठे हुए सुन रहे हैं।

1. अन्तरे जागिछो ओ मा अन्तर यामिनी,
कोले करे आछो मोरे दिवस यामिनी;

[ओ माँ, तुम अन्तर्यामिनी सर्वदा मेरे अन्तर में जाग रही हो। रात-दिन तुम मुझे गोद में लिए हुए हो।]

2. गाओ रे आनन्दमयीर नाम,
ओ रे आमार एकतन्त्री प्राणेर आराम।

[अरे भाई! आनन्दमयी का नाम गाओ, वह एकतन्त्री मेरे प्राणों को आराम देती है।]

3. निबिड़ आँधारे मा तोर चमके ओ रूपराशि।
ताई योगी ध्यान धरे होये गिरि गुहावासी॥*

[ओ माँ! घने अंधकार में तुम्हारी रूपराशि चमकती है। तभी तो योगी ध्यान लगाने के लिए पहाड़ों की कन्दराओं में रहते हैं।]

---

* पूरा गाना पृष्ठ 203 पर है।

ठाकुर भावाविष्ट होकर नीचे उतर आए हैं और नरेन्द्र के पास बैठ गए हैं। वे भावाविष्ट हुए बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— गाना गाऊँ? थु थु! *(नित्यगोपाल के प्रति)*— तू क्या कहता है कि उद्दीपन के लिए सुनना चाहिए; उसके पश्चात् क्या हुआ और क्या गया।

"आग लगा दी; वह तो अच्छा हुआ! फिर चुप। ठीक तो है, मैं भी चुप किए हुए हूँ, तू भी चुप रह।

"आनन्दरस में मग्न हो जाने से मतलब।

"गाना गाऊँ? अच्छा, गाया भी जा सकता है। जल स्थिर रहे तो भी जल है और हिलने-डुलने पर भी जल है।"

(नरेन्द्र को शिक्षा— "ज्ञान-अज्ञान के पार हो जाओ")

नरेन्द्र पास बैठे हुए हैं। उनके घर में कष्ट है, उसी के लिए वे सर्वदा चिन्तित रहते हैं। उनका साधारण ब्राह्मसमाज में यातायात था। अब भी सर्वदा ज्ञान-विचार करते हैं, वेदान्त आदि ग्रन्थ पढ़ने की खूब इच्छा है, अब आयु 23 वर्ष होगी। ठाकुर नरेन्द्र को एक दृष्टि से देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य, नरेन्द्र के प्रति)*— तू तो 'ख' (आकाशवत्) है; किन्तु यदि टेक्सो (Tax अर्थात् घर की चिन्ता) न रहती। *(सब का हास्य)*।

"कृष्णकिशोर कहता था— मैं 'ख' हूँ। एक दिन उसके घर में जाकर देखता हूँ, वह चिन्तित है; अधिक बात नहीं करता। मैंने पूछा क्या हुआ भाई, ऐसे क्यों बैठे हुए हो? वह बोला, 'टैक्सवाला आया था; वह कह गया है कि यदि रुपया न दिया तो लोटा-कटोरी सब नीलाम करके ले जाएगा; इसीलिए मुझे चिन्ता है।' मैंने हँसते-हँसते कहा था— वैसी क्या बात है जी, तुम तो 'ख'— आकाशवत् हो। ले जाता है तो साला ले जाए लोटा-कटोरी, तुम्हारा क्या?

"इसीलिए तुझ से कहता हूँ, तू तो 'ख' है— इतना क्यों सोचता है? जानता नहीं कि श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, अष्टसिद्धियों में से एक भी सिद्धि रहने पर कुछ शक्ति हो सकती है, किन्तु मुझे नहीं पाओगे। सिद्धि के द्वारा अधिक शक्ति, बल, रुपया इत्यादि तो हो सकता है, किन्तु ईश्वर-लाभ नहीं होता।

"और एक विशेष बात है— ज्ञान-अज्ञान के पार हो जाओ। बहुत लोग कहते हैं अमुक बड़ा ज्ञानी है, वस्तुत: वैसी बात नहीं होती। वशिष्ठ इतने बड़े ज्ञानी, पुत्र-शोक में अस्थिर हो गए थे; तब लक्ष्मण बोले, 'राम, यह कैसा आश्चर्य है! ये इतने शोकार्त हैं!' राम ने कहा— 'भाई, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है; जिसे रोशनी का बोध है, उसे अन्धकार-बोध भी है; जिसे भला-बोध है, उसे मन्द-बोध भी है; जिसे सुख-बोध है, उसे दु:ख-बोध भी है। भाई, तुम दोनों के पार जाओ, सुख-दु:ख के पार जाओ, ज्ञान-अज्ञान के पार जाओ।' इसीलिए तुम्हें कहता हूँ, ज्ञान-अज्ञान के पार हो जाओ।"

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ— सुरेन्द्र के प्रति उपदेश— गृहस्थ और दान-धर्म— मनोयोग और कर्मयोग)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण फिर छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। भक्तगण अब भी फर्श पर बैठे हुए हैं। सुरेन्द्र उनके निकट बैठे हैं। ठाकुर उनकी ओर सस्नेह दृष्टिपात कर रहे हैं और बातों ही बातों में उन्हें नाना उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सुरेन्द्र के प्रति)*— बीच-बीच में आओ। न्याँग्टा (तोतापुरी) कहा करता था, लोटा रोज माँजना चाहिए; नहीं तो उस पर दाग लग जाएगा। साधु-संग सर्वदा ही प्रयोजनीय है। "संन्यासी के लिए कामिनी-काञ्चन त्याग है; तुम लोगों के लिए वह नहीं। तुम लोग बीच-बीच में निर्जन में जाओगे और उन्हें व्याकुल होकर पुकारोगे। तुम लोग मन से त्याग करोगे।

"वीर भक्त बिना हुए दोनों दिशाएँ रख नहीं सकता; राजा जनक साधन-भजन के बाद सिद्ध होकर गृहस्थ/संसार में थे। वे दो तलवारें घुमाते थे; ज्ञान की और कर्म की।

यह कहकर ठाकुर गाना गा रहे हैं—

एई संसार मजार कुटि।
आमि खाई दाई आर मजा लुटि॥

जनक राजा महातेजा तार वा किसे छिलो त्रुटि।
से जे एदिक ओदिक दुदिक रेखे खेयेछिलो दुधेर बाटि॥

[भावार्थ— यह संसार आनन्द की कुटिया है। मैं खाता-पीता हूँ और मौज करता हूँ। राजा जनक महातेजस्वी थे, उन्हें कोई कमी नहीं थी। वे इधर-उधर, दोनों ओर रखकर दूध का कटोरा पीते थे।]

"तुम लोगों के लिए चैतन्यदेव ने जो कहा था वही है, जीव पर दया, भक्त-सेवा और नाम-संकीर्त्तन।

"तुम्हें क्यों कहता हूँ? तुम्हारा हाऊस का (House, सौदागरी के घर का) कार्य है; और भी बहुत-से कार्य करने पड़ते हैं। इसीलिए कहता हूँ।

"तुम ऑफिस में मिथ्यावाणी कहते हो तो भी तुम्हारी चीज़ क्यों खा लेता हूँ? तुम्हारा दान-ध्यान जो है; तुम्हारी जो आय (आमदनी) है, उससे अधिक दान करते हो; बारह हाथ ककड़ी का तेरह हाथ बीज!

"कृपण की वस्तु नहीं खाता। उनका धन इन कई तरीकों से उड़ जाता है, प्रथम— मुकदमों में; दूसरा— चोर-डाकुओं में; तीसरा— डॉक्टर के खर्चे में; चौथा— और फिर बदचलन बेटे वह सब रुपया उड़ा देते हैं; ऐसे ही सब तरह से जाता है।

"तुम जो दान-ध्यान करते हो, खूब भला है। जिनके पास रुपया है, उन्हें दान करना उचित है। कृपण का धन उड़ जाता है, दाता के धन की रक्षा होती है, सत्कार्य में जाता है। उस देश में (ग्राम में) किसान गढ़ा काटकर खेत में जल लाते हैं। कभी-कभी जल का इतना जोर होता है कि खेत की मेंड़ तोड़कर जल बाहर निकल जाता है और फसल नष्ट हो जाती है। इसीलिए किसान मेंड़ के बीच-बीच में छेद करके रखते हैं, उन्हें घोग[1] (मुख) कहते हैं। घोग द्वारा जल थोड़ा-थोड़ा करके निकल जाता है, तब जल के जोर से मेंड़ नहीं टूटती और खेत के ऊपर पलि[2] पड़ जाती है। उस पलि से खेत उर्वरा (उपजाऊ) हो जाता है; और खूब फसल होती है। जो दान-ध्यान करता है,

1 घोग = कुत्ते की जाति के एक जंगली जानवर के मुख जैसा।

2 पलि = बाढ़ के बाद खेतों में जमी हुई मिट्टी की परत।

वह अनेक फल प्राप्त करता है; चारों प्रकार के फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)।''

सब भक्त ठाकुर के श्रीमुख से यह दान-धर्म की बात एक मन से सुन रहे हैं।

सुरेन्द्र— मेरा ध्यान अच्छा नहीं होता। बीच-बीच में 'माँ-माँ' कहता हूँ; और सोने के समय 'माँ-माँ' कहते-कहते सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण— ऐसा होने से ही हुआ। स्मरण-मनन तो है।

''मनोयोग और कर्मयोग। पूजा, तीर्थ, जीव-सेवा इत्यादि गुरु के उपदेश से कर्म करने का नाम कर्मयोग है। जनक आदि जो कर्म किया करते थे उसका नाम भी कर्मयोग है। योगीजन जो स्मरण-मनन करते हैं उसका नाम है मनोयोग।

''और फिर काली-मन्दिर में जाकर सोचता हूँ माँ, मन भी तो तुम हो! जभी तो शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि, बुद्ध आत्मा एक ही वस्तु है।''

सन्ध्या प्राय: हो गई है; अनेक भक्त प्रणाम करके घर वापिस जा रहे हैं।

ठाकुर पश्चिम के बरामदे में गए हैं; भवनाथ और मास्टर संग में हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भवनाथ के प्रति)*— तू इतनी देर-देर में क्यों आता है?

भवनाथ *(सहास्य)*— जी, पन्द्रह दिनों के अन्तर से मिलता हूँ; उस दिन आप स्वयं रास्ते में मिल गए थे, तभी फिर नहीं आया।

श्रीरामकृष्ण— वह कैसी बात रे? केवल दर्शन से क्या होता है? स्पर्शन, आलाप यह सब भी तो चाहिए।

चतुर्थ परिच्छेद

(जन्मोत्सव की रात में गिरीशादि भक्तों के संग प्रेमानन्द में)

सन्ध्या हो गई। क्रमश: देवताओं की आरती का शब्द सुनाई दे रहा है। आज फाल्गुन की शुक्लाष्टमी है, 6-7 दिन बाद पूर्णिमा को दोल-महोत्सव* होगा।

---

* दोल-पूर्णिमा = होली का महोत्सव।

सन्ध्या हो गई है। ठाकुरबाड़ी के मन्दिर-शीर्ष, प्रांगण, उद्यान, भूमि, वृक्ष-शीर्ष ने चन्द्र-आलोक में मनोहर रूप धारण किया है। गंगा इस समय उत्तरवाहिनी, ज्योत्स्नामयी, मन्दिर के निकट से मानो आनन्द में उत्तरमुखी होकर प्रवाहित हो रही हैं। ठाकुर श्रीरामकृष्ण अपने कमरे की छोटी खाट पर बैठकर चुपचाप जगन्माता का चिन्तन कर रहे हैं।

उत्सव के बाद अब भी दो-एक भक्त हैं। नरेन्द्र पहले ही चले गए थे।

आरती हो गई। ठाकुर आविष्ट (भावविभोर) होकर दक्षिणपूर्व के लम्बे बरामदे में पादचारण कर रहे हैं (टहल रहे हैं)। मास्टर भी वहाँ पर खड़े हुए हैं और ठाकुर का दर्शन कर रहे हैं। ठाकुर हठात् मास्टर को सम्बोधन करके कह रहे हैं, "आहा, नरेन्द्र का कैसा गाना!"

[तन्त्र में महाकाली का ध्यान— गम्भीर मायने (अर्थ)]

मास्टर— जी, 'निबिड़ आँधारे' वही गाना तो?

श्रीरामकृष्ण— हाँ, उस गाने के खूब गम्भीर मायने हैं। मेरे मन को जैसे अब भी खींच रखा है।

मास्टर— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— अन्धेरे में ध्यान, यही तो है तन्त्र का मत। तब सूर्य का प्रकाश कहाँ?

श्रीयुक्त गिरीश घोष आकर खड़े हो गए; ठाकुर गाना गा रहे हैं—

मा कि आमार कालो रे!
कालरूप दिगम्बरी हृदिपद्म करे आलो रे।

[मेरी माँ क्या काली हैं भाई! कालरूपिणी दिगम्बरी हृदय-कमल को प्रकाशित कर रही है।]

ठाकुर मतवाले होकर खड़े-खड़े ही गिरीश की देह पर हाथ रखे हुए गा रहे हैं—

गया गंगा प्रभासादि काशी कांची केबा चाय—
काली काली काली बोले आमार अजपा यदि फुराय।

त्रिसन्ध्या जे बोले काली, पूजा सन्ध्या से कि चाय,
सन्ध्या तार सन्धाने फेरे कभु सन्धि नहीं पाय॥
दया व्रत दान आदि, आर किछु ना मने लय,
मदनेरइ जागयज्ञ ब्रह्ममयीर रांगा पाय॥
कालीनामेर एतो गुण केबा जानते पारे ताय,
देवादिदेव महादेव जाँर पञ्चमुखे गुण गाय॥

[भावार्थ—मेरा श्वास यदि काली-काली कहते हुए समाप्त हो जाता है तो फिर गया, गंगा, प्रभास आदि कौन माँगता है? जो तीन सन्ध्याओं के समय 'काली' कहता है, वह फिर सन्ध्या-पूजा नहीं चाहता। सन्ध्या भी उसकी खोज में मारी-मारी फिरती रहती है किन्तु कभी भी सन्धि (मेल) नहीं पाती। तब वह मनुष्य पूजा, हवन, जप, यज्ञ किसी की भी मन में इच्छा नहीं करता। मदन (कवि) का याग-यज्ञ तो ये ब्रह्ममयी के लाल (आनन्दमय) चरण हैं। माँ काली के नाम के इतने गुण हैं कि कोई उन्हें जान नहीं पाता। देवादिदेव महादेव स्वयं अपने मुख से जिनके गुण गाते रहते हैं।]

गान— एबार आमि भालो भेबेछि
भालो भाबीर काछे भाब शिखेछि।
जे देशे रजनी नाइ मा सेइ देशेर एक लोक पेयेछि,
आमि किबा दिबा किबा सन्ध्या सन्ध्यारे बन्ध्या करेछि।
नूपुरे मिशाये ताल सेइ तालेर एक गीत शिखेछि,
ताधिम ताधिम बाजछे से ताल निमिरे ओस्ताद करेछि।
घूम भेंगेछे आर कि घुमाइ, योगे यागे जेगे आछि,
योग निद्रा तोरे दिए मा घुमेरे घुम पाड़ायेछि।
प्रसाद बोले भक्ति मुक्ति उभये माथाय रेखेछि,
आमि काली ब्रह्म जेने मर्म धर्माधर्म सब छेड़िछि।

[भावार्थ— अब की बार मैंने ठीक सोच लिया है। एक अच्छा सोचने वाले से मैंने सोचने का ढंग सीख लिया है। मुझे उस देश का कोई जन मिल गया है जहाँ रात नहीं है। दिन हो या शाम, मैंने सन्ध्या को भी बन्ध्या कर दिया है। मैंने नूपुर में ताल मिलाकर उस ताल का एक गाना सीखा है, वह ताल 'ताधिम, ताधिम' बज रहा है। मेरी निद्रा टूट गई है। अब और क्या सोऊँ? योग के यज्ञ में जगा हुआ हूँ। तुम्हारे द्वारा प्रदत्त योग-निद्रा पाकर, निद्रा को सुला दिया

है। रामप्रसाद कहते हैं भक्ति-मुक्ति दोनों को मैंने मस्तक पर रख रखा है। मैंने काली और ब्रह्म का मर्म जान कर धर्म-अधर्म सब छोड़ दिया है।]

गिरीश को देखते-देखते मानो ठाकुर का भावोल्लास और भी बढ़ गया है। वे खड़े-खड़े फिर और गा रहे हैं—

अभय पदे प्राण सँपेछि।
आमि आर कि यमेर भय रेखेछि॥
काली नाम महामन्त्र आत्मशिरशिखाय बँधेछि।
(आमि) देह बेचे भवेर हाटे, श्रीदुर्गानाम किने एनेछि॥
काली नाम कल्पतरु, हृदये रोपण कोरेछि।
एबार शमन एले हृदय खुले देखाबो ताइ बोसे आछि॥
देहेर मध्ये छ'जन कुजन, तादेर घरे दूर कोरेछि।
रामप्रसाद बोले दुर्गा बोले यात्रा कोरे बोसे आछि॥

[भावार्थ— मैंने अभय चरणों में प्राण सौंप दिया है। अब क्या मुझे यम का भय है? कालीनाम महामन्त्र अपने सिर की शिखा (चोटी) में बाँध लिया है। (मैं) देह को भव की हाट में बेचकर दुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ। कालीनाम-कल्पतरु मैंने हृदय में रोपण कर लिया है। अब यम के आने पर हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसीलिए बैठा हुआ हूँ। देह के बीच जो छः कुजन (बुरे जन) हैं, उन्हें घर से दूर कर दिया है। रामप्रसाद कहते हैं, दुर्गा-नाम लेकर जीने को तैयार हुआ हूँ।]

ठाकुर भाव में मस्त होकर फिर और गा रहे हैं—

'आमि देह बेचे भबेर हाटे श्रीदुर्गा नाम किने एनेछि।'

[मैं भव की हाट में देह को बेचकर श्रीदुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ।]

(गिरीश आदि के प्रति)— "भावेते भरल तनु हरल गे ज्ञान।

[भाव में शरीर भर गया है और देह-ज्ञान (होश) खो गया है।]

"उस ज्ञान का अर्थ है ब्रह्मज्ञान (होश)। तत्त्व-ज्ञान, ब्रह्म-ज्ञान, यह सब चाहिए।"

(श्रीरामकृष्ण क्या अवतार हैं ?— परमहंस-अवस्था)

''भक्ति ही सार है। सकाम भक्ति भी है; और फिर निष्काम भक्ति, शुद्धा भक्ति, अहेतुकी भक्ति, यह भी है। केशवसेन आदि अहेतुकी भक्ति को नहीं जानते थे; कोई कामना नहीं है, केवल ईश्वर के पादपद्मों में भक्ति है।

''और फिर है, ऊर्जिता भक्ति। भक्ति मानो उथली पड़ रही है। 'भाव में हँसता-रोता-नाचता-गाता है।' जैसे चैतन्यदेव की थी। राम ने लक्ष्मण से कहा, भाई, जहाँ पर ऊर्जिता भक्ति देखोगे, वहाँ पर समझना मैं स्वयं वर्तमान हूँ।''*

ठाकुर क्या अपनी अवस्था इंगित कर रहे हैं ? ठाकुर क्या चैतन्यदेव की न्यायीं अवतार हैं ? जीव को भक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए हैं ?

गिरीश— आपकी कृपा होने से ही सब होता है। मैं क्या था, क्या हो गया हूँ!

श्रीरामकृष्ण— अजी, तुम्हारा संस्कार था, तभी हुआ। समय बिना हुए नहीं होता। जब रोग ठीक होने को आया, तब कविराज वैद्य कहता है, यह पत्ता मिर्च (काली) में पीसकर खा लो। उसके बाद रोग चंगा हो गया। उस काली मिर्च वाली औषध से चंगा हुआ कि अपने आप चंगा हो गया, कौन बतलाएगा ?

''लक्ष्मण ने लवकुश से कहा, तुम लोग बालक हो; तुम रामचन्द्र को नहीं जानते। उनके पादस्पर्श से पत्थर की अहल्या मानवी हो गई थी। लवकुश बोले, जी महाराज! हम सब जानते हैं, सब सुना है। पाषाणी जो मानवी हुई थी, वह मुनिवाक्य था। गौतम मुनि ने कहा था कि त्रेतायुग में रामचन्द्र इसी आश्रम के पास से जाएँगे; उनके पादस्पर्श से तुम दोबारा मानवी हो जाओगी। अब यह कौन बताएगा कि राम के गुण से हुआ या मुनिवाक्य से ऐसा हुआ।

''सब ही ईश्वर की इच्छा से होता है। यहाँ पर यदि तुम्हें चैतन्य होता है तो मुझको हेतुमात्र समझोगे। चँदा मामा सब का मामा। ईश्वर की इच्छा से

---

* श्रद्धालुरत्युर्जित भक्तिलक्षणो
यस्तस्य दृश्योऽहमहर्निशं हृदि॥ (अध्यात्मरामायण, रामगीता)

सब हो रहा है।''

गिरीश *(सहास्य)*— ईश्वर की इच्छा से ही तो। मैं भी तो वही कह रहा हूँ! *(सब का हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश के प्रति)*— सरल होने पर शीघ्र ईश्वर-लाभ होता है। इन कई जनों को ज्ञान नहीं होता। प्रथम जिसका मन टेढ़ा होता है, सरल नहीं होता; दूसरे— जिसको शुचिबाई है (शुद्धता का वहम) (hysterical mania for cleanliness and sanctity); तीसरा— जो संशयात्मा है।

ठाकुर नित्यगोपाल की भावावस्था की प्रशंसा कर रहे हैं।

अब भी तीन-चार भक्त उसी दक्षिणपूर्व वाले लम्बे बरामदे में ठाकुर के पास खड़े हुए हैं और समस्त सुन रहे हैं। ठाकुर परमहंस की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं। कह रहे हैं—

''परमहंस को सर्वदा यह बोध रहता है कि ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य है। हंस की ही शक्ति होती है, दूध को जल से अलग करना। दूध में यदि जल मिला हुआ रहे तो उसकी जिह्वा में एक प्रकार का खट्टा रस होता है उसी रस के द्वारा दूध अलग और जल अलग हो जाता है। परमहंस के मुख में भी वही खट्टा रस है, प्रेमाभक्ति। प्रेमाभक्ति के रहने पर ही नित्य-अनित्य-विवेक होता है। ईश्वर की अनुभूति होती है, ईश्वर-दर्शन होता है।''

सप्तदश खण्ड

गिरीश के घर ज्ञानभक्ति-समन्वय कथाप्रसंग में

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण गिरीशघोष के बसुपाड़ा वाले घर में भक्तों के संग में बैठे हुए ईश्वरीय बातचीत कर रहे हैं। समय, तीन बज गए हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। आज बुधवार है, 15वाँ फाल्गुन शुक्ला एकादशी— 25 फरवरी, 1885 ईसवी। पिछले रविवार को दक्षिणेश्वर-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण का जन्म-महोत्सव हो गया है। आज ठाकुर गिरीश के घर होकर स्टार थियेटर में वृषकेतु का अभिनय-दर्शन करने जाएँगे।

ठाकुर कुछ देर पहले ही आए हैं। काम समाप्त करके आने में मास्टर को कुछ देरी हो गई है। उन्होंने आकर देखा, ठाकुर उत्साह के साथ ब्रह्म-ज्ञान और भक्ति-तत्त्व के समन्वय की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश आदि भक्तों के प्रति)*— जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति— जीव की ये तीन अवस्थाएँ हैं।

"जो ज्ञान-विचार करते हैं, वे इन तीनों अवस्थाओं को ही उड़ा देते हैं। वे कहते हैं कि ब्रह्म तीनों अवस्थाओं से पार है; स्थूल, सूक्ष्म, कारण— तीनों देहों के पार है; सत्त्व, रज, तम तीनों गुणों के पार है; समस्त ही माया है, जैसे आइने में प्रतिबिम्ब पड़ता है; प्रतिबिम्ब कोई वस्तु नहीं है; ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु।*

---

* माण्डूक्य उपनिषद्।

"ब्रह्म-ज्ञानी और भी कहते हैं, देहात्म-बुद्धि रहने से ही दो दिखलाई देते हैं। प्रतिबिम्ब भी सत्य जैसा बोध होता है। उस बुद्धि के चले जाने पर सोऽहं 'मैं ही वह ब्रह्म हूँ', ऐसी अनुभूति होती है।"

एक जन भक्त— तो फिर क्या हम सब विचार करें?

(दो पथ और गिरीश— विचार और शक्ति— ज्ञानयोग और भक्तियोग)

श्रीरामकृष्ण— विचार-पथ भी है— वेदान्तवादियों का पथ। और एक पथ है— भक्ति-पथ। भक्त यदि व्याकुल होकर ब्रह्मज्ञान के लिए रोता है, तो वह भी उसे प्राप्त कर लेता है। ज्ञानयोग और भक्तियोग।

"दोनों पथों द्वारा ही ब्रह्म-ज्ञान हो सकता है। कोई-कोई ब्रह्म-ज्ञान के बाद भी भक्ति लेकर रहता है लोकशिक्षा के लिए; जैसे अवतार आदि।

"किन्तु देहात्म-बुद्धि, 'मैं'-बुद्धि सहज में नहीं जाती; उनकी कृपा से समाधिस्थ होने पर जाती है— निर्विकल्प समाधि, जड़समाधि।

"समाधि के बाद अवतार आदि का 'मैं' फिर लौट आता है— विद्या का मैं, भक्त का मैं। इसी 'विद्या के मैं' द्वारा लोकशिक्षा होती है। शंकराचार्य ने 'विद्या का मैं' रखा था।

"चैतन्यदेव इसी 'मैं' के द्वारा भक्ति-आस्वादन किया करते, भक्ति-भक्त लेकर रहते; ईश्वरीय बातें करते; नाम-संकीर्तन करते।

" 'मैं' तो सहज में नहीं जाता, इसलिए भक्त जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति आदि अवस्थाएँ उड़ा नहीं देता। भक्त सब अवस्थाएँ लेता है; सत्त्व, रज, तम, तीनों गुण भी लेता है; भक्त देखता है कि वे ही चौबीस तत्त्व होकर रह रहे हैं, जीव-जगत होकर रह रहे हैं; और फिर देखता है साकार चिन्मय रूप में वे दर्शन देते हैं।

"भक्त विद्या-माया को आश्रय करके रहता है। साधु-संग, तीर्थ, ज्ञान, वैराग्य— इन सब को आश्रय करके रहता है। वह कहता है 'मैं' यदि सहज ही नहीं जाता, तो रहे साला 'दास' होकर, 'भक्त' होकर।

"भक्त का भी एकाकार ज्ञान होता है; वह देखता है ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। 'स्वप्नवत्' नहीं कहता, किन्तु वह कहता है वे ही यह सब होकर रह रहे हैं; मोम के बाग में सब ही मोम, किन्तु नाना रूप।

"किन्तु पक्की भक्ति होने पर ऐसा बोध होता है! बहुत-सा पित्त जमने पर पीलिया होता है; तब देखता है कि सब ही पीला है। श्रीमती ने श्याम का चिन्तन करते-करते समस्त ही श्याममय देखा; और अपने आप का भी श्याम-बोध हुआ। पारे के तालाब में सीसा बहुत दिनों तक पड़ा रहे तो वह भी पारा हो जाता है। तेलचोरा (कोकरोच) झींगुर (beetle)को भावते-भावते (सोचते-सोचते) निश्चल हो जाता है। हिलता नहीं; अन्त में झींगुर ही हो जाता है। भक्त भी उनको भावते-भावते अहंशून्य हो जाता है। और फिर देखता है 'वे ही मैं हूँ' 'मैं ही वे हैं'।

"कोकरोच जब झींगुर हो जाता है, तब सब हो गया। तब ही मुक्ति है।"

(नाना भावों में पूजा और गिरीश— 'मेरा मातृभाव')

"जब तक उन्होंने इस 'मैं' को रखा हुआ है, तब तक एक ही भाव आश्रय करके उनको पुकारना चाहिए— शान्त, दास्य, वात्सल्य इत्यादि।

"मैं दासी-भाव में एक वर्ष तक था— ब्रह्ममयी की दासी। औरतों वाले कपड़े, ओढ़नी आदि सब पहनता था। और फिर नथ पहनता था! स्त्री के भाव में रहने से काम-जय हो जाता है।

"उसी आद्याशक्ति की पूजा करनी चाहिए; उन्हें प्रसन्न करना चाहिए। वे ही स्त्रियों का रूप धारण करके रह रही हैं। जभी तो मेरा मातृभाव है।

"मातृभाव अति शुद्ध भाव है। तन्त्र में वामाचार की बात भी है; किन्तु वह अच्छा नहीं है; उससे पतन होता है। भोग रखने से ही भय है।

"मातृभाव जैसे निर्जला एकादशी; किसी भी भोग की गन्ध नहीं। और है फलमूल खाकर एकादशी; और लुचि-छक्का (पूरी-तरकारी) खाकर एकादशी।

मेरी निर्जला एकादशी है; मैंने मातृ-भाव में षोडशी की पूजा की थी। देखा था स्तन मातृस्तन हैं, योनि मातृयोनि।

"यह मातृ-भाव— साधन की अन्तिम बात है— 'तुम माँ, मैं तुम्हारा पुत्र', यही शेष (अन्तिम) बात है।"

(संन्यासी का कठिन नियम— गृहस्थ का नियम और गिरीश)

"संन्यासी की निर्जला एकादशी; संन्यासी यदि भोग रखता है तो बस उसी से भय है। कामिनी-काञ्चन भोग है, जैसे थूक कर फिर चाटना। रुपया-पैसा, मान-यश, इन्द्रिय-सुख— ये सब भोग हैं। संन्यासी का भक्त-स्त्रियों के संग बैठना अथवा आलाप करना भी अच्छा नहीं— अपनी भी हानि और अन्य लोगों की भी हानि होती है। इससे अन्य लोगों की शिक्षा नहीं होती, लोकशिक्षा नहीं होती। संन्यासी का देह-धारण लोकशिक्षा के लिए होता है।

"स्त्रियों / लड़कियों के साथ बैठना या अधिक क्षण बातें करना, उसे भी रमण कहा है। रमण आठ प्रकार का है।* औरतों की बातें सुनता है, सुनते-सुनते आनन्द होता है; वह भी एक प्रकार का रमण है। औरतों की बातें कहता है (कीर्त्तनम्), यह भी एक प्रकार का रमण है; औरतों के साथ अकेले में धीरे-धीरे बातें करता है, और एक प्रकार का रमण है। औरतों की कोई वस्तु पास रख लेता है और आनन्द होता है, यह और एक प्रकार है। स्पर्श करना भी है एक प्रकार। इसीलिए तो गुरु-पत्नी युवती हो तो चरण-स्पर्श नहीं करना चाहिए; संन्यासियों के ऐसे सब नियम हैं।

"संसारियों की अलग बात है; दो-एक बच्चे हो जाने पर भाई-बहिन की भाँति रहेगा; उनके अन्य सात प्रकार के रमण में उतना दोष नहीं है।

"गृहस्थ के ऋण हैं— देव-ऋण, पितृ-ऋण, ऋषि-ऋण; और फिर स्त्री-ऋण भी है, एक-दो बच्चे होना और सती स्त्री हो तो प्रतिपालन करना।

"संसारी लोग समझ नहीं सकते कौनसी अच्छी स्त्री है, कौनसी मन्दी

---

* स्मरणं कीर्त्तनम् केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।
संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेव च। एतन्मैथुनमष्टांगम्।

स्त्री है; कौन विद्याशक्ति है, कौन अविद्याशक्ति। जो अच्छी स्त्री, विद्याशक्ति होती है, उसके काम-क्रोध इत्यादि कम होते हैं, निद्रा भी कम होती है, पति का सिर ढकेल देती है। जो विद्याशक्ति होती है उसमें स्नेह, दया, भक्ति, लज्जा इत्यादि होते हैं। वह सब की सेवा वात्सल्य भाव में करती है, और पति की जिस प्रकार भगवान में भक्ति हो उसकी सहायता करती है। अधिक खर्च नहीं करती, ताकि पति को पीछे कहीं अधिक मेहनत न करनी पड़े, और फिर ईश्वर-चिन्तन का अवसर न मिले।

"और फिर पुरुष (मर्दाना) स्त्रियों के भी और-और लक्षण होते हैं। खराब लक्षण हैं— टेढ़ी (टीरी) धँसी हुई आँखें, हड्डियाँ कंकाल जैसी, बिल्ली जैसी आँखें, बछड़े जैसे गाल।"

(समाधि-तत्त्व और गिरीश— ईश्वर-लाभ के उपाय— गिरीश का प्रश्न)

गिरीश— हमारे लिए क्या उपाय है?

श्रीरामकृष्ण— भक्ति ही सार है। और फिर भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज, भक्ति का तम है।

"भक्ति का सत्त्व दीनहीन भाव; भक्ति का तम डकैती पड़ा भाव। मैंने उनका नाम किया है, मुझे फिर पाप कहाँ? तुम मेरी सगी माँ हो, दर्शन देना ही होगा।

गिरीश *(सहास्य)*— भक्ति का तम आप ही तो सिखाते हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— किन्तु उनके दर्शन करने के लक्षण हैं। समाधि हो जाती है। समाधि पाँच प्रकार की है;

प्रथम— चींटी की गति, महावायु उठती है चींटी की तरह।

दूसरी— मीन (मछली) की गति।

तीसरी— 'तिर्यक' (टेढ़ी-मेढ़ी) गति।

चौथी— पक्षी की गति, पक्षी जैसे इस डाल से उस डाल पर जाता है।

पाँचवीं— कपिवत्, वानर की गति; महावायु जैसे छलाँग मारकर सिर पर चढ़

जाती है और समाधि हो जाती है।

"और फिर दो प्रकार की और है;
पहली— स्थित समाधि; एकदम बाह्यशून्य (बेहोश); बहुत देर, शायद अनेक दिन रहती है।
दूसरी— उन्मना समाधि; हठात् मन का चारों ओर से सिमटकर ईश्वर में योग हो जाना।"

(उन्मना समाधि और मास्टर)

(मास्टर के प्रति)— "तुम उसे समझ गए हो?"

मास्टर— जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण— नाना प्रकार से लोगों ने उन्हें लाभ किया है। कोई खूब तपस्या, साधन-भजन करके पाता है; साधन सिद्ध। कोई जन्म-अवधि सिद्ध होता है, जैसे नारद, शुकदेव आदि; इन्हें कहते हैं नित्यसिद्ध। और फिर है हठात् सिद्ध; हठात् प्राप्त कर लिया। जैसे अकस्मात्, कोई आशा नहीं थी, किसी ने नन्दबसु की भाँति धन आदि पा लिया।

द्वितीय परिच्छेद

(गिरीश का शान्त भाव, कलि में शूद्र की भक्ति और मुक्ति)

श्रीरामकृष्ण— और हैं स्वप्नसिद्ध और कृपा-सिद्ध।

यह कहकर ठाकुर भाव में विभोर होकर गाना गा रहे हैं—

श्यामाधन कि सबाइ पाय,
अबोध मन बोझे ना एकि दाय।
शिवेरइ असाध्य साधन मन मजान रांगा पाय॥
इन्द्रादि सम्पद सुख तुच्छ होय जे भावे माय,
सदानन्द सुखे भासे श्यामा यदि फिरे चाय॥
योगीन्द्र मुनीन्द्र इन्द्र जे चरण ध्याने ना पाय।
निर्गुणे कमलाकान्त तबु से चरण चाय॥

[भावार्थ— श्यामा माँ रूप धन क्या सबको मिलता है, (काली माँ-धन क्या सबको मिलता है)! अबोध मन समझता नहीं कि वह क्या वस्तु है। मन लाल चरणों में लगा होने पर भी शिव के लिए यह साधन असाध्य है। इन्द्र आदि की सम्पद इस माँ के भाव में तुच्छ है। माँ श्यामा यदि मुड़कर देख लेती हैं तो मुख सदानन्द में रहता है। योगीन्द्र, मुनीन्द्र, इन्द्र जिन चरणों का ध्यान नहीं पा सकते, निर्गुणी कमलाकान्त किन्तु यही चरण माँगता है।]

ठाकुर कुछ क्षण भावाविष्ट हुए रहे। गिरीश आदि भक्तगण सम्मुख हैं। कुछ दिन पहले स्टार थियेटर में गिरीश ने अनेक बातें कही थीं; अब शान्तभाव है।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश के प्रति)*— तुम्हारा यह भाव बड़ा अच्छा है; शान्तभाव, माँ से तभी तो कहा था, माँ! उसको शान्त कर दो, मुझे जो-सो न कहे।

गिरीश *(मास्टर के प्रति)*— मेरी जीभ को मानो कोई दबाकर रखे हुए है। मुझे बातें नहीं करने देता।

श्रीरामकृष्ण अब भी भावस्थ, अन्तर्मुख हैं। बाहर के व्यक्ति, वस्तु क्रमशः सब भूल रही हैं। थोड़ा-सा प्रकृतिस्थ होकर मन को उतार रहे हैं। भक्तों को फिर देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर की ओर दृष्टि करके)*— ये लोग सब वहाँ (दक्षिणेश्वर में) जाते हैं;— वे जाते हैं तो जाएँ; माँ सब जानती हैं।

(पड़ोसी छोकरे के प्रति)— "क्यों जी, तुम्हें कैसा बोध होता है? मनुष्य का क्या कर्त्तव्य है?"

सब चुप हैं। ठाकुर क्या यही कह रहे हैं कि ईश्वर-लाभ ही मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है?

श्रीरामकृष्ण *(नारायण के प्रति)*— तूने पास नहीं किया? ओ रे पाशमुक्त शिव, पाशबद्ध जीव।

ठाकुर अब भावावस्था में हैं। निकट एक गिलास में जल था, पी लिया। वे अपने-आप कह रहे हैं, "कहाँ, भाव में तो जल पी लिया!"

(श्रीरामकृष्ण और श्रीयुक्त अतुल— व्याकुलता)

अभी सन्ध्या नहीं हुई। ठाकुर गिरीश के भाई श्रीयुक्त अतुल के साथ बातें कर रहे हैं। अतुल भक्तों के संग में सम्मुख ही बैठे हुए हैं। एक ब्राह्मण पड़ोसी भी बैठे हैं। अतुल हाईकोर्ट के वकील हैं।

श्रीरामकृष्ण *(अतुल के प्रति)*— आप लोगों से यही कहना है, आप लोग दोनों ही करेंगे, संसार भी करेंगे और जिससे भक्ति हो, वह भी करेंगे।

ब्राह्मण पड़ोसी— ब्राह्मण हुए बिना क्या सिद्ध होता है?

श्रीरामकृष्ण— क्यों? कलियुग में शूद्र की भक्ति की बातें हैं। शबरी, रविदास, गुहक चाण्डाल, ये सब हैं।

नारायण *(सहास्य)*— ब्राह्मण, शूद्र, सब एक।

ब्राह्मण— क्या एक जन्म में होता है?

श्रीरामकृष्ण— उनकी दया होने पर क्या नहीं होता! हजार वर्षों के अन्धेरे कमरे में प्रकाश ले आने पर क्या थोड़ा-थोड़ा करके अन्धकार जाता है? एकदम रोशनी हो जाती है।

(अतुल के प्रति)— "तीव्र वैराग्य चाहिए— जैसे नंगी तलवार। वैसा वैराग्य हो जाने पर, आत्मीय जन कालसाँप लगते हैं और गृह मृत्यु-कूप लगता है।

"और आन्तरिक व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। आन्तरिक पुकार को वे सुनेंगे ही सुनेंगे।"

सब चुप किए हैं। ठाकुर ने जो कहा है, एक मन से सुनकर सब उसी का चिन्तन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(अतुल के प्रति)*— क्यों? ऐसी खेंच शायद होती नहीं— व्याकुलता?

अतुल— मन कहाँ ठहरता है?

श्रीरामकृष्ण— अभ्यास योग! रोज उन्हें पुकारने का अभ्यास करना चाहिए। एक दिन में नहीं होता; रोज पुकारते-पुकारते व्याकुलता आती है।

"रात-दिन केवल विषय-कर्म करने से व्याकुलता कैसे आएगी? यदुमल्लिक पहले-पहले ईश्वरीय बातें बहुत सुना करता था, अपने आप भी बहुत बोलता था; आजकल अब उतना नहीं बोलता, रात-दिन मोसाहबों (चाटुकारों) को लिए बैठा रहता है, केवल विषय की बातें करता है!"

(सन्ध्या के हो आने पर ठाकुर की प्रार्थना— तेजचन्द्र)

सन्ध्या हो गई; कमरे में बत्ती जला दी गई है। श्रीरामकृष्ण भगवान का नाम कर रहे हैं, गाना गा रहे हैं और प्रार्थना कर रहे हैं।

कह रहे हैं—

'हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल'; और फिर 'राम, राम, राम'; और फिर 'नित्य लीलामयी'। 'ओ माँ, उपाय बताओ माँ!'; 'शरणागत, शरणागत, शरणगत!'

गिरीश को व्यस्त देखकर ठाकुर थोड़ा-सा चुप रहे। तेजचन्द्र से कह रहे हैं, तू थोड़ा निकट आकर बैठ।

तेजचन्द्र निकट बैठ गए। कुछ देर बाद मास्टर से फुस्-फुस् करके कह रहे हैं, 'मुझे जाना होगा'।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— यह क्या कह रहा है?

मास्टर— घर जाना होगा, यही कह रहा है।

श्रीरामकृष्ण— मैं इन्हें इतना क्यों आकर्षित करता हूँ? ये लोग निर्मल आधार हैं— विषयबुद्धि ढुकी नहीं है। विषयबुद्धि रहने पर उपदेश की धारणा नहीं हो सकती। नई हण्डी में दूध रखा जाता है, दही जम चुकने वाली हण्डी में दूध रखने से दूध नष्ट हो जाता है।

"जिस कटोरे में लहसुन घोला गया हो, उस बर्तन को हजार धोओ, तो भी लहसुन की गन्ध नहीं जाती।"

●

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण, स्टार थियेटर—
वृषकेतु-अभिनय-दर्शन, नरेन्द्र आदि के संग में)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण वृषकेतु-अभिनय-दर्शन करेंगे। बीडन स्ट्रीट में जहाँ पर बाद में मनोमोहन थियेटर हुआ, पहले उसी मंच पर स्टार-थियेटर-अभिनय होता था। (ठाकुर) थियेटर में आकर बॉक्स में दक्षिणास्य बैठे हुए हैं। मास्टर आदि भक्तगण निकट ही बैठे हुए हैं।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— नरेन्द्र आया है?

मास्टर— जी हाँ।

अभिनय हो रहा है। कर्ण और पद्मावती ने दोनों ओर से आरा पकड़कर वृषकेतु का बलिदान किया। पद्मावती ने रोते-रोते माँस पकाया। वृद्ध ब्राह्मण अतिथि आनन्द मनाते हुए कर्ण से कह रहे हैं, अब आओ, हम एक साथ बैठकर यह पका हुआ माँस खाएँ। अभिनय में कर्ण कह रहे हैं, ''यह मैं नहीं कर सकूँगा; पुत्र का माँस नहीं खा सकूँगा।''

एक भक्त ने सहानुभूति-व्यंजक अस्फुट आर्तनाद किया। ठाकुर ने भी उसके साथ दुःख-प्रकाश किया।

अभिनय समाप्त होने पर ठाकुर रंगमंच के विश्रामगृह में जा पहुँचे। गिरीश, नरेन्द्र आदि भक्तगण बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कमरे में प्रवेश करके नरेन्द्र के निकट जाकर खड़े हो गए और बोले, मैं आया हूँ।

[Concert (शहनाई) के शब्द से भावाविष्ट]

ठाकुर बैठ गए हैं। अब भी बाजों (कॉनसर्ट) का शब्द सुनाई दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— यह 'बाजना' सुनकर मुझे आनन्द हो रहा है। वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) शहनाई बजती थी, मैं भावाविष्ट हो जाता था; एक साधु मेरी अवस्था देखकर कहता, 'यह सब ब्रह्मज्ञान का लक्षण है'।

(गिरीश और 'मैं-मेरा')

कॉनसर्ट थम जाने पर श्रीरामकृष्ण फिर और बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(गिरीश के प्रति)*— यह क्या तुम्हारा थियेटर है, या तुम लोगों का?

गिरीश— जी, हमारा।

श्रीरामकृष्ण— 'हमारा' कहना ही अच्छा है; 'मेरा' कहना अच्छा नहीं! कोई-कोई कहता है 'मैं अपने आप आया हूँ'; यह बात हीनबुद्धि अहंकारी लोग कहते हैं।

(श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र आदि के संग में)

नरेन्द्र— सब कुछ ही थियेटर है।

श्रीरामकृष्ण— हाँ हाँ, ठीक। किन्तु कहीं पर विद्या का खेल है, कहीं पर अविद्या का खेल है।

नरेन्द्र— सब कुछ ही विद्या का है।

श्रीरामकृष्ण— हाँ हाँ; किन्तु वह तो ब्रह्मज्ञान में होता है। भक्ति-भक्त के पक्ष में दोनों ही हैं; विद्या-माया, अविद्या-माया।

श्रीरामकृष्ण— तू तनिक गाना गा।

नरेन्द्र गाना गा रहे हैं—

चिदानन्द सिन्धुनीरे प्रेमानन्देर लहरी।
महाभाव रसलीला कि माधुरी मरि मरि।
विविध विलास रंग प्रसंग, कत अभिनव भाव-तरंग,
डुबिछे उठिछे करिछे रंग नवीन नवीन रूप धरि।
(हरि हरि बोल)

महायोगे समुदाय एकाकार होइलो, देश काल;
व्यवधान, भेदाभेद घुचिलो (आशा पुरिलो रे—
आमार सकल साध मिटे गेलो) एखन आनन्दे
मातिया दुबाहु तुलिया बोलो रे मन हरि हरि।

[भावार्थ— चित्तरूपी आनन्द के समुद्र-जल में प्रेमानन्द की लहरें चल रही हैं। महाभाव के रसलीला की माधुरी में मैं मरा-मरा हो रहा हूँ। प्रेम विलास के विविध रस-प्रसंगों में कितनी ही नूतन-नूतन भावतरंगें उठ रही हैं, डूब रही हैं, नए-नए रूप धारण कर रही हैं। (हरि-हरि बोल)। महायोग में समस्त समुदाय एकाकार हो गया है। देशकाल का व्यवधान (बाधा) और भेद-अभेद समाप्त हो गया है। (अरे, मेरी आशा पूर्ण हो गई, सब इच्छाएँ मिट गईं)। अब आनन्द में मतवाला होकर दोनों बाहें उठाकर अरे मन, हरि-हरि बोल।]

नरेन्द्र जब गा रहे हैं, 'महायोगे सब एकाकार होइलो' तब श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, ''यही तो ब्रह्मज्ञान में होता है; तू जो कह रहा था, सब ही विद्या।''

नरेन्द्र जब गा रहे हैं, 'आनन्दे मातिया दुबाहु तुलिया बोलो रे मन हरि-हरि*', तब श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कहते हैं, इसे तो दो बार बोल।

गाना हो जाने पर फिर दोबारा भक्तों के संग बातचीत हो रही है।

गिरीश— देवेन्द्रबाबू नहीं आए; वे अभिमान करके कहते हैं, हमारे भीतर तो खोए का पूर नहीं है; उड़द का पूर है। हम आकर क्या करेंगे?

श्रीरामकृष्ण *(विस्मित होकर)*— कहाँ, पहले तो वे इस प्रकार नहीं करते थे।

ठाकुर जलपान-सेवा कर रहे हैं, नरेन्द्र को भी खाने के लिए दिया।

यतीनदेव *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— 'नरेन्द्र खाओ'-'नरेन्द्र खाओ' कह रहे हो, हम साले तो मानो यूँ ही कहीं से बहकर आ गए हैं!

यतीन को ठाकुर खूब प्यार करते हैं। वे दक्षिणेश्वर में जाकर बीच-बीच में दर्शन करते हैं; कभी-कभी रात को भी वहाँ जाकर रहते हैं। वे शोभाबाजार के राजाओं के लड़के हैं। (राधाकान्तदेव के घर के) लड़के हैं।

श्रीरामकृष्ण *(नरेन्द्र के प्रति, सहास्य)*— वह (यतीन) तो तेरी ही बात कहता है।

ठाकुर हँसते-हँसते यतीन की ठुड्डी पकड़कर प्यार करते-करते कहते हैं,

---

* हे मन! आनन्द में मतवाला होकर दोनों हाथ उठाकर बोल हरि-हरि!

"वहाँ पर जाइयो, जाकर खाइयो!" अर्थात् 'दक्षिणेश्वर में जाइयो'। ठाकुर फिर विवाह-विभ्राट-अभिनय देखेंगे; बॉक्स में जाकर बैठ गए। नौकरानी की बातें सुनकर हँसने लगे।

(गिरीश का अवतारवाद— श्रीरामकृष्ण क्या अवतार हैं ?)

थोड़ी-सी देर सुनकर अन्यमनस्क हो गए। मास्टर के साथ आहिस्ते-आहिस्ते बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— अच्छा, गिरीशघोष जो कहता है (अर्थात् अवतार), वह क्या सत्य है ?

मास्टर— जी, ठीक बात है; न हो, तो सबके मन को क्यों लगती ?

श्रीरामकृष्ण— देख, अब एक विशेष अवस्था आ रही है; पहले वाली अवस्था उलट गई है। धातु की वस्तु छू नहीं सकता।

मास्टर अवाक् होकर सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— यह तो नूतन अवस्था है, इसका एक विशेष गुह्य (भेद भरा) अर्थ है।

ठाकुर धातु स्पर्श नहीं कर सकते। अवतार शायद माया का कोई भी ऐश्वर्य भोग नहीं करते, इसीलिए क्या ठाकुर ये सब बातें कह रहे हैं ?

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— अच्छा, मेरी अवस्था कुछ बदलती हुई देख रहे हो ?

मास्टर— जी, कहाँ ?

श्रीरामकृष्ण— कार्य में ?

मास्टर— अब काम बढ़ रहा है— इतने लोग जान रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— देख तो रहे हो! पहले जो कहता था, अब फल रहा है ?

ठाकुर कुछ क्षण चुप किए रहे। हठात् कह रहे हैं, "अच्छा, पल्टु का अच्छा ध्यान क्यों नहीं होता ?"

[गिरीश की लहसुन घुली बाटी (कटोरा) है ?
The Lord's message of hope for the so-called 'sinners']

अब ठाकुर की दक्षिणेश्वर जाने की तैयारी हो रही है।

ठाकुर ने किसी भक्त से गिरीश के सम्बन्ध में कहा था—

''जिस कटोरे में लहसुन घोल दिया गया हो तो उस कटोरे को हजार बार धोने पर भी लहसुन की गन्ध एकदम क्या जाती है?''

गिरीश ने भी जभी मन ही मन अभिमान किया है; जाते समय गिरीश ठाकुर को कुछ निवेदन कर रहे हैं।

गिरीश *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— लहसुन की गन्ध क्या जाएगी?

श्रीरामकृष्ण— जाएगी।

गिरीश— किन्तु जैसा अब कहा है, क्या 'जाएगी'?

श्रीरामकृष्ण— इतनी आग जलने पर तो गन्ध-फन्ध सब भाग जाती है। लहसुन की बाटी को आग में जला लेने पर फिर गन्ध नहीं रहती, नूतन हाँडी हो जाती है।

''जो कहता है मेरा नहीं होगा, उसका नहीं होता। मुक्त अभिमानी मुक्त ही हो जाता है, और बद्ध अभिमानी बद्ध ही हो जाता है। जो जोर करके कहता है, मैं मुक्त हो गया हूँ, वह मुक्त ही हो जाता है। जो रात-दिन 'मैं बद्ध' 'मैं बद्ध' कहता रहता है, वह बद्ध ही हो जाता है!''

अष्टादश खण्ड

मौनावलम्बी श्रीरामकृष्ण और माया-दर्शन

प्रथम परिच्छेद

ठाकुर श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में प्रातः आठ बजे से 3 बजे तक मौन-अवलम्बन किए रहे। आज मंगलवार है, **11 अगस्त, 1885 ईसवी**; 27वाँ श्रावण। गतकल सोमवार अमावस्या गई है।

श्रीरामकृष्ण को रोग आरम्भ हो गया है। उन्हें क्या पता लग गया है कि वे शीघ्र इस लोक का परित्याग कर देंगे? और फिर जगन्माता की गोद में जाकर बैठ जाएँगे? इसीलिए ही क्या मौनावलम्बन किए हुए हैं? 'वे बातें नहीं कर रहे हैं', देखकर श्री श्री माँ रो रही हैं। राखाल और लाटु भी रो रहे हैं। बागबाजार की ब्राह्मणी इस समय आ गई थीं, वे भी रो रही हैं। भक्त बीच-बीच में पूछ रहे हैं, आप क्या बराबर चुप रहेंगे?

श्रीरामकृष्ण इंगित करके कह रहे हैं, 'ना'।

नाराण 3 बजे आए, ठाकुर नाराण से कह रहे हैं—
"माँ तेरा भला करेंगी।"

नाराण आनन्द से भक्तों को संवाद दे रहे हैं— 'ठाकुर ने अब बात की है।' राखाल आदि भक्तों की छाती पर से मानो एक पत्थर उतर गया। वे सब लोग जाकर ठाकुर के निकट बैठ गए।

श्रीरामकृष्ण *(राखाल आदि भक्तों के प्रति)*— 'माँ' ने दिखला दिया है कि सब ही माया है। वे सत्य हैं; और जो कुछ है, सब माया का ऐश्वर्य है।

"और एक देखा था, भक्तों में किसका कितना हुआ है?

नाराण आदि भक्त— अच्छा, किसका कितनी दूर तक हुआ है ?
श्रीरामकृष्ण— इन लोगों का सब देखा— नित्यगोपाल, राखाल, नाराण, पूर्ण, महिमा चक्रवर्ती आदि का।

•

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण, गिरीश, शशधर पण्डित आदि भक्तों के संग में)

ठाकुर के असुख का संवाद कलकत्ता के भक्तों को पता लग गया है। 'गले के कौवे में रोग हो गया है', सब कह रहे हैं।

रविवार, **16 अगस्त, 1885 ईसवी**; पहला भाद्रपद; अनेक भक्त उन का दर्शन करने के लिए आए हैं— गिरीश, राम, नित्यगोपाल, महिमा चक्रवर्ती, किशोरी (गुप्त), तर्कचूड़ामणि पण्डित शशधर आदि।

ठाकुर पहले की भाँति आनन्दमय हैं, भक्तों के संग में बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— रोग की बात माँ से नहीं कह सकता। कहते हुए लज्जा होती है।
गिरीश— मेरे नारायण चंगा कर देंगे।
राम— ठीक हो जाएगा।
श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— हाँ, यही आशीर्वाद करो। *(सब का हास्य)*।

गिरीश नए-नए आने लगे हैं, ठाकुर उनसे कह रहे हैं—
''तुम्हें अनेक झंझटों के भीतर रहना पड़ता है, बहुत कार्य हैं; तुम और तीन बार आओ।''

अब शशधर के साथ बातें कर रहे हैं।

**(शशधर पण्डित को उपदेश—
ब्रह्म और आद्याशक्ति अभेद)**

श्रीरामकृष्ण *(शशधर के प्रति)*— तुम आद्याशक्ति की कुछ बात बताओ।

शशधर— मैं क्या जानूँ?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— किसी व्यक्ति की एक जन खूब भक्ति करता है। उसने भक्त को हुक्का बनाने के लिए आग लाने को कहा; वह बोला, मैं क्या आपके लिए आग लाने के योग्य हूँ? और आग लाया भी नहीं! *(सब का हास्य)*।

शशधर— जी, वे ही निमित्त कारण हैं, वे ही उपादान कारण हैं। वे ही जीव-जगत की सृष्टि कर रही हैं, और फिर वे ही जीव-जगत होकर रह रही हैं; जैसे मकड़ी, स्वयं जाला तैयार किया है (निमित्त कारण); और उसी जाले को अपने भीतर से बाहर निकाला है (उपादान कारण)।

श्रीरामकृष्ण— और है, जो पुरुष हैं वे ही प्रकृति हैं; जो ब्रह्म हैं वे ही शक्ति हैं। जब निष्क्रिय हैं, सृष्टि-स्थिति-प्रलय नहीं करते, तब उनको ब्रह्म कहता हूँ, पुरुष कहता हूँ और जब वे सब कार्य करते हैं तब उन्हें शक्ति कहता हूँ, प्रकृति कहता हूँ। किन्तु जो ब्रह्म हैं, वे ही शक्ति हैं; जो पुरुष हैं, वे ही प्रकृति होकर रह रहे हैं। जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलने-डुलने पर भी जल है। साँप टेढ़ा-मेढ़ा चलने पर भी साँप है, और फिर चुपचाप कुण्डली मारे रहने पर भी साँप।

**(श्रीरामकृष्ण ब्रह्मज्ञान की बात पर समाधिस्थ—
भोग और कर्म)**

''ब्रह्म क्या है वह मुख से नहीं बोला जाता, मुख बन्द हो जाता है। निमाई मेरा मतवाला हाथी! यह बात कहते-कहते अन्त में और कुछ भी कह नहीं सकता; केवल कहता है हाथी! और फिर हाथी-हाथी बोलते-बोलते 'हा'। अन्त में वह भी नहीं बोल सकता! बाह्य-शून्य।''

यह बात कहते-कहते ठाकुर समाधिस्थ! खड़े-खड़े ही समाधिस्थ।

समाधि भग्न हो जाने पर कुछ काल बाद कहते हैं—
'क्षर'-'अक्षर' के पार क्या है, मुख से नहीं बोला जाता।

सब चुप हैं, ठाकुर फिर और बातें कर रहे हैं—
"जब तक कुछ भोग बाकी रहता है या कर्म बाकी रहता है, तब तक समाधि नहीं होती।*"

(शशधर के प्रति)— "अब ईश्वर तुम से कर्म करवा रहे हैं— लेक्चर देना इत्यादि; अब तुम्हें यह सब करना होगा।

"यह थोड़ा-सा कर्म शेष हो जाने पर फिर नहीं। घरवाली के घर का काज-कर्म समाप्त करके नहाने चले जाने पर अनेक पुकारने पर भी नहीं लौटती।"

●

---

* भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते॥ (गीता— 2, 44)

तृतीय परिच्छेद

(अस्वस्थ श्रीरामकृष्ण और डॉक्टर राखाल— भक्तों के संग में नृत्य)

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग में अपने कमरे में बैठे हुए हैं। रविवार, **20 सितम्बर, 1885 ईसवी**; 5वीं आश्विन, शुक्ला एकादशी। नवगोपाल, हिन्दु स्कूल के शिक्षक हरलाल, राखाल, लाटु आदि, कीर्त्तनिया गोस्वामी, अनेक जन ही उपस्थित हैं।

बहुबाजार (बड़ा बाज़ार) के राखाल डॉक्टर को साथ लेकर मास्टर आए हैं; डॉक्टर को ठाकुर का रोग दिखाएँगे।

डॉक्टर ठाकुर के गले के रोग को देख रहे हैं। वे दोहरे (मोटे) व्यक्ति हैं; उंगलियाँ मोटी-मोटी हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य, डॉक्टर के प्रति)*— जो लोग ऐसे-ऐसे करते हैं (अर्थात् कुश्ती लड़ते हैं) उनके जैसी हैं तुम्हारी उंगलियाँ। महेन्द्र सरकार ने देखा था; तब ऐसे जोर से दबाया था कि बड़ा कष्ट हुआ था; जैसे गाय की जीभ दबा रहा हो।

राखाल डॉक्टर— जी, मैं देखता हूँ, आपको कुछ दर्द नहीं होगा।

(श्रीरामकृष्ण को रोग क्यों ?)

डॉक्टर के देखने के बाद श्रीरामकृष्ण और बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— अच्छा, लोग कहते हैं ये यदि ऐसे हैं (इतने बड़े साधु हैं)— तो फिर रोग क्यों होता है ?

तारक— भगवानदास बाबाजी बहुत दिनों तक रोग से शय्या पर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण— मधु डॉक्टर साठ वर्ष की आयु में वेश्या के लिए उसके घर भात (खाना) लेकर जाता है; इधर उसे कोई रोग नहीं है।

गोस्वामी— जी, आपका जो असुख है वह औरों के लिए है; जो लोग आपके पास आते हैं उनके अपराध आपको लेने होते हैं, वे ही सब अपराध, पाप लेने से आपको असुख होता है।

एक भक्त— आप यदि माँ से कहें, माँ इस रोग को हटा दो, तब फिर शीघ्र हट जाएगा।

(सेव्य-सेवक भाव कम हो रहा है— 'मैं' खोजने पर नहीं मिलता)

श्रीरामकृष्ण— रोग हटाने वाली बात मैं कह नहीं सकता; और फिर अब सेव्य-सेवक भाव कम होता जा रहा है। एक बार कहता हूँ, 'माँ' तलवार की खोली (म्यान) की थोड़ी-सी मरम्मत कर दो; किन्तु वैसी प्रार्थना कम होती जा रही है; आजकल 'मैं' तो खोजने पर भी नहीं मिलता। देख रहा हूँ वे ही इस खोल के भीतर रह रही हैं।

कीर्त्तन के लिए गोस्वामी का आना हुआ है। एक भक्त ने पूछा, "क्या कीर्त्तन होगा?" श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ हैं, कीर्त्तन होने पर मस्ती आएगी; यही भय सब कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

"हो जाए थोड़ा-सा। मुझे कहीं फिर भाव न हो जाए, तभी भय होता है। भाव होने पर गले के उसी विशेष स्थान पर जाकर लगता है।"

कीर्त्तन सुनते-सुनते ठाकुर भाव सम्वरण नहीं कर सके; खड़े हो गए और भक्तों के संग में नृत्य करने लगे।

डॉक्टर राखाल ने समस्त देखा; उनकी भाड़े (किराये) की गाड़ी खड़ी हुई है। वे और मास्टर खड़े हुए हैं, कलकत्ता लौटेंगे। ठाकुर श्रीरामकृष्ण को दोनों ने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण *(सस्नेह, मास्टर के प्रति)*— तुम ने खा लिया है क्या?

●

(मास्टर के प्रति आत्मज्ञान का उपदेश— 'देह तो खोलमात्र है')

बृहस्पतिवार, 24 सितम्बर, पूर्णिमा के दिन रात को श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटी खाट के ऊपर बैठे हुए हैं। गले के रोग के लिए कातर हो रहे हैं। मास्टर आदि भक्तगण जमीन पर बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(मास्टर के प्रति)*— एक-एक बार सोचता हूँ यह देह तो खोलमात्र है; उसी अखण्ड (सच्चिदानन्द) के अतिरिक्त तो और कुछ नहीं है।

"भावावेश होने पर गले का यह रोग तो एक तरफ पड़ा रहता है। अब वह भाव थोड़ा-थोड़ा-सा होता है, और हँसी आती है।"

द्विज की बहिन और छोटी दीदीमाँ (नानी) ठाकुर का असुख सुनकर देखने के लिए आई हैं; वे लोग प्रणाम करके कमरे में एक ओर बैठ गईं। द्विज की दीदीमाँ को देखकर ठाकुर कह रहे हैं—

"ये कौन हैं?— जिन्होंने द्विज को पाला है? अच्छा, द्विज ने ऐसा-ऐसा (एकतारा) क्यों खरीदा है?"

मास्टर— जी, उसमें दो तार हैं।

श्रीरामकृष्ण— एक तो उसके पिता विरुद्ध हैं; फिर सब लोग क्या कहेंगे? उसके लिए तो गोपन में (ईश्वर को) पुकारना ही भला है।

श्रीरामकृष्ण के कमरे में दीवार पर गौर-निताई की एक छवि अधिक थी; गौर-निताई सांगोपांगों को लेकर नवद्वीप में संकीर्त्तन कर रहे हैं, यह है छवि।

रामलाल *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— तो फिर यह छवि मैं इनको (मास्टर को) दिए देता हूँ।

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, यह तो सुन्दर है।

(श्रीरामकृष्ण और हरीश की सेवा)

ठाकुर कई दिनों से डॉक्टर प्रताप की औषध खा रहे हैं। गम्भीर रात को उठ गए, प्राण छटपटा रहा है। हरीश सेवा करते हैं, उसी कमरे में हैं; राखाल भी हैं; श्रीयुक्त रामलाल बाहर के बरामदे में लेटे हुए हैं।

ठाकुर ने पीछे कहा—

''प्राण के छटपट करने पर हरीश को छाती से लगाने की इच्छा हुई; मध्यम नारायण तेल की मालिश करने से अच्छा हो गया; तब फिर नाचने लगा।''

परिशिष्ट

श्रीरामकृष्ण और नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द)
(Vivekananda in America and in Europe)

प्रथम परिच्छेद

श्री रथयात्रा का अगला दिन, 1885 ईसवी; आषाढ़ संक्रान्ति। श्री श्री भगवान श्रीरामकृष्ण बलराम-मन्दिर में सुबह के समय भक्तों के संग में बैठे हुए हैं। नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) के महत्त्व की बातें कह रहे हैं—

(नरेन्द्र का महत्त्व— 'A prince among men')

"नरेन्द्र का खूब ऊँचा घर है— निराकार का घर। पुरुष की सत्ता। इतने भक्त आते हैं, उसके जैसा एक भी नहीं है।

'एक-एक बार बैठा-बैठा मैं हिसाब करता हूँ। तब देखता हूँ, अन्य पद्म— किसी के दशदल, किसी के सोलहदल, किसी के शतदल किन्तु पद्मों में नरेन्द्र है सहस्रदल।

"और कलसी, लोटा इत्यादि हो सकते हैं; नरेन्द्र मटका है।

"गढ़ों-तालाबों के बीच नरेन्द्र बड़ा सरोवर है। जैसे हालदार-पुकुर।

"मछलियों के मध्य नरेन्द्र लाल नेत्रों वाली बड़ी रोहू, और सब नाना प्रकार की मछलियाँ— पोना (छोटी मछली), काठि-बाटा इत्यादि।

''खूब आधार है— बहुत-सी वस्तुएँ रखी जाती हैं। बड़े छिद्र वाला बाँस।

''नरेन्द्र किसी के बस में नहीं है। आसक्ति, इन्द्रियसुख के वश में नहीं है। पुरुष कबूतर है। पुरुष कबूतर की चोंच पकड़ने पर चोंच खींच लेता है— मादा कबूतर चुप किए रहती है।''

(पहले ईश्वरलाभ— आदेश हो जाने पर लोकशिक्षा)

तीन वर्ष पूर्व (1882 ईसवी) नरेन्द्र दो-एक ब्राह्म बन्धुओं के संग में दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आए थे। रात को यहाँ पर ही थे। भोर होने पर ठाकुर बोले— ''जाओ, पञ्चवटी में जाकर ध्यान करो।''

कुछ क्षण के पश्चात् ठाकुर जाकर देखते हैं, वे नीचे, मित्रों के संग में ध्यान कर रहे हैं। ध्यान के अन्त में ठाकुर उनसे कह रहे हैं—

''देखो, ईश्वरदर्शन ही जीवन का उद्देश्य है; व्याकुल होकर निर्जन-गोपन में उनका ध्यान-चिन्तन करना चाहिए और रो-रो कर प्रार्थना करनी चाहिए, 'भगवान! हमें दर्शन दो'।''

ब्राह्मसमाज के तथा अन्य-अन्य धर्मावलम्बियों के लोकहितकारी कर्म जैसे स्त्री-शिक्षा, स्कूल-स्थापना, वक्तृता (lecture) देने के सम्बन्ध में कहा था—

''पहले ईश्वर-दर्शन करो— निराकार, साकार दोनों दर्शन। जो वाक्य-मन से अतीत हैं, वे ही फिर भक्त के लिए रूप धारण करके दर्शन देते हैं और बातें करते हैं। दर्शन के पश्चात् उनका आदेश लेकर लोकहितकारी कर्म करने चाहिएँ। एक गाने में है— मन्दिर में भगवान की प्रतिष्ठा नहीं हुई, पोदो केवल शंख बजा रहा है, मानो आरती हो रही है; एक व्यक्ति तभी उसे धिक्कार रहा है और कह रहा है—

मन्दिरे तोर नाहिक माधव।
(ओ रे) पोदो, शाँक फुँके तुइ करलि गोल।

ताय चामचिके एगारो जना,
दिवानिशि दिच्छे थाना—

[भावार्थ— अरे पोदो, तेरे मन्दिर में माधव तो प्रतिष्ठित नहीं हुए। तूने व्यर्थ शंख फूँककर गड़बड़ मचा दी है। तभी तो ग्यारह चमगादड़ रात-दिन पड़ाव डाले हुए हैं।]

"यदि हृदय-मन्दिर में माधव-प्रतिष्ठा करना चाहो, यदि भगवान-लाभ करना चाहो, तो फिर केवल भों-भों करके शंख फूँकने से क्या होगा? पहले चित्त-शुद्धि करो; मन शुद्ध होने पर भगवान पवित्र आसन पर आकर बैठेंगे। चमगादड़ों की विष्ठा रहने पर माधव को नहीं लाया जाता। ग्यारह चमगादड़ अर्थात् ग्यारह इन्द्रियाँ।

"पहले डुबकी लगाओ। डुबकी लगाकर रत्न उठाओ, फिर अन्य कार्य! पहले माधव-प्रतिष्ठा, उसके बाद इच्छा हो तो वक्तृता (lecture) देओ।

"कोई डुबकी लगाना नहीं चाहता। साधन नहीं, भजन नहीं, विवेक-वैराग्य नहीं, दो-चार बातें सीखते ही झट लेक्चर देना।

"लोकशिक्षा देना कठिन है। भगवान के दर्शन पर यदि कोई उनका आदेश पा लेता है, तो फिर लोकशिक्षा दे सकता है।"

●

1884 ईसवी रथयात्रा के दिन कलकत्ता में ठाकुर श्रीरामकृष्ण के साथ पण्डित शशधर का मेल हुआ था। नरेन्द्र उपस्थित थे। श्रीरामकृष्ण ने पण्डित से कहा—

"तुम लोगों के मंगल के लिए वक्तृता करते हो, यह तो बढ़िया है। किन्तु बाबा, भगवान के आदेश के अभाव में लोकशिक्षा नहीं होती। वे लोग दो ही दिन तुम्हारा लेक्चर सुनेंगे, फिर भूल जाएँगे। हालदार पुकुर के किनारे लोग बाह्य किया करते थे; लोग गालीगलौच करते किन्तु कुछ भी फल

नहीं होता था। अन्त में सरकार ने जब एक नोटिस लगा दिया, तब वह बन्द हुआ। जभी ईश्वर का आदेश हुए बिना लोकशिक्षा नहीं होती।''

जभी नरेन्द्र ने गुरुदेव की बातें शिरोधार्य करके, संसार त्याग करके निर्जन-गोपन में अनेक तपस्या की थी। उसके पश्चात् उनकी शक्ति से शक्तिमान होकर इस लोकशिक्षा-व्रत को लेकर कठिन प्रचार-कार्य में हाथ डाला था।

काशीपुर में जब श्रीरामकृष्ण रोग से पीड़ित थे, (1886 ईसवी में) एक दिन एक कागज पर लिखा था— ''नरेन शिक्षे दिबे।''

स्वामी विवेकानन्द ने मद्रासियों के पास अमेरिका से पत्र लिखा था। उसमें लिखा था कि वे श्रीरामकृष्ण के दास हैं; उनके ही दूत होकर वे उनकी मंगलवार्ता समग्र जगत को बता रहे हैं।

> "It was your generous appreciation of Him whose message to India and to the whole world, I, the most-unworthy of His servants, had the privilege to bear, it was your innate spiritual instinct which saw in Him and His message the first murmurs of that tidal wave of spirituality which is destined at no distant future to break upon India in all its irresistible power", etc.
>
> — Reply to the Madras address

[यह आपकी गुणग्राही उदारता है कि आपने मेरे उस संवाद की प्रशंसा की है जिसे मैं उनके अकिञ्चन सेवक के रूप में भारत तथा समग्र विश्व में प्रचारित करना चाहता हूँ। यह आपकी आन्तरिक आध्यात्मिक प्रवृत्ति का परिणाम है कि आपने उन (श्रीरामकृष्ण) में तथा उनके सन्देश में आध्यात्मिकता के ज्वारयुक्त तरंग का वह प्रारम्भिक स्फुरण पाया है जो जल्दी ही अदम्य शक्ति के साथ सम्पूर्ण भारत में पल्लवित होगा।]

मद्रास में तीसरी वक्तृता में उन्होंने कहा था कि मैंने जो भी सारगर्भित कुछ कहा है, समस्त ही परमहंस का है, असार यदि कुछ कह गया हूँ, वह सब मेरा है—

> "Let me conclude by saying that if in my life I have told one word of truth, it was His and His alone; and if

I have told you many things which were not true, correct and beneficial to the human race, it was all mine and on me is the responsibility."

— Third lecture, Madras

कलकत्ता में राधाकान्तदेव के घर में जब उनका स्वागत हुआ, तब भी उन्होंने कहा था कि श्रीरामकृष्ण देव की शक्ति आज जगव्यापी है। हे भारतवासीगण, तुम लोग उनका चिन्तन करो; तब फिर तुम सब विषयों में महत्त्व-लाभ करोगे। उन्होंने कहा—

"If this nation wants to rise, it will have to rally enthusiastically round His name. It does not matter who preaches Ramakrishna Paramahansa; whether I or you or anybody else. But Him I place before you and it is for you to judge, and for the good of our race, for the good of our nation, to judge now what you shall do with this great ideal of life. ...

... Within ten years of His passing away this power has encircled the globe. Judge Him not through me. I am only a weak instrument. His character was so great that I or any of his disciples, if we spent hundreds of lives, could do no justice to a millionth part of what He really was!"

[यह देश यदि उन्नति करना चाहता है तो इसे उन (रामकृष्ण) के नाम पर उत्साह के साथ एकजुट होना होगा। महत्त्व इस बात का नहीं है कि उनका प्रचार कौन करता है— मैं, आप या कोई अन्य। परन्तु मैं उन्हें आपके सामने रखता हूँ और जीवन के इस महान आदर्श का निर्णय भी जाति और राष्ट्र के उत्थान के लिए आप पर ही छोड़ता हूँ।

उनके देहान्त के दस वर्ष के भीतर ही इस दिव्य शक्ति ने समस्त जगत को व्याप्त कर लिया है। उन्हें मेरे माध्यम से (मेरी दृष्टि से) मत आंकिए। मैं तो दुर्बल माध्यम हूँ। वस्तुत: उनका व्यक्तित्व इतना महान है कि मैं या उनका

> अन्य कोई भी शिष्य सहस्रों जन्मों में भी उनके व्यक्तित्व के लक्षांश को भी व्यक्त नहीं कर सकता।]

गुरुदेव की बातें बोलते-बोलते स्वामी विवेकानन्द एकदम पागल-से हो जाया करते। धन्य उनकी गुरु-भक्ति!

●

द्वितीय परिच्छेद

(नरेन्द्र द्वारा किया गया श्रीरामकृष्ण का प्रचार-कार्य)

आज हम थोड़ी-सी यह आलोचना करेंगे कि परमहंसदेव के उस विश्वजनीन सनातन हिन्दु धर्म को स्वामीजी ने किस प्रकार प्रचारित करने की चेष्टा की थी।

ईश्वर-दर्शन (Realisation of God)

श्रीरामकृष्ण की प्रथम बात— ईश्वर का दर्शन करना होगा। कितने सारे मन्त्र अथवा श्लोक मुखस्थ करने का नाम धर्म नहीं है। यह ईश्वर-दर्शन होता है, यदि भक्त व्याकुल होकर उन्हें पुकारे, वह इस जन्म में ही हो अथवा अन्य जन्म में ही हो। एक दिन की उनकी कथावार्ता हमें याद है। दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में बातें हो रही थीं।

परमहंस देव काशीपुर के महिमाचरण चक्रवर्ती से कह रहे थे— (रविवार, 26 अक्तूबर, 1884 ईसवी)।

> **श्रीरामकृष्ण** *(महिमाचरण तथा अन्य भक्तों के प्रति)*— शास्त्र कितना पढ़ोगे? केवल विचार करने से क्या होगा? पहले उन्हें पाने की चेष्टा करो। पुस्तक पढ़ कर क्या जानोगे? जब तक हाट में नहीं पहुँचता, तब तक दूर से केवल 'हो, हो' शब्द सुनता है। हाट में पहुँच जाने पर और ही एक प्रकार का होता है। तब साफ-साफ देख सकेगा, सुन

सकेगा, 'आलु लो', 'पैसे दो'।

"किताब पढ़कर ठीक अनुभव नहीं होता। (पढ़ने में तथा अनुभव करने में) बड़ा अन्तर है। उनके दर्शन के बाद शास्त्र, साइन्स, सब घास-फूस से लगते हैं।

"बड़ेबाबू के साथ बातचीत प्रयोजनीय है। उनके कितने मकान, कितने बाग, कितने कम्पनी के कागज; इन सब के जानने के लिए इतना क्यों व्याकुल होते हो? किन्तु जिस किसी भी प्रकार से एक बार बड़ेबाबू के संग में परिचय कर लो, वह धक्का खाकर ही हो चाहे घेरा लाँघ कर ही हो; तब इच्छा होगी तो वे ही बता देंगे, उनके कितने घर, कितने बाग, कितने कम्पनी के कागज़ (शेयर) हैं। बाबू के संग बातचीत होने पर तो फिर नौकर-चाकर, दरबान सब सलाम करेंगे।" *(सब का हास्य)*।

एकजन भक्त— अब बड़ेबाबू के संग आलाप कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण— जभी तो कर्म चाहिए। साधन चाहिए। ईश्वर हैं, यह कहकर बैठे रहने से नहीं होगा। उनके पास जाना होगा। निर्जन में उन्हें पुकारो, प्रार्थना करो— 'दर्शन देओ' कह कर। व्याकुल होकर रोओ। कामिनी-काञ्चन के लिए पागल होकर फिर सकते हो, तो उनके लिए भी थोड़ा-सा पागल हो जाओ। लोग कहें कि ईश्वर के लिए अमुक पागल हो गया है। कुछ दिन किसी तरह से भी हो, सब त्याग करके उनको एकान्त में पुकारो। केवल 'वे हैं', यह कहकर बैठे रहने से क्या होगा? हालदारपुकुर में बड़ी-बड़ी मछलियाँ हैं, तालाब के किनारे केवल बैठे रहने से क्या मछली मिल जाती है? मछलियों का मसाला बनाओ, चारा डालो। क्रमशः गहरे पानी में से मछली आएगी और जल हिलेगा। तब आनन्द होगा। कभी तनिक-सी एक बार शायद दिखाई भी दी, मछली छपाँग करके चढ़ी। तब दिखलाई दी, और भी आनन्द हुआ।*

* ईसा मसीह अपने शिष्यों से कहा करते थे— 'Blessed are the pure in spirit, for they shall see God.'

बिल्कुल यही बात स्वामीजी ने भी शिकागो की धर्म-समिति के सामने कही— अर्थात् धर्म का उद्देश्य है ईश्वर को प्राप्त करना, उनके दर्शन करना—

> "The Hindu does not want to live upon words and theories. He must see God and that alone can destroy all doubts. So the best proof a Hindu sage gives about the soul, about God, is 'I have seen the soul; I have seen God'... 'The whole struggle in their system is a constant struggle to become perfect, to become divine, to reach God and see God; and their reaching God, seeing God, becoming perfect even 'as the Father in Heaven is perfect', constitutes the religion of the Hindus."

— Lectures on Hindusim (Chicago, Parliament of Religions)

[हिन्दू केवल शब्दों और सिद्धान्तों पर जीना नहीं चाहता। उसे ईश्वर के दर्शन चाहिएँ और उसी से उसके संशय छिन्न हो सकते हैं। इसलिए एक हिन्दू साधु आत्मा और ईश्वर का यही सर्वोत्तम प्रमाण दे सकता है कि वह यह घोषित करे कि उसने ईश्वरदर्शन किया है। ...सम्पूर्ण होना, चैतन्यमय होना और ईश्वर का साक्षात्कार करना ही उनकी व्यवस्था का अनवरत संघर्ष है। 'स्वर्ग स्थित अपने पिता के समान पूर्ण होना ही' हिन्दुओं का धर्म है और यही उनका ईश्वरदर्शन है।]

अमेरिका में अनेक स्थानों पर स्वामीजी ने वक्तृता दी थी, सब स्थानों पर ही यही बात। Hartford नामक स्थान पर उन्होंने कहा था—

> "The next idea that I want to bring to you is that religion does not consist in doctrines or dogmas. ... The end of all religions is the realisation of God in the soul. Ideals and methods may differ but that is the central point. That is the realisation of God, something behind this world of sense— this world of eternal eating and drinking and talking non-sense— this world of false shadows and selfishness. There is that beyond all books,

beyond all creeds, beyond the vanities of this world and that is the realisation of God within yourself. A man may believe in all the churches in the world, he may carry on his head all the sacred books ever written, he may baptise himself in all the rivers of the earth; still if he has no perception of God I would class him with the rankest atheist."

[मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि सिद्धान्तों और अन्धविश्वासों का नाम धर्म नहीं है। ईश्वर-दर्शन ही सभी धर्मों का उद्देश्य है। आदर्श और उनकी प्राप्ति के मार्ग भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। ईश्वर-दर्शन इन्द्रियातीत अनुभव है और वह इस अनादि खान-पान, दैनिक प्रलाप और स्वार्थ व भ्रमपूर्ण दुनिया से परे का विषय है। अपनी अन्तरात्मा का यह अनुभव सब धर्मग्रन्थों और विश्वजनीन अनेकता से ऊपर की वस्तु है। चाहे कोई दुनिया के सभी गिरजाघरों में विश्वास करे या अपने सिर पर अब तक लिखे गए समस्त धर्मग्रन्थों को लिए घूम ले या धरती की सभी नदियों में स्नान करके शुद्ध हो ले, किन्तु यदि ईश्वर-दर्शन नहीं हुआ तो मैं उसे नितान्त अनीश्वरवादी की श्रेणी में ही रखूँगा।]

स्वामीजी ने अपने 'राजयोग' नामक ग्रन्थ में कहा है कि आजकल लोग विश्वास नहीं करते कि ईश्वर-दर्शन होता है। लोग कहते हैं, हाँ ऋषियों ने अथवा क्राइस्ट आदि महापुरुषों ने आत्मदर्शन तो चाहे किया था किन्तु आजकल फिर वैसा नहीं होता। स्वामीजी कहते हैं, अवश्य होता है— मन का योग (concentration)-अभ्यास करो, अवश्य हृदय के बीच उन्हें पाओगे—

"The teachers all saw God; they all saw their own souls and what they saw they preached. Only there is this difference that by most of these religions, especially in modern times, a peculiar claim is made, namely, that these experiences are impossible at the present day; they were only possible with a few men, who were the first founders of the religions that subsequently bore their names. At the present time these experiences have become obsolete and therefore we have now to take

religion on belief, this I entirely deny. Uniformity is the rigorous law of nature; what once happened can happen always."

—Raj-yoga : Introductory

[प्राचीन गुरुओं ने ईश्वर-दर्शन किया था; उन सबने आत्मदर्शन किया था और जिसका दर्शन किया, उन्होंने उसी का प्रचार किया। परन्तु आधुनिक युग में प्राय: सभी धर्मों के द्वारा घोषणा की जाती है कि ये अनुभव आज के युग में असम्भव हैं; ये केवल प्रथम धर्म-संस्थापकों के अनुभव के विषय रहे जिनके नाम पर बाद में वह धर्म चला। आजकल तो ऐसे अनुभव लुप्तप्राय हो गए हैं और अब तो हमें धर्म को एक विश्वास मात्र स्वीकार करना होगा। मैं इससे सहमत नहीं हूँ। सार्वभौमिकता प्रकृति का कठोर नियम है और जो एक बार सम्भव हुआ है, वह हमेशा हो सकता है।]

स्वामीजी ने न्यूयार्क नामक नगर में 9 जनवरी, 1896 ईसवी को 'विश्वजनीन धर्म किसे कहते हैं' (The Ideal of Universal Religion), इस विषय में एक वक्तृता दी थी— अर्थात् जिस धर्म में ज्ञानी, भक्त, योगी और कर्मी सब ही सम्मिलित हो सकते हैं। वक्तृता समाप्त होने के समय उन्होंने कहा, ईश्वर-दर्शन ही सब धर्मों का उद्देश्य है; और यह बात भी कही— ज्ञान, कर्म, भक्ति ये सब नाना पथ, नाना उपाय हैं— किन्तु गन्तव्य स्थान एक ही है अर्थात् ईश्वर-साक्षात्कार। स्वामीजी ने कहा—

"Then again all these various yogas (work or worship, psychic control or philosophy) have to be carried out into practice; theories will not do. We have to meditate upon it, realise it until it becomes our whole life. Religion is realisation, nor talk nor doctrine nor theories, however beautiful they may be. It is being and becoming, not hearing or acknowledging. It is not an intellectual assent. By intellectual assent we can come to a hundred sorts of foolish things and change them next day, but this being and becoming is what is Religion."

[और फिर हमें इन विभिन्न योगों को व्यवहार में लाना होगा; सिद्धान्तों से कुछ न होगा। इन पर हमें ध्यान लगाना होगा, इन्हें अनुभव करना होगा तब तक जब तक कि हम इन्हें अपने जीवन में आत्मसात न कर लें। धर्म अनुभूति का विषय है। यह बोलने अथवा उपदेश देने अथवा सिद्धान्त प्रतिपादन करने की वस्तु नहीं— ये भले ही कितने भी अच्छे लगें। यह केवल सुनने की अथवा मान लेने की वस्तु नहीं, धर्म का अर्थ है तद्रूप हो जाना, वही हो जाना। यह केवल बुद्धि से स्वीकार कर लेने की वस्तु नहीं। बौद्धिक स्वीकृति (अनुमोदन) से हम सैंकड़ों मूर्खतापूर्ण कार्य कर सकते हैं और फिर अगले ही दिन उन्हें बदल दे सकते हैं परन्तु वास्तव में धर्म है तद्रूपता अर्थात् वही हो जाना।]

मद्रासियों को जो पत्र उन्होंने लिखा था, उसमें भी वही बात थी— हिन्दु धर्म का विशेषत्व ईश्वर-दर्शन है— वेद का मुख्य उद्देश्य ईश्वर-दर्शन है—

> "The one idea which distinguishes the Hindu religion from every other in the world, the one idea to express which the sages almost exhaust the vocabulary of the Sanskrit language, is that man must realise God. ...Thus to realise God, the Brahman (ब्रह्म) as the Dvaitins (dualists) say, or to become Brahman (ब्रह्म) as the Advaitins say— is the aim and end of the whole teachings of the Vedas."

— Reply to Madras address

[हिन्दू धर्म एक बात में, एक भाव में संसार के अन्य सभी धर्मों से विशिष्ट है, वह भाव जिसे प्रकट करने के लिए ऋषियों ने संस्कृत भाषा का प्राय: समूचा शब्दकोष खाली कर डाला है, वह यह है कि 'मनुष्य को ईश्वर-दर्शन करना ही होगा।'... अतएव द्वैतवादियों के अनुसार ईश्वर-दर्शन अथवा ब्रह्म-दर्शन या फिर अद्वैतवादियों के अनुसार ब्रह्म ही हो जाना— यही उद्देश्य है और यही वेदों के समस्त उपदेशों का ध्येय है।]

स्वामीजी ने 29 अक्तूबर, 1896 ईसवी को लन्दन नगर में वक्तृता दी— विषय था, ईश्वरदर्शन (Realisation)। इस वक्तृता में कठोपनिषद् का पाठ करके नचिकेता की कथा का उल्लेख किया था। नचिकेता ईश्वर को

देखना चाहते हैं, ब्रह्मज्ञान चाहते हैं। धर्मराज यम ने कहा— भाई, यदि ईश्वर को जानना चाहते हो, देखना चाहते हो, तब तो फिर भोग-आसक्ति-त्याग करनी होगी; भोग के रहने पर योग नहीं होता, अवस्तु को प्यार करने पर वस्तुलाभ नहीं होता। स्वामीजी बोले, कहने में तो हम सब ही नास्तिक हैं, कितने ही वाक्यों का आडम्बर लेकर धर्म-धर्म बोलते हैं। यदि एक बार ईश्वर-दर्शन हो जाएगा तब ही प्रकृत (असली) विश्वास आएगा—

> "We are all atheists and yet we try to fight the man who tries to confess it. We are all in the dark; religion is to us a mere nothing. We often consider a man religious who can talk well. But this is not religion....... Religion comes when that actual realisation in our own souls begins. That will be the dawn of religion. ... Then will real faith begin."
>
> [हम सभी नास्तिक हैं। तो भी जो इसे स्वीकारता है उसके साथ हम विवाद करने लग जाते हैं। हम सभी अन्धेरे में हैं। हम लोगों के लिए धर्म केवल बौद्धिक स्वीकृति है, केवल मुख की बात है, और कुछ नहीं। परन्तु यह धर्म नहीं है... प्रत्यक्ष आत्मानुभूति के साथ ही धर्म आरम्भ होता है। ऐसा होने पर ही धर्म का उदय होगा... तभी आस्तिकता का, सही विश्वास का उदय होगा।]

•

तृतीय परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र और सर्वधर्मसमन्वय

(Harmony of all Religions)

नरेन्द्र और दूसरे विद्वान युवकगण, ठाकुर श्रीरामकृष्ण का सब धर्मों के ऊपर श्रद्धा और प्यार देखकर विस्मित हो गए थे। 'सब धर्मों में सत्य है', यह बात

परमहंसदेव मुक्तकण्ठ से कहते। किन्तु वे और भी कहते, सब धर्म ही सत्य हैं— अर्थात् प्रत्येक धर्म द्वारा ईश्वर के निकट पहुँचा जा सकता है। एक दिन (27 अक्तूबर, 1882 ईसवी) केशवचन्द्र सेन कोजागर लक्ष्मी पूजा* के दिन दक्षिणेश्वर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण को मिलने स्टीमर में गए थे और उन्हें लेकर कलकत्ता लौट आए थे। रास्ते में जहाज के ऊपर अनेक विषयों पर बातें हुई थीं। ठीक वे ही सब बातें 13 अगस्त को अर्थात् कई मास पहले हुई थीं। यह सर्व-धर्म-समन्वय की बातें मैं अपनी डायरी (Diary) से उद्धृत कर रहा हूँ।

श्री केदारनाथ चैटर्जी ने दक्षिणेश्वर-काली-मन्दिर में महोत्सव किया था। उत्सव के बाद दक्षिण के बरामदे में बैठकर 3/4 के समय कथावार्ता हो रही है।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— मत पथ। सकल धर्म ही सत्य। जैसे कालीघाट पर नाना पथों से जाया जाता है। धर्म ही कुछ ईश्वर नहीं है। भिन्न-भिन्न धर्म-आश्रय करके ईश्वर के निकट जाया जाता है।

''सब नदियाँ नाना दिशाओं से आती हैं किन्तु सब नदियाँ समुद्र में जाकर गिरती हैं। वहाँ पर सब एक हो जाती हैं।

''छत पर नाना उपायों से चढ़ा जाता है— पक्की सीढ़ी, लकड़ी की सीढ़ी, टेढ़ी-मेढ़ी सीढ़ी और केवल एक रस्सी द्वारा भी चढ़ा जाता है। किन्तु चढ़ने के समय एक को पकड़कर चढ़ना होता है— दो-तीन सीढ़ियों पर पाँव देने से नहीं चढ़ा जाता। किन्तु छत के ऊपर चढ़ जाने पर सब तरह की सीढ़ियों द्वारा ही उतरा जाता है, चढ़ा जाता है।

''इसीलिए पहले एक ही धर्म का आश्रय लेना चाहिए। ईश्वर प्राप्त हो जाने पर वही व्यक्ति सब धर्म-पथों द्वारा ही आना-जाना कर सकता है। जब वह हिन्दुओं के भीतर रहता है, तब सब समझते हैं हिन्दु है, जब मुसलमानों के संग में मिलता है, तब सब सोचते हैं मुसलमान है और फिर जब ईसाइयों के संग मिलता है, तब सब सोचते हैं ये शायद ईसाई हैं।

---

* कोजागर लक्ष्मीपूजा = आश्विन शुक्ला पूर्णिमा की रात्रि की लक्ष्मीपूजा।

"सब धर्मों के लोग एकजन को ही पुकारते हैं। कोई कहता है ईश्वर, कोई राम, कोई हरि, कोई अल्लाह, कोई ब्रह्म। नाम हैं अलग-अलग, किन्तु वस्तु एक ही।

"एक पुकुर के चार घाट हैं। एक घाट से हिन्दु जल पीते हैं, वे कहते हैं 'जल'; और एक घाट पर मुसलमान, वे कहते हैं, 'पानी'; और एक घाट पर ईसाई, वे कहते हैं 'वाटर'; और फिर एक घाट पर कितने सारे लोग कहते हैं 'aqua'। *(सब का हास्य)*। वस्तु एक— जल; नाम अलग-अलग; किन्तु झगड़ा करने का क्या प्रयोजन है? सब ही तो एक ईश्वर को पुकार रहे हैं और सब ही उनके पास जाएँगे।"

एक भक्त *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— यदि अन्य धर्म में भ्रम रहे?

श्रीरामकृष्ण— फिर भ्रम किस धर्म में नहीं है? सब ही कहते हैं, मेरी घड़ी ठीक चल रही है। किन्तु किसी की भी घड़ी एकदम (बिल्कुल) ठीक नहीं चलती। सब घड़ियों को ही बीच-बीच में सूर्य के संग मिलाना पड़ता है।

"भूल किस धर्म में नहीं है? फिर यदि भूल रहे तो भी यदि आन्तरिक हो, यदि व्याकुल होकर उन्हें पुकारे, तो फिर वे सुनेंगे ही सुनेंगे।

"कल्पना करो, एक बाप के बहुत-से लड़के हैं— छोटे, बड़े। सब ही 'बाबा' (पिता) कहकर उन्हें बुला नहीं सकते। कोई कहता है, 'बाबा', कोई कहता है 'बा', कोई फिर केवल 'पा' ही कह पाता है। जो 'बाबा' नहीं बोल सकते, उनके ऊपर क्या पिता क्रोध करेंगे? *(सब का हास्य)*। ना, पिता सब को ही बराबर प्यार करेंगे।*

"लोग मन में सोचते हैं मेरा धर्म ठीक है; 'ईश्वर क्या वस्तु है', मैं समझ गया हूँ; वे लोग नहीं समझ सके हैं। मैं उन्हें ठीक पुकार रहा

---

* ठीक यही बात एक अंग्रेज़ी ग्रन्थ में है— Maxmuller's Hibbert Lectures. मैक्समूलर ने भी इसी उपमा द्वारा समझाया है कि जो लोग देव-देवी-पूजा करते हैं, उनसे घृणा करना उचित नहीं है।

हूँ, वे लोग ठीक नहीं पुकार सकते; अतएव ईश्वर हमारे ऊपर कृपा करते हैं, उनके ऊपर नहीं करते। ऐसे लोग यह नहीं जानते कि ईश्वर तो सब के ही बाप-माँ हैं, आन्तरिक होने पर वे सबके ऊपर ही दया करेंगे।''

प्रेम का धर्म क्या है? यह बात तो उन्होंने बार-बार कही है। किन्तु कितने जन धारणा कर पाए हैं, श्रीयुक्त केशवसेन कितना तक कर सके थे?

और स्वामी विवेकानन्द ने जगत के सम्मुख इसी प्रेम के धर्म का अग्निमन्त्र में दीक्षित होकर प्रचार किया। ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने मतुयार बुद्धि (dogmatism) के लिए बार-बार मना किया था। 'मेरा धर्म सत्य है और तुम्हारा मिथ्या', इसी का ही नाम 'मतुयार बुद्धि' है— यही तो है जितने भी अनर्थों का मूल। स्वामीजी ने इसी अनर्थ की बात को शिकागो की धर्म समिति के सामने कहा— ईसाई, मुसलमान इत्यादि अनेक धर्मों के नाम पर ही कितना रक्तपात, काटाकाटि, मारामारी हुई है।

"Sectarianism, bigotry and its horrible descendant fanaticism have long possessed this beautiful earth. They have filled the earth with violence, drenched it often and often with human blood, destroyed civilization and sent whole nations to despair."

— Lecture on Hinduism (Chicago, Parliament of Religions)

[साम्प्रदायिकता, धर्मान्धता तथा इनसे उत्पन्न भयंकर हठधर्मिता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुके हैं। इन्होंने पृथ्वी को हिंसा से भर दिया, बार-बार मानव-रक्त से इस धरती को सींचा, सभ्यताएँ नष्ट कर डालीं और इस प्रकार समस्त जातियों को निराश कर दिया।]

स्वामीजी ने अन्य एक वक्तृता में 'सकल धर्म सत्य हैं', यह बात विज्ञानशास्त्र के प्रमाण द्वारा समझाने की चेष्टा की है—

"If any one here hopes that this unity will come by the triumph of any one of these religions and destruction

of the others, to him I say, Brother, yours is an impossible hope. Do I wish that the Christian would become the Hindu? God forbid. Do I wish that the Hindu or Buddhist would become Christian? God forbid.

"The seed is put in the ground, and earth and air and water are placed around it, Does the seed become the earth or the air or the water? No, it becomes a plant, it assimilates the air, the earth and the water, converts them into plant substance and grows a plant.

"Similar is the case with religion. The Christian is not to become a Hindu or a Buddhist nor a Hindu or a Buddhist to become a Christian. But each must assimilate the spirit of the others and yet preserve its own individuality and grow according to its own law of growth."

[यदि कोई यह आशा करे कि किसी एक धर्म की विजय एवं अन्य धर्मों के विनाश से यह एकता स्थापित हो जाएगी, तो यह उसकी भूल होगी। ईश्वर न करे कि हिन्दू को ईसाई या ईसाई को हिन्दू या ईसाई को बौद्ध अथवा बौद्ध को ईसाई बनना पड़े।

बीज धरती में डाल दिया गया है, वह हवा-पानी पाकर स्वयं पौधे के रूप में विकसित होगा। उसे धरती, पानी या हवा बनना नहीं होगा।

यही बात धर्म के विषय में है। प्रत्येक को दूसरे धर्मों के गुण स्वीकार करते हुए, ग्रहण करते हुए और अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व भी रखते हुए अपने विकास के नियमों के अनुसार आगे बढ़ना होगा।]

अमरीका में स्वामीजी ने Brooklyn Ethical Society नामक सभा में हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में एक वक्तृता दी थी। अध्यापक डॉ० लेविस जेन्स (Dr. Lewis Janes) ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। वहाँ पर भी पहली बात, सर्वधर्म-समन्वय पर हुई थी। स्वामीजी ने कहा, 'एकजन का धर्म सत्य और सब का धर्म मिथ्या है', ऐसा नहीं हो सकता। 'केवल मेरा धर्म

सत्य है' कहना तो एक रोग विशेष ही कहना होगा। सबके पाँच उंगलियाँ हैं, और एकजन के यदि छ: होती हैं तो कहना पड़ेगा कि यह उसका एक रोग विशेष है—

> "Truth has always been universal. If I alone were to have six fingers on my hand while all of you have only five, you would not think that my hand was the true intent of nature, but rather that it was abnormal and diseased. Just so with religion. If one creed alone were to be true and all others untrue, you would have again to say that, that religion is diseased. If one religion is true, all the others must be true. Thus the Hindu religion is your property as well as mine.
>
> — Lecture at Brooklyn

स्वामीजी शिकागो-धर्म-महासभा के सामने जिस दिन पहला भाषण देने के लिए खड़े हुए थे, जिस वक्तृता को सुनकर प्राय: छ: हजार लोगों ने मुग्ध होकर मुक्तकण्ठ से आसन छोड़कर उनकी अभ्यर्थना (स्वागत) की थी*, उस वक्तृता में भी यही समन्वय-वार्ता थी। स्वामीजी बोले थे—

> "I am proud to belong to a religion which has taught the world both tolerance and universal acceptance. We believe not only in universal toleration, but we accept all religions as true. I am proud to tell you that I belong to a religion into whose sacred language, the Sanskrit, the word 'exclusion' is untranslatable."
>
> [मुझे उस धर्म से संयुक्त होने का गर्व है जिसने विश्व को सहनशीलता और सह-बन्धुत्व का पाठ पढ़ाया है। सर्व सहिष्णु होने में ही हमारा विश्वास नहीं है,

---

* "When Vivekananda addressed the audience as sisters and brothers of America, there arose a peal of applause that lasted for several minutes." (Dr. Barrows's Report) "But eloquent as were many of the brief speeches, no one expressed so well the spirit of the Parliament of Religions and its limitations as the Hindu monk... He is an Orator by divine right.

—New York Critique, 1893

अपितु हम सभी धर्मों को सत्य मानते हैं। मुझे उस धर्म से सम्बन्धित होने का गर्व है जिसकी पवित्र भाषा संस्कृत में 'एक्सक्लूजन' का अनुवाद सम्भव नहीं है।]

•

चतुर्थ परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र, कर्मयोग और स्वदेश हितैषणा

ठाकुर श्रीरामकृष्ण सर्वदा कहते, 'मैं और मेरा' यही तो है अज्ञान, 'तुम और तुम्हारा' यही है ज्ञान। एक दिन सुरेश मित्र के बागान में महोत्सव हो रहा था— रविवार, 15 जून, 1884 ईसवी। ठाकुर श्रीरामकृष्ण और भक्तगण अनेक ही उपस्थित थे। ब्राह्मसमाज के कई भक्तगण भी आए हुए थे। ठाकुर ने प्रतापचन्द्र मजुमदार और अन्यान्य भक्तों से कहा—

"देखो, 'मैं और मेरा' यही है अज्ञान। 'काली-मन्दिर रासमणि ने बनाया है', यह बात ही लोग कहते हैं। कोई यह नहीं कहता कि ईश्वर ने बनाया है। ब्राह्मसमाज को अमुक बना गया है, यही बात ही लोग कहते हैं। यह बात फिर कोई नहीं कहता कि ईश्वर की इच्छा से यह बना है। 'मैंने किया है'— इसी का नाम अज्ञान है। 'हे ईश्वर, मेरा कुछ भी नहीं है, 'यह मन्दिर मेरा नहीं है' यह 'काली-मन्दिर' मेरा नहीं है, 'समाज' मेरा नहीं है, 'सब तुम्हारी ही वस्तुएँ हैं'; यह स्त्री-पुत्र-परिवार 'यह सब कुछ भी मेरा नहीं है; सब तुम्हारी ही वस्तुएँ हैं', ज्ञानी की ऐसी वाणी होती है।

'मेरी वस्तु-मेरी वस्तु' कह कर इन सब चीजों को जो प्यार करना है, उसी का नाम माया है। सबको ही प्यार करने का नाम दया है। केवल ब्राह्मसमाज के लोगों को प्यार करता हूँ, इसका नाम माया है। सब देशों के लोगों को प्यार करता हूँ, सब धर्मों के लोगों को प्यार, यह दया से होता है, भक्ति से होता है। माया से मनुष्य बद्ध हो जाता है,

भगवान से विमुख हो जाता है। दया से ईश्वर-लाभ होता है। शुकदेव, नारद, इन्होंने दया रखी हुई थी।

ठाकुर की वाणी— केवल देश के लोगों को प्यार करना, इसका नाम माया है। सब देशों के लोगों को प्यार करना, सब धर्मों के लोगों को प्यार करना, यह दया से होता है, भक्ति से होता है। किन्तु स्वामी विवेकानन्द स्वदेश के लिए इतने व्यस्त (चिन्तित) क्यों हुए थे?

स्वामीजी ने शिकागो धर्मसभा में एक दिन कहा था, अपने गरीब स्वदेशवासियों के लिए यहाँ पर अर्थ (धन) भिक्षा करने के लिए आया था, किन्तु देख लिया कि भारी कठिन है— ईसाई धर्म मानने वालों के पास से जो ईसाई नहीं हैं उनके लिए रुपया जमा करना बड़ा कठिन है।

> "The crying evil in the East is not religion— they have religion enough, but it is bread that the suffering millions of burning India cry out for with parched throats;...
>
> "I came here to seek aid for my impoverished people and fully realised how difficult it was to get help for heathens from Christians in a Christian land."
>
> — Speech before the Parliament of Religions (Chicago Tribune)

स्वामी जी की एक प्रधान शिष्या सिस्टर निवेदिता (भगिनी निवेदिता, Miss Margaret Noble) कहती हैं कि जब स्वामीजी शिकागो शहर में निवास कर रहे थे, तब भारतवासियों में से किसी के साथ भी मेल होने पर वे उसे अतिशय प्यार करते थे, वह चाहे किसी भी जाति का क्यों न हो— हिन्दु हो या मुसलमान या पारसी या जो भी हो। वे स्वयं जिस किसी भाग्यवान के घर में अतिथि रूप में रहा करते थे, वहाँ पर ही अपने देश के व्यक्ति को ले आते थे। घर के मालिक भी उनकी खूब प्यार से सेवा किया करते, और वे अच्छी तरह जानते थे कि उन (भारतीयों) की प्यार से सेवा न करने पर, स्वामीजी निश्चय ही उनका घर छोड़कर अन्य स्थान पर चले जाएँगे—

"At Chicago any Indian man attending the great world

> Bazar, rich or poor, high or low, Hindu, Mahomeden, Parsi, what not, might at any moment be brought by him to his hosts for hospitality and entertainment and they well knew that any failure of kindness on their part to the least of these would immediately have lost them his presence."

देश के लोगों की गरीबी का दु:ख कैसे हटे, उनकी किस प्रकार सत्शिक्षा हो, किस प्रकार उनका धर्मसंचय हो, इसी के लिए स्वामी जी सर्वदा चिन्ता किया करते थे। किन्तु वे इस देश के व्यक्ति के लिए जिस प्रकार दु:खित थे, अफ्रीकावासी नीग्रो के लिए भी उसी प्रकार दु:खित रहते थे। श्रीमती निवेदिता कहती हैं, स्वामी जी जब दक्षिण (United States) में भ्रमण कर रहे थे, किसी-किसी ने उन्हें अफ्रीकावासी (coloured man) सोचकर घर से हटा दिया था। किन्तु जब उन्होंने सुना ये वह नहीं हैं, ये हिन्दु संन्यासी और विख्यात स्वामी विवेकानन्द हैं तब उन्होंने ही अति आदर-सम्मान से उन्हें ले जाकर उनकी सेवा की थी। उन्होंने कहा, "स्वामी जी, जब हम ने आप से कहा था, 'तुम क्या अफ्रीकावासी हो' तब आप कुछ भी न बोलकर चले क्यों गए थे?"

स्वामी जी बोले—

"क्यों, अफ्रीकावासी नीग्रो क्या मेरा भाई नहीं है?" अर्थात् स्वदेशवासी क्या जगत् से अलग हैं? नीग्रो को जैसे प्यार करना, स्वदेशवासी को भी उसी प्रकार प्यार करना, किन्तु उनके साथ सर्वदा ही रहना होता है, तभी उनकी सेवा पहले है। इसी का नाम है अनासक्त सेवा। इसी का ही नाम है कर्मयोग। सब ही कर्म करते हैं, किन्तु कर्मयोग बड़ा ही कठिन है। सब कुछ त्याग करके बहुत दिनों तक निर्जन में भगवान का ध्यान-चिन्तन किए बिना स्वदेश का ऐसा उपकार नहीं किया जा सकता। 'मेरा देश' कहकर नहीं, तब तो फिर वह माया हो गई; 'तुम्हारे (ईश्वर के) ये हैं' इसलिए इनकी सेवा करूँगा। तुम्हारा आदेश है, तभी देश की सेवा करूँगा; तुम्हारा ही यह काज है, मैं तुम्हारा दास हूँ, तभी यह व्रत पालन कर रहा हूँ। सफलता हो या असफलता

हो, वह तुम जानो; अपने नाम के लिए नहीं, इससे तुम्हारी महिमा का प्रकाश होगा।

यथार्थ स्वदेश हितैषणा (Ideal Patriotism) किसे कहते हैं, लोकशिक्षा के लिए स्वामीजी ने इस दुरूह (कठिन) व्रत को पकड़ा था। जिनका घर-परिवार है, कभी भी भगवान के लिए जो व्याकुल नहीं हुए, जो लोग 'त्याग' यह वाणी सुनकर ईषत् (हल्की) हँसी हँस देते हैं, जिन का मन सर्वदा कामिनी-काञ्चन और इस पृथ्वी के मान-यश की ओर है, जो 'ईश्वर-दर्शन जीवन का उद्देश्य है', यह सुनकर अवाक् हो जाते हैं, वे लोग स्वदेश हितैषणा के इस महान् उच्च आदर्श को किस प्रकार ग्रहण करेंगे? स्वामीजी स्वदेश के लिए रोते तो चाहे थे, किन्तु संग-संग सर्वदा यह भी याद रखते थे कि इस अनित्य संसार में ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु है। स्वामीजी विलायत से लौटने पर हिमालय-दर्शन करने के लिए अलमोड़ा गए थे। अलमोड़ावासी-जन उनकी साक्षात् नारायणबोध से पूजा करने लगे। स्वामीजी नगाधिराज देवात्मा हिमगिरि की अति उच्च चोटियों का सन्दर्शन करके भाव में विभोर हो गए। वे बोले—

> "आज इस पवित्र उत्तराखण्ड में वही पवित्र तपोभूमि देख रहा हूँ, जहाँ पर ऋषिगण सर्वत्याग करके इस संसार के कोलाहल से हटकर रातदिन ईश्वरचिन्तन किया करते थे। उनके ही श्रीमुख से वेदमन्त्र निकले थे। हाय! कब मेरा वह दिन होगा? मेरी कितने ही काम करने की इच्छाएँ तो चाहे हैं, किन्तु इस पवित्र भूमि में अनेक दिन बाद फिर दोबारा आने पर सब वासनाएँ इस समय हट रही हैं। इच्छा हो रही है, अकेले बैठकर अन्त के कुछ दिन हरिपादपद्मों के चिन्तन में गम्भीर समाधि में निमग्न होकर काट दूँ।
>
> "It is the hope of my life to end my days somewhere within this Father of Mountains, where Rishis lived—where Philosophy was born"
>
> — Speech at Almora

हिमालय को देखकर और कर्म करने की इच्छा नहीं होती— मन में एक ही चिन्तन का उदय होता है— कर्मसंन्यास।

"As peak after peak of this Father of Mountains began to appear before my sight all those propensities to work, that ferment that had been going on in my brain for years seemed to quiet down and mind reverted to that One Eternal Theme which the Himalayas always teach us, that one theme which is reverberating in the very atmosphere of the place; the one theme murmur of which I hear even now in the rushing whirlpools of its rivers— Renunciation."

यह कर्म-संन्यास, यह त्याग कर सकने पर ही मनुष्य अभय हो जाता है— और सब वस्तु ही भयावह है।

'सर्वं वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम्।'

"Everything in this life is fraught with fear.
It is renunciation that makes one fearless."

"यहाँ पर आने पर फिर साम्प्रदायिक भाव नहीं रहता, धर्म के लिए झगड़ा, विवाद कहीं भाग जाता है। केवल एक ही महान सत्य की धारणा हो जाती है ईश्वर-दर्शन ही सत्य है, और सब जल के फेन (झाग) की भाँति है— भगवान की पूजा ही जीवन में एकमात्र प्रयोजन है, और सब ही मिथ्या है।

"ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। अथवा भंवरा कमल के ऊपर बैठ जाए तो फिर भन-भन नहीं करता।"

"Strong souls will be attracted to this Father of Mountains in times to come, when all this fight between sects and all those differences in dogmas will not be remembered any more, and quarrel between your religion and my religion will have vanished altogether,

when mankind will understand that there is but one Eternal Religion and that is the perception of the Divine within and the rest is mere froth; such ardent souls will come here, knowing that the world is but vanity, knowing that everything is useless except the worship of the Lord and the Lord alone.''

— Speech at Almora

ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते, 'अद्वैतज्ञान आँचल में बाँधकर जहाँ इच्छा हो, जाओ।' स्वामी विवेकानन्द ने अद्वैतज्ञान आँचल में बाँधकर कार्यक्षेत्र में अवतरण किया था। संन्यासी के लिए गृह, धन, परिजन, आत्मीय, कुटुम्ब, स्वदेश, विदेश फिर और है भी क्या? याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा था, ''ईश्वर को बिना जाने सब धन, विद्या आदि का क्या होगा? मैत्रेयी, पहले उन्हें जानो, तत्पश्चात् और बात।''

स्वामीजी ने जगत को यही दिखलाया। उन्होंने जैसे कहा, हे जगद्वासियो! पहले विषय-भोग त्याग करके निर्जन में भगवान की आराधना करो, उसके बाद जो इच्छा हो करो, किसी में भी दोष नहीं है; स्वदेश की सेवा करो; इच्छा हो कुटुम्ब-पालन करो, किसी में भी दोष नहीं है; क्योंकि, तुम जब समझते हो कि सर्वभूतों में वे हैं— उनके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है— संसार, स्वदेश उनके बिना नहीं है। भगवान के साक्षात्कार के बाद देखोगे वे ही परिपूर्ण हुए रह रहे हैं। ऋषि वशिष्ठदेव ने रामचन्द्र से कहा था, 'राम, तुम जो संसार-त्याग करोगे कहते हो, मेरे साथ विचार करो; यदि ईश्वर इस संसार के बिना हों तब ही तो त्याग करना'।* रामचन्द्र ने आत्मा का साक्षात्कार किया हुआ था, इसीलिए चुप रहे।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते, ''छुरी का व्यवहार (इस्तेमाल) जानकर छुरी हाथ में लो।'' स्वामी विवेकानन्द ने दिखाया कि यथार्थ कर्मयोगी किसे कहते हैं। देश का क्या उपकार करोगे? स्वामीजी जानते थे कि देश के

* योगवाशिष्ठ।

गरीबों को धन देकर सहायता करने की अपेक्षा और अनेक महत् कार्य हैं। ईश्वर को जना देना प्रधान कार्य है। उसके बाद है विद्यादान; उसके परे जीवनदान; उसके परे अन्न-वस्त्र दान। संसार का दुःख तुम कितने दिनों के लिए समाप्त करोगे?

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने कृष्णदास पाल[1] से पूछा था, "अच्छा, जीवन का उद्देश्य क्या है?" कृष्णदास बोले, "मेरे मत में तो है जगत का उपकार करना, जगत का दुःख दूर करना।" ठाकुर विरक्त (परेशान) होकर बोले, "तुम्हारी वैसी राँड़ी पुती बुद्धि[2] क्यों? जगत का दुःख-नाश तुम क्या करोगे? जगत क्या इतना-सा है? वर्षाकाल में गंगा पर केंकड़े होते हैं, जानते हो? इसी प्रकार असंख्य जगत हैं। इस जगत के जो पति हैं वे सब की ही खबर लेते हैं। उन्हें पहले जानना— यह जीवन का उद्देश्य है। तत्पश्चात् जो हो सो करो।" स्वामीजी भी एक स्थान पर कह गए हैं—

> "Spiritual knowledge is the only thing that can remove our miseries for ever, and other knowledge satisfies wants only for a time... He who gives spiritual knowledge is the greatest benefactor of mankind,... Next to spiritual help (ब्रह्मज्ञान-दान) comes intellectual help (विद्यादान)— the gift of secular knowledge. This is far higher than the giving of food and clothes; the next gift is the gift of life and the fourth, the gift of food."
>
> — Karmayoga (New York), My plan of Compaign (Madras)
> He delivered the lectures at these two places.

ईश्वर-दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है और इस देश की यही एक बात है। पहले एक यह बात उसके पश्चात अन्य बात। 'राजनीति' (Politics)

1 श्री कृष्णदास पाल ने दक्षिणेश्वर-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन किए थे।

2 राँड़ी पुती बुद्धि— विधवा के बेटे की बुद्धि, हीन बुद्धि; क्योंकि, वह बेटा बड़े नीच तरीकों से पल कर बड़ा होता है; औरों की खुशामद करके इत्यादि।

पहले से ही कहने से नहीं चलेगा। पहले अनन्यमन होकर भगवान का ध्यान–चिन्तन करो, हृदय के बीच में उनका अपरूप दर्शन करो। उनको पाकर तब 'स्वदेश' का मंगलसाधन कर सकोगे; क्योंकि तब मन अनासक्त हो जाता है; 'मेरा देश' कहकर सेवा नहीं होती। तब सर्वभूतों में भगवान हैं, यह कहकर उनकी सेवा होती है। तब स्वदेश–विदेश में भेदबुद्धि नहीं रहेगी। तब किस प्रकार जीव का मंगल साधन होता है, ठीक समझ सकेगा। ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते, "दाबाबोड़े (शतरंज की गोटियाँ, मोहरे) से जो खेलते हैं, वे उतनी ठीक चाल नहीं समझ सकते; जो उदासीन हैं, केवल बैठकर खेल को देखते हैं, वे ऊपर वाली चाल अच्छी बतला दे सकते हैं।" क्योंकि उदासीन को अपने लिए कुछ भी आवश्यक नहीं होता, राग–द्वेष–विमुक्त उदासीन अनासक्त जीवन्मुक्त महापुरुष निर्जन में बहुत दिन साधन करके जिसे प्राप्त करके बैठा हुआ है, उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता—

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥ [गीता 6 : 22]

हिन्दू की राजनीति, समाजनीति इसीलिए समस्त ही धर्म–शास्त्र है। मनु, याज्ञवल्क्य, पराशर इत्यादि महापुरुष इन सब धर्म–शास्त्रों के प्रणेता हैं। उन्हें किसी का भी प्रयोजन नहीं है। तथापि भगवान द्वारा प्रत्यादिष्ट होकर (आदेश पाकर) गृहस्थियों के लिए उन्होंने शास्त्र बनाए हैं। वे लोग उदासीन होकर शतरंज के मोहरों की चाल बता देते हैं, जभी देश–काल–पात्र की विशेषता से उनकी बातों में एक भी भूल होने की सम्भावना नहीं है।

स्वामी विवेकानन्द भी कर्मयोगी थे। अनासक्त होकर परोपकार–व्रतरूप, जीव–सेवा रूप कर्म किया है। जभी तो कर्मियों के सम्बन्ध में उनका इतना मूल्य है। उन्होंने अनासक्त होकर इस देश का मंगलसाधन किया है, जिस प्रकार पहले के महापुरुषगण जीव के मंगल के लिए बराबर करते रहे हैं। इस निष्काम धर्म के पालन के लिए हम भी जिस प्रकार उनका पदानुसरण कर सकें। किन्तु यह कितना कठिन व्यापार (काम) है! पहले हरिपादपद्म लाभ करना होगा। उसके लिए विवेकानन्द की न्यायीं त्याग और तपस्या करनी होगी। तब यह अधिकार हो सकता है।

धन्य त्यागी महापुरुष! तुमने यथार्थ ही गुरुदेव का पदानुसरण किया है। गुरुदेव का महामन्त्र— 'पहले ईश्वर-लाभ, उसके बाद अन्य बात', तुमने ही साधन किया है। तुमने ही समझ लिया था, भगवान को छोड़ देने से 'अतिवादी' होने से, यह संसार यथार्थ ही स्वप्नवत् है, जादूगरी है; इसीलिए तो सर्वत्याग करके पहले उनका साधन किया था। जब देख लिया सर्ववस्तु का प्राण वे हैं, जब देख लिया उनके बिना तो कुछ भी नहीं है, तब फिर इस संसार में मनोनिवेश किया; तब हे महायोगिन्! सर्वभूतस्थ उसी हरि की सेवा के लिए फिर दोबारा कर्मक्षेत्र में अतवरण किया; तब तुम्हारे गम्भीर अपार प्रेम के अधिकारी सब ही हो गए— हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, विदेशी, स्वदेशवासी, धनी, दरिद्र, नर-नारी, सब को ही तुम ने प्रेमालिंगन-दान किया है! तीव्र वैराग्य के वश में होकर जिस गर्भधारिणी मातादेवी का त्याग करके, नेत्रों के जल में बहाकर, गेरुआ वस्त्र धारण करके चले गए थे, तब फिर उसी माँ को फिर दोबारा मिले और वात्सल्य स्वीकार करके उनकी मनोवाँछा पूर्ण की! तुमने नारद आदि, जनकादि की न्यायीं लोकशिक्षा के लिए कर्म किया था!

●

पञ्चम परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र, केशवसेन और साकार पूजा

(ईश्वर साकार या निराकार)

एक दिन श्री केशवचन्द्र सेन शिष्यों को लेकर दक्षिणेश्वर-काली-मन्दिर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए गए थे। केशव के साथ निराकार के सम्बन्ध में अनेक बातें हुईं। परमहंस ने उनसे कहा, 'मैं मिट्टी या पत्थर की काली मन में नहीं लाता। चिन्मयी काली! जो ब्रह्म; वे ही काली। जब निष्क्रिय तब 'ब्रह्म'; जब सृष्टि-स्थिति-प्रलय करती हैं, तब काली अर्थात् जो

काल के संग में रमण करती हैं। काल अर्थात् ब्रह्म। उनमें एक दिन निम्नलिखित कथावार्ता हो रही थी—

> **श्रीरामकृष्ण** *(केशव के प्रति)*— कैसे है, जानते हो? जैसे सच्चिदानन्द हैं समुद्र— कूल-किनारा नहीं। भक्ति-हिम से इसी समुद्र में स्थान-स्थान पर जल बरफ हो जाता है, स्थान-स्थान पर जल बरफ के आकार में जम जाता है; अर्थात् भक्त के निकट वे साक्षात् होकर कभी-कभी साकार रूप में दिखाई देते हैं। और फिर ब्रह्म-ज्ञान-सूर्य के उदय होने पर बरफ गल जाय— अर्थात् 'ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या' इस विचार के बाद समाधि हो जाने से रूप-राप सब उड़ जाते हैं। तब 'वे क्या हैं', मुख से बोला नहीं जाता— मन-बुद्धि-अहं-तत्त्व द्वारा उन्हें पकड़ा नहीं जाता।
>
> "जो व्यक्ति एक को ठीक-ठीक जानता है, वह और एक को भी जान सकता है। जो निराकार को जान सकता है, वह साकार को भी जान सकता है। जो मुहल्ले में ही नहीं गया— कौन-सा श्यामपुकुर है, कौन-सा तेलीपाड़ा है, कैसे जानेगा?"

सब ही निराकार की पूजा के अधिकारी नहीं हैं, इसीलिए साकार पूजा का विशेष प्रयोजन है, यह बात भी परमहंसदेव समझा रहे हैं। वे बोले—

> "एक माँ के पाँच बेटे हैं। माँ ने मछली को नाना प्रकार से तैयार किया है, जिसे जैसी पेट में सहन होती है। किसी के लिए मछली का पुलाव बनाया है। जिसके पेट में असुख है, उसके लिए मछली का झोल (रसा) बनाया है। जो जिसके पेट को सहन हो।"

इस देश में साकार पूजा होती है। ईसाई मिशनरी लोग अमरीका और यूरोप में इस देश-वासियों को असभ्य जाति कहकर वर्णन करते हैं। वे कहते हैं कि भारत-वासीगण मूर्तिपूजा करते हैं— और उनकी अवस्था बड़ी शोचनीय है।

स्वामी विवेकानन्द ने इसी साकार पूजा का अर्थ अमरीका में प्रथम ही समझाया था; वे बोले थे, भारतवर्ष में मूर्ति-पूजा नहीं होती—

"At the very outset I may tell you there is no polytheism in India. In every temple, if one stands by and listens, he will find the worshippers applying all the attributes of God to these images."

— Lectures on Hinduism (Chicago)

[मैं पहले ही तुम्हें बता दूँ कि भारत में मूर्ति-पूजा (polytheism) नहीं है। प्रत्येक मन्दिर में कोई यदि शान्त खड़ा होकर सुने तो पाएगा कि भक्तलोग भगवान के ये सब गुण इन मूर्तियों में आरोपित कर रहे हैं।]

ईश्वर का सोचने लगते ही साकार-चिन्तन के अतिरिक्त और कुछ नहीं आ सकता, यह बात मनोविज्ञान (psychology) की सहायता द्वारा स्वामीजी समझाने लगे। वे बोले—

'Why does a Christain go to Church? Why is the Cross holy? Why is the face turned towards the sky in prayers? Why are there so many images in the Catholic Church? Why are there so many images in the minds of Protestants when they pray? My brothern, we can no more think about anything without a material image than we can live without breathing. Omnipresence to almost the whole world means nothing. Has God superficial area? If not, then when we repeat the word we think of the extended earth; that is all."

— Lectures on Hinduism (Chicago)

[एक ईसाई गिरजाघर में क्यों जाता है? 'क्रॉस' पवित्र क्यों माना जाता है? प्रार्थना-मुद्रा में चेहरा आकाश की ओर क्यों उठा होता है? कैथोलिक चर्च में

इतनी छवियाँ क्यों होती हैं ? प्रार्थना के समय 'प्रोटेस्टेण्टस्' के मन में इतनी छवियाँ क्यों होती हैं ? भाइयो, जैसे हम सांस लिए बिना नहीं रह सकते, वैसे ही भौतिक छवि के बिना हम किसी विषय को सोच नहीं सकते। विश्व-व्यापकता का अर्थ कुछ नहीं है। ईश्वर का क्या कोई बाहरी क्षेत्र है ? यदि नहीं, तो जब हम शब्द की पुनरावृत्ति करते हैं, तो निश्चय ही हम विस्तृत भूखण्ड की कल्पना मन में लिए होते हैं।]

स्वामीजी ने और भी कहा— अधिकारी भेद से साकार-पूजा और निराकार-पूजा होती है। साकार-पूजा कुसंस्कार नहीं, मिथ्या नहीं, यह एक निम्न श्रेणी का सत्य है।

"If a man can realise his divine nature most easily with the help of an image, would it be right to call it a sin? Nor even when he has passed that stage, should he call it an error? To the Hindu, man is not travelling from error to truth but from lower to higher truth."

[यदि कोई व्यक्ति अपनी दिव्य प्रकृति (भाव) को मूर्ति की सहायता से अत्यन्त आसानी से जान लेता है तो क्या उसे पाप कहना ठीक होगा ? या वह जब उस अवस्था को पार कर लेता है तो भी क्या इसे भूल (गलती) कहें ? हिन्दू की दृष्टि में मनुष्य भूल से (गलती से) सत्य की ओर नहीं बढ़ रहा बल्कि वह निम्न सत्य से उच्च सत्य की ओर अग्रसर होता है।]

स्वामीजी कहते हैं— सबके लिए एक नियम नहीं हो सकता। ईश्वर एक हैं; किन्तु अपने नाना भक्तों के निकट वे नाना भावों में प्रकाशित होते हैं। हिन्दू इस बात को समझता है।

"Unity in variety is the plan of nature and the Hindu has recognised it. Other religions lay down certain fixed dogmas and try to force society to adopt them; they place before society one kind of coat which must fit Jack and John and Henry, all alike. If it does not fit John and

Henry, he must go without a coat to cover his body. The Hindu have discovered that the Absolute can be realised, thought of or stated only through the Relative."

[विभिन्नता में एकता प्रकृति का नियम है। हिन्दू ने इसे जान लिया है। अन्य धर्मों ने कुछ सिद्धान्त बना लिए हैं और वे उन्हें मानने के लिए समाज को मजबूर करते हैं। वे एक ही तरह का कोट जैक, जोहन, हेनरी को पहनाना चाहते हैं। यदि नहीं ठीक आता तो उन्हें बिना कोट के रहना होगा। हिन्दू ने खोज लिया है कि पूर्ण (परमेश्वर) को जाना जा सकता है— उस पर विचार किया जा सकता है और उसे बताया जा सकता है केवल सम्पर्कित सम्बन्ध द्वारा।]

•

षष्ठ परिच्छेद

श्रीरामकृष्ण, ब्राह्मसमाज, नरेन्द्र और पापवाद —The Doctrine of Sin

स्वामीजी के गुरुदेव भगवान श्रीरामकृष्ण कहते थे— "ईश्वर का नाम लेने और उनका आन्तरिक चिन्तन करने से पाप पलायन कर जाता है जैसे रूई का पहाड़ अग्निस्पर्श से एक क्षण में जल जाता है अथवा जैसे वृक्ष पर बहुत-से पक्षी बैठे हैं, ताली बजाने से सब उड़ जाते हैं।"

एक दिन केशवबाबू के साथ बातें हो रही थीं—

श्रीरामकृष्ण *(केशव के प्रति)*— मन से ही बद्ध, मन से ही मुक्त! मैं मुक्त पुरुष हूँ— संसार में रहूँ, अथवा अरण्य (जंगल) में ही रहूँ— मुझे क्या बन्धन? मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, राजाधिराज का बेटा, मुझे फिर कौन बाँधेगा? यदि साँप काट ले तो 'विष नहीं है, विष नहीं है', जोर करके कहने पर विष छोड़ जाता है। वैसे ही 'मैं बद्ध नहीं, मैं

बद्ध नहीं, मैं मुक्त हूँ' यह बात बोलते-बोलते वही हो जाता है। मुक्त ही हो जाता है।

"ईसाईयों की एक किताब (बाइबल) किसी ने दी। मैंने पढ़कर सुनाने के लिए कहा। उसमें बस केवल 'पाप ही पाप' लिखा था। जो व्यक्ति बार-बार कहता है, मैं बद्ध, मैं बद्ध, वह अन्त में बद्ध ही हो जाता है। जो रात-दिन 'मैं पापी' 'मैं पापी' करता है, वह वैसा ही हो जाता है।

"ईश्वर के नाम पर ऐसा विश्वास होना चाहिए कि मैंने जब उनका नाम किया है, मुझे क्या अब भी पाप रहेगा? मेरा फिर अब बन्धन कैसा, पाप कैसा? कृष्णकिशोर परम हिन्दु था— सदाचारनिष्ठ ब्राह्मण। वह वृन्दावन में गया था। एक दिन भ्रमण करते-करते प्यास लगी। एक कुएँ के पास जाकर देखा, एक व्यक्ति खड़ा है। उससे कहा, 'अरे भाई, तू मुझे एक लोटा जल दे सकता है? तेरी क्या जात है?' वह बोला, 'महाराज, मैं हीन जात का हूँ— मोची।' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू कह शिव, और जल निकाल दे।'

"भगवान का नाम करने से देह-मन सब शुद्ध हो जाता है। केवल 'पाप' और 'नरक', ऐसी बातें क्यों कहनी? एक बार बोलो कि बुरा काम जो किया है, वह फिर नहीं करूँगा और उनके नाम पर विश्वास करो।"

स्वामीजी ने भी ईसाइयों को इस पापवाद के सम्बन्ध में कहा था, पापी क्या! तुम लोग अमृत के अधिकारी हो, Sons of Immortal Bliss. तुम्हारे पादरीगण (priests) रात-दिन नरकाग्नि की बातें कहते हैं, वह बात मत सुनो।

"Ye are the children of God, the sharers of immortal bliss, holy and perfect beings, ye divinities on earth— sinners! It is a sin to call a man so. Come up, Oh lions! and shake off the delusion that you are sheep! You are

souls, immortal spirits free and blest— and eternal, ye are not bodies; matter is your servant; not you the servant of matter."

— Lectures on Hinduism (Chicago)

[तुम ईश्वर की सन्तान हो, शाश्वत आनन्द के सहभागी हो, पूर्ण और पवित्र हो, चैतन्यमय हो। मनुष्य को पापी कहना पाप है। अरे शेरो, उठो और भेड़ होने के भ्रम को त्यागो। तुम चिरमुक्त हो। तुम शरीर नहीं हो, भौतिक जगत तो तुम्हारा दास है, तुम उसके दास नहीं हो।]

अमरीका के हार्डफोर्ड स्थान पर स्वामीजी वक्तृता देने के लिए बुलाए गए थे। यहाँ के अमरीकन कोनसुल पैटरसन (American Consul Paterson) तब वहाँ पर उपस्थित थे और उन्होंने सभापति का कार्य किया था। स्वामीजी ने ईसाइयों के पापवाद के सम्बन्ध में फिर और कहा— यदि घर में अन्धेरा हो, तो फिर 'अन्धकार' 'अन्धकार' कहने से क्या होगा? प्रकाश करने पर ही तो होगा—

"Shall we advise men to kneel down and cry— O miserable sinner that I am! No, rather let us remind them of their divine nature... If the room is dark, do you go about, striking your breast and crying, 'It is dark!' No, the only way to get into light is to strike a light and then the darkness goes. The only way to realise the Light above you, is to strike the spiritual light within you and darkness of impurity and sin will flee away. Think of your higher Self, not of your lower."

स्वामीजी ने परमहंसदेव जी से एक कहानी* सुनी थी, वही कहानी सुनाई—

"एक बाघिनी ने बकरों के एक झुण्ड पर आक्रमण किया था। पूर्णगर्भा थी; जभी छलाँग मारने के समय बच्चा हो गया। बाघिनी मर गई।

---

* यह आख्यायिका सांख्य-दर्शन में है— आख्यायिका प्रकरण।

बच्चा बकरियों के साथ पलने लगा और उनके संग में घास खाने लगा और 'मैं हंह, मैं हंह' करने लगा। कुछ दिन बाद बच्चा बड़ा हो गया। एक दिन बकरों के उसी झुण्ड पर और एक बाघ पड़ा। वह तो देखकर अवाक् कि एक बाघ घास खा रहा है, और 'मैं हंह, मैं हंह' कर रहा है, और फिर उसे देखकर बकरों की तरह भाग रहा है। तब वह उसको पकड़कर जल के निकट ले गया और बोला, तू भी बाघ है; तू घास क्यों खाता है और क्यों 'मैं हंह, मैं हंह' करता है— देख, मैं कैसे मांस खाता हूँ। तू भी वही खा, यह देख— जल में तेरा मुख मेरे जैसा ही दिखाई दे रहा है। उस बाघ ने सब देखा; मांस का भी स्वाद पा लिया।''

●

सप्तम परिच्छेद

[श्रीरामकृष्ण, विजय, केशव, नरेन्द्र और 'कामिनी-काञ्चन त्याग'— संन्यास (Renunciation)]

एक दिन श्रीरामकृष्ण और विजयकृष्ण गोस्वामी दक्षिणेश्वर-कालीबाड़ी में बातचीत कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण *(विजय के प्रति)*— कामिनी-काञ्चन त्याग बिना किए लोकशिक्षा नहीं दी जाती। देखो ना, केशवसेन वह नहीं कर सका, तो अन्त में क्या हुआ! तुम स्वयं ऐश्वर्य के भीतर हो, कामिनी-काञ्चन के भीतर रहकर यदि कहो, 'संसार अनित्य, ईश्वर ही वस्तु', बहुत-से ही तुम्हारी बात नहीं सुनेंगे। अपने निकट गुड़ की हाँडी रखी हुई है और दूसरों को कहते हो गुड़ मत खाओ। इसीलिए तो सोच-विचार कर चैतन्यदेव ने संसार-त्याग किया था। वैसा न हो तो जीव का उद्धार नहीं होता।

विजय— जी हाँ, चैतन्यदेव ने कहा था, कफ (खाँसी, बलगम) हटेगी इस कारण पिप्पलखण्ड[1] तैयार किया था— किन्तु उल्टी गड़बड़ हो गई, कफ बढ़ गई; नवद्वीप के अनेक लोग मज़ाक करने लगे, निमाई पण्डित तो खूब मजे में हैं भाई; सुन्दरी स्त्री है, प्रतिष्ठा है, धन का अभाव नहीं; बड़े मजे में हैं।

श्रीरामकृष्ण— केशव यदि त्यागी होते तो बड़ा काम होता। बकरे के शरीर पर क्षत (घाव) रहे तो भगवान-सेवा नहीं होती। बलि दिया नहीं जाता। त्यागी बिना हुए लोकशिक्षा का अधिकारी नहीं होता। गृहस्थी होने पर कितने जन उसकी बात सुनेंगे?

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-काञ्चन त्यागी हैं, तभी उनका ईश्वर-विषय में लोकशिक्षा देने का अधिकार है। विवेकानन्द वेदान्त और अंग्रेज़ी भाषा तथा दर्शन आदि में पण्डितों (विद्वानों) में अग्रणी हैं, वे हैं असाधारण वाग्मी (वक्ता, लैक्चरर), यही क्या उनका माहात्म्य है? इसका उत्तर ठाकुर श्रीरामकृष्ण देंगे। दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में भक्तों को सम्बोधन करके परमहंसदेव ने 1882 ईसवी में स्वामी विवेकानन्द जी के सम्बन्ध में कहा—

"इस लड़के[2] को देखते हो, यहाँ पर एक तरह का है। शैतान (दुष्ट, दुरन्त) लड़का, जब बाप के पास बैठा है तब है मानो हौवा (bug bear or bug)। और चाँदनी में जब खेलता है, तब और एक मूर्ति। ये लोग नित्यसिद्ध की श्रेणी के हैं। ये संसार में कभी बद्ध नहीं होते। थोड़ी-सी वयस (उमर) होते ही चैतन्य हो जाता है, और भगवान की ओर चले जाते हैं। ये संसार में आते हैं जीव-शिक्षा के लिए। इन्हें

1 पिप्पलखण्ड अर्थात् नवद्वीप में हरिनाम-प्रचार।

2 स्वामी विवेकानन्द तब जनरल असैम्बली कॉलिज में पढ़ते थे। आयु 19-20 होगी। उनका घर तब कॉलिज के निकट सिमुलिया मुहल्ले में था। पिता का नाम था श्री विश्वनाथ दत्त; हाईकोर्ट के एटोर्नी थे। बालक का नाम था नरेन्द्र। कॉलिज में रहकर बी०ए० पास किया था। तब Hastic साहिब प्रधान अध्यापक थे। अब उनके भाई-बहिनें हैं। स्वामीजी का जन्मदिन— सोमवार, पौष सक्रान्ति 1269 बंगला साल (1863 ईसवी), प्रातः 6-31/33 समय, सूर्योदय के 6 मिनट पूर्व; वयस 39 वर्ष 5 मास 24 दिन हुई थी।

संसार की वस्तु कुछ भी अच्छी नहीं लगती— ये कामिनी-काञ्चन में कभी भी आसक्त नहीं होते।

"वेद में होमा पक्षी की बात है। वह पक्षी बहुत ऊँचे आकाश में रहता है। उसी आकाश में ही अण्डे देता है। अण्डे देते ही अण्डा गिरने लगता है। अण्डा गिरते-गिरते फूट जाता है। तब चूजा गिरने लगता है। गिरते-गिरते उसकी आँखें खुल जाती हैं और पंख निकल आते हैं। आँखें खुलते ही देखता है कि वह गिर रहा है, और शरीर धरती पर लगते ही एकदम चूरमार (चकनाचूर) हो जाएगा। तब वह पक्षी माँ की ओर, ऊपर की तरफ, सरपट दौड़ लगाता है, और ऊँचे चढ़ जाता है।"

विवेकानन्द यही 'होमा पक्षी' हैं— उनके जीवन का एक लक्ष्य है— माँ के निकट सरपट दौड़ लगाकर चढ़ जाना— शरीर धरती पर लगते न लगते अर्थात् संसार स्पर्श करने से पूर्व भगवान के रास्ते पर अग्रसर हो जाना। श्रीरामकृष्ण ने श्री विद्यासागर से कहा था—

'पाण्डित्य!' केवल पाण्डित्य से क्या होगा? गीध (शकुनि) भी बहुत ऊँचे पर चढ़ता है, किन्तु नजर मरघट की ओर रहती है— कहाँ पर सड़ी हुई लाश है। पण्डित अनेक श्लोक 'फड़र फड़र' (कथन) कर सकता है, किन्तु मन कहाँ पर है? यदि हरिपादपद्मों में रहता है, मैं उसको मानता हूँ; यदि कामिनी-काञ्चन में रहता है, तब फिर मुझे वह सूखी घास का टुकड़ा (सूखा तिनका) लगता है।

स्वामी विवेकानन्द केवल पण्डित (विद्वान) ही नहीं हैं, वे साधु, महापुरुष हैं। केवल पाण्डित्य के लिए अंग्रेज़ और अमरीकावासियों ने भृत्य (नौकर-चाकर) की भाँति उनकी सेवा नहीं की थी। उन्होंने समझ लिया था कि वे और एक जाति के व्यक्ति हैं। सम्मान, रुपया, इन्द्रियसुख, पाण्डित्य आदि लेकर लोग रहते हैं; इनका केवल एक लक्ष्य— ईश्वर-लाभ है। संन्यासी की

गीति में उन्होंने ही कहा था, संन्यासी कामिनी-काञ्चन त्याग करेगा।

Truth never comes where lust
and fame and greed of gain reside
No man who think of woman
As his wife can ever perfect be
Nor he who owns however little, nor he—
whom anger chains—
can ever pass
thro' Maya's gates.
So give these up,
sannyasin bold,
Say— "Om Tat Sat Om!"

— Song of the Sannyasin

[जहाँ काम, यश और धनप्राप्ति का लोभ हो, वहाँ 'सत्य' प्रकट नहीं होगा। नारी को पत्नी रूप में देखने वाला व्यक्ति कभी पूर्ण नहीं हो सकता। वह भी पूर्ण नहीं हो सकता जो थोड़ी-सी भी सम्पत्ति से युक्त है। क्रोधयुक्त व्यक्ति मायापाश छिन्न नहीं कर सकता। इसलिए हे वीर संन्यासी, इन्हें त्यागो और बोलो— ॐ तत् सत् ॐ]

अमरीका में उन्हें कम प्रलोभन नहीं था। एक तो जगतव्यापी प्रतिष्ठा; उस पर सदा ही परम सुन्दरी, उच्चवंशीया, सुशिक्षिता महिलाएँ आकर बातचीत और सेवा किया करतीं। उन (स्वामीजी) की इतनी मोहिनी शक्ति थी कि उन (महिलाओं) में से अनेक ही उनके साथ विवाह करना चाहती थीं। एक अति धनाढ्य कन्या (heiress) ने सचमुच ही एक दिन आकर उनसे कहा था, "स्वामी! मैंने अपना सर्वस्व और अपने आपको आपके समर्पण कर दिया है।" स्वामीजी ने उसके उत्तर में कहा, "भद्रे! मैं संन्यासी हूँ। मुझे विवाह नहीं करना। सब स्त्रियाँ मेरी मातृस्वरूपा हैं!" धन्य वीर! तुम गुरुदेव के उपयुक्त शिष्य हो! तुम्हारे शरीर को यथार्थ ही पृथ्वी की मिट्टी ने स्पर्श नहीं किया है। तुम्हारे शरीर पर कामिनी-काञ्चन का दाग तक भी नहीं लगा है। तुमने प्रलोभन के राज्य से पलायन नहीं किया। उसके बीच में रहकर, श्री-नगर में वास करके, तुम ईश्वर के पथ पर अग्रसर हुए हो। तुमने सामान्य

जीव की न्यायीं दिन काटने नहीं चाहे। तुम देव-भाव का ज्वलन्त दृष्टान्त रखकर इस मर्त्यधाम (मृत्युलोक) का त्याग कर गए हो।

•

अष्टम परिच्छेद

[श्रीरामकृष्ण, कर्मयोग, नरेन्द्र और दरिद्रनारायण-सेवा (निष्काम कर्म)]

परमहंसदेव कहते, कर्म सबको ही करना होगा। ज्ञान, भक्ति और कर्म— ये तीनों ही ईश्वर के पास पहुँचने के पथ हैं। गीता में है— साधु, गृहस्थ पहले चित्तशुद्धि के लिए गुरु के उपदेश के अनुसार अनासक्त होकर कर्म करेंगे। 'मैं कर्त्ता' यही अज्ञान है, धन-जन, कार्यकलाप मेरा है, यह भी अज्ञान है। गीता में है, अपने को अकर्त्ता जानकर ईश्वर में फल समर्पण करके कार्य करना चाहिए। गीता में और भी है, सिद्धि प्राप्ति के बाद भी प्रत्यादिष्ट होकर कोई-कोई जैसे जनक आदि, कर्म करते हैं। गीता में जो कर्मयोग है, वह यही है। ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने भी यही बात कही है।

इसीलिए कर्मयोग बड़ा कठिन है। काफी दिनों तक निर्जन में ईश्वर की साधना बिना किए अनासक्त होकर कर्म नहीं किया जाता। साधना की अवस्था में गुरु का उपदेश सर्वदा प्रयोजनीय है। तब कच्ची अवस्था होती है, जभी तो न जाने किस दिशा से आसक्ति आ पड़े, पता तक नहीं लगता। सोचता हूँ, मैं अनासक्त होकर ईश्वर में फल समर्पण करके, जीव-सेवा, दान आदि कार्य कर रहा हूँ; किन्तु वास्तव में मैं शायद लोकमान्य होने के लिए करता हूँ, स्वयं ही नहीं समझ सकता। जो व्यक्ति गृहस्थ है, जिसका घर-परिवार; अपने कुटुम्बी, 'मेरा' कहने वाले हैं, उसे देखकर निष्काम कार्य और अनासक्ति, परार्थ (दूसरे के लिए) स्वार्थ-त्याग, यह सब सीखना बड़ा कठिन है।

किन्तु सर्वत्यागी कामिनी-काञ्चन त्यागी सिद्ध महापुरुष यदि निष्काम कर्म करके दिखाएँ तो फिर लोग सहज ही उसे समझ सकते हैं, और उनका पदानुसरण करते हैं।

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-काञ्चन त्यागी हैं। उन्होंने निर्जन में गुरु के उपदेश की बहुत दिन साधना करके सिद्धि-लाभ किया था, वे यथार्थ कर्मयोग के अधिकारी हैं। किन्तु वे संन्यासी हैं, विचार करते ही ऋषियों की भाँति अथवा अपने गुरुदेव परमहंस की तरह, केवल ज्ञान-भक्ति लेकर रह सकते हैं। किन्तु उनका जीवन केवल त्याग का दृष्टान्त दिखाने के लिए ही नहीं हुआ था। संसारी लोग जो समस्त वस्तुएँ ग्रहण करते हैं, अनासक्त होकर कैसे व्यवहार करना चाहिए; नारद, शुकदेव और जनक आदियों की न्यायीं; स्वामीजी लोक-संग्रह के लिए वह भी दिखला गए हैं। वे धन और मान इत्यादि को सब संन्यासियों की न्यायीं काकविष्ठा तो चाहे समझते थे, अर्थात् स्वयं भोग नहीं करते थे, किन्तु उन्हें जीव-सेवा के लिए किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, यह उपदेश देकर और स्वयं काम करके दिखला गए हैं। जो धन विलायत और अमरीका के मित्रों से उन्होंने संग्रह किया था, वह समस्त धन जीव के मंगल के लिए व्यय किया। स्थान-स्थान पर जैसे कलकत्ता के निकटस्थ बेलुड़ में, अलमोड़ा के निकटस्थ मायावती में, काशीधाम में और मद्रास आदि स्थानों पर मठ-स्थापन किए। अकालपीड़ितों की नाना स्थानों— दिनाजपुर, वैद्यनाथ, किशनगढ़, दक्षिणेश्वर और अन्य-अन्य स्थानों पर— सेवा की। दुर्भिक्ष के समय पिता-माता से हीन अनाथ बालक-बालिकाओं के लिए उन्होंने अनाथ-आश्रम बना दिए हैं। राजपुताना में किशनगढ़ नामक स्थान पर अनाथ-आश्रम स्थापन किया था। मुरशिदाबाद के निकट सारगाछी ग्राम (भावदा) में अब भी अनाथ-आश्रम चल रहा है। हरिद्वार के निकटस्थ कनखल में पीड़ित साधुओं के लिए स्वामीजी ने सेवाश्रम स्थापन किया है। प्लेग के समय प्लेग-रोग से पीड़ित रोगियों के लिए बहुत धन खर्च करके सेवा-शुश्रूषा करवाई। दरिद्र-कंगाल के लिए वे अकेले रोया करते और मित्रों के सामने कहते, ''हाय! इन्हें इतना कष्ट है, ईश्वर-चिन्तन करने का अवसर तक भी नहीं है।''

गुरु के बताए कर्म, नित्यकर्म को छोड़ कर अन्य कर्म तो बन्धन का कारण हैं। वे संन्यासी हैं। उन्हें कर्म की क्या जरूरत?

"Who sows must reap," they say
And "cause must bring
The sure effect."
Good good; bad bad;
And none
Escape the law.
"But who so wears a form
Must wear the chain." Too true,
But far beyond
Both name and form is Atman, ever free.
Know thou art that, Sannyasin bold!
Say "Om Tat Sat Om."

— The Song of the Sannyasin.

[कहा है कि जो बोता है सो काटता है और कारण से कार्य होगा ही होगा— अच्छे का अच्छा, बुरे का बुरा, कोई इस नियम से बच नहीं सकता। परन्तु जो शरीरधारी है, उसके बन्धन भी हैं। परन्तु नाम-रूप से परे वह सदा मुक्त आत्मा है। अरे वीर संन्यासी, तुम निश्चय जानो कि तुम वही हो, इसलिए बोलो— 'ॐ तत् सत् ॐ']

केवल लोकशिक्षा के लिए ईश्वर ने उनसे ये सब काम करवा लिए। अब साधु वा संन्यासी सब सीखेंगे कि वे लोग भी कुछ दिन निर्जन में गुरु के उपदेश से ईश्वर की साधना करके, भक्ति-लाभ करके स्वामीजी की भाँति निष्काम कर्म कर सकेंगे और यथार्थ अनासक्त होकर दान आदि सत्कार्य कर सकेंगे। स्वामीजी के गुरुदेव ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते, "हाथ पर तेल मलकर कटहल तोड़ने से चिपक (लेस) नहीं लगेगा।" अर्थात् निर्जन में साधना के बाद भक्ति-लाभ करके प्रत्यादिष्ट होकर लोकशिक्षा के लिए पृथ्वी के कार्य में हाथ देने से ईश्वर की कृपा से यथार्थ निर्लिप्त भाव से काम किया जाता है। स्वामी विवेकानन्द के जीवन का अनुध्यान करने से, निर्जन में साधन किसे कहते हैं और लोकशिक्षा के लिए कर्म किसे कहते हैं, उसका आभास मिल जाता है।

विवेकानन्द के ये सब कर्म लोक-शिक्षार्थ हैं।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि। [गीता 3:20]

गीता में कहा गया यह कर्मयोग अतिशय कठिन है। जनक आदि ने कर्म के द्वारा सिद्धि प्राप्त की थी। ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते थे कि जनक ने इससे पहले निर्जन में, वन में, काफी कठोर तपस्या की थी। इसीलिए ज्ञान और भक्ति-भक्त लेकर साधुगण, संसार का कोलाहल छोड़कर, निर्जन में ईश्वर-साधन करते हैं। तभी फिर स्वामी विवेकानन्द जैसे उत्तम अधिकारी वीरपुरुष ही केवल इस कर्मयोग के अधिकारी होते हैं। वे भगवान को अनुभव करते हैं, अथच लोकशिक्षा के लिए प्रत्यादिष्ट होकर (ईश्वर का आदेश पाकर) संसार में कर्म करते हैं, इस प्रकार के महापुरुष इस धरती पर कितने होते हैं? ईश्वरप्रेम में मतवाले, कामिनी-काञ्चन का एक भी दाग नहीं लगा, परन्तु जीव की सेवा के लिए व्यस्त हुए घूम रहे हैं, ऐसे आचार्य कितने दिखाई देते हैं?

स्वामीजी ने लन्दन में 1896 ईसवी में 10 नवम्बर को वेदान्त के कर्मयोग की व्याख्या गीता की वाणी में बताई—

"Curiously enough the scene is laid on the battle-field where Krishna teaches the philosophy to Arjuna; and the doctrine which stands out luminously in every page of the Gita is intense activity, but in the midst of that, eternal calmness. And this idea is called the secret of work to attain which is the goal of the Vedanta."

— Practical Vedanta (London)

[आश्चर्य की बात है कि युद्ध-भूमि के दृश्य के परिप्रेक्ष्य में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दर्शन की शिक्षा दी। गीता के प्रत्येक पृष्ठ पर दुर्दान्त कर्म का सिद्धान्त अंकित है परन्तु उस समय भी रहे चिरशान्ति। यही कर्मयोग का रहस्य है जिसकी प्राप्ति वेदान्त का उद्देश्य है।]

भाषण में स्वामीजी ने कर्म के बीच में ही संन्यासी के भाव ('calmness in the midst of activity') की बात कही थी। स्वामीजी 'राग-द्वेष

विवर्जित' होकर कर्म करने की चेष्टा किया करते थे। वे ऐसा कर्म कर सकते थे, केवल अपनी तपस्या के गुण के कारण और अपनी ईश्वर-अनुभूति के कारण ही। सिद्ध पुरुष अथवा श्री कृष्ण की न्यायीं अवतारपुरुष हुए बिना यह स्थिरता ('calmness') नहीं होती।

•

नवम परिच्छेद

(स्त्री लेकर साधना वा वामाचार के सम्बन्ध में ठाकुर श्रीरामकृष्ण और स्वामीजी के उपदेश)

स्वामी विवेकानन्द एक दिन दक्षिणेश्वर-मन्दिर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने गए थे। भवनाथ और बाबूराम आदि उपस्थित थे। 1884 ईसवी, 29 सितम्बर। घोषपाड़ा और पञ्चनामी के सम्बन्ध में नरेन्द्र ने बात उठाई और पूछा, ''स्त्री को लेकर वे कैसे साधना करते हैं?''

ठाकुर ने नरेन्द्र से कहा—

> ''तेरा ये सब बातें सुनने का काम नहीं है। कर्ताभजा, घोषपाड़ा और पञ्चनामी और फिर भैरव-भैरवी— ये ठीक-ठीक साधना नहीं कर सकते, पतन हो जाता है। ये सब पथ गन्दे पथ हैं, भले (अच्छे) पथ नहीं हैं। शुद्ध पथ द्वारा जाना ही अच्छा है। काशी में मुझे भैरवीचक्र में ले गए। एक-एक भैरव, एक-एक भैरवी; मुझे फिर कारण (शराब, मद) पान करने के लिए कहा। मैंने कहा, 'माँ, मैं कारण (शराब) छू नहीं सकता।' वे लोग पीने लगे। मैंने सोचा अब ये शायद जप-ध्यान करेंगे। वह नहीं किया, मद पीकर नाचना आरम्भ कर दिया।''

नरेन्द्र को फिर और कहा—

> ''जानते हो, मेरा भाव मातृ-भाव— सन्तान-भाव है। मातृ-भाव अति

शुद्ध भाव है, इसमें कोई विपद नहीं है। स्त्री-भाव, वीर-भाव— बड़ा कठिन है, ठीक रखा नहीं जाता, पतन हो जाता है। तुम लोग अपने जन हो, तुम्हें कहता हूँ,— अन्त में यही समझा हूँ— वे पूर्ण हैं, मैं उनका अंश हूँ। वे प्रभु हैं, मैं उनका दास हूँ और फिर एक-एक बार सोचता हूँ, वे ही मैं, मैं ही वे और भक्ति ही सार है।''

और एक दिन 9 सितम्बर, 1883 ईसवी, दक्षिणेश्वर में ठाकुर भक्तों से कह रहे हैं—

''मेरा सन्तान-भाव है। अचलानन्द यहाँ पर आकर बीच-बीच में रहता, खूब कारण पीता। मैं स्त्री को लेकर साधन को अच्छा नहीं कहता था, जभी मुझ से कहता था, 'तुम वीर-भाव का साधन क्यों नहीं मानते? तन्त्र में है।— शिव की कलम नहीं मानोगे? उन्होंने (शिव ने) सन्तान-भाव भी कहा है— और फिर वीर-भाव भी कहा है।'

''मैंने कहा था, क्या पता भाई, मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता— मेरा सन्तान-भाव है।

''उस देश (ठाकुर के ग्राम) में भगी तेलिन को कर्त्ता भजाओं के एक दल में देखा था।— वही स्त्रियों को लेकर साधन और फिर एक पुरुष के बिना हुए स्त्री का साधन-भजन नहीं होगा। उसी पुरुष को कहते हैं— रागकृष्ण। तीन बार पूछता है, तूने कृष्ण पा लिया? वह स्त्री भी तीन बार कहती है, कृष्ण पा लिया है।''

और एक दिन 1884 ईसवी, 23 मार्च। ठाकुर श्रीरामकृष्ण, राखाल, राम आदि भक्तों से कह रहे हैं—

''वैष्णवचरण कर्त्ताभजा के मत के थे। मैं जब उस देश में श्यामबाजार में गया था, उनसे कहा था— ऐसा मत मेरा नहीं है, मेरा मातृभाव है। देखा, बड़ी-बड़ी, लम्बी-लम्बी बातें करते हैं और फिर व्यभिचार

> करते हैं। वे लोग ठाकुर–पूजा, प्रतिमा–पूजा 'लाइक' (पसन्द) नहीं करते। जीवन्त मनुष्य चाहते हैं। उनमें अनेक लोग राधातन्त्र के मत से चलते हैं। पृथ्वीतत्त्व, अग्नितत्त्व, जलतत्त्व, वायुतत्त्व, आकाशतत्त्व—मल, मूत्र, रज, बीज आदि सब तत्त्व। यह साधन बड़ा गन्दा साधन है, जैसे पाखाने के बीच में से घर के भीतर प्रवेश करना।"

ठाकुर के उपदेश के अनुसार स्वामी विवेकानन्द ने भी वामाचार की खूब निन्दा की है। उन्होंने कहा—

> "भारतवर्ष के प्राय: सब स्थानों में विशेषत: बंगाल में गुप्त भाव से बहुत लोग इस प्रकार साधना करते हैं, वे लोग वामाचार तन्त्र का प्रमाण दिखाते हैं। वे सब तन्त्र त्याग करके उपनिषद्, गीता आदि शास्त्र लड़कों को पाठ करने के लिए देना उचित है।"

शोभाबाजार, श्री राधाकान्तदेव के ठाकुर–मन्दिर में स्वामी विवेकानन्द ने विलायत से लौटने पर वेदान्त के सम्बन्ध में एक विशेष सारगर्भित वक्तृता दी। उसमें स्त्रियों को लेकर साधना की निन्दा करके निम्नलिखित बातें कही थीं—

> "Give up this filthy 'vamachara' that is killing your country. You have not seen the other parts of India. When I see how much the vamachara has entered our society, I find it a most disgraceful place with all its boast of culture. These vamachara sects are honey-combing our society in Bengal. Those who come out in the day-time and preach most loudly about 'ACHARA', it is they who carry on the most horrible debauchery at night, and are backed by the most dreadful books. They are ordered by the books to do these things. You who are of Bengal, know it. The Bengali shastras are the vamachara-tantras. They are published by the cartload, and you poison the minds of your children with them instead of teaching them your 'shrutis'.

Fathers of Calcutta, do you not feel ashamed that such horrible stuff as these vamachara tantras, with translation too, should be put into the hands of your boys and girls, and their minds poisoned, and that they should be brought up with the idea that these are the shastras of the Hindus? If you are ashamed, take them away from your children and let them read the true shastras, the Vedas, the Gita, the Upanishads."

— Reply to Calcutta address at Shobhabazar

[राष्ट्रघातक इस गन्दे वामाचार को छोड़ो। तुमने भारत के अन्य भाग नहीं देखे। जब मैं अपने समाज में घुसे वामाचार को देखता हूँ तो अपनी उज्ज्वल सभ्यता पर कलंक पाता हूँ। वामाचार के ये सम्प्रदाय हमारे बंग-समाज को दूषित बना रहे हैं। दिन में जो उच्च स्वर से आचार-चर्चा करते हैं, वे ही रात्रि में भ्रष्ट आचरण करते हैं और भयावह ग्रन्थों से अनुमोदन पाते हैं। उनके ग्रन्थ भी उन्हें वैसा करने का आदेश देते हैं। तुम सब बंगाली इसे जानते हो। बंगला शास्त्र वामाचार के तन्त्र बन गए हैं। इन्हें गाड़ी भरकर छापा जाता है और श्रुतिपाठ छोड़कर उनसे तुम अपने शिशुओं के मस्तिष्क दूषित कर रहे हो। कलकत्ता के पितृगण, क्या तुम्हें इस बात से लज्जा नहीं आती कि ये बीभत्स वामाचार तन्त्र, अनुवाद सहित तुम्हारे बच्चों के हाथ पड़ रहे हैं जिनसे उनका मन विषाक्त हो रहा है और तुम्हारे लड़के-लड़कियाँ इन ग्रन्थों को ही हिन्दुओं के शास्त्र मानने लगे हैं। यदि तुम्हें लज्जा आती है तो उन्हें उनसे छीन लीजिए और उन्हें वेद, गीता, उपनिषदादि यथार्थ शास्त्र पढ़ने को दीजिए।]

काशीपुर बागान में ठाकुर श्रीरामकृष्ण जब बीमार थे, (1886 ईसवी) उन्होंने नरेन्द्र को एक दिन बुलाकर कहा—

"बेटा, यहाँ पर कोई जैसे कारण (मद) पान न करे। धर्म के नाम पर शराब पान करना अच्छा नहीं है; मैंने देखा है जहाँ पर वैसा किया गया है वहाँ पर अच्छा नहीं हुआ।"

●

दशम परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द और अवतारवाद)

एक दिन दक्षिणेश्वर-मन्दिर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण बाबूराम आदि भक्तों के संग में बैठे हुए हैं, 7 मार्च, 1885 ईसवी— समय 3/4 का होगा।

भक्त पदसेवा कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण थोड़ा-सा हँसते हुए भक्तों से कह रहे हैं—

> "इस (अर्थात् पदसेवा) के अनेक अर्थ हैं।" और फिर अपने हृदय पर हाथ रखकर बोले, "इसके भीतर यदि कुछ है तो (पदसेवा करने से), अज्ञान, अविद्या एकदम चले जाएँगे।"

हठात् श्रीरामकृष्ण गम्भीर हो गए, मानो कोई गुह्य (रहस्य) वाणी कहते हैं—

> "यहाँ पर बाहर का व्यक्ति कोई नहीं है। तुम लोगों से एक गुह्य बात कहता हूँ। उस दिन देखा था, मेरे भीतर से सच्चिदानन्द बाहर आकर रूप धारण करके बोला, मैं ही युग-युग में अवतार। देखा पूर्ण आविर्भाव, किन्तु सत्त्वगुण का ऐश्वर्य।"

भक्तगण ये समस्त बातें अवाक् होकर सुन रहे हैं, कोई-कोई गीता में भगवान श्री कृष्ण का महावाक्य स्मरण कर रहे हैं—

> यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
> अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
>
> परित्रणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
> धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥ (गीता 4 : 7-8)

और एक दिन पहली सितम्बर, 1885 ईसवी को जन्माष्टमी के दिन नरेन्द्रादि भक्तों का समागम हुआ है। श्रीयुक्त गिरीश घोष दो-एक मित्रों को संग लेकर गाड़ी द्वारा दक्षिणेश्वर आ उपस्थित हुए। रोते-रोते आ रहे हैं। श्रीरामकृष्ण

सस्नेह उनका शरीर थपथपाने लगे। गिरीश मस्तक उठाकर हाथ जोड़कर कह रहे हैं—

> ''तुम ही पूर्ण ब्रह्म हो। वैसा यदि न हो तो सब ही मिथ्या है। बड़ा खेद है, तुम्हारी सेवा नहीं कर सका। वर दो भगवान, एक वर्ष तुम्हारी सेवा करूँ।'' बार-बार उन्हें ईश्वर मान कर स्तव करने से ठाकुर कह रहे हैं— ''छिः, ऐसी बातें बोलते नहीं; भक्तवत् न च कृष्णवत्। तुम जो चाहो, सोच सकते हो। 'अपना गुरु तो भगवान है', ऐसी बातें कहने से अपराध होता है।''

गिरीश ठाकुर का फिर और स्तव कर रहे हैं— ''भगवान, मुझे पवित्रता दो, जिससे कभी भी तनिक-सा भी पाप-चिन्तन न हो।''

श्रीरामकृष्ण— तुम पवित्र तो हो— तुम्हारा विश्वास-भक्ति जो है।

एक दिन पहली मार्च, 1885 ईसवी दोलयात्रा (होली) का दिन— नरेन्द्र आदि भक्तगण आए हैं। उसी दिन ठाकुर नरेन्द्र को संन्यास का उपदेश दे रहे हैं और कह रहे हैं— ''बेटा, कामिनी-काञ्चन का त्याग बिना हुए नहीं होगा। ईश्वर ही एकमात्र सत्य हैं और सब अनित्य।''

बोलते-बोलते भावपूर्ण हो उठे— वही करुणापूर्ण स्नेह दृष्टि। भावोन्मत्त होकर गाना गाने लगे—

> कथा बोलते डराइ ना बोललेओ डराई,
> मने सन्द होय, पाछे तोमा धने हाराइ-हाराइ।
> आमरा जानि जे मन तोर दिलाम तोके सेइ मनतोर,
> एखन मन तोर।
> आमरा जे मन्त्रे विपदेते तरि तराई।*

श्रीरामकृष्ण को मानो भय है, लगता है नरेन्द्र और किसी का हो गया है, शायद मेरा नहीं हुआ— भय है कि कहीं पीछे नरेन्द्र संसार का न हो

---

* अर्थ के लिए देखें पृ० 19

जाए। 'मैं जानता हूँ कि जो मन्त्र तुझे दिया है वही मन्त्र है' अर्थात् मैंने तुझे जीवन का highest Ideal (सर्वोच्च आदर्श)— सर्वत्याग करके ईश्वर का शरणागत होना; वही मन्त्र दिया है। नरेन्द्र अश्रुपूर्ण लोचनों से देख रहे हैं।

उसी दिन ही ठाकुर नरेन्द्र से कह रहे हैं— "गिरीश घोष ने जो कहा, तेरे संग कुछ मिला?"

नरेन्द्र— मैंने कुछ नहीं कहा, वे ही कहते हैं कि उनका 'आप अवतार हैं' ऐसा विश्वास है। मैंने कुछ नहीं कहा।

श्रीरामकृष्ण— किन्तु खूब विश्वास!! देखता है?

कुछ दिन बाद नरेन्द्र के साथ ठाकुर की अवतार के विषय में बातें हुईं। ठाकुर कह रहे हैं—

"अच्छा, कोई-कोई जो मुझे ईश्वर का अवतार कहते हैं, तुझे कैसा बोध होता है?"

नरेन्द्र बोले— "दूसरों का मत सुनकर मैं कुछ नहीं बोलूँगा। मैं स्वयं जब समझूँगा, मुझे निज को जब विश्वास होगा, तब ही कहूँगा।"

काशीपुर-उद्यान में ठाकुर जब कैन्सर रोग में यन्त्रणा से अस्थिर (बेचैन) हो गए, भात का तरल (माण्ड) तक भी गले से नीचे नहीं हो रहा था, तब एक दिन नरेन्द्र ठाकुर के निकट बैठे हुए सोच रहे हैं, इस कष्ट में यदि ये कहें कि मैं वही ईश्वर का अवतार हूँ, तब फिर विश्वास हो। उसी क्षण एकाएक ठाकुर कह रहे हैं—

"जे राम जे कृष्ण इदानीं से-ई रामकृष्णरूपे भक्तेर जन्य अवतीर्ण हयेछे।" (जो राम जो कृष्ण, अब वही रामकृष्णरूप में भक्तों के लिए अवतीर्ण हुआ है।)

नरेन्द्र यह बात सुनकर अवाक् हो गए। ठाकुर के स्वधाम-गमन करने पर

नरेन्द्र ने संन्यासी होकर अनेक साधन-भजन-तपस्या की। तब उनके हृदय में अवतार के सम्बन्ध में ठाकुर के समस्त महावाक्य मानो और भी प्रस्फुटित हो गए। वे स्वदेश में, विदेश में इसी तत्त्व को और भी परिष्कृत रूप में (स्पष्ट भाव से) समझाने लगे।

स्वामीजी जब अमरीका में थे, तब नारदसूत्र आदि ग्रन्थ अवलम्बन करके उन्होंने भक्तियोग नामक ग्रन्थ अंग्रेज़ी में प्रणयन किया था। उसमें भी वे कहते हैं कि अवतारगण मात्र स्पर्श करके लोगों को चैतन्य-सम्पन्न कर देते हैं। उनके स्पर्श से जो लोग दुराचारी होते हैं, वे लोग भी परम साधु हो जाते हैं। 'अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् साधुरेव स मन्तव्य: सम्यक् व्यवसितो हि स: ॥' ईश्वर ही अवतार रूप में हमारे पास आते हैं। यदि ईश्वर-दर्शन करना हम चाहते हैं, तो फिर तो अवतारी पुरुष में ही हम उनका दर्शन करेंगे। उनकी पूजा बिना किए हम रह नहीं सकेंगे।

> "Higher and nobler than all ordinary ones, are another set of teachers, the avataras of Ishwara, in the world. They can transmit spirituality with a touch, even with a mere wish. The lowest and the most degraded characters become in one second saints at their command. They are the teachers of all teachers, the highest manifestations of God through man. We cannot see God except through them. We cannot help worshipping them; and indeed they are the only ones whom we are bound to worship."
>
> — Bhakti-Yoga

[साधारण (शिक्षकों) की अपेक्षा भी विश्व में उच्चतर और तेजस्वी शिक्षकगण हैं— ईश्वर के अवतार। वे मात्र स्पर्श से और केवल इच्छा मात्र से भी मनुष्य में आध्यात्मिकता का संक्रमण कर सकते हैं। उनके आदेश से महापतित भी क्षण भर में महात्मा हो सकते हैं। वे सब शिक्षकों के शिक्षक हैं— मनुष्यरूप में ईश्वर का सर्वाधिक प्रकाश। हम ईश्वर को उनके माध्यम के अतिरिक्त अन्य उपाय से नहीं देख सकते। वास्तव में यही वे व्यक्ति हैं जिनकी पूजा किए बिना हम नहीं रह सकते।]

और फिर कह रहे हैं— जब तक हमारी मनुष्य देह है, तब तक हम ईश्वर की यदि पूजा करते हैं, तब तो एकमात्र अवतार पुरुष में ही करनी होगी। हजार लम्बी-लम्बी बातें कहो; ईश्वर का मनुष्य रूप के बिना चिन्तन ही नहीं हो सकता। क्षुद्र बुद्धि द्वारा ईश्वर के स्वरूप को अनाप-शनाप क्या कहना चाहते हो? जो भी कहोगे उसका कुछ भी मूल्य नहीं है— mere froth! (केवल बकवाद!)

> "As long as we are men, we must worship Him in man and as man. Talk as you may, try as you may, you cannot think of God except as a man. You may deliver great intellectual discourses on God and on all things under the sun, become great rationalists and prove to your satisfaction that all these accounts of the avataras of God as man are nonsense; but let us come for a moment to practical common sense. What is there behind this kind of remarkable intellect? Zero, nothing, simply so much froth. When next you hear a man delivering a great intellectual lecture against this worship of the Avataras of God, get hold of him and ask him what this idea of God is, what he understands by 'Omnipotence', 'Omnipresence' and all similar terms beyond the spelling of the words. He really means nothing by them; he cannot formulate as their meaning any idea unaffected by his own human nature; he is no better off in this matter than the man in the street who has not read a single book."
>
> — Bhakti-Yoga

[जब तक हम नरदेह में हैं तब तक हमें उस (ईश्वर) की मनुष्य-रूप में पूजा करनी होगी। तुम चाहे कितनी ही लम्बी चौड़ी बातें, कोशिशें क्यों न करो, तुम ईश्वर को मानवरूप के अतिरिक्त कुछ भी तो नहीं सोच सकते। तुम ईश्वर या ब्रह्माण्ड के अन्य किसी भी विषय पर बौद्धिक भाषण क्यों न दे दो या युक्तिवादी बनकर ईश्वर के मानव-अवतारों को सिद्ध कर लो कि यह सब बकवाद है। आइए, एक क्षण के लिए व्यावहारिक सहज ज्ञान से विचारें। इस अद्भुत मेधा के

> पीछे क्या है ?— शून्य; कुछ नहीं; केवल बकवाद। यदि किसी को तुम ईश्वर-अवतार-पूजा के विरोध में एक बहुत बड़ा भाषण देते पाओ तो उसे पकड़कर पूछो कि ईश्वर के विषय में तुम्हारी क्या धारणा है, सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापी आदि शब्दों से तुम्हारा क्या अभिप्राय है। वस्तुत: उनसे उसका कोई अभिप्राय है ही नहीं। वह अपने मानवीय स्वभाव से मुक्त उनका कोई अर्थ नहीं बता पाएगा। इस सम्बन्ध में वह साधारण से उस आदमी से भी अच्छा नहीं होगा जिसने एक भी पुस्तक नहीं पढ़ी।]

स्वामीजी दोबारा अमरीका में 1899 ईसवी में गए थे। उस समय 1900 ईसवी में California प्रदेश में Los Angeles नामक नगर में Christ, the Messenger के विषय में उन्होंने एक वक्तृता दी थी। स्वामीजी ने कहा, अवतारपुरुष में ही (in the Son) ईश्वर को देखना होगा। हमारे भीतर भी ईश्वर तो चाहे हैं, किन्तु अवतारपुरुष में उनका अधिक प्रकाश है। आलोक का स्पन्दन (vibration of light) सब जगहों पर होता है, किन्तु बड़े-बड़े दीपों के जलते ही अन्धकार दूर हो जाता है—

> "It has been said by the same Messenger (Christ) 'None, hath seen God, but they have seen the Son' and that is true. And where to see God but in the Son? It is true that you and I and the poorest of us, the meanest even, embody that God— even reflect that God. The vibration of light is everywhere, Omni-present; but we have to strike the light of the lamp before we can see the light. The Omnipresent God of the universe cannot be seen until He is reflected by these giant lamps of the earth— the prophets, the man-Gods, the incarnations, the embodiments of God."
>
> — Christ, the Messenger

स्वामीजी और कह रहे हैं— ईश्वर के स्वरूप की तुम जहाँ तक भी कर सको कल्पना कर सकते हो; किन्तु देखोगे कि तुम्हारा कल्पित ईश्वर, अवतारपुरुष की अपेक्षा बड़ा ही नीचे है। किन्तु इन मनुष्य-देवताओं की पूजा करने में क्या

दोष (अन्याय) है? उनकी पूजा करने में कोई दोष नहीं है। केवल वैसा ही नहीं है, ईश्वर की पूजा करनी हो तो अवतार की पूजा करनी ही पड़ेगी। तुम मनुष्य जो हो, तुम्हें मनुष्य रूपी भगवान की पूजा करनी ही पड़ेगी, और उपाय नहीं है।

> "Take one of these great Messengers of light, compare his character with the highest ideal of God that you ever formed, and you will find that your God falls short of the ideal, and that the character of the Prophet exceeds your conceptions. You cannot even form a higher ideal of God than what the actually embodied have practically realised and set before us as an example. Is it wrong, therefore, to worship these as God? Is it a sin to fall at the feet of these man-Gods and worship them as the only divine beings in the world? If they are really, actually, higher than all our conceptions of God, what harm is there in worshipping them? Not only is there no harm; but it is the only possible and positive way of worship."

— Christ, the Messenger

•

[अवतार का लक्षण (Jesus Christ— जीसस क्राइस्ट)]

अवतारपुरुष क्या कहने आते हैं? ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से कहा था, "बेटा, कामिनी-काञ्चन त्याग बिना किए नहीं होगा, ईश्वर ही वस्तु और सब अवस्तु।" स्वामीजी ने भी अमरीकनों से कहा—

> "We see in the life of Christ the first watchword, 'Not this life, but something higher!' No faith in this world and all its belongings! It is evanescent; it goes!"

[यीशु के जीवन में हमें प्रथम सांकेतिक शब्द मिलता है— "यह जीवन नहीं,

अपितु कुछ और उत्तम।" इस संसार का और भौतिक पदार्थों का कोई विश्वास नहीं— वे क्षणभंगुर हैं।]

ईसु कामिनी-काञ्चन त्यागी थे। उन्होंने जान लिया था, आत्मा स्त्री भी नहीं, पुरुष भी नहीं। रुपया-पैसा, मान-यश, देह-सुख, इन्द्रिय-सुख, अवतार पुरुष कुछ भी नहीं चाहते। उनके लिए 'मैं' 'मेरा' कुछ भी नहीं है। मैं कर्त्ता, मेरा घर, परिवार इत्यादि भ्रम अज्ञान से होता है।

"We still have fondness for 'me' and 'mine'. We want property, money, wealth. Woe unto us; Let us confess; And not put to shame that great Teacher of humanity! He (Jesus) had no family ties. But do you think that that man had any physical ideas in him? Do you think that this mass of Light, this God and Not-man, came down to earth to be the brother of animals? And yet they make him preach all sorts, even of low sexual things. He had none! He was a soul! Nothing but a soul, just working, as it were, in a body for the good of humanity; and that was all his relation to the body. Oh, nor that! In the soul there is neither man, nor woman. No, no. The disembodied soul has no relationship to the animal, no relationship to the body. The ideal may be high; away beyond us. Never mind; it is the Ideal. Let us confess it so— that we cannot approach it yet."

— Christ, the Messenger

[हम अभी भी 'मैं' और 'मेरा' में फँसे हैं। हमें धन-सम्पत्ति चाहिए। अपनी भूलें मानो और मानवमात्र के शिक्षक (यीशु) को लज्जित न करो। उनका कोई पारिवारिक बन्धन नहीं था। क्या उनमें भौतिक विकार थे? क्या तुम सोचते हो वह ईशस्वरूप प्रकाशपुञ्ज भगवान था, मनुष्य नहीं और वह पशुओं का भाई होकर नीचे पृथ्वी पर उतर आया था? फिर भी वे हीन कामुकता तक का प्रचार भी उन (यीशु) द्वारा अनुमोदित मानते हैं। उनका वैसा कुछ नहीं था। वे तो शुद्धात्मा थे, शरीरस्थ हुए मानव-कल्याण जन्य। यहीं तक उनका शरीर से

सम्बन्ध था। आत्मा में नर-नारी भेद नहीं है। विदेह आत्मा का पाशविक शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं होता। यह आदर्श चाहे कितना ही ऊँचा क्यों न हो, है तो आदर्श; भले ही इसे अभी प्राप्त न किया जा सकता हो।]

वे अमरीकियों से और भी कहते हैं— अवतार पुरुष और क्या कहते हैं? मुझ को देख रहे हो और ईश्वर को नहीं देख पा रहे? वे और मैं तो एक हैं। वे तो हृदय के बीच में शुद्ध मन के गोचर हैं।

"Thou hast seen me and not seen the Father? I and my Father are one! The Kingdom of Heaven is within you! If I am pure enough, I will also find in the heart of my heart, I and my Father are one. That was what Jesus of Nazareth said."

— Christ, the Messenger

इस वक्तृता के बीच स्वामीजी अन्य जगह पर कहते हैं अवतार-पुरुष धर्म संस्थापन के लिए युग-युग में देह धारण करते हैं। जीसस् क्राइस्ट की भाँति देश-काल-भेद से वे अवतीर्ण होते हैं। वे इच्छा करके हमारे पाप क्षमा कर सकते हैं, मुक्ति दे सकते हैं (Vicarious atonement)— हम लोग ताकि उनकी सर्वदा पूजा कर सकें।

"Let us, therefore, find God not only in Jesus of Nazareth, but in all the great ones that have preceded him, in all that came after him, and all that are yet to come. Our worship is unbounded and free. They are all manifestations of the same infinite God. They are all pure and unselfish; they struggled and gave up their lives for us, poor human beings. They all and each of them bore Vicarious atonement for every one of us and also for all that are to come hereafter."

— Christ, the Messenger

[इसलिए हमें नाजरेथ के जीसस में ही ईश्वर नहीं देखना, अपितु उन सभी महानात्माओं में उसे देखना है जो उनसे पहले हुए हैं, उनके बाद हुए हैं या भविष्य में जो होंगे। हमारी पूजा काल-सीमा-मुक्त है। वे सभी उसी असीम

ईश्वर के विविध रूप हैं। वे सभी शुद्ध, निस्वार्थ थे और उन्होंने हम निरीह मनुष्यों के लिए संघर्ष करते-करते जीवन बलिदान कर दिया। उन्होंने हमारे लिए और हमारे बाद आने वाले सभी मनुष्यों के पापों का प्रतिनिधि रूप में प्रायश्चित्त किया है।]

•

(ज्ञानयोग और स्वामी विवेकानन्द)

स्वामीजी वेदान्त चर्चा करने के लिए कहते, किन्तु उसी के साथ ही साथ उस चर्चा की जो विपत्तियाँ हैं, वे भी दिखला दिया करते। ठाकुर ने ठनठनिया में श्रीयुक्त शशधर पण्डित के साथ जिस दिन बातचीत की, उस दिन नरेन्द्रादि अनेक भक्त उपस्थित थे; 1884 ईसवी।

ठाकुर ने कहा— "ज्ञानयोग तो इस युग में बड़ा ही कठिन है। जीव का एक तो अन्नगत प्राण है, उस पर आयु कम है। और फिर देहबुद्धि किसी भी प्रकार से नहीं जाती। इधर देहबुद्धि बिल्कुल (एकदम) बिना गए ब्रह्मज्ञान नहीं होगा। ज्ञानी कहता है, मैं वही ब्रह्म हूँ; मैं शरीर नहीं, मैं भूख, प्यास, रोग, शोक, जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख आदि से पार हूँ। यदि रोग, शोक, सुख, दुःख इत्यादि सब रहते हैं तब तुम ज्ञानी किस प्रकार होंगे? इधर काँटों से हाथ छिदा जा रहा है, धड़-धड़ रक्त बह रहा है, खूब दर्द हो रहा है— फिर भी कहते हो, "कहाँ? हाथ तो नहीं कटा। मुझे क्या हुआ है?

"इसीलिए इस युग के लिए भक्ति-योग है। इससे और पथों की अपेक्षा सहज में ईश्वर के पास जाया जाता है। ज्ञानयोग अथवा कर्मयोग तथा अन्य पथों द्वारा भी ईश्वर के पास जाया जा सकता है; किन्तु ये सब पथ कठिन हैं।"

ठाकुर ने और भी कहा है, "कर्मियों का जितना कर्म बाकी है, उसको निष्कामभाव से करेगा। निष्काम कर्म द्वारा चित्तशुद्धि हो जाने पर भक्ति आएगी, भक्ति द्वारा भगवान-लाभ होता है।"

स्वामीजी ने कहा, देहबुद्धि के रहने पर 'सोऽहम्' नहीं होता— अर्थात् सब वासना चली जाने पर, सम्पूर्ण त्याग हो जाने पर तब फिर समाधि होती है। समाधि होने पर तब ही तो ब्रह्मज्ञान होता है। भक्तियोग सहज और मधुर (natural and sweet) है।

> "Jnana-yoga is grand, it is high philosophy; and almost every human being thinks curiously enough that he can surely do everything required of him by philosophy. But it is really very difficult to live truly the life of philosophy. We are often apt to run into great dangers in trying to guide our life by philosophy. This world may be said to be divided between persons of demonical nature who think the caretaking of the body to be the be-all and end-all of existence, and persons of godly nature, who realise that the body is simply a means to an end, an instrument intended for the culture of the soul. The devil can and indeed does quote the scriptures for his own purpose, and thus the way of knowledge often appears to offer justification to what the bad man does as much as it offers inducements to what the good man does. This is the great danger in Jnana-yoga. But Bhakti-Yoga is natural, sweet and gentle; the Bhakta does not take such high flights as the Jnana-yogi, and therefore he is not apt to have such big falls."

— Bhakti-yog

[ज्ञानयोग अत्यन्त महान् है, यह ऊँचा-दर्शन है और आश्चर्य है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य सोचता है कि वह तो निश्चय ही दर्शन की वांछित हर चीज कर सकता है। किन्तु वास्तव में ज्ञानयोग के अनुसार जीवन यापन करना अति कठिन है। दर्शन के अनुसार अपना जीवन संचालित करने के प्रयास में हमें महान् संकटों का सामना करना पड़ सकता है। इस संसार में दो प्रकार के व्यक्ति हैं। एक तो आसुरी स्वभाव वाले जो भौतिक शरीर की देखभाल को ही सर्वस्व मानते हैं तथा दूसरे दैवी स्वभाव के जिन्होंने यह अनुभव किया है कि शरीर तो गन्तव्य के लिए साधन मात्र है और आत्मा के परिमार्जन का यन्त्र है।

असुर भी अपने प्रयोजन के लिए शास्त्रों के उद्धरण देते हैं और इस प्रकार भले लोगों के नेक कार्यों के समान ही ज्ञान के शास्त्र-ग्रन्थ दुष्टों के कार्यों का अनुमोदन करते हुए प्रतीत होते हैं। ज्ञानयोग की यही महान् विपद् है। परन्तु भक्तियोग सरल, सहज एवं मधुर है; भक्त ज्ञानयोगी के समान ऊँची उड़ानें नहीं भरता और इसीलिए उसके पतन की सम्भावना कम है।]

•

(श्रीरामकृष्ण क्या अवतार हैं— स्वामीजी का विश्वास)

भारत के महापुरुषगण (The sages of India) के सम्बन्ध में स्वामीजी ने वक्तृता दी थी, उसमें अवतारी पुरुषों की बहुत-सी बातें बताई थीं। श्री रामचन्द्र, श्री कृष्ण, बुद्धदेव, रामानुज, शंकराचार्य, चैतन्यदेव— सब की बातें ही कहीं। धर्म की ग्लानि होने पर, अधर्म का अभ्युत्थान होने पर, साधुओं के परित्राण के लिए और पापाचार के विनाश के लिए मैं युग-युग में अवतीर्ण होता हूँ— गीता में भगवान द्वारा यह बात कही गई है— इसे बताकर स्वामीजी समझाने लगे—

> "Whenever virtue subsides and irreligion prevails I create myself, for the protection of the good and for the destruction of all immorality, I am coming from time to time."

—Sages of India

और फिर कहा, गीता में श्री कृष्ण ने धर्मसमन्वय किया है—

> "In the Gita we already hear the distant sound of the conflicts of sects, and the Lord comes in the middle to harmonise them all— He, the great Preacher of Harmony, the greatest Teacher of Harmony, Lord Krishna Himself."

[गीता में विभिन्न सम्प्रदायों के विवाद की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है। ईश्वर ही

> बीच में श्री कृष्ण के रूप में समन्वय के महान् शिक्षक बनकर स्वयं सब समन्वय करते हैं।]

श्री कृष्ण ने फिर और भी कहा है— स्त्री, वैश्य, शूद्र, सब ही परम गति प्राप्त करेंगे; ब्राह्मण, क्षत्रियों की तो बात ही नहीं है।

बुद्धदेव दरिद्रों के देवता हैं— सर्वभूतस्थमात्मानम्। भगवान सर्वभूतों में हैं, उन्होंने यही कार्य में दिखाया। बुद्धदेव के शिष्यों ने आत्मा, जीवात्मा इत्यादि नहीं माना— जभी शंकराचार्य ने फिर दोबारा वैदिक धर्म का उपदेश दिया। वे वेदान्त का अद्वैतमत, रामानुज का विशिष्टाद्वैत मत समझाने लगे। उसके बाद चैतन्यदेव प्रेम, भक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए। शंकर, रामानुज ने जाति-विचार किया था, किन्तु चैतन्यदेव ने वह नहीं किया। वे बोले, भक्त की फिर क्या जाति?

अब स्वामीजी ठाकुर श्रीरामकृष्ण की बातें कर रहे हैं— शंकर की विचार शक्ति और चैतन्यदेव की प्रेम-भक्ति अब की बार एक आधार में मूर्तिमन्त हुई है। और फिर श्री कृष्ण की सर्व-धर्म-समन्वय की बात सुनी गई, और फिर दीन-दरिद्र, पापी-तापी के लिए बुद्धदेव की न्यायीं एक व्यक्ति क्रन्दन करते हुए सुने गए; अवतार पुरुषगण मानो असम्पूर्ण थे। ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने अवतीर्ण होकर उन्हें पूर्ण कर दिया है (fulfilment of all sages)।

> "The one (Sankara) had a great head, the other (Chaitanya) a large heart, and the time was ripe for one to be born, the embodiment of both head and heart; the time was ripe for one to be born who in one body would have the brilliant intellect of Sankara and the wonderfully expansive, infinite heart of Chaitayna; 'One who would see in every sect the same spirit working, the same God; one who would see God in every being, one whose heart would weep for the poor, for the weak, for the out-cast, for the down-trodden, for every one in this world, inside India or outside India; and at the same

time whose grand brilliant inrellect, would conceive of such noble thoughts as would harmonise all conflicting sects, not only in India but outside of India, and bring a marvellous harmony, the universal Religion of head and heart, into existence.

"Such a man was born, and I had the good fortune to sit at his feet for years. The time was ripe, it was necessary that such a man should be born, and he came; and the most wonderful part of it was that his life's work was just near a city which was full of western thought, a city which had run mad after these occidental ideas, a city which had become more Europeanised than any other city in India. There he lived, without any book-learning whatsoever; this great intellect never learnt even to write his own name, but the most brilliant graduates of our University found in him an intellectual giant. He was a strange man, this Sri Ramakrishana Paramahansa. It is a long, long story, and I have no time to tell anything about him to-night. Let me now only mention the great Sri Ramakrishna, the fulfilment of the Indian sages, the sage for the time, one whose teaching is just now at the present time most beneficial. And mark the Divine power working behind the man. The son of a poor priest, born in a out-of-the-way village, unknown and unthought of, to-day is worshipped literally by thousands in Europe and America, and tomorrow will be worshipped by thousands more. Who knows the plans of the Lord! Now my brothers, if you do not see the hand, the fingers of Providence, it is because you are blind, born blind indeed."

— The Sages of India

[एक (शंकराचार्य) का तो था महान् मेधावी मस्तिष्क, दूसरे (चैतन्य) का था महान् उदार हृदय, और फिर समय हो गया था ऐसे महापुरुष के जन्म का, जिसमें वह महान् बुद्धि और वैसा ही उदार हृदय मूर्तिवन्त हो एक शरीर में,

जिसमें शंकर की अतिशय ज्योतिष्मान बुद्धि और चैतन्य का अत्यन्त उदार असीम हृदय हो, जो हर वस्तु में उसी भगवान को देखे और देखे कि प्रत्येक धर्म में वही आत्मा काम कर रही है, जिसका हृदय भारत या भारत से बाहर, संसार में कहीं भी दीन-दरिद्र, दुर्बल, दलित के लिए रोता हो, जिसकी तीक्ष्ण मेधा ऐसे महान् विचार सोच निकालेगी कि जिनसे सभी विरोधी सम्प्रदायों का समन्वय हो जाएगा और बुद्धि व हृदय का सार्वभौमिक धर्म सत्ता में आएगा।

"ऐसे महापुरुष ने जन्म लिया और मुझे उनके चरणों में वर्षों तक बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। समय उपयुक्त था और यह आवश्यक हो गया था कि ऐसा व्यक्ति जन्म लेता; और उसने लिया। सबसे अद्‌भुत बात यह हुई कि उसका कार्यक्षेत्र पाश्चात्य विचारों से भरे शहर के निकट ही रहा था— वह शहर जो पश्चिमी विचारों से उन्मत्त था; वह शहर जो भारत के सभी महानगरों में सबसे अधिक योरोपीय था। किसी भी प्रकार के ग्रन्थ-ज्ञान से शून्य वे वहाँ रहे, इस महान् मेधावी ने अपना नाम भी लिखना नहीं सीखा; किन्तु विश्वविद्यालय के अतीव देदीप्यमान बुद्धिजीवियों ने उन्हें परम मेधावी पाया था। ये रामकृष्ण परमहंस बहुत अद्‌भुत व्यक्तित्व लिए थे। यह लम्बी कहानी है, जिसे आज, अभी मैं तुम्हें नहीं बता सकता। किन्तु केवल इतना कहूँगा कि आज के इस महात्मा ने अवतीर्ण होकर (पूर्ववर्त्ती सभी) अवतारों को परिपूर्ण कर दिया। उनकी शिक्षाएँ आज सर्वाधिक लाभप्रद हैं। मनुष्य के पीछे कार्यरत दैवी शक्ति को देखो! एक निर्धन पुजारी के घर, अनजाने और अचिन्त्य ग्राम में जन्म लेकर भी वे यूरोप और अमरीका में सहस्रों द्वारा पूजित हुए हैं तथा आगे और सहस्रों द्वारा पूजित होंगे। ईश्वर की योजना को कौन जान सकता है? इसलिए भाइयो, इसके पीछे अब भी यदि तुम ईश्वर का हाथ न देख सको तो निश्चय ही तुम अन्धे हो, जन्मजात अन्धे हो।"]

स्वामीजी फिर और कह रहे हैं— जो वेदमय देववाणी ऋषियों ने सरस्वती के तीर पर सुनी थी, जो वाणी गिरिराज हिमालय के श्रृंग-श्रृंग पर महायोगी तपस्वियों के कानों में एक बार प्रतिध्वनित हुई थी, जिस वाणी ने सर्वग्राही महावेगवती नदी के आकार में श्री कृष्ण, श्री बुद्धदेव, श्री चैतन्य नाम धारण करके मर्त्यलोक में अवतरण किया था, आज फिर वही देववाणी सब लोग सुन रहे हैं। इस भगवद्‌वाणी का महास्पन्दन अल्पदिनों के मध्य समग्र भारत से आरम्भ होकर सब स्थानों पर पहुँचेगा— जहाँ तक पृथ्वी फैली हुई है। यह वाणी प्रतिदिन नवशक्ति से शक्तिमती हो रही है। यही देववाणी पूर्व-पूर्व

युगों में अनेक बार सुनी गई है, किन्तु आज जो हम सुन रहे हैं वह उसी समस्त वाणी की समष्टि है (summation of them all)।

> "Once more the wheel is turning up, once more vibrations have been set in motion from India, which are destined at no distant day to reach the farthest limits of the earth. One voice has spoken, whose echoes are rolling on and gathering strength every day, a voice even mightier than those which have preceeded it, for it is the summation of them all. Once more the voice, that spoke to the sages on the banks of the Saraswati, the voice whose echoes reverberated from peak to peak of the 'Father of Mountains' and descended upon the plains through Krishna, Buddha and Chaitanya, in all-carrying floods has spoken again. Once more the doors have opened. Enter ye into the realms of light, the gates have been opened wide once more."
>
> — Reply to Khetri address

[चक्र (कालचक्र) फिर से घूम रहा है। भारत से पुनः शक्ति का स्फुरण हुआ है और यह शक्ति-प्रवाह शीघ्र ही पृथ्वी के दूरस्थ छोर तक पहुँच जाएगा। एक ऐसी वाणी उठी है, जिसकी गूँज प्रतिदिन फैल रही है तथा और अधिक शक्तिशाली होती जा रही है। यह वाणी इससे पहले की सभी वाणियों से अधिक शक्तिशाली है क्योंकि यह उन सभी का समष्टि रूप है। वह वाणी जो कभी सरस्वती-तीर पर ऋषियों के हृदय में प्रस्फुटित हुई थी, वह वाणी जो गिरिराज हिमालय के श्रृंग-श्रृंग पर प्रतिध्वनित हुई थी और जो कृष्ण, बुद्ध तथा चैतन्यदेव के माध्यम से वेग से धरती पर उतरी थी, अब फिर से मुखरित हुई है। एक बार फिर से कपाट खुल गए हैं। आइए, सभी प्रकाश के राज्य में प्रवेश करें।]

स्वामीजी ने और भी कहा— मैंने यदि एक भी अच्छी (सत्य) बात कही है तो आप लोग समझना कि समस्त ही ठाकुर श्रीरामकृष्ण की है। यदि कुछ कच्ची बातें— प्रमादपूर्ण बातें मैंने कह दी हैं (जो मानव-कल्याण जन्य नहीं हैं) तो समझना वे मेरी हैं—

"Only let me say now that if I have told you one word

of Truth, it was his and his alone; and if I have told you many things which were not true, were not correct, which were not beneficial to the human race, they were all mine, and on me is the responsibility."

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने भारतवर्ष में नाना स्थानों पर अवतार पुरुष श्रीरामकृष्ण के आगमन की वार्त्ता की घोषणा की। जहाँ पर मठस्थापना हुई है, उसी स्थान पर ही उनकी नित्य सेवा-पूजादि होती है। आरती के समय स्वामीजी के रचित स्तव का सब स्थानों पर ही वाद्य और सुर-संयोग से गायन होता है। इस स्तव के बीच में स्वामीजी ने ठाकुर श्रीरामकृष्ण को निर्गुण, सगुण, निरञ्जन, जगदीश्वर कहकर सम्बोधित किया है। और कहा है, हे भवसागर के कर्णधार! तुम नररूप धारण करके हमारे भव-बन्धन खण्डन करने के लिए योग के सहायी होकर आए हो। तुम्हारी कृपा से मेरी समाधि होती है। तुम ने कामिनी-काञ्चन-त्याग करवा लिया है। हे भक्तशरण! अपने पादपद्मों में मुझे अनुराग दो। तुम्हारे पादपद्म मेरी परम सम्पद हैं। उसको पा लेने पर भवसागर गोष्पद जैसा बोध होता है।

●

(स्वामीजी द्वारा रचित श्रीरामकृष्ण-आरात्रिक)

(मिश्र— चौताल)

खण्डन-भव-बन्धन, जग-वन्दन वन्दि तोमाय।
निरञ्जन नररूप-धर निर्गुण गुणमय॥

मोचन अघदूषण जगभूषण चिद्‌घनकाय।
ज्ञानाञ्जन विमल-नयन वीक्षणे मोह जाय॥

भास्वर भावसागर चिर-उन्मद प्रेम पाथार।
भक्तार्जन-युगलचरण तारण भव-पार॥

जृम्भित युग-ईश्वर जगदीश्वर योग सहाय।
निरोधन समाहित-मन निरखि तव कृपाय॥

भञ्जन दुःख गञ्जन करुणाघन कर्म-कठोर।
प्राणार्पण जगत-तारण कृन्तन कलिडोर॥

वञ्चन-कामकाञ्चन अतिनिन्दित-इन्द्रियराग।
त्यागीश्वर हे नरवर! देहो पदे अनुराग॥

निर्भय गत संशय दृढ़निश्चय-मानसवान।
निष्कारण-भक्त-शरण त्यजि जाति-कुल-मान॥

सम्पद तव श्रीपद भव-गोष्पद-वारि यथाय।
प्रेमार्पण सम दरशन जगजन-दुःख जाय॥

(''जेइ राम, जेइ कृष्ण, इदानीम् सेइ रामकृष्ण।'')

काशीपुर उद्यान में स्वामीजी ने यह महावाक्य ठाकुर श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से सुना था। इसी महावाक्य का स्मरण करके स्वामीजी ने विलायत से होकर कलकत्ता में लौट आकर बेलुड़मठ में एक स्तव की रचना की थी। स्तव में वे कहते हैं— जो आचण्डाल दीन-दरिद्र के बन्धु, जानकीवल्लभ, ज्ञान-भक्ति के अवतार श्री रामचन्द्र! जिन्होंने फिर श्री कृष्णरूप में कुरुक्षेत्र में गीतारूप गम्भीर मधुर सिंहनाद किया था, वे ही अब विख्यात पुरुष श्रीरामकृष्ण-रूप में अवतीर्ण हुए हैं।

ॐनमो भगवते रामकृष्णाय

(1)

आचण्डालप्रतिहतरयो यस्य प्रेमप्रवाहः
लोकातीतोऽप्यहह न जहौ लोककल्याणमार्गम्।
त्रैलोक्येऽप्यप्रतिममहिमा जानकीप्राणबन्धः
भक्त्या ज्ञानं वृतवरवपुः सीतया यो हि रामः।

(2)

स्तब्धीकृत्य प्रलयकलितम्वाहवोत्थं महान्तं,
हित्वा रात्रिं प्रकृति सहजामन्धतामिस्रमिश्राम्।
गीतं शान्तं मधुरमपि यः सिंहनादं जगर्ज,
सोऽयं जातः प्रथितपुरुषो रामकृष्णास्त्विदानीम्।

और एक स्तोत्र बेलुड़मठ में और काशी, मद्रास, ढाका आदि सब मठों में आरती के समय गाया जाता है।

इस स्तोत्र में स्वामीजी कहते हैं— हे दीनबन्धो, तुम सगुण और फिर त्रिगुणातीत हो, तुम्हारे पादपद्मों में दिन-रात उपासना-पूजा नहीं करता, इसीलिए मैं तुम्हारे शरणागत हूँ। मैं मुख से भजन करता हूँ, ज्ञान-अनुशीलन करता हूँ, किन्तु कुछ भी धारणा नहीं होती, इसलिए तुम्हारे शरणागत हूँ। तुम्हारे चरणकमलों का चिन्तन करने से मृत्यु जय हो जाती है, तभी मैं तुम्हारे शरणागत हूँ। हे दीनबन्धो, तुम जगत की एकमात्र प्राप्त करने वाली वस्तु हो, मैं तुम्हारे शरणागत हूँ— त्वमेव शरणम् मम दीनबन्धो!

ॐ ह्रीं ऋतं त्वमचलो गुणजिद् गुणेड्यः।
न— क्तन्दिवं सकरुणं तव पादपद्मम्॥
मो— हंकषं बहुकृतं न भजे यतोऽहम्।
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो॥ १॥

भ-क्तिर्भगश्च भजनं भवभेदकारि।
ग-च्छन्त्यलं सुविपुलं गमनाय तत्त्वम्।
व-क्त्रोद्धृतन्तु हृदि मे न च भाति किंचित्।
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो॥ २॥

ते-जस्तरन्ति तरसा त्वयि तृप्ततृष्णाः
रा-गे कृते ऋतपथे त्वयि रामकृष्णे।
म-र्त्यामृतं तव पदं मरणोर्मिनाशम्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो॥ ३॥

कृ-त्यं करोति कलुषं कुहकान्तकारि।
ष्णान्तं शिवं सुविमलं तव नाम नाथ॥

य-स्मादहं त्वशरणो जगदेकगम्य।
तस्मात्त्मेव शरणं मम दीनबन्धो॥ ४॥

स्वामीजी ने आरती के बाद श्रीरामकृष्ण का प्रणाम सिखाया है। उसमें ठाकुर को अवतारश्रेष्ठ कहा है—

ॐ स्थापकाय च धर्मस्य सर्वधर्मस्वरूपिणे।
अवतार वरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः॥

परिशिष्ट–क

श्रीरामकृष्ण और श्रीयुक्त बंकिम

प्रथम परिच्छेद

(श्रीयुक्त अधरलाल सेन के घर ठाकुर श्रीरामकृष्ण का भक्तों के साथ कीर्तनानन्द और श्रीयुक्त बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय इत्यादि के साथ कथोपकथन)

आज ठाकुर अधर के घर में आए हैं; 22वीं अग्रहायण, कृष्णा चतुर्थी तिथि; शनिवार, अंग्रेज़ी 6 दिसम्बर, 1884 ईसवी। ठाकुर ने पुष्या नक्षत्र में आगमन किया है।

अधर खूब भक्त हैं, वे डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं— उनकी आयु 29/30 वर्ष की होगी। ठाकुर उन्हें अतिशय प्यार करते हैं। अधर की भी भक्ति! सारा दिन आफिस के परिश्रम के बाद मुख और हाथ पर थोड़ा–सा जल देते ही प्राय: प्रतिदिन ही सन्ध्या के समय ठाकुर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने जाते हैं। उनका घर शोभाबाजार बेनेटोला में है। वहाँ से दक्षिणेश्वर काली–मन्दिर में ठाकुर के पास गाड़ी से जाते हैं। इसी प्रकार प्रतिदिन प्राय: ढाई रुपए गाड़ी–भाड़ा देते हैं। केवल ठाकुर का दर्शन करेंगे, यही आनन्द है। उनके श्रीमुख से बातें सुनेंगे, ऐसी सुविधा प्राय: नहीं होती। पहुँचते ही ठाकुर को भूमिष्ठ होकर प्रणाम करते, कुशल प्रश्नादि के पश्चात् वे माँ काली के दर्शन करने जाते। फिर धरती पर जो चटाई बिछी हुई रहती, वहाँ पर विश्राम करते। ठाकुर निज ही उन्हें विश्राम करने को बोलते। अधर का शरीर परिश्रम के कारण इतना थका हुआ होता कि वे

थोड़ी देर में ही सो जाते। रात को 9/10 बजे उन्हें उठा दिया जाता। वे भी उठकर ठाकुर को प्रणाम करके फिर गाड़ी में चढ़ जाते। तब फिर घर लौट जाते।

अधर ठाकुर को प्राय: ही शोभाबाजार के घर में ले जाते। ठाकुर के आने पर वहाँ उत्सव हो जाता। ठाकुर और भक्तों को लेकर अधर खूब आनन्द करते और नाना तरह से उन्हें सन्तुष्ट करके खिलाते।

एक दिन ठाकुर उनके घर गए। अधर ने कहा, "आप अनेक दिनों से घर पर नहीं आए, घर मलिन हो गया था, मानो एक प्रकार की कैसी गन्ध हो गई थी, आज देखिए घर की कैसी शोभा हो गई है और कैसी एक सुगन्ध हो गई है! मैंने आज ईश्वर को बहुत पुकारा था। यहाँ तक कि आँखों से जल गिरने लगा था।" ठाकुर बोले, "भाई, क्या कहते हो!" और अधर की ओर सस्नेह ताकते हुए हँसने लगे।

आज भी उत्सव होगा। ठाकुर भी आनन्दमय हैं और भक्तगण भी आनन्द में परिपूर्ण हैं; क्योंकि जहाँ पर ठाकुर उपस्थित होते हैं, वहाँ पर ईश्वर की कथा के अतिरिक्त और कोई बात भी नहीं होगी। भक्तगण आए हैं और ठाकुर को देखने के लिए बहुत-से नए-नए लोग भी आए हैं। अधर स्वयं डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। उन्होंने अनेक बन्धु डिप्टी मैजिस्ट्रेटों को निमन्त्रण भेजकर बुलाया है। वे लोग स्वयं ठाकुर को देखेंगे और बताएँगे, वे यथार्थ महापुरुष हैं कि नहीं।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण सहास्यवदन भक्तों से बातें कर रहे हैं। उस समय अधर कई मित्रों को लेकर ठाकुर के पास आकर बैठ गए।

अधर *(बंकिम को दिखलाकर, ठाकुर के प्रति)*— महाशय, ये बड़े भारी पण्डित हैं, कई एक पुस्तकें आदि लिखी हैं। आपको देखने के लिए आए हैं। इनका नाम बंकिमबाबू है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— बंकिम! अजी तुम फिर और किसके भाव में बाँके हो जी!

बंकिम *(हँसते-हँसते)*— और महाशय! जूते की चोट से। *(सब का हास्य)*। साहेब के जूते की चोट से बाँका हूँ।

(बंकिम और राधाकृष्ण— युगलरूप की व्याख्या)

श्रीरामकृष्ण— ना जी, श्री कृष्ण प्रेम में बंकिम हुए थे— श्रीमती के प्रेम में त्रिभंग हो गए थे। कृष्ण-रूप की व्याख्या कोई-कोई करता है— श्री राधे के प्रेम में त्रिभंग। काले क्यों हैं, जानते हो? और चौदह-पो (चौदह बालिश्त— साढ़े तीन हाथ) के, इतने छोटे क्यों? जब तक ईश्वर दूर हैं, तब तक काले दिखाई देते हैं, जैसे समुद्र का जल दूर से नीलवर्ण दिखलाई देता है; समुद्र के जल के निकट जाने पर और उसे हाथ में उठाने से फिर काला नहीं रहता, तब खूब परिकृष्त, सफेद। सूर्य दूर से देखने में खूब छोटा दिखता है, निकट जाने पर छोटा नहीं रहता। ईश्वर का ठीक स्वरूप जान सकने पर फिर काला नहीं रहता, छोटा भी नहीं रहता। वह बड़ी दूर की बात है; समाधिस्थ बिना हुए नहीं होता। जब तक 'मैं-तुम' है, तब तक नाम-रूप भी है। उनकी ही सब लीला है। 'मैं-तुम' जब तक रहता है, तब तक वे नाना रूपों में प्रकाशित होते हैं।

"श्री कृष्ण हैं पुरुष, श्रीमती उनकी शक्ति— आद्याशक्ति। पुरुष और प्रकृति। युगल मूर्ति के क्या मायने हैं? पुरुष और प्रकृति अभेद; उनका भेद नहीं। प्रकृति के बिना हुए पुरुष रह नहीं सकता, प्रकृति भी पुरुष न हो तो रह नहीं सकती। एक के कहने पर ही और एक को उसी के साथ-साथ समझना पड़ेगा। जैसे अग्नि और दाहिका शक्ति। दाहिका शक्ति को छोड़कर अग्नि को सोचा ही नहीं जाता। और अग्नि को छोड़ दाहिका शक्ति की भावना नहीं की जाती। तभी युगल मूर्ति में श्री कृष्ण की दृष्टि श्रीमती की ओर, और श्रीमती की दृष्टि कृष्ण की ओर है। श्रीमती का गौरवर्ण विद्युत जैसा है, श्रीमती नीलाम्बर पहने हुए हैं। और श्रीमती ने नीलकान्त मणि द्वारा अंग सजाया हुआ है। श्रीमती के पैरों में नूपुर हैं, जभी श्री कृष्ण ने नूपुर पहने हुए हैं; अर्थात् प्रकृति के संग पुरुष का अन्तर-बाहर मेल है।"

ये बातें समस्त समाप्त हो गईं। तब अधर के बंकिम आदि बन्धु परस्पर अंग्रेज़ी में आहिस्ता-आहिस्ता बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य बंकिम के प्रति)*— क्यों जी, आप लोग अंग्रेज़ी में क्या बातें कर रहे हो? *(सब का हास्य)*।

अधर— जी, इसी विषय में थोड़ी बातें हो रही थीं, कृष्ण रूप की व्याख्या की बातें।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य, सब के प्रति)*— एक बात याद आने से मुझे हँसी आ रही है। सुनो, एक कहानी सुनाता हूँ। कोई नाई हजामत बनाने गया था। एक भले मनुष्य की हजामत कर रहा था। जब वह हजामत बना रहा था, तब हजामत बनाते-बनाते आदमी को थोड़ी-सी लग गई थी और वह व्यक्ति डैम (damn) बोल उठा था। नाई 'डैम' का अर्थ नहीं जानता था। तब उसने छुरा (उस्तरा) आदि सब उठाकर वहाँ पर रख दिए, शीतकाल था, कमीज की आस्तीनें समेट कर बोला, तुमने मुझे डैम कहा है, इसका अर्थ क्या है, अब बता। वह व्यक्ति बोला, अरे तू हजामत बना ना; उसका अर्थ वैसे विशेष कुछ नहीं है, किन्तु ज़रा सावधान होकर कर। नाई तो छोड़ने वाला नहीं था, वह कहने लगा, डैम के मायने यदि अच्छा होता है तो फिर मैं डैम हूँ, मेरा बाप डैम है, मेरे चौदह पुरुष डैम हैं *(सब का हास्य)* और डैम के मायने यदि खराब होते हैं तो फिर तू डैम, तेरा बाप डैम, तेरे चौदह पुरुष डैम हैं। *(सब का हास्य)*। और केवल डैम ही नहीं। डैम डैम डैम डा डैम डैम। *(सब का उच्च हास्य)*।

●

द्वितीय परिच्छेद

(ठाकुर श्रीरामकृष्ण और प्रचार-कार्य)

सब का हास्य थमने पर, बंकिम ने फिर और बातें आरम्भ कीं।

बंकिम— महाशय, आप प्रचार क्यों नहीं करते?

श्रीरामकृष्ण *(हँसते-हँसते)*— प्रचार! ये तो सब अभिमान की बातें हैं। मनुष्य तो क्षुद्र जीव है। प्रचार वे ही करेंगे, जिन्होंने चन्द्रसूर्य की सृष्टि की है, जो इस जगत को प्रकाशित कर रहे हैं। प्रचार करना क्या सामान्य बात है? वे साक्षात्कार देकर आदेश न करें तो प्रचार नहीं होता। किन्तु प्रचार का असर होता क्यों नहीं? आदेश हुआ नहीं है, तुम बके जा रहे हो; उन्हीं दो दिनों में ही लोग सुनेंगे, फिर भूल जाएँगे। जैसे एक आन्दोलन (सामयिक उत्साह) और

क्या! जितनी देर तुम बोलोगे, लोग उतनी देर कहेंगे— आहा, ये सुन्दर बोले। तुम रुकोगे, उसके बाद कहीं कुछ भी नहीं।

"जब तक दूध के नीचे आग जल रही है तब तक दूध फुस करके उबल उठता है। आग को खैंच लो, फिर दूध भी जैसे का तैसा! कम हो गया (बैठ गया)।

"और साधन करके अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिए। वह न हो तो प्रचार नहीं होता। 'आपनि शुते स्थान पाय ना शंकरा के डाके।' अपने आप को सोने के लिए स्थान नहीं है और पुकारता है अरे आ रे शंकरा, आ जा, आ के मेरे पास सो जा। *(हास्य)*।

"उस देश में हालदार पुकुर (तालाब) के किनारे रोज शौच कर जाते, लोग प्रातः आकर गाली-गलौच देते! लोग गाली-गलौच देते हैं किन्तु फिर भी शौच जाना बन्द नहीं होता। अन्त में मुहल्ले के लोगों ने अर्जी भेजकर कम्पनी को खबर दी। उन्होंने एक नोटिस लगा दिया, 'यहाँ पर टट्टी, पिशाब मत करना, करने पर सजा मिलेगी।' तब एकदम सब बन्द, फिर कोई भी शोरगुल नहीं। कम्पनी का हुकम है— सब को ही मानना पड़ेगा।

"वैसे ही ईश्वर साक्षात्कार देकर यदि आदेश देते हैं, तब ही प्रचार होता है, लोकशिक्षा होती है, वैसा न हो तो कौन तुम्हारी बात सुनेगा?"

ये बातें सब गम्भीर भाव से स्थिर होकर सुनने लगे।

•

(श्रीयुक्त बंकिम और परलोक)

[Life after Death— argument from analogy]

श्रीरामकृष्ण *(बंकिम के प्रति)*— अच्छा, आप तो बड़े पण्डित हैं, और आपने कितनी ही किताबें लिखी हैं; आप क्या कहते हैं; मनुष्य का कर्तव्य क्या है? साथ क्या जाएगा? परलोक तो है?

बंकिम— परलोक? वह फिर क्या?

श्रीरामकृष्ण— हाँ, ज्ञान के बाद फिर अन्य लोक में नहीं जाना पड़ता; पुनर्जन्म नहीं होता। किन्तु जब तक ज्ञान नहीं होता, ईश्वरलाभ नहीं होता, तब तक संसार में लौटकर आना होता है, किसी तरह से निस्तार नहीं। तब तक परलोक भी है। ज्ञान प्राप्त होने पर, ईश्वर-दर्शन होने पर, मुक्ति हो जाने पर— फिर आना नहीं पड़ता। उबला धान बोने से पौधा नहीं होता। ज्ञानाग्नि में पका हुआ यदि कोई हो तो उससे फिर सृष्टि का खेल नहीं हो सकता। वह गृहस्थी नहीं कर सकता, उसे तो कामिनी-काञ्चन में आसक्ति नहीं होती। पका हुआ धान खेत में बोने से क्या होगा?

बंकिम *(हँसते-हँसते)*— महाशय, वैसे तो आगाछा (weed, जंगली पौधे) से भी कोई लाभ नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण— ज्ञानी इस अर्थ में आगाछा (व्यर्थ पौधा) नहीं है। जिसने ईश्वर-दर्शन किया है, उसने अमृत फल प्राप्त कर लिया है— घीया, कद्दू फल नहीं! उसका पुनर्जन्म नहीं होता। पृथ्वी कहो, सूर्यलोक कहो, चन्द्रलोक ही कहो— किसी भी जगह उसे आना नहीं होता।

"उपमा— एकदेशी है। तुम तो पण्डित हो, न्याय नहीं पढ़ा? बाघ जैसा भयानक कहने पर बाघ की तरह कोई एक भयानक पूँछ या हड्डी मुख में होगी वह तो नहीं होता। *(सब का हास्य)*।

"मैंने केशवसेन से यही बात कही थी। केशव ने पूछा था— महाशय, परलोक है क्या? मैंने न इधर का कहा, न उधर का! कहा, कुम्हार हण्डियाँ सुखाने के लिए रखते हैं, उनमें पक्की हण्डियाँ भी होती हैं, और फिर कच्ची हण्डियाँ भी होती हैं। कभी-कभी गाय आदि मार जाती है। पक्की हण्डियों के टूट जाने पर कुम्हार उन्हें फेंक देते हैं, किन्तु कच्ची हण्डी के टूट जाने पर उसे फिर दोबारा ले आते हैं; लाकर जल में भिगोकर फिर दोबारा चाक पर रख कर नई हण्डी बनाता है; छोड़ता नहीं। जभी तो केशवसेन से कहा, जब तक कच्चा रहेगा, कुम्हार छोड़ेगा नहीं; जब तक ज्ञान नहीं मिलेगा, जब तक ईश्वर-दर्शन नहीं होगा, तब तक कुम्हार फिर चाक पर रखेगा; छोड़ेगा नहीं, अर्थात् फिर-फिर इस संसार में आना होगा, निस्तार नहीं है। उन्हें प्राप्त करने पर

मुक्ति होती है, तभी कुम्हार छोड़ता है, क्योंकि उसके द्वारा माया की सृष्टि का कोई काम नहीं होता। ज्ञानी माया के पार हो गया है। वह फिर माया के संसार में क्या करेगा?

"किन्तु किसी-किसी को वे रख देते हैं, माया के संसार में लोक-शिक्षा के लिए— लोक-शिक्षा देने के लिए। ज्ञानी विद्या-माया को आश्रय करके रहता है। उसे अपने काम के लिए वे ही रख देते हैं, जैसे शुकदेव, शंकराचार्य।"

●

(बंकिम के प्रति)— "अच्छा, आप क्या कहते हैं, मनुष्य का कर्त्तव्य क्या है?"

बंकिम *(हँसते-हँसते)*— जी, आप यदि यह कहते हैं, तब तो फिर आहार, निद्रा और मैथुन हैं।

श्रीरामकृष्ण *(विरक्त होकर)*— ए:। तुम तो बड़े च्याँचड़ा, (swindler शठ)! तुम जो रात-दिन करते हो, वही तुम्हारे मुख से निकल रहा है। व्यक्ति जो खाता है, उसी की ही डकार आती है। मूली खाने से मूली की डकार आती है। डाब खाने से डाब की डकार आती है। कामिनी-काञ्चन के भीतर रात-दिन रहते हो, और वही बात ही मुख से निकल रही है। केवल विषय-चिन्ता करने से पटवारी का स्वभाव हो जाता है, मनुष्य कपटी होता है। ईश्वर-चिन्तन करने से सरल होता है, ईश्वर-साक्षात्कार होने पर वह (वैसी) बात कोई नहीं कहेगा।

(श्रीयुक्त बंकिम— केवल पाण्डित्य और कामिनी-काञ्चन)

(बंकिम के प्रति)— "केवल पाण्डित्य होने से क्या होगा, यदि ईश्वर-चिन्तन नहीं रहता; यदि विवेक-वैराग्य नहीं रहता? पाण्डित्य से क्या होगा, यदि कामिनी-काञ्चन में मन रहता है?

"चील, गिद्ध खूब ऊँचे उड़ते हैं, पर नजर केवल मरघट पर! पण्डित ने बहुत-सी पुस्तकें, शास्त्र पढ़े हैं; 'शोलेक' (श्लोक) झाड़ सकता है, कितनी किताबें लिखी हैं, किन्तु केवल स्त्री में आसक्त है, रुपया और मान को सार वस्तु

समझता है; वह फिर कैसा पण्डित है? ईश्वर में मन न रहे तो पण्डित कैसा?

"कोई-कोई समझता है कि ये लोग केवल ईश्वर-ईश्वर करते हैं, पगले हैं! इनका मस्तिष्क खराब हो गया है। हम कैसे सयाने (चतुर) हैं, किस प्रकार सुख भोग कर रहे हैं; रुपया, मान, इन्द्रियसुख। कौवा भी समझता है, मैं बड़ा सयाना हूँ, किन्तु सुबह उठते ही दूसरे का गु खाकर मरता है! कौवा, देखो न कितनी उडुर-पुडर (चंचलता) करता है, बड़ा सयाना! *(सब स्तब्ध)*।

"किन्तु जो ईश्वर-चिन्तन करते हैं; विषय में से आसक्ति, कामिनी-काञ्चन में से प्यार चले जाने के लिए रात-दिन प्रार्थना करते हैं; जिन्हें विषय-रस कड़वा लगता है, हरि-पादपद्म की सुधा (अमृत) के बिना और कुछ अच्छा नहीं लगता, उनका स्वभाव हंस जैसा होता है। हंस के सामने दूध में जल रखो, जल को छोड़कर दूध पी लेगा। और हंस की गति देखी है? एक ओर को सीधा चला जाएगा। शुद्ध भक्त की गति भी केवल ईश्वर की ओर रहती है। वह और कुछ नहीं चाहता; उसे और कुछ अच्छा नहीं लगता।"

(बंकिम के प्रति, कोमल भाव में)— आप कुछ मत मन में सोचें।

बंकिम— जी, मीठा सुनने के लिए नहीं आया।

•

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण और परोपकार)

श्रीरामकृष्ण *(बंकिम के प्रति)*— कामिनी-काञ्चन ही संसार— इसका ही नाम है माया। ईश्वर को देखने की चिन्ता करने नहीं देती; दो-एक बच्चे हो जाने पर स्त्री के संग भाई-बहन की भाँति रहना चाहिए, और उसके साथ सर्वदा ईश्वर की बातें करनी चाहिएँ। वैसा होने से फिर दोनों जनों का ही मन उनकी ओर जाएगा और स्त्री धर्म में सहायक होगी। पशु-भाव बिना गए

ईश्वर के आनन्द का आस्वादन नहीं कर सकता। ईश्वर के पास प्रार्थना करनी चाहिए, जिससे पशु–भाव जाए। व्याकुल होकर प्रार्थना। वे अन्तर्यामी हैं, सुनेंगे ही सुनेंगे; यदि आन्तरिक होती है।

"और— 'काञ्चन।' मैंने पञ्चवटी* के तल पर गंगा के किनारे बैठे हुए 'रुपया मिट्टी', 'मिट्टी ही रुपया', 'रुपया ही मिट्टी' कह कर रुपया जल में फेंक दिया था।!"

बंकिम— रुपया मिट्टी! महाशय, चार पैसे रहें तो गरीब को दिए जाते हैं। रुपया यदि मिट्टी है, तो फिर दया–परोपकार नहीं किया जाएगा?

(श्रीयुक्त बंकिम, 'जगत का उपकार' और 'कर्म–त्याग')

श्रीरामकृष्ण *(बंकिम के प्रति)*— दया! परोपकार! तुम्हारी क्या सामर्थ्य जो तुम परोपकार करो? मनुष्य की इतनी नपर–चपर (दौड़, भाग, चालाकी)! किन्तु जब सो जाता है, तब यदि कोई खड़ा होकर मुख में मूत भी देता है, तो पता तक भी नहीं लगता, मुख भीग जाता है। तब अहंकार, अभिमान, दर्प कहाँ पर चला जाता है?

"संन्यासी को कामिनी–काञ्चन–त्याग करना चाहिए। वह फिर ग्रहण नहीं कर सकता। थूक को थूककर फिर दोबारा चाटते नहीं। संन्यासी यदि किसी को कुछ देता है, मन में नहीं रखता। दया ईश्वर की है; मनुष्य फिर और क्या दया करेगा? दान–वान सब राम की इच्छा है। यथार्थ संन्यासी मन से भी त्याग करता है, बाहर से भी त्याग करता है। वह गुड़ नहीं खाता, उसके पास गुड़ रहना भी ठीक नहीं। पास गुड़ हो और फिर यदि कहे, 'गुड़ मत खाना' तो लोग सुनेंगे नहीं।

"गृहियों को रुपया चाहिए, क्योंकि स्त्री–पुत्र हैं। उन्हें सञ्चय करना चाहिए, स्त्री–पुत्रों को खिलाना होगा। सञ्चय नहीं करेगा केवल पक्षी और दरवेश, अर्थात् पक्षी और संन्यासी। किन्तु पक्षी के बच्चा हो जाने पर वह

* पञ्चवटी— रासमणि के काली–मन्दिर में पञ्चवटी–तले पर ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने अनेक साधना–तपस्या की थी— अति निर्जन स्थान। सहज में ही ईश्वर–उद्दीपन हो जाता है।

मुख में रखकर खाना लाता है। उसको भी तब सञ्चय करना पड़ता है। जभी संसारी को रुपया चाहिए— परिवार का भरण-पोषण करना होता है।

"संसारी व्यक्ति शुद्ध भक्त होने पर अनासक्त होकर कर्म करता है। कर्म का फल— लाभ,-हानि, सुख-दुःख ईश्वर को समर्पण करता है और उनके पास रात-दिन भक्ति-प्रार्थना करता है, और कुछ नहीं चाहता। इसी का नाम है निष्काम कर्म— अनासक्त होकर कर्म करना। संन्यासी को भी सब कर्म निष्काम करना चाहिए किन्तु संन्यासी गृहियों की भाँति विषयकर्म नहीं करता।

"संसारी व्यक्ति निष्कामभाव से यदि किसी को दान करता है, वह अपने उपकार के लिए करता है, 'परोपकार' के लिए नहीं। सर्वभूतों में हरि हैं, उनकी सेवा करना हो जाता है। हरि-सेवा होने से अपना ही उपकार हुआ, 'परोपकार' नहीं। यही है सर्वभूतों में हरि की सेवा— केवल मनुष्य की नहीं, जीव-जन्तु के बीच में भी हरि की सेवा यदि कोई करे और यदि वह मान न चाहे, यश न चाहे, मरने पर स्वर्ग न चाहे, जिनकी सेवा करता है, उनसे उल्टा कोई उपकार नहीं चाहता, इस प्रकार से यदि सेवा करे, तो फिर उसका यथार्थ निष्काम कर्म, अनासक्त कर्म करना हो जाता है। इस प्रकार निष्काम कर्म करने पर उसका अपना कल्याण होता है। इसी का ही नाम कर्मयोग है। यह कर्मयोग भी ईश्वर-लाभ का एक पथ है। किन्तु बड़ा कठिन है, कलियुग के लिए नहीं है।

"तभी कहता हूँ, जो अनासक्त होकर इस प्रकार कर्म करता है, दया-दान करता है, वह अपना ही मंगल करता है। अन्य का उपकार, दूसरे का मंगल वे ईश्वर करते हैं, जिन्होंने चन्द्र, सूर्य, बाप, माँ, फल, फूल, धान जीव के लिए बनाए हैं। बाप-माँ के भीतर जो स्नेह देखते हो, वह उन्हीं का स्नेह है, जीव की रक्षा के लिए दिया है। दयालु के भीतर जो दया देखते हो, वह उन्हीं की दया है, निःसहाय जीव की रक्षा के लिए दी है। तुम दया करो या न करो, वे किसी न किसी सूत्र से अपना काम करवा लेंगे। उनका कार्य अटका नहीं रहता।

"जभी तो जीव का कर्तव्य क्या है?— यही और क्या कि उनके शरणागत होना, और उनकी जिस तरह से प्राप्ति हो, दर्शन हो, उसी के लिए व्याकुल होकर उनके निकट प्रार्थना करना।"

(ईश्वर ही वस्तु और सब अवस्तु)

"शम्भु ने कहा था, मेरी इच्छा है कि बहुत सारी डिस्पैन्सरियाँ, हस्पताल बनवा दूँ, वैसा होने से गरीबों का बड़ा उपकार होता है। मैंने कहा, हाँ, अनासक्त होकर यदि यह सब करो तो बुरा नहीं है। किन्तु ईश्वर के ऊपर आन्तरिक भक्ति न रहने से अनासक्त होना बड़ा कठिन है और फिर बहुत-से कामों में व्यस्त हो जाने पर किस ओर से आसक्ति आ पड़ती है, पता भी नहीं लगने देती। सोचता हूँ निष्काम-भाव से कर रहा हूँ, किन्तु शायद यश की इच्छा हो आई, नाम-यश-मान की इच्छा हो गई। और फिर अधिक कर्म करने लगने पर, कर्म की भीड़ में ईश्वर को भूल जाता है। और भी कहा था, 'शम्भु, तुम से एक बात पूछता हूँ, यदि ईश्वर तुम्हारे सम्मुख आकर साक्षात्कार दें तो फिर तुम उन्हें माँगोगे या कुछ डिस्पैन्सरियाँ अथवा हस्पताल चाहोगे?' उनको पाकर और कुछ अच्छा नहीं लगता। मिश्री का शरबत पा लेने पर फिर राब गुड़ (चिटे गुड़) का शरबत अच्छा नहीं लगता।

"जो हस्पताल और डिस्पैन्सरियाँ बनाएँगे और उनमें ही आनन्द लेंगे, वे भी भले व्यक्ति हैं; किन्तु वह श्रेणी अलग है। जो शुद्ध भक्त हैं, वे ईश्वर के बिना और कुछ नहीं चाहते, अधिक कर्म के भीतर यदि पड़ जाता है, वह व्याकुल होकर प्रार्थना करता है, 'हे ईश्वर, कृपा करके मेरा कर्म कम कर दो; वैसा न होने पर तो जो मन तुम्हारे में ही निशिदिन लगा रहना चाहिए था, उस मन का व्यर्थ खर्च हो रहा है, उसी मन से विषय-चिन्तन किया जा रहा है।' शुद्धाभक्ति की एक विशेष अलग श्रेणी है। 'ईश्वर वस्तु और सब अवस्तु', यह बोध हुए बिना शुद्धाभक्ति नहीं होती। 'यह संसार अनित्य, दो दिन के लिए है और इस संसार के जो कर्त्ता हैं, वे ही सत्य, नित्य हैं', यह बोध बिना हुए शुद्धाभक्ति नहीं होती।

"जनक आदि ने प्रत्यादिष्ट होकर (भगवान का आदेश पाकर) कर्म किया था।"

●

चतुर्थ परिच्छेद

[पहले विद्या (Science) या पहले ईश्वर ?]

श्रीरामकृष्ण *(बंकिम के प्रति)*— कोई-कोई सोचते हैं कि बिना शास्त्र पढ़े, या पुस्तक पढ़े ईश्वर को नहीं प्राप्त किया जाता। वे समझते हैं कि पहले जगत के विषय में, जीव के विषय में जानना चाहिए, पहले साइन्स पढ़नी चाहिए। *(सब का हास्य)*। वे कहते हैं— 'ईश्वर की सृष्टि इत्यादि को बिना समझे ईश्वर को नहीं जाना जाता।' तुम क्या कहते हो ? पहले साइन्स है या पहले ईश्वर हैं ?

बंकिम— हाँ, पहले बहुत कुछ (पाँचों) जानने चाहिएँ, जगत के विषय। थोड़ा-सा इधर का ज्ञान बिना हुए ईश्वर को कैसे जानोगे ? पहले पढ़-सुनकर जान लेना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण— तुम लोगों की वही एक ही बात है। पहले ईश्वर, उस के बाद सृष्टि। उनको पा लेने पर जरूरत होने पर सब ही जान सकेगा।

"यदि यदुमल्लिक के संग किसी तरह से बातचीत कर सको, तो फिर यदि तुम्हारी इच्छा रहती है, यदुमल्लिक के कितने घर, कितने शेयर हैं, कितने बाग हैं, यह भी पता लग जाएगा। यदुमल्लिक ही बता देगा। किन्तु उसके संग यदि वार्तालाप न हो तो घर में घुसने पर दरबान यदि प्रवेश न करने दे तो फिर कितने घर, कितने कम्पनी के कागज (शेयर), कितने बाग इत्यादि की ठीक सूचना कैसे लगेगी ? उन को जान लेने पर सब पता लग जाता है[1]; किन्तु सामान्य विषय जानने की आकांक्षा नहीं रहती। वेद में है यह बात। जब तक व्यक्ति को नहीं देखता; तब तक उसके गुणों की बातें कहनी चाहिएँ; वह ज्यों ही सामने आता है, त्यों ही सब बातें बन्द हो जाती हैं। लोग उसे लेकर ही मस्त हो जाते हैं, उसके संग बातचीत करके विभोर हो जाते हैं, तब और बातें नहीं रहतीं।

"आगे ईश्वर-लाभ,[2] उसके बाद है सृष्टि या अन्य बात। बाल्मीकि को

---

1 तस्मिन् विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति।

2 मनुष्य जीवन का उद्देश्य (End of Life) है ईश्वर-लाभ।

राम-मन्त्र जप करने के लिए दिया गया, किन्तु उससे कहा गया, 'मरा' 'मरा' जप करो। 'म' मायने ईश्वर और 'रा' मायने जगत। आगे ईश्वर तब फिर जगत, एक को जान लेने पर सब जाना जाता है। एक (1) के बाद यदि पचास शून्य रहें तो बहुत हो जाता है। एक (1) को पौंछ डालने पर कुछ नहीं रहता। एक (1) को लेकर ही अनेक होते हैं। एक पहले, फिर अनेक; आगे ईश्वर* उसके बाद जीव-जगत।

"तुम्हारा प्रयोजन है ईश्वर को प्राप्त करना! तुम इतना जगत, सृष्टि, साइन्स-फाएन्स इत्यादि क्यों करते हो? तुम्हें आम खाने का प्रयोजन है। बाग में कितने सौ आम के वृक्ष, कितनी हजार डालें, कितने लाख-करोड़ पत्ते हैं, तुम्हें इस सब खबर का क्या काम? तुम आम खाने आए हो, आम खाकर जाओ। इस संसार में मनुष्य भगवान प्राप्त करने के लिए आया है। वह भूलकर और नाना विषयों में मन देना ठीक नहीं। तू आम खाने के लिए आया है, आम खाकर ही जा।"

बंकिम— आम मिलता कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण— उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करो। आन्तरिक होने से वे सुनेंगे ही सुनेंगे। हो सकता है ऐसा कोई भी सत्संग मिला दें, जिससे सुविधा हो जाए। कोई शायद बोल देगा; ऐसे, ऐसे कहो तो फिर ईश्वर को पा लोगे।

बंकिम— कौन? गुरु! वे स्वयं तो बढ़िया आम खाते हैं, मुझे खराब आम देते हैं। *(हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण— क्यों जी! जिसके पेट को जो सहन होता है। सब ही तो पुलाव-कलिया खाकर हजम नहीं कर सकते? घर में मछली आई, माँ सब लड़कों को पुलाव-कलिया नहीं देती। जो दुर्बल है, जिसके पेट में असुख है, उसे मछली का झोल देती है; इस कारण क्या माँ उस लड़के को कम प्यार करती है?

---

* आगे ईश्वर— Seek ye first the Kingdom of Heaven and all other things shall be added unto you— Jesus.

(ईश्वर-लाभ का उपाय— व्याकुलता, बालक का विश्वास)

"गुरुवाक्य में विश्वास करना चाहिए। गुरु ही सच्चिदानन्द, सच्चिदानन्द ही गुरु, उनकी वाणी पर विश्वास करने से,— बालक की भाँति विश्वास करने से— ईश्वर प्राप्त हो जाता है। बालक का क्या विश्वास! माँ कहती है, 'वह तेरा दादा होता है; झट से जान लिया, 'वह मेरा दादा है।' एकदम पूरा सवा रुपया विश्वास! तब वह लड़का शायद ब्राह्मण का लड़का है, और दादा शायद बढ़ई या कुम्हार का लड़का है। माँ ने कहा है, उस कमरे में हौवा है; तो पक्का निश्चय है कि घर में हौवा है। यह है बालक का विश्वास; गुरुवाक्य में ऐसा विश्वास चाहिए। स्यानी-बुद्धि, पटवारी-बुद्धि, विचार-बुद्धि करने से ईश्वर को नहीं प्राप्त किया जाता। विश्वास और सरल होना— कपटी होने से नहीं होगा। सरल के निकट वे खूब सहज हैं। कपट से वे बड़ी दूर हैं।

"किन्तु बालक जैसे माँ को न देखने से दिक्‌भ्रान्त हो जाता है, सन्देश मिठाई हाथ में देने से भुलाना चाहो, कुछ भी नहीं चाहता, किसी तरह भी नहीं भूलता, और कहता है, 'ना, मैं माँ के पास जाऊँगा', उसी प्रकार ईश्वर के लिए व्याकुलता चाहिए। आहा! कैसी अवस्था! बालक जैसे माँ-माँ करके पागल हो जाता है। किसी तरह भी नहीं भूलता! जिसे संसार में ये सब 'सुख' भोग अलोने लगते हैं, जिसे और कुछ अच्छा नहीं लगता— रुपया, मान, देह का सुख, इन्द्रिय का सुख, जिसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता, वही आन्तरिक माँ-माँ करके कातर होता है। उसके लिए ही माँ को फिर और सब काम फेंक कर दौड़कर आना पड़ता है।

"ऐसी व्याकुलता! जिस पथ से जाओ, हिन्दु, मुसलमान, ईसाई, शाक्त, ब्रह्मज्ञानी— जिस पथ से ही जाओ, वैसी व्याकुलता के होने की बात है। वे तो अन्तर्यामी हैं, गलत पथ पर जा पड़ने पर भी दोष नहीं है— यदि व्याकुलता रहे। वे ही फिर से ठीक पथ पर उठा ले चलते हैं।

"फिर सब पथों में ही भूल है— सब ही सोचते हैं हमारी घड़ी ठीक चलती है, किन्तु किसी की भी घड़ी ठीक नहीं चलती। उसके कारण किसी का

कार्य अटकता नहीं है। व्याकुलता रहने से साधुसंग मिल जाता है, साधुसंग से अपनी घड़ी काफी ठीक कर ली जाती है।"

●

पञ्चम परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण कीर्त्तनानन्दे)

ब्राह्मसमाज के श्रीयुक्त त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण थोड़ा–सा कीर्तन सुनते–सुनते हठात् खड़े हो गए और ईश्वर के आवेश में बाह्यशून्य (बेहोश) हो गए। एकदम अन्तर्मुख, समाधिस्थ। खड़े हुए ही समाधिस्थ हैं। सब ही घेर कर खड़े हुए हैं। बंकिम घबरा कर, भीड़ ठेल कर ठाकुर के पास जाकर एक दृष्टि से देख रहे हैं। उन्होंने समाधि कभी भी नहीं देखी है।

कुछ क्षण बाद थोड़ा–सा होश होने पर ठाकुर प्रेम से उन्मत्त होकर नृत्य करने लगे, जैसे गौरांग श्रीवास–मन्दिर में भक्तों के संग में नाच रहे हैं। वह अद्भुत नृत्य! बंकिम आदि अंग्रेज़ी पढ़े लोग यह देखकर अवाक्! कैसा आश्चर्य! इसका ही नाम क्या प्रेमानन्द है? ईश्वर को प्यार करके मनुष्य क्या इतना मतवाला हो जाता है? ऐसा ही काण्ड क्या नवद्वीप में श्रीगौरांग ने किया था? इसी प्रकार करके ही क्या उन्होंने नवद्वीप और श्रीक्षेत्र में प्रेम की हाट बिठाई थी? इसके भीतर तो ढोंग नहीं हो सकता। ये सर्वत्यागी हैं; इनका रुपया, मान, नाम फैलाने का कुछ भी तो प्रयोजन नहीं है। किन्तु फिर क्या यही जीवन का उद्देश्य है? किसी ओर मन न देकर ईश्वर को प्यार करना ही क्या जीवन का उद्देश्य है? इसका उपाय क्या है? उपाय है, प्यार। प्यार करना ही उद्देश्य है। ठीक प्यार आने से ही दर्शन होता है।

भक्तगण इसी प्रकार चिन्तन करने लगे और वही अद्भुत देव-दुर्लभ नृत्य, कीर्त्तनानन्द देखने लगे। सब ही खड़े हुए हैं— ठाकुर

श्रीरामकृष्ण के चारों ओर और एक दृष्टि से उनको देख रहे हैं।

कीर्तन के अन्त में ठाकुर भूमिष्ठ होकर प्रणाम कर रहे हैं। 'भागवत भक्त भगवान', यह वाणी उच्चारण करके कह रहे हैं, ज्ञानी-योगी-भक्त, सब के चरणों में प्रणाम।

और फिर सब ने उन्हें घेर कर आसन ग्रहण किया।

•

षष्ठ परिच्छेद

(श्रीयुक्त बंकिम और भक्तियोग— ईश्वरप्रेम)

बंकिम *(ठाकुर के प्रति)*— महाशय, भक्ति कैसे होती है?

श्रीरामकृष्ण— व्याकुलता। लड़का जैसे माँ के लिए माँ को न देख पाकर दिक्भ्रान्त होकर रोता है, उसी प्रकार व्याकुल होकर ईश्वर के लिए रोने पर ईश्वर को प्राप्त तक किया जाता है।

"अरुणोदय होने पर पूर्व दिशा लाल हो जाती है, तब पता लग जाता है, सूर्योदय के होने में और देर नहीं है। उसी प्रकार यदि किसी का ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल हुआ दिखाई दे, तब खूब समझा जा सकता है कि उस व्यक्ति को ईश्वर-लाभ में और देर नहीं है।

"किसी ने गुरु से पूछा था, 'महाशय, बतला दें कि ईश्वर को कैसे पाऊँगा'। गुरु ने कहा, 'आओ, मैं तुम्हें दिखला देता हूँ'। यह कहकर उसे अपने साथ एक तालाब के निकट ले गया। दोनों जने जल में उतर गए, तब हठात् गुरु ने शिष्य को पकड़कर जल में डुबकी लगवा दी। थोड़ी देर बाद छोड़ने पर शिष्य सिर उठाकर खड़ा हो गया। गुरु ने पूछा, 'तुम्हें कैसा बोध हुआ था?' शिष्य बोला, 'प्राण जा रहा है' बोध हुआ था, 'प्राण छटपटा रहा था।' तब गुरु ने कहा— 'ईश्वर के लिए जब प्राण इसी प्रकार छटपट करेगा, तब समझना कि उनके साक्षात्कार होने में अब देरी नहीं।'

"तुम्हें कहता हूँ, ऊपर तैरने से क्या होगा? थोड़ी डुबकी मारो। गहरे जल में नीचे रत्न होते हैं, जल के ऊपर हाथ-पाँव मारने से क्या होगा? ठीक यथार्थ सुच्चा मणि भारी होता है, जल पर तैरता नहीं; नीचे जा कर जल के नीचे रहता है। यथार्थ माणिक प्राप्त करना हो तो जल के भीतर डुबकी मारनी चाहिए।"

बंकिम— महाशय, क्या करूँ, पीछे शोला (कार्क) बँधा हुआ है। *(सब का हास्य)*। डूबने नहीं देता।

श्रीरामकृष्ण— उनको स्मरण करने पर सब पाप कट जाते हैं। उनके नाम से कालपाश (बन्धन) कट जाता है। डुबकी मारनी ही पड़ेगी, नहीं तो फिर रत्न नहीं मिलेगा। एक गाना सुनो—

डुब् डुब् डुब् रूप-सागरे आमार मन।
तलातल पाताल खुंजले पाबि रे प्रेमरत्नधन॥
खुँज खुँज खुँज खुँजले पाबि हृदय माझे वृन्दावन।
दीप् दीप् दीप् ज्ञानेर बाति ज्वलबे हृदे अनुक्षण॥
ड्यांग् ड्यांग ड्यांग ड्यांगाय डिंगे चालाय आबार से कोन जन।
कुबीर बोले शोन् शोन् शोन् भाबो गुरुर श्रीचरण॥

[भावार्थ— ओ मेरे मन, तू (श्री गुरु के) रूप-सागर में डूब जा, डूब जा, डूब जा। तलातल-पाताल खोजने से तुझे अपने हृदय में प्रेम-रत्न-धन मिलेगा। खूब खोज लेने पर ही तुझे हृदय में आनन्दधाम वृन्दावन प्राप्त हो जाएगा। तब हृदय में सदा ज्ञान की बत्ती जलती रहेगी। भला ऐसा कौन है जो धरती पर 'डांगा' (नाव) चलाएगा? 'कुबीर' कहते हैं, तू सदा श्री गुरु के श्रीचरणों का ही अनुध्यान कर।)]

ठाकुर ने अपने उसी देवदुर्लभ मधुर कण्ठ से इसी गाने को गाया। सारी सभा के लोग आकृष्ट होकर एक मन से इस गाने को सुनने लगे। गाना समाप्त होने पर फिर और बातें आरम्भ हो गईं।

श्रीरामकृष्ण *(बंकिम के प्रति)*— कोई-कोई डूब मारना नहीं चाहते। वे कहते हैं, ईश्वर-ईश्वर करके, इसे खूब अधिक बढ़ाने से अन्तकाल में क्या पागल हो जाऊँ? जो ईश्वर के प्रेम में मस्त हैं, उन्हें वे लोग कहते हैं पागल हो गया है। किन्तु ये लोग इसे नहीं समझते कि सच्चिदानन्द अमृत का सागर है।

"मैंने नरेन्द्र से पूछा था, कल्पना करो कि एक कसोरी में रस है, और तू मक्खी हो गया है; तू कहाँ पर बैठकर रस पिएगा? नरेन्द्र बोला, सूखे में (किनारे पर) बैठकर मुख बढ़ाकर पी लूँगा। मैंने कहा, क्यों? बीच में जाकर डूबकर पीने में क्या दोष है? नरेन्द्र बोला, तब तो मैं रस में लिपटकर मर जाऊँगा। तब मैंने कहा, बेटा! सच्चिदानन्द-रस वैसा नहीं है, यह रस अमृतरस है, इसमें डूबने से मनुष्य मरता नहीं; अमर हो जाता है।

"जभी कहता हूँ, डुबकी लगाओ। कुछ भय नहीं, डूबने से अमर होता है।"

अब बंकिम ने ठाकुर को प्रणाम किया— विदा ग्रहण करेंगे।

बंकिम— महाशय, जितना बुद्धू मुझे ठहराया है, उतना नहीं हूँ। एक ही प्रार्थना है— अनुग्रह करके कुटीर पर एक बार पाँव की धूल—

श्रीरामकृष्ण— ठीक तो है, ईश्वर की इच्छा!

बंकिम— वहाँ भी देखेंगे, भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्यों जी, किस प्रकार के भक्त हैं सब वहाँ पर? जो गोपाल, गोपाल; केशव, केशव कहते थे, उनके जैसे हैं क्या? *(सब का हास्य)*।

एक भक्त— महाशय! गोपाल, गोपाल, यह क्या कहानी है?

श्रीरामकृष्ण *(हँसते-हँसते)*— तो फिर कहानी सुनाता हूँ, सुनो। एक स्थान पर एक सुनार की दुकान है। वे परम वैष्णव हैं— गले में माला, माथे पर तिलक, प्राय: हाथ में हरिनाम की थैली और मुख में सर्वदा ही हरि-नाम रहता है। साधु ही कहा जाता है, किन्तु पेट के लिए सुनार का काम करते हैं, स्त्री-बच्चों को तो खिलाना होगा। परम वैष्णव, यह बात सुनकर अनेक खरीदार उनकी ही दुकान पर आते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि इन लोगों की दुकान में सोने-चाँदी की गड़बड़ नहीं होगी। खरीदार दुकान पर जाकर देखता है कि मुख से हरिनाम कर रहे हैं और बैठे-बैठे काजकर्म कर रहे हैं। खरीदार ज्यों ही जाकर बैठा, एक जन कह उठा, 'केशव, केशव, केशव'। क्षणेक बाद और एक जन बोल उठा, 'गोपाल, गोपाल, गोपाल' और कुछ बातचीत होते न होते ही और एक जन बोल उठा— 'हरि, हरि, हरि'। गहने गढ़वाने की बात

जब एक प्रकार से चल पड़ी तब और एक जन बोल उठा— 'हर! हर! हर!' मतलब यह कि काम में इतनी भक्ति, प्रेम देखकर वे लोग सुनारों को रुपया–पैसा देकर निश्चिन्त हो गए, क्योंकि जानते हैं ये लोग कभी भी ठगेंगे नहीं।

"किन्तु बात क्या है, जानते हो? खरीदार के आने पर जिसने कहा था, 'केशव! केशव!' उसका मतलब था कि ये लोग सब क्या हैं? अर्थात् ये खरीदार जो आए हैं, ये सब कैसे हैं? जिसने कहा था, 'गोपाल! गोपाल!' उसके मायने यही कि इन्हें तो गौवों के पालक देख रहा हूँ, गौवों के पालक। जिसने कहा था 'हरि! हरि!' उसका अर्थ यही है कि जब इन्हें गौवों के पालक देख रहा हूँ तो फिर 'हरि' अर्थात् हरण कर लूँ (लूट लूँ)। और जिसने कहा था, 'हर! हर!' उसके मायने यही हैं कि जब गोपाल हैं तो सर्वस्व हरण करो। ऐसे हैं वे लोग परम भक्त साधु।" *(सब का हास्य)*।

बंकिम ने विदा ग्रहण की। किन्तु एकाग्र होकर कुछ सोच रहे थे। कमरे के दरवाजे के निकट आकर देखा, चादर गिरा आए हैं। देह पर केवल जामा (कुरता) है। एक बाबू उसे समेट कर दौड़ कर आए और चादर उनके हाथ में दी। बंकिम क्या सोच रहे थे?

राखाल आए हैं। वे वृन्दावन धाम बलराम के संग में गए थे। वहाँ से होकर कुछ दिन हुए लौटे हैं। ठाकुर ने उनकी बात शरत् और देवेन्द्र से कही थी और उनके साथ आलाप करने के लिए उन लोगों से कहा था। जभी वे लोग राखाल के संग आलाप करने के लिए उत्सुक होकर आए थे। सुना, इन्हीं का नाम राखाल है।

शरत् और सान्याल, ये लोग ब्राह्मण हैं, अधर सुवर्ण वणिक्। पीछे कहीं मालिक खाने के लिए न पुकारें, इसलिए जल्दी–जल्दी भाग गए। वे लोग नए–नए आने लगे हैं; अभी भी जानते नहीं, ठाकुर अधर को कितना प्यार करते हैं। ठाकुर कहते हैं, "भक्त की तो एक अलग ही जाति होती है— सब ही एक जातीय।"

अधर ने ठाकुर श्रीरामकृष्ण को और समवेत हुए भक्तों को अति यत्नपूर्वक बुलाकर परितोष पूर्वक खिलाया। भोजन के बाद भक्तगण

ठाकुर श्रीरामकृष्ण की मधुर बातें स्मरण करते-करते, उनकी अद्भुत प्रेम की छवि हृदय में लेकर घरों को लौट गए।

अधर के घर में शुभागमन के दिन श्रीयुक्त बंकिम ने श्रीरामकृष्ण से अपने घर आने का अनुरोध किया था। उन्होंने (ठाकुर ने) कुछ दिन बाद श्रीयुक्त गिरीश और मास्टर को उनके सानकीभांगा वाले वासस्थान पर भेज दिया था। उनके संग श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में अनेक बातें हुईं। ठाकुर के फिर दोबारा दर्शन करने के लिए आने की इच्छा बंकिम ने प्रकट की, किन्तु कार्य के कारण फिर आना नहीं हुआ।

•

(दक्षिणेश्वर पञ्चवटी मूल में 'देवी चौधुराणी' पाठ)

6 दिसम्बर, 1884 ईसवी; श्रीयुक्त अधर के घर में ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने शुभागमन किया था और श्रीयुक्त बंकिम बाबू के साथ बातचीत की थी। प्रथम से छठे परिच्छेद तक ये सब बातें वर्णित हुई हैं।

इस घटना के कुछ दिन परे
अर्थात् 27 दिसम्बर शनिवार को
ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने पञ्चवटी मूल में दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग में बंकिम द्वारा रचित देवी चौधुराणी का कुछेक अंश पाठ सुना था और गीता में कहे गए निष्काम कर्म के विषय में अनेक बातें कही थीं।

श्रीरामकृष्ण पञ्चवटी में चबूतरे के ऊपर अनेक भक्तों के संग में बैठे थे। मास्टर को पाठ करके सुनाने के लिए कहा। केदार, राम, नित्यगोपाल, तारक (शिवानन्द), प्रसन्न (त्रिगुणातीत), सुरेन्द्र आदि अनेक ही उपस्थित थे।

[समस्त वर्णन श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत, द्वितीय भाग, बाईसवें खण्ड में देखें]

परिशिष्ट–ख

केशव के साथ दक्षिणेश्वर–मन्दिर में

प्रथम परिच्छेद

पहली जनवरी, 1881, शनिवार; 18वीं पौष, 1287 (बंगला) साल। ब्राह्मसमाज का माघोत्सव सम्मुख। प्रताप, त्रैलोक्य, जयगोपाल सेन आदि अनेक ब्राह्मभक्तों को लेकर केशवचन्द्र सेन श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने दक्षिणेश्वर–मन्दिर में आए हैं। राम, मनोमोहन आदि अनेक ही उपस्थित हैं।

ब्राह्मभक्तों में से अनेक ही केशव के आने से पहले कालीबाड़ी में ही आ गए हैं और ठाकुर के पास बैठे हुए हैं। सब ही परेशान हैं, केवल दक्षिण की ओर ताक रहे हैं, कब केशव आएँगे, कब केशव जहाज से आकर उतरेंगे। उनके आने तक कमरे में गोलमाल होने लगा।

अब केशव आ गए। हाथ में दो बेल और फूल का एक तोड़ा (गुलदस्ता) है। केशव ने श्रीरामकृष्ण के चरण–स्पर्श करके उन सब चीजों को पास रख दिया एवं भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। ठाकुर ने भी भूमिष्ठ होकर प्रतिनमस्कार किया।

श्रीरामकृष्ण आनन्द में हँस रहे हैं और केशव के साथ बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(केशव के प्रति, सहास्य)*— केशव, तुम मुझे चाहते हो। किन्तु तुम्हारे चेले मुझे नहीं चाहते। तुम्हारे चेलों से कहा, अब हम लोग खचमच (शोरगुल) करें, तब फिर गोबिन्द आएँगे।

(केशव के शिष्यों के प्रति)— "अरे भाई, तुम्हारे गोबिन्द आ गए। मैं इतनी

देर खचमच कर रहा था, जमेगा क्यों। *(सब का हास्य)*।

"गोबिन्द का दर्शन सहज में नहीं मिलता। कृष्ण-नाटक में देखा नहीं, नारद जब व्याकुल होकर ब्रज में बोले— 'प्राण, हे गोबिन्द मम जीवन', तब राखालों के संग में कृष्ण आए। पीछे सखियाँ, गोपियाँ। व्याकुल बिना हुए भगवान का दर्शन नहीं होता।

(केशव के प्रति)— "केशव, तुम कुछ बोलो; ये लोग सब तुम्हारी बात सुनना चाहते हैं।"

केशव *(विनीत भाव से, सहास्य)*— यहाँ पर बातें करना लुहार के निकट सूई बिक्री करने आना है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— किन्तु बात क्या है, जानते हो? भक्त का स्वभाव गांजाखोर का स्वभाव होता है। तुमने एक बार गांजा-चिलम में से सूटा मारा, मैंने भी एक बार सूटा मारा। *(सब का हास्य)*।

चार बज गए हैं। काली-मन्दिर की नहबत बजती हुई सुनाई दे रही है।

श्रीरामकृष्ण *(केशव आदि के प्रति)*— देखा, कैसा सुन्दर बाजा है! किन्तु केवल एक व्यक्ति 'पों' कर रहा है, और एक जन नाना सुरों की लहरी उठा कर कितने राग-रागिणी का अलाप कर रहा है। मेरा भी ऐसा ही भाव है। मैं सात छिद्र रहते हुए केवल 'पों' क्यों करूँ— क्यों केवल सोऽहं, सोऽहं करूँ। शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य, मधुर— सब भावों में उन्हें पुकारूँगा— आनन्द करूँगा, विलास करूँगा।

केशव अवाक् होकर ये सब बातें सुन रहे हैं और कह रहे हैं—

"ज्ञान और भक्ति की इस प्रकार की आश्चर्यजनक, सुन्दर व्याख्या मैंने कभी भी नहीं सुनी।"

केशव *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— आप कितने दिन इस प्रकार गोपन में रहेंगे— क्रमशः यहाँ पर मनुष्यों की भीड़ हो जाएगी।

श्रीरामकृष्ण— वह तुम्हारी कैसी बात? मैं खाता-पीता हूँ, मजे करता हूँ, उनका नाम करता हूँ। लोगों को जमा करना आदि मैं नहीं जानता। 'कौन

जाने तेरी गांई गुंई, वीरभूम का (मैं) बामुन मुई।' (ग्राम-श्राम मैं नहीं जानता, मैं तो वीरभूम का ब्राह्मण हूँ।) हनुमान ने कहा था— मैं वार, तिथि, नक्षत्र इत्यादि नहीं जानता, केवल एक राम-चिन्तन करता हूँ।

केशव— अच्छा, मैं लोग जमा करूँगा, किन्तु आप के यहाँ पर तो सब को ही आना होगा।

श्रीरामकृष्ण— मैं सब की रेणु की रेणु हूँ। यदि दया करके आते हैं, तो आवें।

केशव— आप जैसा कहते हैं, आप का आना विफल नहीं होगा।

•

द्वितीय परिच्छेद

(दक्षिणेश्वर-मन्दिर में भक्तों के संग श्रीरामकृष्ण)

इधर संकीर्तन का आयोजन हो रहा है। बहुत-से भक्तों ने योग दिया है। पञ्चवटी से होकर संकीर्तन दल दक्षिण की ओर आ रहा है। हृदय शिंगा बजा रहे हैं। गोपीदास खोल (मृदंग) बजा रहे हैं और दो जने करतालें बजा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने गाना पकड़ लिया—

हरिनाम निसे रे जीव यदि सुखे थाकबि।
सुखे थाकबि बैकुण्ठे जाबि, ओ रे मोक्षफल सदा पाबि।
(हरिनाम गुणे रे)
जे नाम शिव जपेन पञ्चमुखे,
आज सेइ हरिनाम दिबो तोके।

[भावार्थ— हे जीव, यदि सुख में रहना है तो हरि-नाम ले। सुख में रहेगा, बैकुण्ठ में जाएगा, अरे सदा मोक्ष-फल पाएगा। (हरिनाम का गुण है यही)। जिस नाम को शिव पञ्चमुखों से गाते हैं, वही हरिनाम आज तुझे दूँगा।]

श्रीरामकृष्ण सिंहविक्रम से नृत्य कर रहे हैं। अब समाधिस्थ हो गए।

समाधि भंग होने पर कमरे में बैठ गए हैं। केशव आदि के संग में बातें कर रहे हैं।

(सर्वधर्म-समन्वय-कथा)

''सब पथों द्वारा ही उन्हें पाया जाता है। जैसे तुम लोग कोई गाड़ी, कोई नौका, कोई जहाज द्वारा, कोई पैदल आए हो, जिसको जिसमें सुविधा हुई, और जो जिसकी प्रकृति है, उसी के अनुसार आए हो। उद्देश्य एक है— कोई पहले आया है, कोई पीछे आया है।''

(ईश्वर-दर्शन का उपाय, अहंकार-त्याग)

(केशव आदि के प्रति)— ''उपाधि जितनी ही जाएगी, उतना ही वे निकट होंगे। ऊँचे टीले पर वर्षा का जल नहीं जमता; नहर, जमीन में जमा होता है; वैसे ही उनका कृपावारि, जहाँ पर अहंकार है, वहाँ पर नहीं जमता। उनके पास दीनहीन भाव ही ठीक है।

''खूब सावधानी से रहना चाहिए, यहाँ तक कि कपड़े-लत्तों से अहंकार होता है। तिल्ली के रोगी को देखा है, काली किनारी की धोती पहनी है, झट निधुबाबू के टप्पे गाता है!

''किसी ने बूट पहने हैं, तुरन्त मुख से अंग्रेज़ी में बातें निकलती हैं!

''सामान्य आधार होने पर गेरुआ पहनने से अहंकार हो जाता है; तनिक-सी त्रुटि होने पर क्रोध, अभिमान हो जाता है।''

(भोगान्त, व्याकुलता और ईश्वर-लाभ)

''व्याकुल बिना हुए उन्हें देखा नहीं जाता। ऐसी व्याकुलता भोगान्त बिना हुए नहीं होती। जो कामिनी-काञ्चन के मध्य में हैं, भोगान्त नहीं हुआ, उन्हें व्याकुलता नहीं आती।

''वहाँ उस देश में हृदय का लड़का सारा दिन मेरे पास रहता, चार-

पाँच वर्ष का लड़का। मेरे सामने यह, वह करता रहता, एक प्रकार से भूला ही रहता। ज्यों ही सन्ध्या होती, त्यों ही कहता— माँ के पास जाऊँगा। मैं कितना कहता कि मैं कबूतर दूँगा, इन बातों से वह नहीं भूलता; रो–रो कर कहता, माँ के पास जाऊँगा। खेल–वेल कुछ भी अच्छा नहीं लगता। मैं उसकी अवस्था देख रोता।

"यही है बालक की भाँति ईश्वर के लिए क्रन्दन। यही है व्याकुलता। फिर खेलना, खाना कुछ भी अच्छा नहीं लगता। भोगान्त होने पर ऐसी व्याकुलता और उनके लिए क्रन्दन होता है।"

सब अवाक् होकर नि:शब्द ये सब बातें सुन रहे हैं।

सन्ध्या हो गई, फरास प्रकाश जला गया है। केशव आदि ब्राह्मभक्तगण सब जलपान करके जाएँगे। आहार का आयोजन हो रहा है।

केशव *(सहास्य)*— आज भी क्या मुड़ि (मुरमुरा) ?
श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— हृदु जानता है।

पत्तलें पड़ गईं। पहले मुड़ि, उस के बाद लुचि (पूरी), फिर तरकारी। *(सब का खूब आनन्द और हँसी)*। सब शेष होते–होते रात के दस बज गए।

ठाकुर पञ्चवटी–मूल में ब्राह्मभक्तगणों के संग में फिर बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य, केशव आदि के प्रति)*— ईश्वर–लाभ के बाद संसार में खूब बढ़िया रहा जाता है। धाई छूकर फिर उसके बाद खेल करो न!

"(ईश्वर–) लाभ के पश्चात् भक्त निर्लिप्त हो जाता है, जैसे पाँकाल मछली। पंक के भीतर रहते हुए भी देह पर पंक (कीचड़) लगी नहीं रहती।"

प्राय: 11 बज रहे हैं, सब जाने के लिए अधीर हैं। प्रताप ने कहा, आज रात को यहाँ पर रहा जाए।

श्रीरामकृष्ण केशव से कह रहे हैं, आज यहाँ पर रहो न।

केशव *(सहास्य)*— काम–शाम है; जाना होगा।

श्रीरामकृष्ण— क्यों जी, तुम्हारी आँषचुबड़ी (मछली की छबड़ी) की गन्ध न होने से नीन्द नहीं आएगी। एक मेछुनी माली के घर में रात को अतिथि हुई थी। उसको फूलों वाला कमरा सोने के लिए देने से उसे फिर नीन्द नहीं आती। *(सब का हास्य)*। उशखुश करती है (बेचैन होती है), उसे देखकर मालिन आकर बोली, क्यों जी— सो क्यों नहीं रही हो जी? मेछुनी बोली, क्या पता बहन, फूलों की गन्ध से नीन्द नहीं आ रही, तुम एक बार वह आँषचुबड़ी ला दे सकती हो? तब मेछुनी आँषचुबड़ी पर जल छिड़क कर उसी गन्ध को सूँघते-सूँघते गहरी नीन्द में अभिभूत हो गई। *(सब का हास्य)*।

विदा के समय केशव ने ठाकुर के चरण स्पर्श करके एक फूलों का तोड़ा (गुलदस्ता) ग्रहण किया और भूमिष्ठ होकर प्रणाम करके 'विधान की जय हो', यह वाणी भक्तों के संग बोलने लगे।

ब्राह्मभक्त जयगोपाल सेन की गाड़ी में केशव चढ़े; कलकत्ता जाएँगे।

परिशिष्ट–ग

सुरेन्द्र के घर श्रीरामकृष्ण का शुभागमन

प्रथम परिच्छेद

(राम, मनोमोहन, त्रैलोक्य और महेन्द्र गोस्वामी आदि के संग)

आज श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग में सुरेन्द्र के घर आए हैं। 1881 ईसवी, आषाढ़ मास का एक दिन। सन्ध्या होय होय।

श्रीरामकृष्ण ने कुछ क्षण पूर्व शाम को तीसरे प्रहर श्रीयुक्त मनोमोहन के घर में थोड़ा–सा विश्राम किया था।

सुरेन्द्र के दुमंजिले बैठकखाने में भक्त आए हैं। महेन्द्र गोस्वामी, भोलानाथ पाल इत्यादि पड़ोसीगण उपस्थित हैं। श्रीयुक्त केशवसेन के आने की बात थी किन्तु आ नहीं सके। ब्राह्मसमाज के श्रीयुक्त त्रैलोक्य सान्याल तथा और भी कई ब्राह्मभक्त आए हैं।

बैठकखाने में सतरंजी (दरी) और चादर बिछी हुई है— उसके ऊपर एक सुन्दर गलीचा और तकिया है। ठाकुर को ले जाकर सुरेन्द्र ने उसी गलीचे के ऊपर बैठने का अनुरोध किया।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, ''यह तुम्हारी कैसी बात।'' यह कहकर महेन्द्र गोस्वामी के पास बैठ गए। यदुमल्लिक के बागान में जब परायण (ईश्वर के लिए भोजन–उत्सव) होता है, श्रीरामकृष्ण सर्वदा जाते हैं। कई मास तक परायण हुआ था।

महेन्द्र गोस्वामी *(भक्तों के प्रति)*— मैं इनके निकट कई मास तक प्राय:

सर्वदा साथ रहा था। ऐसा महान व्यक्ति मैंने कभी भी नहीं देखा। इनका भाव साधारण भाव नहीं है।

श्रीरामकृष्ण *(गोस्वामी के प्रति)*— यह सब तुम्हारी कैसी बात! मैं हीन से हीन, दीन से दीन हूँ; मैं उनका दासानुदास हूँ; कृष्ण ही महान हैं।

"जो अखण्ड सच्चिदानन्द हैं, वे ही श्रीकृष्ण हैं। दूर से देखने पर समुद्र नीलवर्ण का दिखता है, निकट जाओ तो कोई रंग नहीं। वे ही सगुण, वे ही निर्गुण; जिनका नित्य है, उनकी ही लीला है।

"श्रीकृष्ण त्रिभंग क्यों?— राधा के प्रेम में।

"जो ब्रह्म हैं, वे ही काली हैं, आद्याशक्ति सृष्टि-स्थिति-प्रलय करती हैं। जो कृष्ण हैं, वे ही काली हैं।

"मूल एक— उनका समस्त खेल, लीला।"

(ईश्वर-दर्शन का उपाय)

"उनका दर्शन किया जाता है। शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि में दर्शन किया जाता है। कामिनी-काञ्चन में आसक्ति रहने पर मन मलिन हो जाता है।

"मन से ही तो सारी बात है। मन धोबी के घर का धुला कपड़ा है; जिस रंग में डुबोएँगे, उसी रंग का हो जाएगा। मन से ही ज्ञानी, मन से ही अज्ञानी। अमुक व्यक्ति खराब हो गया है अर्थात् अमुक व्यक्ति के मन को खराब रंग ने पकड़ लिया है।"

अब श्रीयुक्त त्रैलोक्य सान्याल और अन्य ब्राह्मभक्तों ने आकर आसन ग्रहण किया।

सुरेन्द्र माला लेकर ठाकुर को पहनाने के लिए आए। उन्होंने माला हाथ में ले ली— किन्तु दूर फेंक कर एक तरफ रख दी।

सुरेन्द्र अश्रूपूर्ण लोचनों से पश्चिम के बरामदे में जाकर बैठ गए;— संग में राम और मनोमोहन आदि हैं। सुरेन्द्र अभिमान से कहते हैं—

मुझे बुरा लगा है; राढ़ देश का ब्राह्मण इन सब वस्तुओं की मर्यादा क्या जाने! काफी रुपया खर्च करके यह माला आई; क्रोध में मैंने कह दिया, सब मालाएँ और सब के गले में डाल दो। अब समझ रहा हूँ, मेरे से अपराध हुआ है; भगवान पैसे के कोई नहीं हैं; अहंकार के भी कोई नहीं हैं! मैं अहंकारी, मेरी पूजा क्यों लेंगे? मेरी जीने की इच्छा नहीं। कहते-कहते अश्रुधारा कपोलों से बह पड़ी और छाती भीगने लगी।

इधर कमरे के मध्य त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर नृत्य कर रहे हैं। जो माला फेंक दी थी, वही माला उठाकर गले में पहन ली। एक हाथ से माला पकड़े हैं, दूसरे हाथ को हिलाते-हिलाते गाना और नृत्य कर रहे हैं—

हृदय परशमणि आमार—

पद जोड़ रहे हैं—

(भूषण बाकि कि आछे रे!)
(जगत-चन्द्र-हार परेछि!)

[भावार्थ— मेरा हृदय पारस मणि है। और भूषण क्या बाकी है! मैंने तो जगत-चन्द्र-हार पहना है।]

सुरेन्द्र आनन्द में विभोर हैं— ठाकुर गले में वही माला पहनकर नाच रहे हैं। मन-मन में कह रहे हैं, भगवान दर्पहारी। किन्तु कंगाल का, अकिंचन का धन हैं वे।

श्रीरामकृष्ण ने स्वयं गाना पकड़ लिया—

जादेर हरि बोलते नयन झुरे
तारा तारा दुभाई एसेछे रे।
(जारा मार खेये प्रेम जाचे)
(जारा आपनि मेते जगत माताय)
(जारा आचण्डाल कोल देय)
(जारा ब्रजेर कानाई बलाई)

[भावार्थ— जिनके मुख से हरि कहते हुए नयन से अश्रु झरते हैं, वे ही दोनों भाई आए हैं रे। जो मार खाकर प्रेम माँगते हैं, जो अपने आप मतवाले होकर

जगत को मतवाला करते हैं, जो आचण्डाल को प्यार (गोद) देते हैं, जो ब्रज के कान्हाई, बलाई हैं।]

बहुत से भक्त ठाकुर के संग नृत्य कर रहे हैं।

सब बैठ गए हैं और सदालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र से कह रहे हैं, ''मुझे कुछ खिलाएगा नहीं?''

यह कहकर उठकर अन्त:पुर की ओर को चल दिए। स्त्रियों ने आकर सब ने भूमिष्ठ होकर अति भक्ति से भरकर प्रणाम किया। आहार के बाद थोड़ा-सा विश्राम करके दक्षिणेश्वर की ओर चले।

परिशिष्ट–घ

श्रीरामकृष्ण मनोमोहन के घर पर

प्रथम परिच्छेद

(केशवसेन, सुरेन्द्र, राजेन्द्रमित्र, त्रैलोक्य आदि के संग में)

श्रीयुक्त मनोमोहन के घर; 23 नं० सिमुलिया स्ट्रीट; सुरेन्द्र के घर के निकट— आज 3 दिसम्बर, शनिवार 1881 ईसवी; 19वीं अग्रहायण 1288 (बंगला) साल।

श्रीरामकृष्ण ने लगभग चार बजे के समय शुभागमन किया है। घर छोटा है— दोतल का— छोटा-सा आँगन। ठाकुर बैठकखाने में बैठे हैं। एक तल का कमरा है— गली के ऊपर ही कमरा है।

भवानीपुर के ईशान मुखर्जी के संग में श्रीरामकृष्ण बातें कर रहे हैं।

ईशान— आपने गृहस्थाश्रम का त्याग क्यों किया है? शास्त्र में गृहस्थाश्रम को श्रेष्ठ कहा है।

श्रीरामकृष्ण— क्या भला है, क्या मन्दा है— इतना नहीं जानता; वे जो करवाते हैं, वही करता हूँ; जो बुलवाते हैं, वही बोलता हूँ।

ईशान— सब ही यदि गृहस्थाश्रम-त्याग करें, तो फिर ईश्वर के विरुद्ध काम करना हुआ।

श्रीरामकृष्ण— सब ही त्याग क्यों करेंगे? और उनकी क्या ऐसी इच्छा है कि सब ही गीदड़, कुत्ते की भाँति कामिनी-काञ्चन में मुख दबाए रखें? फिर क्या कुछ और इच्छा उनकी नहीं है? कौन-सी उनकी इच्छा है, कौन-सी

अनिच्छा, क्या तुमने सब जान लिया है ?

"उनकी इच्छा गृहस्थ करना ही तुम कह रहे हो। जब स्त्री, पुत्र मरते हैं, तब भगवान की इच्छा क्यों नहीं देख पाते ? जब खाने को नहीं मिलता— दरिद्रता होती है— तब भगवान की इच्छा क्यों नहीं देख पाते ?

"उनकी क्या इच्छा है, माया जानने नहीं देती। उनकी माया से अनित्य नित्य बोध होता है, और फिर जो नित्य है वह अनित्य बोध होता है। संसार अनित्य है— अभी है, अभी नहीं; किन्तु उनकी माया में पता नहीं लगता कि यह ठीक है। उनकी माया में ही 'मैं कर्त्ता हूँ', बोध होता है; और ये सब— स्त्री-पुत्र, भाई-बहन, बाप-माँ, घर-मकान— इत्यादि सब 'मेरे' बोध होते हैं।

"माया में विद्या-अविद्या दोनों ही हैं। अविद्या का संसार भुला देता है; और विद्यामाया— ज्ञान, भक्ति, साधु-संग— ईश्वर की ओर ले जाती है।

"उनकी कृपा से जो मायातीत हैं, उनके लिए सब समान हैं— विद्या-अविद्या सब समान हैं।

"गृहस्थ आश्रम भोग का आश्रम है और कामिनी-काञ्चन भोग फिर क्या करेगा ? 'सन्देश' गले से नीचे उतर जाने पर खट्टा या मीठा याद नहीं रहता।

"किन्तु सब क्यों त्याग करेंगे ? समय बिना हुए क्या त्याग होता है ? भोग का अन्त हो जाने पर तब त्याग का समय होता है। जबरदस्ती कोई त्याग क्या कर सकता है ?

"एक प्रकार का वैराग्य है— उसे मर्कट वैराग्य कहते हैं, हीनबुद्धि वाले लोगों का वैसा वैराग्य होता है। राँडीपुती (विधवा का लड़का), माँ सूत कात कर खाती है— लड़के का थोड़ा-सा काम था, वह काम भी गया— तब वैराग्य हो गया, गेरुआ पहन लिया; काशी चला गया। फिर कुछ दिन बाद पत्र लिखता है— 'मुझे एक काम मिल गया है, दस रुपये महीना।' उसी में से सोने की अँगूठी और धोती-कमीज खरीदने के लिए चेष्टा करता है। भोग की इच्छा जाएगी कहाँ ?"

•

द्वितीय परिच्छेद

(मनोमोहन-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण)

ब्राह्मभक्तों के संग में केशव आए हैं। श्रीरामकृष्ण प्रांगण में बैठे हुए हैं। केशव ने आकर अति भक्तिभाव से प्रणाम किया। ठाकुर के बायीं ओर केशव बैठे हैं और दायीं ओर राम बैठे हैं।

कुछ काल के पश्चात् भागवत-पाठ होने लगा।

पाठ के अन्त में ठाकुर बातें करते हैं। प्रांगण के चारों ओर गृहस्थ भक्तगण बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— संसार का कर्म बड़ा कठिन है; बन्-बन् करके (तेजी से) घूमने से सिर घूमने पर जैसे बेहोश होकर गिर जाता है। किन्तु यदि खूँटी (स्तम्भ, सहारा) पकड़कर घूमे तो फिर भय नहीं होता। कर्म करो किन्तु ईश्वर को मत भूलो।

"यदि कहो, जब इतना कठिन है तो उपाय क्या है ?

"उपाय है अभ्यास योग। उस गाँव में बढ़इयों की स्त्रियों को देखा है; वे एक ओर चिड़वा कूटती हैं; हाथ पर ढेंकी पड़ने का भय रहता है और फिर बच्चे को स्तन पिलाती हैं; और फिर खरीदार के साथ बातें करती हैं; कहती हैं— तुम्हारे पास जो हमारा लेना है, वह दे जाना।

"नष्टा स्त्री गृहस्थ में सब काम करती है, किन्तु सर्वदा उपपति की ओर मन पड़ा रहता है।

"किन्तु इतना-सा होने के लिए भी थोड़ा-सा साधन चाहिए। बीच-बीच में निर्जन में जाकर उन्हें पुकारना चाहिए। भक्ति-लाभ करके कर्म करना चाहिए। खाली हाथों से कटहल तोड़ने पर हाथों में चिपक (लेस) लगेगी— हाथ पर तेल मलकर कटहल तोड़ने पर फिर चिपक नहीं लगेगी।"

अब प्रांगण में गाना हो रहा है। क्रमशः श्रीयुक्त त्रैलोक्य भी गाना गा रहे हैं—

जय जय आनन्दमयी ब्रह्मरूपिणी।

ठाकुर आनन्द में नाच रहे हैं। संग-संग केशवादि भक्तगण नाच रहे हैं। शीतकाल, ठाकुर के शरीर पर पसीना दिखाई दे रहा है।

कीर्तनानन्द के बाद सब बैठ गए। श्रीरामकृष्ण ने कुछ खाने को माँगा। अन्दर से एक थाल मिठाई आदि आ गई। केशव ने वह थाल पकड़े रखा और ठाकुर खाने लगे। केशव जलपात्र भी उसी प्रकार पकड़े रहे; अँगोछे (तौलिए) से मुख पौंछ दिया। उसके पश्चात् पंखा झलने लगे।

श्रीरामकृष्ण अब 'गृहस्थ में धर्म होता है कि नहीं' दोबारा फिर वही बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(केशव आदि के प्रति)*— जो गृहस्थ में उन्हें पुकार सकते हैं, वे वीर भक्त हैं। सिर पर बीस मन बोझा है, फिर भी ईश्वर को पाने की चेष्टा करते हैं। इसी का नाम है वीर भक्त।

"यदि कहो यह तो बड़ा कठिन है। कठिन होने पर भी भगवान की कृपा से क्या नहीं होता? असम्भव भी सम्भव हो जाता है। हजार वर्षों के अँधेरे कमरे में यदि प्रकाश आता है, तो वह क्या थोड़ा-थोड़ा करके आएगा? एकदम से कमरा आलोकित हो जाएगा।"

ये समस्त आशा की बातें सुनकर केशव आदि गृहस्थ भक्तगण आनन्द कर रहे हैं।

केशव *(राजेन्द्रमित्र के प्रति सहास्य)*— आपके मकान पर इस प्रकार एक दिन हो तो सुन्दर हो।

राजेन्द्र— अच्छा, वह तो सुन्दर है! राम, तुम्हारे ऊपर रहा सब भार।

राजेन्द्र, राम और मनोमोहन के मौसा हैं।

अब ठाकुर को ऊपर अन्त:पुर में ले जाया जा रहा है। वहाँ पर वे सेवा करेंगे। मनोमोहन की माता श्यामासुन्दरी ने समस्त आयोजन किया है। श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। नाना प्रकार की मिठाइयाँ आदि बढ़िया-बढ़िया खाने का सामान देखकर ठाकुर हँसने लगे और खाते-खाते कह रहे हैं— मेरे लिए कितना किया है! एक ग्लास बरफ का जल भी पास में था।

केशव आदि भक्तगण प्रांगण में बैठकर खा रहे हैं। ठाकुर नीचे आकर उन लोगों को खिलाने लगे।

वे लोग आनन्द के लिए लुचिमण्डा (पूड़ी–मिठाई) का गाना गा रहे हैं और नाच रहे हैं।

अब (ठाकुर) दक्षिणेश्वर जाएँगे। केशव आदि भक्तों ने उन्हें गाड़ी में चढ़ा दिया और उनकी पदधूलि ग्रहण की।

परिशिष्ट–ङ

श्रीरामकृष्ण राजेन्द्र के मकान पर

प्रथम परिच्छेद

(राम, मनोमोहन, केशवसेन आदि भक्तों के संग; 1881 ईसवी)

राजेन्द्र मित्र का मकान ठनठने में बेचु चैटर्जी की गली में है। मनोमोहन के घर के उत्सव के दिन श्रीयुक्त केशव ने राजेन्द्रबाबू से कहा था, 'आप के घर में इसी प्रकार एक दिन उत्सव हो, तो सुन्दर हो।' राजेन्द्र ने आनन्दित होकर उसका प्रबन्ध किया है।

आज शनिवार है; 10 दिसम्बर, 1881 ईसवी; 26 अग्रहायण 1288 (बंगला) साल। आज उत्सव होना स्थिर हुआ है। खूब आनन्द है— अनेक भक्त आएँगे। केशव आदि भक्तगण भी आएँगे।

इस समय ब्राह्मभक्त भाई अघोरनाथ की मृत्यु का संवाद उमानाथ ने राजेन्द्र को दिया। अघोरनाथ ने लखनऊ नगर में रात को दो के समय शरीर–त्याग किया है, उसी रात को ही तार द्वारा यह संवाद आ गया है— 8 दिसम्बर, 24वाँ अग्रहायण। उमानाथ अगले दिन ही यह संवाद ले आए। केशव आदि ब्राह्मभक्तों ने अशौच किया है— शनिवार को वे लोग कैसे आएँगे, राजेन्द्र चिन्तित हो गए हैं।

राम राजेन्द्र से कह रहे हैं— आप क्यों सोचते हैं? केशवबाबू चाहे न आएँ। ठाकुर आ रहे हैं,— आप जानते नहीं कि वे सर्वदा समाधिस्थ रहते हैं, ईश्वर को प्रत्यक्ष करते हैं,— जिनके आनन्द से जगत आनन्द–

आस्वादन करता है।

राम, राजेन्द्र, राजमोहन, मनोमोहन केशव से मिले। केशव बोले, 'कहाँ, मैंने तो यह बात नहीं कही कि मैं नहीं जाऊँगा। परमहंस महाशय आएँगे और मैं नहीं जाऊँगा?— अवश्य जाऊँगा; अशौच हुआ है तो मैं अलग जगह पर बैठ कर खा लूँगा।'

केशव राजेन्द्र आदि भक्तों के साथ बातें कर रहे हैं। कमरे में श्रीरामकृष्ण का समाधि-चित्र टँगा हुआ है।

राजेन्द्र *(केशव के प्रति)*— परमहंस महाशय को अनेक ही चैतन्य का अवतार कहते हैं।

केशव *(समाधि-चित्र दिखलाकर)*— ऐसी समाधि नहीं दिखाई देती। ईसा मसीह, मोहम्मद, चैतन्य को होती थी।

3 बजे के समय मनोमोहन के घर श्रीरामकृष्ण आए हैं। वहाँ विश्राम करके थोड़ा-सा जलपान किया। सुरेन्द्र कहते हैं— आप कल (मशीन) देखेंगे, कहा था— चलिए। उन्हें गाड़ी से सुरेन्द्र बंगाल फोटोग्राफर स्टुडियो में ले गए। फोटोग्राफर ने दिखाया कैसे छवि ली जाती है। काँच के पीछे काली स्याही (silver nitrate) मली जाती है; फिर छवि आती है।

ठाकुर की छवि ली जा रही है— वे तुरन्त समाधिस्थ हो गए।

अब ठाकुर राजेन्द्रमित्र के घर में आ गए हैं। राजेन्द्र पुराने डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं।

श्रीयुक्त महेन्द्र गोस्वामी घर के प्रांगण में भागवत पाठ कर रहे हैं। अनेक भक्त उपस्थित हैं— केशव अभी तक नहीं पहुँचे। श्रीरामकृष्ण बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(भक्तों के प्रति)*— गृहस्थ में होगा क्यों नहीं? किन्तु बड़ा कठिन है। आज बागबाजार के पुल पर से आया हूँ। कितने बन्धनों से बँधा हुआ है। एक बन्धन के टूटने पर पुल का कुछ नहीं होगा, और भी कितनी संगलों से बँधा हुआ है— वे खींचकर रखेंगे। वैसे ही संसारियों के बहुत से

बन्धन हैं। भगवान की कृपा के बिना बन्धनों के जाने का उपाय नहीं।

"उनका दर्शन कर लेने पर फिर भय नहीं; उनकी माया के भीतर विद्या, अविद्या दोनों ही हैं;— दर्शन के बाद निर्लिप्त हो सकता है। परमहंस-अवस्था में ठीक (यथार्थ) बोध होता है। दूध में जल है। हंस जैसे दूध लेकर जल का त्याग करता है। हंस कर सकता है किन्तु शालिक* नहीं कर सकती।

एकजन भक्त— तब फिर गृहस्थी के लिए उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण— 'गुरुवाक्य में विश्वास'। उनकी वाणी-अवलम्बन; उनकी वाणीरूप खूँटी (खम्बा) पकड़ कर घूमो (चक्कर काटो); गृहस्थ का काम करो।

"गुरु में मनुष्य-बुद्धि नहीं लाते। सच्चिदानन्द ही गुरुरूप में आते हैं। गुरु की कृपा से इष्ट के दर्शन हो जाते हैं, तब गुरु इष्ट में लीन हो जाते हैं।

"सरल विश्वास से क्या नहीं होता? गुरुपुत्र के अन्नप्राशन में— शिष्यगण, जो जिस प्रकार कर सकता है, उत्सव का आयोजन करता है। एक गरीब विधवा थी, वह भी शिष्या थी। उसकी एक गाय थी। वह एक लुटिया दूध लाई। गुरु ने मन में सोचा था कि दूध-दही का भार वह स्त्री ही लेगी। नाराज होकर गुरु ने वह स्त्री जो लाई थी, वह फेंक दिया और कहा— तू जल में डूब कर मर क्यों नहीं जाती? स्त्री इसे गुरु की आज्ञा मानकर नदी में डूबने के लिए चली गई। तब नारायण ने दर्शन दिए और प्रसन्न होकर बोले— इस पात्र में दही है, जितना ही डालेगी उतना ही निकलेगा, गुरु सन्तुष्ट होंगे। इस प्रकार वह पात्र दिए जाने पर तो वे गुरु अवाक् हो गए। और समस्त विवरण सुनकर नदी के किनारे पर आकर स्त्री से बोले— नारायण का दर्शन यदि मुझे नहीं करवाती हो तो फिर मैं इसी जल में प्राणत्याग कर दूँगा। नारायण ने दर्शन दिए, किन्तु गुरु नहीं देख पाए। स्त्री ने तब कहा— प्रभु, गुरुदेव को यदि आप दर्शन नहीं देते और उनका शरीर यदि जाता है तो मैं भी शरीर त्याग कर दूँगी। तब नारायण ने एक बार गुरु को दर्शन दिए।

"देखो, गुरु-भक्ति रहने से अपने को भी दर्शन हुआ और फिर गुरुदेव को भी हुआ।

---

* शालिक— एक छोटी पीली चोंच वाली गाने वाली काली चिड़िया।

"तभी कहता हूँ— यद्यपि आमार गुरु शुंड़ी बाड़ी जाय,
तथापि आमार गुरु नित्यानन्द राय।*

"सब ही गुरु होना चाहते हैं, शिष्य होना विशेष कोई नहीं चाहता। किन्तु देखो, ऊँची जमीन पर वर्षा का जल इकट्ठा नहीं होता। नीची जमीन पर— खोदी हुई जमीन में जमा होता है।

"गुरु जो नाम देंगे, विश्वास करके वही नाम लेकर साधन-भजन करना चाहिए।

"जिस घोंघे (सीप) के भीतर मोती तैयार होता है, ऐसा कहा है, वह घोंघा स्वाति नक्षत्र की वर्षा के जल के लिए प्रस्तुत हुआ रहता है। वह जल पड़ने पर एकदम अतल जल में डूबता हुआ चला जाता है, जब तक मोती नहीं बन जाता।"

●

द्वितीय परिच्छेद

(राजेन्द्र के भवन में श्रीरामकृष्ण)

बहुत सारे ब्राह्मभक्तों को आया हुआ देखकर ठाकुर कह रहे हैं—

"ब्राह्मसभा है या शोभा? ब्राह्मसमाज में नियमित उपासना होती है, यह खूब अच्छा है; किन्तु डुबकी मारनी चाहिए। केवल उपासना और लेक्चर से नहीं होता। उनसे प्रार्थना करनी चाहिए, जिससे भोग-आसक्ति हटकर उनके पादपद्मों में शुद्धा-भक्ति हो जाए।

"हाथी के बाहर के दाँत हैं और फिर भीतर के दाँत भी हैं। बाहर के दाँतों से शोभा होती है, किन्तु भीतर के दाँतों से खाता है। उसी प्रकार भीतर में कामिनी-काञ्चन भोग करने से भक्ति की हानि होती है।

"बाहर से लेक्चर इत्यादि देने से क्या होगा? गिद्ध ऊँचे चढ़ता है

---

* यद्यपि मेरा गुरु कलार (शराब वाले) के घर जाता है, तथापि मेरा गुरु नित्यानन्द राय है।

किन्तु मरघट पर नजर रहती है। हवाई हुस करके (फुस करके) पहले आकाश पर चढ़ जाती है। किन्तु अगले क्षण ही मिट्टी में गिर जाती है।

''भोग-आसक्ति त्याग हो जाने पर देह जाने के समय ईश्वर की ही याद आएगी। वह न हो तो इस संसार की ही वस्तुएँ समस्त याद आएँगी— स्त्री, पुत्र, गृह, धन; मान-सम्भ्रम (सम्मान) इत्यादि। पक्षी (तोता) अभ्यास करके 'राधा-कृष्ण बोल' बोलता है। किन्तु बिल्ली के पकड़ने पर क्याँ-क्याँ करता है।

''जभी सर्वदा अभ्यास करना है प्रयोजनीय। उनका नाम-गुण-कीर्तन, उनका ध्यान, चिन्तन और प्रार्थना— 'जिससे भोग-आसक्ति जाए और तुम्हारे पादपद्मों में मन हो जाए।'

''इस प्रकार का गृहस्थी आदमी गृहस्थ में दासीवत् रहता है, सब कामकाज करता है, किन्तु देश (गाँव) में मन पड़ा रहता है। अर्थात् ईश्वर के ऊपर मन रख कर समस्त कर्म करो। गृहस्थ करने से ही देह पर कीचड़ लगती है। ठीक भक्त गृहस्थी में पांकाल मछलीवत् रहता है, पंक (कीचड़) में रहकर भी देह पंक-शून्य।

''ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। उनको माँ कहकर पुकारने पर शीघ्र भक्ति, प्यार होता है।''

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने गाना आरम्भ कर दिया—

श्यामापद आकाशेते मन घुड़िखान उड़ितेछिलो।
कलुषेर कुवातास खेये गोप्ता खेये पड़े गेलो।[1]

[भावार्थ— श्यामा माँ के आकाश रूपी चरणों में मन रूपी पतंग उड़ रही थी। पाप की कुवातास (बुरी हवा) का झोंका लगने से गोता खाकर गिर गई।]

गान— यशोदा नाचातो गो मा बोले नीलमणि
से वेश लुकालि कोथा करालबदनि॥[2]

[भावार्थ— हे माँ, यशोदा नीलमणि कहकर नचाती थी। हे करालबदनी, तुमने

---

1. पूरा गाना 2-2-7 (35), 2-6-4 (87), 3-9-1 (108) पर देखें।
2. पूरा गाना 4-21-6 (313) पर देखें।

वह वेश कहाँ छुपाया है ?]

ठाकुर उठकर नृत्य कर रहे हैं और गान गा रहे हैं। भक्तगण भी उठ गए हैं।

श्रीरामकृष्ण मुहुर्मुहु (बारम्बार) समाधिस्थ हो रहे हैं। सब ही एक दृष्टि से देख रहे हैं और चित्रकठपुतली की न्यायीं खड़े हुए हैं।

डॉक्टर दुकड़ि 'समाधि कैसी होती है' परीक्षण करने के लिए आँखों में ऊँगली दे रहे हैं। उसे देखकर भक्तगण बहुत विरक्त (परेशान) हुए।

इस अद्भुत संकीर्तन और नृत्य के बाद सब ने आसन ग्रहण किया। इस समय केशव और भी कई एक ब्राह्मभक्तों को लेकर आ उपस्थित हुए। ठाकुर को प्रणाम करके आसन ग्रहण किया।

राजेन्द्र *(केशव के प्रति)*— चमत्कारी नृत्यगीत हुआ।

यह बात कहकर श्रीयुक्त त्रैलोक्य को फिर गाना गाने के लिए अनुरोध किया।

केशव *(राजेन्द्र के प्रति)*— जब परमहंस महाशय बैठ गए हैं, तब किसी तरह भी कीर्तन नहीं जमेगा।

गाना होने लगा। त्रैलोक्य और ब्राह्मभक्तगण गाना गाने लगे—

मन एक बार हरि बोल हरि बोल हरि बोल।
हरि हरि हरि बोल भवसिन्धु पारे चल॥
जले हरि, स्थले हरि, चन्द्रे हरि, सूर्ये हरि,
अनले-अनिले हरि, हरिमय ए भूमण्डल॥

•

श्रीरामकृष्ण और भक्तों को खिलाने के लिए दूसरी मंजिल पर उद्योग हो रहा है। अब भी वे प्रांगण में बैठे हुए केशव के साथ बातें कर रहे हैं। राधाबाजार के फोटोग्राफरों के यहाँ गए थे— ये सब बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण *(केशव के प्रति, सहास्य)*— आज सुन्दर कल (मशीन) में छवि खींचना देखकर आया हूँ। एक तो यह देखा कि खाली काँच के ऊपर छवि नहीं रहती। शीशे की पीठ पर एक स्याही लेप देते हैं, तब ही छवि ठहरती है। वैसे ही ईश्वरीय बातें केवल सुन जाता है, उससे कुछ नहीं होता और फिर तत्क्षण भूल जाता है। यदि भीतर अनुराग, भक्ति रूपी स्याही पुती रहे, तब ही उन बातों की धारणा होती है। नहीं तो सुनता है और भूल जाता है।

अब ठाकुर दोतले पर आ गए हैं। सुन्दर कार्पेट (कालीन) के आसन पर उनको बिठाया गया।

मनोमोहन की माता जी श्यामासुन्दरी देवी परोस रही हैं।

मनोमोहन ने कहा— 'मेरी स्नेहमयी जननी ने साष्टांग प्रणिपात किया और ठाकुर को खिलाया।'

राम आदि आहार के समय उपस्थित थे।

जिस कमरे में ठाकुर खा रहे हैं, उसी कमरे के सम्मुख वाले दालान (बरामदे) में केशव आदि भक्तगण खाने के लिए बैठे हुए हैं।

उस दिन बेचु चैटर्जी स्ट्रीट के श्री श्यामसुन्दर विग्रह के वर्तमान सेवक, श्री शैलजाचरण मुखर्जी उपस्थित थे।

परिशिष्ट–च

सिमुलिया ब्राह्मसमाज के महोत्सव में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

(राम, केशव, नरेन्द्रादि भक्तों के संग में)

आज श्रीरामकृष्ण सिमुलिया ब्राह्मसमाज के वार्षिक महोत्सव पर भक्तों के संग में आए हैं। ज्ञानचौधुरी के भवन में महोत्सव हो रहा है। पहली जनवरी, 1882 ईसवी, रविवार, समय पाँच का होगा— 18वाँ पौष, 1288 (बंगला) साल।

श्रीयुक्त केशवसेन, राम, मनोमोहन, बलराम, ब्राह्मभक्त राजमोहन, ज्ञानचौधुरी, केदार, ब्राह्मभक्त कान्तिबाबू, कालिदास सरकार, कालिदास मुखोपाध्याय, नरेन्द्र, राखाल आदि अनेक भक्त उपस्थित हैं।

नरेन्द्र ने राम आदि के संग में जाकर केवल थोड़े दिन पहले ही ठाकुर के दर्शन दक्षिणेश्वर में किए हैं। आज भी इस उत्सव में योगदान कर रहे हैं। वे सिमुलिया ब्राह्मसमाज में बीच–बीच में आते हैं और वहाँ पर गान और उपासना करते हैं।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होगी।

प्रथम कुछ पाठ हुआ। नरेन्द्र गा सकते हैं। उन्हें गाना गाने के लिए अनुरोध करने पर उन्होंने गाना गाया।

सन्ध्या हो गई। इन्देश के गौरी पण्डित गेरुआ पहनकर ब्रह्मचारी–वेश में आ उपस्थित हुए।

गौरी— कहाँ हैं जी, वे परमहंस बाबू?

कुछ क्षण पश्चात् केशव ब्राह्मभक्तों के संग में आ पहुँचे और भूमिष्ठ होकर उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। सब ही दालान के ऊपर बैठे हुए हैं; परस्पर आनन्द कर रहे हैं। चारों ओर संसारी भक्तगणों को बैठे हुए देखकर ठाकुर हँसते-हँसते कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— वह संसार में होगा नहीं क्यों? किन्तु बात क्या है, जानते हो? मन अपने पास नहीं है। अपने पास मन रहे तो भगवान को देगा। मन बन्धक दिया हुआ है; कामिनी-काञ्चन पर बन्धक! तभी सर्वदा साधुसंग आवश्यक है।

"मन अपने पास आने पर ही तो साधन-भजन होगा। सर्वदा ही गुरु का संग, गुरुसेवा, साधुसंग का प्रयोजन है। या तो निर्जन में रात-दिन उनका चिन्तन, नहीं तो साधुसंग। मन अकेला रहने से क्रमशः शुष्क हो जाता है।

"एक बर्तन जल यदि अलग रखो तो क्रमशः जल सूख जाएगा! किन्तु गंगाजल के भीतर यदि उसी बर्तन को डुबाए रखो, तो फिर नहीं सूखेगा।

"लुहार के घर का लोहा आग में खूब लाल हो गया होता है। और फिर अलग रखो, फिर वैसा ही काला लोहा, जैसा काला था। जभी लोहे को बीच-बीच में अग्निकुण्ड (भट्ठी) में देना चाहिए।

"मैं कर्त्ता हूँ, मैं कर रहा हूँ, तो संसार चल रहा है; मेरा घर परिवार— यह समस्त अज्ञान है! मैं उनका दास, उनका भक्त, उनकी सन्तान— यह खूब अच्छा है।

" 'मैं' एकदम नहीं जाती। अभी विचार करके उड़ाता है, और फिर कटा हुआ बकरा जैसे म्या-म्या करके हाथ-पाँव हिलाता है, उसी प्रकार 'मैं' फिर न जाने कहाँ से आ पड़ती है।

"उनके दर्शन करने के बाद, वे फिर जिस 'मैं' को रख देते हैं, उसे

कहते हैं पक्का 'मैं'। जैसे पारस पत्थर छूकर तलवार सोना हो जाती है। उसके द्वारा फिर हिंसा का कार्य नहीं होता।''

•

श्रीरामकृष्ण ठाकुरदालान (उपासना-स्थल) के ऊपर बैठे हुए ये समस्त बातें कर रहे हैं। केशवादि भक्तगण निस्तब्ध होकर सुन रहे हैं। रात के 8 बज गए हैं। तीन बार घण्टा (warning bell) बजा, जिससे उपासना आरम्भ होती है।

श्रीरामकृष्ण *(केशवादि के प्रति)*— यह क्या! तुम लोगों की उपासना नहीं हो रही?

केशव— और उपासना क्या होगी? यही तो सब हो रही है।

श्रीरामकृष्ण— न बई, जैसी पद्धति है उसी प्रकार हो।

केशव— क्यों? यही तो सुन्दर हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण के बहुत कहने पर केशव ने उठकर उपासना आरम्भ की।

उपासना के मध्य ठाकुर हठात् खड़े हो गए— समाधिस्थ हो रहे हैं। ब्राह्मभक्तगण गाना गा रहे हैं—

मन एकबार हरि बोल हरि बोल हरि बोल।
हरि हरि हरि बोल भवसिन्धु पारे चल॥
जले हरि, स्थले हरि, अनले अनिले हरि।
चन्द्रे हरि, सूर्ये हरि, हरिमय एइ भूमण्डल॥

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावस्थ हुए दण्डायमान हैं। केशव ने अति सावधानी से उनका हाथ पकड़कर दालान से प्रांगण में उतार लिया।

गान चल रहा है। अब ठाकुर गाने के संग में नृत्य कर रहे हैं। चारों ओर भक्तगण भी नाच रहे हैं।

ज्ञानबाबू के दोतल के कमरे में श्रीरामकृष्ण, केशव आदि के जलपान का आयोजन हो रहा है।

वे लोग जलपान करके फिर दोबारा नीचे आ कर बैठ गए हैं। ठाकुर बातें करते-करते फिर और गाना गा रहे हैं। केशव ने उनके संग में योग दिया—

मजलो आमार मन भ्रमरा श्यामापद नीलकमले।
यत विषय मधु तुच्छ होलो कामादि कुसुम सकले॥[1]

[भावार्थ— मेरा मन रूपी भ्रमरा माँ श्यामा के नीलकमल रूपी चरणों में लवलीन हो गया है। जितने भी इन्द्रियों के विषय— काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि— कुसुम थे वे सब तुच्छ हो गए हैं।]

गान— श्यामापद आकाशेते मन घुड़िखान उड़ितेछिलो।
कलुषेर कुवातास खेये गोप्ता खेये पड़े गेलो॥[2]

ठाकुर और केशव दोनों जन ही मतवाले हो गए और फिर सब मिलकर गान और नृत्य करते रहे, रात दो पहर तक।

थोड़ा-सा विश्राम करके केशव से ठाकुर कह रहे हैं— अपने लड़के के विवाह की विदागी (सौगात) क्यों भेजी थी? वापस ले जाओ— मैं वह सब लेकर क्या करूँगा?

केशव ईषत् हँस रहे हैं। ठाकुर फिर और कहते हैं— मेरा नाम कागज (समाचार पत्र) में प्रकाशित क्यों करते हो? पुस्तक लिखकर, अखबारों में लिखकर किसी को बड़ा नहीं किया जाता। भगवान जिसको बड़ा करते हैं, वन में रहने पर भी उसको सब जान सकते हैं। गम्भीर वन में फूल खिला है किन्तु मधुमक्खी (शहद की मक्खी) जाकर खोज लेती है। अन्य मक्खियाँ नहीं खोजतीं। मनुष्य क्या करेगा? उसकी ओर मत देखो— लोक! पोक! (मनुष्य कीड़े-मकोड़े हैं।) जिस मुख से अच्छा कहता है, उसी मुख से फिर मन्दा कहेगा। मैं मान्यगण्य नहीं होना चाहता। जैसे हो, दीनों का भी दीन, हीनों का भी हीन होकर रहूँ।

●

1 पूरे गाने के लिए देखें 2-2-7 (36), 2-6-4 (87), 4-16-1 (190), 4-8-3 (226) देखें।
2 अर्थ और पूरे गाने के सन्दर्भ के लिए पृष्ठ 345 देखें।

श्रीयुक्त सुरेन्द्र के भवन में ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने जब शुभागमन किया **'आषाढ़ मास के एक दिन' 1881 ईसवी**; तब श्रीयुक्त केशव के आने की बात थी— किन्तु वे आ नहीं पाए थे। वे प्रथम पुत्र और दूसरी कन्या के विवाह का उद्योग कर रहे थे।

•

पहला श्रावण, 15 जुलाई, 1881 शुक्रवार। केशव ने अपने जामाता कूचविहार के महाराजा के जहाज (Steam yacht) में बहुत-से ब्राह्म भक्तों को लेकर कलकत्ता से सोमड़ा तक भ्रमण किया था।* रास्ते में दक्षिणेश्वर में जहाज ठहराकर परमहंस देव को चढ़ा लिया था, संग में हृदय थे।

जहाज में केशव, त्रैलोक्य आदि ब्राह्मभक्तगण, कुमार गजेन्द्र-नारायण, नगेन्द्र आदि थे।

निराकार ब्रह्म की बात करते-करते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए। श्रीयुक्त त्रैलोक्य सान्याल गान कर रहे हैं और खोल, करताल बज रहे हैं। समाधि भंग होने पर ठाकुर गाते हैं—

श्यामा मा कि कल करेछे।
चौद्दह पूया कलेर भितरी कतो रंग देखातेछे।

[भावार्थ— श्यामा माँ ने कैसी कल (मशीन) बना दी है कि इस साढ़े तीन हाथ की मशीन के भीतर कितने रंग (खेल) दिखा रही हैं।]

जहाज के लौटते समय ठाकुर को दक्षिणेश्वर उतार दिया गया। केशव आहिरीटोला के घाट पर उतरकर— मस्जिदवाड़ी स्ट्रीट द्वारा पैदल श्रीयुक्त कालीचरण बैनर्जी के मकान पर निमन्त्रण पर जाएँगे।

---

* श्रीयुक्त नगेन्द्र ने यह विवरण मास्टर को दो-तीन महीने बाद कहा था। सुनने के कई एक मास पश्चात् मास्टर ने ठाकुर का प्रथम दर्शन किया, 26 फरवरी 1882 ईसवी को।

दैनिक चरित्र

1882—1886

(पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें भाग का संक्षिप्त विवरण)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण का संक्षिप्त चरितामृत। (प्रथम भाग— उपक्रमणिका)

कालीबाड़ी और उद्यान। (प्रथम भाग— प्रथम खण्ड, प्रथम परिच्छेद)

1882

(संख्या के प्रथम अक्षर से कथामृत-भाग, दूसरे से खण्ड और तीसरे से परिच्छेद समझें)

26-02-82 बसन्तकाल, 15वाँ फाल्गुन 1288 (बंगला) साल, फाल्गुन-शुक्ला-नवमी, रविवार। दक्षिणेश्वर।

विषय श्रीयुक्त मास्टर का प्रथम दर्शन। सन्ध्या का समय। श्री ठाकुर की समाधि-अवस्था-दर्शन। मास्टर के साथ नाना प्रकार की बातें।

उपस्थित मास्टर, सिधु। — 1 : 1 : 2

00-02-82 दक्षिणेश्वर— प्रात: आठ का समय।

विषय मास्टर का द्वितीय दर्शन। गुरु-शिष्य-संवाद। मास्टर के साथ नाना विषयों की बातें। मास्टर का अहंकार-चूर्णकरण।

उपस्थित मास्टर, रामलाल। — 1 : 1 : 3,4,5

05-03-82 दक्षिणेश्वर— समय 3/4 का।

विषय मास्टर का तृतीय दर्शन। मास्टर के साथ बातें, नरेन्द्रादि के साथ बातें, ठाकुर का गान, नरेन्द्र का गान।

उपस्थित नरेन्द्र, भवनाथ, मास्टर। — 1 : 1 : 6,7

06-03-82 दक्षिणेश्वर— समय 3 का।
विषय मास्टर का चतुर्थ दर्शन।
उपस्थित मास्टर, नरेन्द्र, भवनाथ आदि। — 1 : 1 : 9,10

11-03-82 चैत्र-शुक्ला-सप्तमी। कलकत्ता, बलराम का मकान। रात्रि 8/9 .
विषय कीर्त्तनानन्द में राखाल आदि भक्तों के संग में। राखाल की दूसरी भावावस्था।
उपस्थित राम, मनोमोहन, राखाल, नित्यगोपाल, मास्टर आदि। — 5 : 1 : 1

02-04-82 चैत्र-शुक्ला-चतुर्दशी। कलकत्ता, प्राणकृष्ण का मकान— महोत्सव। समय दोपहर 1/2 का।
विषय (i) प्राणकृष्ण आदि के साथ साधुसंग की महिमा के सम्बन्ध में और संसार (गृहस्थ) में रहकर ईश्वर-लाभ की बातें।
उपस्थित प्राणकृष्ण, मनोमोहन, केदार, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र, राखाल, बलराम, मास्टर आदि। — 5 : 1 : 2

विषय (ii) कमलकुटीर में, समय पाँच का। केशव आदि भक्तों के संग में गान और नृत्य।
उपस्थित राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, प्रताप, त्रैलोक्य आदि भक्तों के संग में। — 5 : 1 : 3

05-08-82 श्रावण-कृष्णा-षष्ठी। कलकत्ता, विद्यासागर के बादुड़ बागान के मकान पर शुभागमन। समय 5 से लेकर रात्रि 9 बजे तक।
विषय विद्यासागर के साथ बातें। ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग। गान और समाधि। बलराम का आगमन और दर्शन।
उपस्थित भवनाथ, मास्टर, हाजरा आदि। — 3 : 1 : 7

13-08-82 श्रावण-अमावस्या। दक्षिणेश्वर, समय पाँच का। केदार का उत्सव।
विषय समाधि-तत्त्व और सर्वधर्म-समन्वय।
उपस्थित राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर, केदार आदि। — 5 : 2 : 1

24-08-82 श्रावण-शुक्ला-दशमी, दक्षिणेश्वर। तीसरा पहर और सन्ध्या।
विषय मणि आदि के प्रति उपदेश। योग-तत्त्व और महामाया।
उपस्थित राखाल, मास्टर, हाजरा आदि। — 3 : 2

16-10-82 आश्विन-शुक्ला-चतुर्थी, पञ्चमी। दक्षिणेश्वर।
17-10-82

विषय नरेन्द्रादि के साथ बातें। श्रीमुख-कथित चरितामृत— ठाकुर का प्रथम ईश्वर-दर्शन और भावावस्था। नरेन्द्रादि के संग में संकीर्त्तनानन्द और नृत्य। नरेन्द्र अब भी ब्राह्मसमाज में। नरेन्द्र का पञ्चवटी में ध्यान।

उपस्थित नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, हाजरा, नरेन्द्र के दो-एक ब्राह्मबन्धु, नानकपन्थी साधु आदि। — 2 : 1

22-10-82 आश्विन-शुक्ला-दशमी। विजया। दक्षिणेश्वर। समय 9 से 11— तीसरा पहर और सन्ध्या।

विषय मणि और बलराम के साथ बातें। मणि और मातृध्यान। श्रीमुख-कथित चरितामृत— श्रीवृन्दावन-दर्शन।

उपस्थित राखाल, हाजरा, बलराम, मणि आदि — 3 : 3 : 1, 2

24-10-82 आश्विन-शुक्ला-द्वादशी, दक्षिणेश्वर। समय 3/4 का।

विषय मणि और बलराम के साथ बातें। श्रीमुख-कथित चरितामृत— वर्धमान के पथ में देशयात्रा— नकुड़ाचार्य का गान-श्रवण— श्रीवृन्दावन-दर्शन।

उपस्थित बलराम, मणि आदि। — 3 : 3 : 3

27-10-82 कोजागर पूर्णिमा। केशव के संग में, गंगावक्ष पर और राजपथ में। समय पाँच से आठ।

विषय श्रीयुक्त केशवसेन आदि भक्तों के संग नौकाविहार। समाधि। ब्रह्म और शक्ति। ठाकुर का गान।

उपस्थित केशव, नीलमाधव, कृष्णबिहारी, नन्दलाल, मास्टर आदि। — 1 : 2

28-10-82 आश्विन-कृष्णा-द्वितीया, सींथी-ब्राह्मसमाज में।

विषय वेणीपाल की उद्यानवाटी में उत्सव। समय 3/4 से रात्रि 9/10

उपस्थित शिवनाथ आदि ब्राह्मभक्तगण। भवनाथ, मास्टर, वेणीपाल आदि। — 1 : 3 : 3

15-11-82 कार्त्तिक-शुक्ला-पञ्चमी। कलकत्ता-गढ़ के मैदान में सर्कस रंगालय (नाट्यशाला)। समय 3/4 .

विषय गृहस्थ तथा अन्य कर्मियों की कठिन समस्या।

उपस्थित राखाल, मास्टर आदि। बाद में सन्ध्या को बलराम-मन्दिर में— जातिभेद और छूतछात का समाधान प्रसंग। गृहस्थ का ऋण। — 5 : 2 : 2

16-11-82 कार्त्तिक-शुक्ला-षष्ठी। कलकत्ता, गराणहाटा वैष्णव साधुओं का अखाड़ा, तीसरा पहर।

विषय षड्भुज महाप्रभु-दर्शन। राजमोहन का मकान— सन्ध्या को ब्राह्म उपासना देखने की साध। ब्राह्मभक्त और सर्वत्याग का कथाप्रसंग।
उपस्थित नरेन्द्र, प्रिय, मास्टर, आदि। — 5 : 2 : 3

19-11-82 कार्तिक-शुक्ला-नवमी, जगद्धात्री पूजा दिवस। मनोमोहन और फिर सुरेन्द्र का घर।
विषय अकिंचन भक्त और भक्ति ही सार। थ्योसोफी और अलौकिक शक्ति।
उपस्थित सुरेन्द्र, मनोमोहन, सबजज (जिलाधीश) आदि। — 5 : 2 : 4

26-11-82 कलकत्ता— सिंदुरियापटी-ब्राह्मसमाज— सालाना उत्सव। तीसरा पहर, 4 का समय।
विषय प्रह्लाद-चरित्र-कथा। ईश्वर-दर्शन और आदेश-प्राप्ति, तभी लोकशिक्षा।
उपस्थित विजय, मास्टर, प्रेमचन्द बड़ाल आदि। — 5 : 3 : 1

14-12-82 अग्रहायण-शुक्ला-चतुर्थी। दक्षिणेश्वर। समय 2/3 से सन्ध्या तक।
विषय विजय (गोस्वामी) आदि के प्रति उपदेश।
उपस्थित विजय गोस्वामी, नवकुमार, बलराम, मास्टर आदि। — 1 : 4

12-82 दक्षिणेश्वर। तीसरा पहर और सन्ध्या।
विषय बाबूराम आदि के संग में फ्री विल (स्वाधीन इच्छा) के सम्बन्ध में बातें। तोतापुरी का आत्महत्या-संकल्प। ईश्वर क्या निष्ठुर? दया और माया।
उपस्थित बाबूराम, रामदयाल, मास्टर आदि। — 5 : 3 : 2

अगले दिन मारवाड़ी भक्त के संग। मैं और मेरा— अज्ञान। व्यवसाय और सत्यवाणी की दृढ़ता। रामनाम-कीर्तन।
— 5 : 3 : 3

1883

01-01-83 अग्रहायण-कृष्णाष्टमी। दक्षिणेश्वर-मन्दिर। सवेरे से।
विषय प्राणकृष्ण के प्रति उपदेश। वेदान्त। केदार का गोपीभाव और ठाकुर की समाधि। वैरागी का गान। मारवाड़ी भक्तों के प्रति उपदेश।
उपस्थित प्राणकृष्ण, राखाल, मास्टर, केदार, मारवाड़ी भक्त, हाजरा, आगड़पाड़ा का आशु, वैरागी गायक। — 4 : 1

18-02-83 माघ-शुक्ला-द्वादशी। बेलघर में, गोबिन्द मुखर्जी के मकान में महोत्सव। समय प्रात: सात।

विषय भक्तियोग की बातें। पापवाद। षड्चक्र का गान और ठाकुर की समाधि।
उपस्थित नरेन्द्र, राम, मास्टर आदि। — 5 : 4 : 1

25-02-83 माघ-कृष्णा-तृतीया। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के पश्चात्।
विषय नित्यगोपाल आदि के प्रति उपदेश।
उपस्थित नित्यगोपाल, राम, केदार, ज्ञानबाबू, राखाल, मास्टर। — 4 : 2

09-03-83 माघ-आमावस्या। समय 8/9 का। दक्षिणेश्वर।
विषय निष्काम कर्म और चित्तशुद्धि, राखाल और गोपाल-भाव। गंगा में बाढ़-दर्शन। योगी गणना से परे। अधरसेन का प्रथम दर्शन और बलिदान की बातें। 'अधिक विचार करो ना'।
उपस्थित राखाल, अधर, मास्टर आदि। — 5 : 4 : 2

11-03-83 फाल्गुन-शुक्ला-द्वितीया। दक्षिणेश्वर में जन्म-महोत्सव।
विषय रामनाम में समाधि। अखण्ड और अवतार। पञ्चवटीमूल में कीर्त्तन। रामादि भक्तों की पूजा और ठाकुर की समाधि। गोस्वामी के प्रति उपदेश।
उपस्थित भवनाथ, राखाल, भवनाथ का मित्र कालीकृष्ण, मास्टर, राम, नित्यगोपाल, केदार, दक्षिणेश्वर निवासी वेदान्तवादी गृहस्थ, गोस्वामी, राखाल के पिता, गिरीन्द्र, रामलाल, वृन्दे सेविका, त्रैलोक्यबाबू। — 2 : 2

29-03-83 फाल्गुन-कृष्णा-पञ्चमी। दक्षिणेश्वर (मध्याह्न के बाद)।
विषय ब्राह्मभक्त त्रैलोक्य और अमृत के साथ बातें। राखाल की ओर दृष्टि से ठाकुर की समाधि। गेरुआ वस्त्र और संन्यासी। मिथ्या और नव-वृन्दावन नाटक। नित्यसिद्ध। समाधि-तत्त्व।
उपस्थित राखाल, मास्टर, ब्राह्मभक्त त्रैलोक्य और अमृत आदि। — 1 : 5

07-04-83 फाल्गुन-अमावस्या। बलराम-मन्दिर में (मध्याह्न और अपराह्न)।
विषय नरेन्द्र का गान। ब्राह्मभक्त के साथ बातें। पञ्चदशी। संसारी और शास्त्रार्थ।
उपस्थित नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल, मास्टर आदि। — 4 : 3

08-04-83 चैत्र-शुक्ला-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर (मध्याह्न और अपराह्न)।
विषय मणिलाल के साथ बातें। काशी-दर्शन। प्रेम-तत्त्व। रामलाल का गान और समाधि। अधरसेन का दूसरा दर्शन।
उपस्थित मणिलाल, ठाकुरदास आदि ब्राह्म भक्तगण, राखाल, मास्टर, अधर। — 2 : 3

15-04-83 चैत्र-शुक्ला-अष्टमी। सुरेन्द्र के मकान पर अन्नपूर्णा-पूजा।

विषय वकील वैद्यनाथ के साथ बातें; Free Will (स्वाधीन इच्छा), संकीर्त्तन और समाधि। भक्तों के संग श्री श्री अन्नपूर्णा-दर्शन। अपराह्न और रात्रि।
उपस्थित राखाल, सुरेन्द्र, मास्टर, वकील वैद्यनाथ आदि। — 2 : 4

22-04-83 चैत्र-पूर्णिमा। सींथी-ब्राह्मसमाज; तीसरा प्रहर।
विषय ब्राह्मभक्त और संसार-त्याग। गुरु सच्चिदानन्द। आचार्य बेचाराम के संग वेदान्त और ब्रह्म-तत्त्व-प्रसंग।
उपस्थित वेणीपाल, बेचाराम, मास्टर आदि। — 5 : 5

02-05-83 चैत्र-कृष्णा-दशमी। नन्दनबागान, काशीश्वर मित्र के घर में— ब्राह्मसमाज में। अपराह्ण और सन्ध्या के पश्चात्।
विषय जानकी घोषाल के साथ बातें। ब्रह्मोपासना। 'छः रिपु— मोड़ फिराओ।' अक्रोध परमानन्द श्रीरामकृष्ण। पंक्ति में बैठकर ब्राह्मभक्तों के साथ ठाकुर का भोजन।
उपस्थित राखाल, मास्टर, जानकी, रवीन्द्र ठाकुर, वकील, भैरव बन्द्योपाध्याय आदि। — 4 : 4

13-05-83 बैशाख-शुक्ला-सप्तमी। कलकत्ता कांसारीपाड़ा-हरिसभा।
विषय मनोहर साँई का नाम-कीर्त्तन।
उपस्थित मास्टर आदि। — 5 : 5 : 3

20-05-83 बैशाख-शुक्ला-चतुर्दशी। राम के घर में महोत्सव।
विषय माथुर* कीर्त्तन। नाम और नामी अभेद।
उपस्थित राम, मास्टर आदि। — 5 : 5 : 3

27-05-83 बैशाख-कृष्णा-पञ्चमी। दक्षिणेश्वर, समय नौ।
विषय निष्ठा व अव्यभिचारिणी भक्ति। गान व ठाकुर का महाभाव।
उपस्थित राखाल, मास्टर, नकुड़ वैष्णव आदि। — 5 : 5 : 4

02-06-83 (i) बैशाख-कृष्णा-द्वादशी। बलराम का घर, समय चार।
विषय संन्यासी और गृहस्थ की विषयासक्ति। राखाल के द्वारा नरलीला-दर्शन और आस्वादन। फिर अधर के घर। मनोहर सांई का कलहान्तरिता-कीर्त्तन। व्याकुलता के सम्बन्ध में बातें। अवतार का मानुषी भाव।
उपस्थित बलराम, राखाल आदि। — 5 : 6 : 1

---

* माथुरकीर्त्तन— श्री कृष्ण जी की मथुरा-लीला।

(ii) बैशाख–कृष्णा–द्वादशी। कलकत्ता, रामबाबू का मकान।
विषय श्री भागवत कथा, गोपीप्रेम। अपराह्न और रात्रि।
उपस्थित राम, कथक ठाकुर, मास्टर आदि। — 2 : 5

04-06-83 बैशाख–कृष्णा–चतुर्दशी। सावित्री चतुर्दशी। दक्षिणेश्वर।
विषय श्रीमुख–कथित चरितामृत— ठाकुर का प्रेमोन्माद। गुरु की कृपा। मणिलाल और निराकारवाद। भगवतीदासी के साथ जानबाजार की बातें। गान। समय 9 से और फिर मध्याह्न के बाद।
उपस्थित मणिलाल, राखाल, त्रैलोक्य विश्वास, पुजारी रामचैटर्जी, मास्टर, भगवती दासी आदि। — 2 : 6

05-06-83 बैशाख— अमावस्या। दक्षिणेश्वर। अपराह्न।
विषय श्रीमुख–कथित चरितामृत। हाजरा अवतार नहीं मानते। मणि के साथ ठाकुर की अकेले में बातें।
उपस्थित हाजरा, राखाल, मणि आदि। — 2 : 7

08-06-83 ज्येष्ठ–शुक्ला–तृतीया। दक्षिणेश्वर। सन्ध्या के बाद।
विषय ठाकुर की समाधि और श्रीचरण–पूजा। तारक के प्रति स्नेह। अवतार और पार्षद।
उपस्थित राखाल, राम, केदार, तारक, मास्टर आदि। — 4 : 5

10-06-83 ज्येष्ठ–शुक्ला–पञ्चमी। दक्षिणेश्वर, समय 10 का।
विषय बाल्य जीवन की कथा। मणिरामपुर के भक्तों के संग बातें— व्याकुल हो जाओ, बेलघर के भक्त के साथ षट्चक्र का गान। त्यागी–भक्त और संसारी–भक्त। सप्त–भूमि और षट्चक्र का मेल।
उपस्थित राखाल, मास्टर, लाटु, किशोरी, रामलाल, हाजरा, मणिमल्लिक आदि।
— 5 : 6 : 2

15-06-83 ज्येष्ठ–शुक्ला–दशमी। दशहरा। दक्षिणेश्वर। दोपहर।
विषय राखाल के बाप के ससुर के साथ गृहस्थाश्रम की बातें।
उपस्थित अधर, मास्टर, राखाल के पिता, राखाल के पिता के ससुर आदि।
— 2 : 8

17-06-83 ज्येष्ठ–शुक्ला–द्वादशी। मध्याह्न।
विषय परमहंस त्रिगुणातीत। तान्त्रिक भक्त 'बसाक'। गुरुवाक्य में विश्वास।
उपस्थित अधर, मास्टर आदि। — 5 : 7

18-06-83 ज्येष्ठ–शुक्ला–त्रयोदशी। पेनेटी के महोत्सव–क्षेत्र में।

विषय राघव-मन्दिर में श्री श्री राधाकृष्ण के आंगन में नृत्य। नवद्वीप गोस्वामी के प्रति उपदेश। मतिशील की ठाकुरबाटी (मन्दिर)-दर्शन और निराकार ध्यान के सम्बन्ध में उपदेश। समय एक— अपराह्न।

उपस्थित राखाल, राम, मास्टर, भवनाथ, नवद्वीप, मणिसेन। — 4 : 6

25-06-83 ज्येष्ठ-कृष्णा-पञ्चमी। बलराम का घर। समय पाँच का।

विषय स्वरूप-दर्शन का उपाय। नित्य लीलायोग।

उपस्थित राखाल, मास्टर आदि। — 5 : 7 : 2

ज्येष्ठ '83 दक्षिणेश्वर के शिव-मन्दिर की सीढ़ी। अपराह्न।

विषय J.S. Mill एवं ठाकुर। मनुष्य की शक्ति की सीमा।

उपस्थित मास्टर, राखाल, लाटु, किशोरी आदि। — 5 : 7 : 3

14-07-83 आषाढ़-शुक्ला-दशमी। अधर का घर। सन्ध्या।

विषय राजनारायण का चण्डी का गान-श्रवण और ठाकुर की समाधि।

उपस्थित राखाल, अधर, मास्टर आदि। — 5 : 7 : 3

21-07-83 आषाढ़-कृष्णा-प्रतिपदा। कलकत्ता। अधर, यदुमल्लिक और खेलात घोष के घर में शुभ-आगमन। समय चार बजे से रात्रि।

विषय अधर के घर गाड़ी से जाते समय मणि के साथ बातें। अधर के मकान पर कीर्तन। यदुमल्लिक के घर में श्री सिंहवाहिनी के सम्मुख कीर्तन और समाधि। खेलात घोष के घर में वैष्णव-भक्त के संग।

उपस्थित राखाल, मणि, अधर, यदुमल्लिक, खेलात घोष के मकान पर वैष्णव-भक्त। — 3 : 4

22-07-83 आषाढ़-द्वितीया। दक्षिणेश्वर। दोपहर के बाद।

विषय मणिमल्लिक द्वारा काशी-पर्यटन-वृत्तान्त-कथन। बेलघर के गोबिन्द आदि भक्तों के संग में ब्रह्म-तत्व और आद्याशक्ति के विषय में कथोपकथन और उनके प्रति उपदेश। पण्डित पद्मलोचन।

उपस्थित अधर, मास्टर, राखाल, मणिमल्लिक, गोबिन्द मुखर्जी और उनके मित्रगण। आदि। — 1 : 6

18-08-83 श्रावण-पूर्णिमा। बलराम के मकान के बाद अधर का मकान। शाम।

विषय अवतार-तत्त्व की कथा। वैष्णवचरण का कीर्तन। राखाल के साथ बातें, 'माँ अपराध नहीं लेतीं', पातालफोड़ा शिव। अधर की जीभ पर अंगुली द्वारा ठाकुर का लिखना।

उपस्थित अधर, मास्टर, बलराम, राखाल आदि। — 5 : 7 : 4

19-08-83 श्रावण-कृष्णा-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर, मध्याह्न से।
विषय चाषाधोपा पाड़े में सिंहवाहिनी-दर्शन। उसकी बातें। ठाकुर का विष्णुपुर-मृण्मयी-दर्शन। कालुवीर, श्रीमन्त, देवकी और पाण्डवों का सुख-दुःख। नरेन्द्र का गान और ठाकुर की समाधि। ज्ञान और भक्ति।
उपस्थित मास्टर, अधर, बलराम, नरेन्द्र, कप्तान (काप्तेन), किशोरी। — 1 : 7

20-08-83 श्रावण-कृष्णा-द्वितीया। दक्षिणेश्वर, रात्रि।
विषय मणि और हरिचौधुरी के साथ बातें। हृदय के असुख की बात। ठाकुर का ब्रह्मदर्शन का लक्षण।
उपस्थित मास्टर, हरिचौधुरी, रामलाल, राम चैटर्जी, हाजरा। — 3 : 5

07-09-83 भाद्र-शुक्ला-षष्ठी। दक्षिणेश्वर, रात्रि।
विषय रतन के साथ बातें, मणि के साथ अकेले में बातें। अवतार-तत्त्व।
उपस्थित मणि आदि। — 3 : 5

09-09-83 भाद्र-शुक्ला-सप्तमी। दक्षिणेश्वर। दूसरे पहर के बाद।
विषय रतन के साथ बातें। तान्त्रिक बाबुओं के साथ बातें, अचलानन्द का संसार-त्याग। मणि के साथ बातें— 'चिन्मय रूप क्या है'।
उपस्थित राखाल, मास्टर, रतन, राम चैटर्जी, हाजरा आदि। — 3 : 6

22-09-83 भाद्र-कृष्णा-षष्ठी। अधर का घर। शाम।
विषय बालक का विश्वास। ब्रह्म-शक्ति-अभेद। आद्याशक्ति और अवतार-लीला। वेद-पुराण-तन्त्र का समन्वय। ईशान को उपदेश 'डुबकी लगाओ'। गुरु का प्रयोजन। गोपन में साधन— शुचिबाई।
उपस्थित राखाल, अधर, मास्टर, ईशान आदि। — 5 : 8

23-09-83 भाद्र-कृष्णा-सप्तमी। दक्षिणेश्वर।
विषय नरेन्द्र के लिए चिन्ता। गौरी पण्डित की बातें। मेरा ठीक (वास्तविक) भाव। हाजरा को उपदेश। समाधि-अवस्था में माँ के संग बातें। मातृभाव में साधन।
उपस्थित राखाल, मास्टर, राम, नित्यगोपाल, तारक, हाजरा आदि। — 5 : 9 : 1

26-09-83 (i) भाद्र-कृष्णा-दशमी। दक्षिणेश्वर, समय तीन से।
विषय मास्टर आदि के साथ बातें। कलियुग में वेदमत नहीं चलता— नारदीय भक्ति। सच्चिदानन्द ही गुरु।
उपस्थित राखाल, मास्टर, किशोरी, हाजरा आदि। — 2 : 9

(ii) भाद्र-कृष्णा-दशमी। दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर का चौंतरा। शाम।
विषय ईश्वर को समझा नहीं जाता। भक्त के संग बातें।
उपस्थित महेन्द्र आदि। — 5 : 9 : 2

10-10-83 आश्विन-शुक्ला-नवमी। अधर का घर। सन्ध्या का समय।
विषय भावावेश में जगन्माता के साथ बातें। गौरांग का गान। ठाकुर की अपनी भेष-ग्रहण कथा। बलराम के पिता के साथ बातें। सर्व-धर्म-समन्वय।
उपस्थित अधर, सारदाचरण, बलराम के पिता, मास्टर आदि। — 5 : 10

16-10-83 आश्विन-कोजागर-पूर्णिमा। दक्षिणेश्वर। दिन से सन्ध्या के पश्चात् तक।
विषय निष्ठा भक्ति। ठाकुर की अद्‌भुत अवस्था की बातें। अवतार-तत्त्व।
उपस्थित बलराम के पिता, राखाल, बेणीपाल, मास्टर, मणिमल्लिक, ईशान मुखर्जी, किशोरी आदि। — 5 : 11

26-11-83 कार्त्तिक-कृष्णा-एकादशी। सिंदुरियापटि-ब्राह्मसमाज।
विषय ब्रह्मोपासना के समय ठाकुर की समाधि। मास्टर, विजय आदि के साथ बातें— कर्म करने में ही झंझट— ईश्वर में प्रेम हो जाने पर कर्म-त्याग होता है। संन्यासी संचय नहीं करता।
उपस्थित विजय, मास्टर, रजनी, मल्लिक और ब्राह्मभक्तगण। — 1 : 8

28-11-83 (i) कार्त्तिक-कृष्णा-चतुर्दशी। कलकत्ता, कमल कुटीर, श्रीयुक्त केशवसेन का घर। शाम 5 से 7 .
विषय ठाकुर की समाधि। केशव के साथ बातें। ब्राह्मसमाज के सम्बन्ध में उपेदश। केशव की माँ कहती हैं, ''केशव के लिए आशीर्वाद कीजिए''।
उपस्थित राखाल, लाटु, मास्टर, केशव, प्रसन्न, उमानाथ, अमृत, केशव का बड़ा लड़का और केशव के शिष्यगण। — 2 : 10

(ii) कार्त्तिक-कृष्णा-चतुर्दशी। जयगोपाल का मकान। सन्ध्या 7 के बाद।
विषय बैकुण्ठ और पड़ोसी के साथ गृहस्थाश्रम की बातें। उपाय— ईश्वर का शरणागत होना।
उपस्थित जयगोपाल, बैकुण्ठ, मास्टर, जयगोपाल का पड़ोसी आदि। — 1 : 9

09-12-83 अग्रहायण-शुक्ला-दशमी। दक्षिणेश्वर। समय एक का।
विषय मणि के साथ अन्तरंगों की बातें। भक्तमाल-पाठ-श्रवण।
उपस्थित अधर, मनोमोहन, ठन्ठने का शिवचन्द्र, राखाल, मास्टर, हरीश। — 2 : 11

14-12-83 अग्रहायण-पूर्णिमा। दक्षिणेश्वर।
विषय रामलाल से अध्यात्म रामायण-श्रवण। परशुराम का स्तव और गुहक चण्डाल की कथा। काँसारिपाड़ा के भक्तों के निकट बामाचार की निन्दा। दादा मधुसूदन की बात। मणि के रहने का बन्दोबस्त।
उपस्थित रामलाल, राखाल, लाटु, मणि, श्याम डॉक्टर, काँसारिपड़ा के भक्तगण, Broughton Institution (ब्राउटन इन्स्टिट्यूशन) के शिक्षक और छात्र।
— 2 : 12

15-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर-मन्दिर में सबेरे के समय।
विषय श्रीयुक्त रामलाल का भक्तमाल-पाठ। प्रह्लाद-चरित्र-कथा। स्त्रीसंग-निन्दा। राखाल का Simel's Self-help पाठ।
उपस्थित रामलाल, राखाल, लाटु, हरीश, मास्टर, वैष्णवचरण। — 4 : 7

16-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-द्वितीया। दक्षिणेश्वर-मन्दिर में। समय 10 का।
विषय ठाकुर का भावावेश और सीता की न्यायीं व्याकुलता। जनाइयों के मुखर्जी आदि के साथ बातचीत। वेदान्त की गुह्य व्याख्या। 'जगत क्या मिथ्या'?
उपस्थित मणि, राखाल, लाटु, हरीश, योगीन, प्राणकृष्ण आदि। — 4 : 7 : 2

17-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-तृतीया। दक्षिणेश्वर। समय 8 का।
विषय मणि, मधु डॉक्टर आदि के संग में। सच्चिदानन्द में प्रेम ही उद्देश्य। श्रीमुखकथित चरितामृत— 'राम-राम' बोल कर पागल। रामलाला।
उपस्थित मणि, राखाल, लाटु, मधु, मणिमल्लिक। — 4 : 7 : 4

18-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-चतुर्थी, मंगलवार। दक्षिणेश्वर। समय आठ। कलकत्ता ठन्ठने और जोड़ासांको, तीसरा प्रहर। बाद में यदुमल्लिक का घर।
विषय समाधि, गोपी-प्रेम, 'सिद्धेश्वरी-दर्शन', नटवर गोस्वामी के घर श्रीकृष्ण-रूप-दर्शन की बात।
उपस्थित राखाल, मणि, हाजरा, श्री सिद्धेश्वरी का पुजारी, यदुमल्लिक।
— 5 : 12

19-12-83 (i) अग्रहायण-कृष्णा-पञ्चमी, बुधवार। दक्षिणेश्वर। समय नौ।
विषय मणि के साथ कामिनी-काञ्चन-त्याग और समाधि की बातें।
उपस्थित मणि आदि। — 4 : 7 : 5

(ii) अग्रहायण-कृष्णा-पञ्चमी, बुधवार। दक्षिणेश्वर। समय सुबह 9 और सन्ध्या के बाद।

विषय ज्ञान और भक्ति एक आधार में, षटचक्र, नारायण शास्त्री और कामिनी-काञ्चन-त्याग।
उपस्थित राखाल, मणि, लाटु, हरीश आदि। — 5 : 12 : 3,4

20-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-षष्ठी, बृहस्पतिवार। दक्षिणेश्वर-पञ्चवटी। भोर बेला।
विषय गौरांग-स्तव, गोपी-प्रेम।
उपस्थित मणि, राखाल आदि। — 5 : 12 : 4

21-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-सप्तमी। दक्षिणेश्वर-पञ्चवटी और बेलतला। प्रातः, मध्याह्न, अपराह्न।
विषय कामिनी-काञ्चन-त्याग, मन गुरु, 'डुबकी मारो'।
उपस्थित बाउल, वैष्णव, हरीश, राखाल, नानक-पंथी साधु आदि। — 5 : 12 : 4

22-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-अष्टमी। दक्षिणेश्वर, श्रीरामकृष्ण का कमरा। समय 9 का और तीसरा पहर।
विषय अवतार को पहचानने के लिए साधन का प्रयोजन। निराकार साधन कठिन। निराकार साधन के लिए विचार; प्रेम-भक्ति ही सार, गोपियों की अवस्था।
उपस्थित बलराम के पिता, देवेन्द्र घोष, भवनाथ, राखाल, मणि, हरीश, लाटु आदि। — 5 : 12 : 5, 6

23-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-नवमी। दक्षिणेश्वर। समय 9 का।
विषय नीलकण्ठ के देश का वैष्णव-गान। राखाल, हाजरा, मणि आदि के सम्मुख ठाकुर की समाधि और परमहंस-अवस्था।
उपस्थित राखाल, लाटु, हरीश, मणि, मनोमोहन, हाजरा, नीलकण्ठ के देश का वैष्णव आदि। — 4 : 8

24-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-दशमी। दक्षिणेश्वर। समय एक।
विषय झाउतले की बातें। श्रीमुख-कथित चरितामृत। ठाकुर की जन्म-कथा। ठाकुर क्या अवतार ? सुरेन्द्र, राम आदि के साथ बातें। ठाकुर का वृन्दावन-दर्शन। सन्ध्या के बाद ठाकुर का उपदेश। योग-तत्त्व।
उपस्थित सुरेन्द्र, राम, मणि, हरीश। — 4 : 8

25-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-एकादशी। दक्षिणेश्वर। समय 11 का।
विषय एकादशी व्रत की कथा।
उपस्थित मणि आदि। — 4 : 8

26-12-83 अग्रहायण-कृष्णा-एकादशी और द्वादशी। दक्षिणेश्वर। बाद में कलकत्ता, काँकुरगाछी।

विषय अवतार-तत्त्व। श्रीयुक्त रामबाबू के बागान का दर्शन और श्रीयुक्त सुरेन्द्र के बागान का दर्शन। साधु के संग में ब्रह्मज्ञान की बातें।

उपस्थित मणिमल्लिक, राम, सुरेन्द्र, मणि, बाग का साधु। — 5 : 13 : 1

27-12-83 (i) अग्रहायण-कृष्णा-त्रयोदशी। कलकत्ता में ईशान मुखर्जी का घर। समय प्रात: 8 बजे।

विषय श्रीश के साथ कर्मयोग और निर्जन में साधन इत्यादि की बातें। 'किसी ने दूध पीया है'। ईशान के साथ बातें। परमहंस कौन?

उपस्थित बाबूराम, मास्टर, ईशान, श्रीश, केशव कीर्तनिया। — 3 : 7

(ii) अग्रहायण-कृष्णा-त्रयोदशी। कलकत्ता में श्रीयुक्त रामचन्द्र दत्त के मकान पर। सन्ध्याकाल।

विषय महेन्द्र गोस्वामी के साथ बातें— गोपियों की निष्ठा, भक्ति।

उपस्थित राम, मणि, बाबूराम, महेन्द्र गोस्वामी आदि। — 3 : 7 : 3

29-12-83 अग्रहायण-अमावस्या। दक्षिणेश्वर-मन्दिर और कालीघाट। समय एक बजे से लेकर रात्रि आठ।

विषय ठाकुर का अधर के संग में कालीघाट-दर्शन।

उपस्थित राखाल, मणि, अधर। — 4 : 9

30-12-83 पौष-शुक्ला-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर। समय 3 का।

विषय वेदान्तवादी साधु की ओर देखते हुए समाधि और बातें। ब्रह्म और शक्ति। पञ्चवटी के तले केदार आदि के साथ बातें।

उपस्थित मणि, राम, केदार, वेदान्तवादी साधु। — 4 : 9

31-12-83 पौष-शुक्ला-द्वितीया। दक्षिणेश्वर। समय सन्ध्या के बाद चार से लेकर रात आठ बजे तक।

विषय बलराम, मणि आदि के प्रति उपदेश। 'कामिनी'-त्याग। जगन्माता के पास प्रार्थना।— 'ब्रह्मज्ञान चाई ना मा।'

उपस्थित बलराम, मणि, राखाल, लाटु, हरीश। — 4 : 9

1884

02-01-84 पौष-शुक्ला-चतुर्थी। दक्षिणेश्वर। श्रीरामकृष्ण का कमरा। समय 3 का।
विषय षट् चक्र। ईश्वर की कृपा। योग का उपाय और योग का फल।
उपस्थित तान्त्रिक साधक, जयगोपाल सेन, राखाल, मणि आदि। — 5 : 13 : 2

03-01-84 पौष-शुक्ला-पञ्चमी। दक्षिणेश्वर। रात्रि आठ।
विषय 'विचार और मत करो'। 'माँ, विचार-बुद्धि पर वज्राघात दो।'
उपस्थित राखाल, मणि। — 4 : 9

04-01-84 पौष-शुक्ला-षष्ठी। दक्षिणेश्वर। पञ्चवटी और श्रीरामकृष्ण का कमरा। समय चार से सन्ध्या के पश्चात्।
विषय ईश्वर-लाभ का उपाय। विचार और विश्वास। हिन्दुधर्म सनातन धर्म। ब्राह्मसमाज और चिदाकाश।
उपस्थित राखाल, मणि, हरिपद आदि। — 5 : 13 : 3

05-01-84 पौष-शुक्ला-सप्तमी, अष्टमी। दक्षिणेश्वर। समय एक।
विषय ठाकुर के बेलतले में ध्यान और दर्शन की बातें। चैतन्यदेव के दान की बातें— प्रेमधन-दान। सन्ध्या के बाद ठाकुर की समाधि। जगन्माता के निकट भक्तों के लिए क्रन्दन और भक्तों को आशीर्वाद।
उपस्थित राखाल, मणि, रामलाल, बाबूराम। — 4 : 9 : 3

02-02-84 माघ-शुक्ला-षष्ठी। दक्षिणेश्वर का मन्दिर। समय अपराह्ण 3 बजे से रात 9/10 तक।
विषय ठाकुर के हाथ में चोट और बालक की अवस्था। राखाल, महिमाचरण आदि के साथ बातें। शिवपुर के भक्त और मधु डॉक्टर के साथ बातें। सन्ध्या के पश्चात् अधर, महिमाचरण आदि के साथ बातें। संन्यासी का कठिन नियम। महिमाचरण का शास्त्र-पाठ और ठाकुर की भाव-समाधि। 'नाहं, तुम्हीं चिदानन्द।'
उपस्थित राखाल, लाटु, मास्टर, महिमाचरण, शिवपुर के भक्तगण, मधु डॉक्टर, अधर, हाजरा। — 4 : 10

03-02-84 माघ-शुक्ला-सप्तमी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के बाद।
विषय सुरेन्द्र, राम आदि के साथ बातें। ठाकुर के हाथ की तकलीफ अब भी है। ठाकुर की बालक की अवस्था और सत्य पर निष्ठा।
उपस्थित राम, सुरेन्द्र, मास्टर। — 4 : 10

24-02-84 माघ-कृष्णा-त्रयोदशी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के बाद।
विषय मणिलाल के संग बातें 'तू सच्चिदानन्द'। असुख में ठाकुर अधीर।
उपस्थित राखाल, मास्टर, मणिलाल आदि। — 4 : 11

02-03-84 फाल्गुन-शुक्ला-पञ्चमी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के बाद।
विषय त्रैलोक्य का गान। त्रैलोक्य, नरेन्द्र और सुरेन्द्र के साथ बातें। नरेन्द्र और देह का सुख-दुःख। नरेन्द्र और नास्तिक मत।
उपस्थित नरेन्द्र, सुरेन्द्र, मास्टर, त्रैलोक्य आदि। — 3 : 8

09-03-84 फाल्गुन-शुक्ला-दशमी। दक्षिणेश्वर।
विषय ईश्वर और ऐश्वर्य। साधुसंग और योगी की छवि। भिन्न-भिन्न ध्यान की बातें। पुरुषार्थ द्वारा इन्द्रिय जय। तीन प्रकार की एकादशी। हाजरा की दलाली। प्रदर्शनी की बातें। प्रणव और अनाहत शब्द के सम्बन्ध में बातें।
उपस्थित भवनाथ, मास्टर, मणिमल्लिक, राखाल, लाटु, हरीश, किशोरी, शिवचन्द्र, भगवानदास आदि। — 5 : 14

23-03-84 फाल्गुन-कृष्णा-एकादशी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न।
विषय राम आदि के साथ बातें। श्री मुख-कथित चरितामृत। हलधारी का बाप। नारायण, ठाकुरदादा, महिमाचरण के प्रति उपदेश। ऊर्ध्वरेता और धैर्यरेता।
उपस्थित राखाल, राम, नित्यगोपाल, अधर, मास्टर, महिमा, नाराण, ठाकुरदादा और उनके दो-एक बन्धु, मणिसेन के संगी डॉक्टर आदि। — 4 : 12

05-04-84 चैत्र-शुक्ला-दशमी। दक्षिणेश्वर। प्रातःकाल। समय 8 का।
विषय प्राणकृष्ण के साथ बातें। राम, गिरीन्द्र आदि भक्तों के साथ बातें। केशवसेन और नवविधान। पिता धर्मः, पिता स्वर्गः।
उपस्थित प्राणकृष्ण, मुखर्जी, मास्टर, हठयोगी, राम, गिरीन्द्र, बूढ़े गोपाल आदि। — 2 : 13

24-05-84 ज्येष्ठ-अमावस्या। दक्षिणेश्वर। फलहारिणी अमावस्या। समय 11 बजे से।
विषय विद्यासुन्दर यात्रा वाले को नाना उपदेश। श्रीयुक्त राखाल के प्रति ठाकुर का गोपाल-भाव। गृही भक्तों के प्रति उपदेश। बौद्ध-धर्म की बातें। नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय के प्रति— ईश्वर-दर्शन का उपाय साधुसंग। अवतार-तत्व। ब्राह्मसमाज में माँ का नाम—अधर के प्रति— आगे बढ़ो।
उपस्थित विद्या, हरि, नरेन्द्र, बन्द्योपाध्याय, अधर, मास्टर। — 5 : 15

25-05-84 ज्येष्ठ-शुक्ला-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर। जन्मोत्सव। समय एक बजे से।

विषय पञ्चवटी मूल में सुरेन्द्र, विजय आदि के साथ बातें। भक्तों के संग में संकीर्त्तन और नृत्य। संन्यासी का कठिन व्रत। गोल बरामदे में विजय आदि के साथ बातें।

उपस्थित विजय, केदार, राखाल, सुरेन्द्र, मास्टर, सुरेन्द्र का सबसे छोटा (कनिष्ठ) भाई गिरीन्द्र, नगेन्द्र आदि भ्रातुष्पुत्रगण (भतीजे), सहचरी (कीर्तनी), भवनाथ। — 4 : 13

15-06-84 ज्येष्ठ-कृष्णा-षष्ठी। सुरेन्द्र के बागान में महोत्सव। समय नौ।

विषय भक्तों के संग में संकीर्तन और नृत्य। भवनाथ, मास्टर और निरञ्जन के साथ बातें। गोपी-प्रेम। ब्राह्मसमाज के प्रताप मजुमदार के साथ बातें। विलायत और काञ्चन की पूजा। डुबकी मारो।

उपस्थित भवनाथ, निरञ्जन, राखाल, सुरेन्द्र, राम, मास्टर, महिमाचरण, मणिमल्लिक, ब्राह्मभक्तगण, कीर्तनिये, ब्राह्मभक्त प्रताप आदि — 1 : 10

20-06-84 ज्येष्ठ-कृष्णा-द्वादशी। दक्षिणेश्वर। सन्ध्या के बाद।

विषय मास्टर आदि के प्रति उपदेश। बाबूराम, निरञ्जन, नरेन्द्र आदि के साथ बातें। 'काल ब्रह्म'। ब्रह्मज्ञान और दया।

उपस्थित सुरेन्द्र, भवनाथ, लाटु, मास्टर, अधर आदि। — 4 : 14

25-06-84 आषाढ़-शुक्ला-द्वितीया। श्री रथयात्रा। कलकत्ता में पण्डित-दर्शन। पण्डित शशधर। समय चार का।

विषय ठनठनिया में पण्डित शशधर के प्रति उपदेश। कलि में भक्तियोग; कर्मयोग वा ज्ञानयोग नहीं। नरेन्द्र के साथ बातें।

उपस्थित नरेन्द्र, शशधर पण्डित, मास्टर, हाजरा, राखाल, चैटर्जियों के मकान का मालिक और उनके रिश्तेदार। — 1 : 11

30-06-84 आषाढ़-शुक्ला-सप्तमी। दक्षिणेश्वर।

विषय ठाकुर की भावावस्था और गान। पण्डित शशधर के साथ नाना बातें। वेदान्त। 'ऋषिगण भयतरासे'। कलि में नारदीय भक्ति। सर्व-धर्म-समन्वय।

उपस्थित पण्डित शशधर, सुरेन्द्र, बाबूराम, मास्टर, हरीश, लाटु, हाजरा, मणिमल्लिक, भूधर चैटर्जी और उनका ज्येष्ठ सहोदर (सबसे बड़ा भाई) आदि। — 3 : 9

03-07-84 आषाढ़-शुक्ला-दशमी। पुनर्यात्रा, बलराम-मन्दिर में। मध्ययाह्न पूर्व।

विषय बलराम के पिता आदि भक्तों के साथ बातें। श्रीमुख-कथित चरितामृत। हृदु का लड़का, ठाकुर का भतीजा शिवराम, गौरी, नारायण शास्त्री, माइकल

मधुसूदन के सम्बन्ध में बातें। मनोमोहन, शशधर आदि के साथ बातें। ठाकुर का रथ के सम्मुख भक्तों के संग में नृत्य और संकीर्तन।

उपस्थित राम, मास्टर, बलराम, मनोमोहन, कई एक छोकरे भक्त, बलराम के पिता, विश्वम्भर की बालिका कन्या और उसके समवयस्क (हमउमर) एक-दो लड़के-लड़कियाँ, पण्डित शशधर और उनके बन्धु, प्रताप डॉक्टर, रामदयाल आदि। — 4 : 15

03-08-84 श्रावण-शुक्ला-द्वादशी। दक्षिणेश्वर। समय 2 का।

विषय शिवपुर के भक्तों के प्रति उपदेश। सप्त भूमि। गोपियों का ब्रह्मज्ञान। ठाकुर का गान। समाधि और जगन्माता के साथ बातें। हरिपद, राखाल, बाबूराम, अधर आदि के सम्बन्ध में मणि के साथ बातें। सर्वधर्मसमन्वय— वे अनन्त, पथ भी अनन्त।

उपस्थित राखाल, लाटु, बलराम, अधर, मास्टर, शिवपुर के भक्तगण, नबाई चैतन्य, नरेन्द्र, बाबुराम, निरञ्जन, राम चैटर्जी। — 4 : 16

06-09-84 भाद्र-कृष्णा-प्रतिपदा। अधर का घर।

विषय नरेन्द्र का गान— ठाकुर की मुहुर्मुहु समाधि और नृत्य। कीर्तनिया वैष्णवचरण का गान। नरेन्द्र आदि को दक्षिणेश्वर में निमन्त्रण।

उपस्थित नरेन्द्र, दोनों भाई मुखर्जी, भवनाथ, मास्टर, चुनिलाल, हाजरा, अधर, वैष्णवचरण कीर्तनिया आदि। — 4 : 17

07-09-84 भाद्र-कृष्णा-द्वितीया। दक्षिणेश्वर। समय 11 बजे से।

विषय भवनाथ, बाबूराम, मास्टर आदि के साथ बातें। घोषपाड़ा और कर्त्ताभजाओं का मत। नबाई, महिमाचरण आदि भक्तों के संग में संकीर्तन और नृत्य। अधर को नौकरी के सम्बन्ध में उपदेश। नाराण आदि के लिए चिन्ता।

उपस्थित बाबूराम, मास्टर, भवनाथ, श्रीरामपुर का ब्राह्मण, मनोमोहन। किशोरी, चुनिलाल, हरिपद, मुखर्जी दोनों भाई, हाजरा, रामलाल, राम चक्रवर्ती, महिमाचरण, अधर आदि। — 4 : 18

14-09-84 भाद्र-कृष्णा-दशमी। दक्षिणेश्वर व यदुमल्लिक का बागान। मध्याह्न के बाद से रात तक।

विषय ज्ञानबाबू के प्रति उपदेश। कोन्नगर के साधक के साथ विचार। नरेन्द्र का गान और ठाकुर की समाधि। नरेन्द्र का पोस्ता (बन्द, बैंक) के ऊपर गान। गौरांग का भाव; गाने के बहाने यदुमल्लिक को उपदेश। राखाल के लिए चिन्ता। अधर के साथ बातें।

उपस्थित नरेन्द्र, भवनाथ, कोन्नगर के भक्तगण, मुखर्जी दोनों भाई, ज्ञानबाबू, छोटे

गोपाल, बड़े काली, हाजरा, कोन्नगर का साधक, कोन्नगर का गायक, लाटु, यदुमल्लिक के बागान का दरबान, रतन, भोलानाथ, अधर आदि।

— 4 : 19

19-09-84 भाद्र-अमावस्या। दक्षिणेश्वर। समय 2 बजे से।

विषय — मुखर्जी भाइयों के साथ बातें। काप्तेन की भक्ति। श्रीमुखकथित चरितामृत— ठाकुर की नाना साधें, श्यामबाजार में संकीर्तन। वेद, पुराण और तन्त्र मत से साधना। राखाल का प्रथम भाव। संन्यासी और कामिनी। राधिका गोस्वामी के प्रति उपदेश। जगन्माता के साथ बातें। हाजरा, मुखर्जी, बाबूराम, मास्टर आदि के प्रति उपदेश। ठाकुरबाड़ी के ब्राह्मण और परिचारकगणों के मध्य ठाकुर का भक्ति-दान।

उपस्थित — महेन्द्र मुखर्जी, प्रिय मुखर्जी, बाबूराम, हरीश, किशोरी, लाटु, मास्टर, राधिका गोस्वामी आदि।

— 4 : 20

21-09-84 आश्विन-शुक्ला-द्वितीया। दक्षिणेश्वर और कलकत्ता में स्टार थियेटर में। मध्याह्न और रात्रि।

विषय — चुनिलाल के साथ श्री वृन्दावन और राखाल, नित्यगोपाल आदि की बातें। श्रीमुख-कथित चरितामृत। गढ़ के मैदान में बैलून-दर्शन और राममोहन राय की ब्राह्मसभा के ज्ञानी पागल की कथा। मुखर्जियों के हाथी बागान में मैदे की चक्की पर शुभागमन। बाबूराम, मास्टर आदि के साथ चैतन्यलीला-दर्शन। खड़दाह के नित्यानन्द-वंश के बाबू को देखकर भावावेश।

उपस्थित — मास्टर, राम, महेन्द्र मुखर्जी, चुनि, बाबूराम आदि।

— 2 : 14

26-09-84 आश्विन-शुक्ला-सप्तमी, सप्तमी पूजा के दिन। कलकत्ता में साधारण ब्राह्मसमाज-दर्शन। समय 3 का।

विषय — विजय आदि के प्रति उपेदश। साकार-निराकार। गृहस्थाश्रम और संन्यास। ''सार-असार'' थाका। शिवनाथ और केदार की बातें।

उपस्थित — मास्टर, हाजरा, विजय आदि।

— 2 : 15

28-09-84 आश्विन-महाष्टमी। कलकत्ता में राम का घर। प्रातः।

विषय — विजय, नरेन्द्र आदि के साथ बातें, श्रीमुख-कथित चरितामृत। नरेन्द्र का गाना। ठाकुर का गाना और विजय आदि भक्तों के संग में नृत्य। सन्ध्या के पश्चात् सुरेन्द्र के साथ बातें और रामनाम।

उपस्थित — विजय, केदार, राम, सुरेन्द्र, चुनिलाल, नरेन्द्र, निरञ्जन, नाराण, हरीश, बाबूराम, मास्टर।

— 2 : 16

29-09-84 श्री नवमी-पूजा। दक्षिणेश्वर। प्रातः से सन्ध्या तक।

विषय — प्रातः दुर्गानाम और नृत्य। भवनाथ आदि के साथ बातें। नरेन्द्र का गाना और ठाकुर की समाधि। भवनाथ और ठाकुर का गान और समाधि। अपराह्न में भक्तों के साथ गोलोकनाथ का खेल। नरेन्द्र और भवनाथ आदि के प्रति उपदेश। नरेन्द्र, भवनाथ, मास्टर आदि के संग में संकीर्तन और नृत्य।

उपस्थित — भवनाथ, बाबूराम, निरञ्जन, लाटु, रामलाल, नरेन्द्र, हाजरा, मास्टर आदि।

— 2 : 17

01-10-84 आश्विन-शुक्ला-एकादशी। कलकत्ता में अधर की बाड़ी। अपराह्न और सन्ध्या के पश्चात्।

विषय — अधर की बैठक। नारायण और बाबूराम से केदार और विजय को प्रणाम करने के लिए कहना। वैष्णवचरण का कीर्तन— अभिसार और रास। ठाकुर का गौरांग के भाव में गान। ठाकुर का वैष्णवचरण के साथ दुर्गानाम-गान। केदार और योगेन्द्र के साथ बातें।

उपस्थित — केदार, विजय, अधर, नारायण, गंगाधर, बाबूराम, मणि, योगेन्द्र आदि।

— 2 : 18

02-10-84 आश्विन-शुक्ला-द्वादशी और त्रयोदशी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के पश्चात्।

विषय — मणिलालमल्लिक के साथ बातें। संन्यासी के कठिन नियम। केशव और विजय की बातें। बड़े बाजार के मारवाड़ी भक्तों के प्रति उपदेश। दक्षिणेश्वर-निवासी लड़कों के प्रति उपदेश। गोबिन्दपाल, गोपालसेन, निरञ्जन और हीरानन्द की बातें। सन्ध्या के बाद आरती-दर्शन और भावावेश। प्रियमुखर्जी, महेन्द्र कविराज आदि के प्रति उपदेश।

उपस्थित — लाटु, रामलाल, हरीश, मणिमल्लिक, प्रियमुखर्जी, उनका रिश्तेदार हरि, शिवपुर का एक ब्राह्मभक्त, बड़े बाजार 16 नम्बर मल्लिक-स्ट्रीट के मारवाड़ी भक्त, दक्षिणेश्वर के कई एक लड़के, सींथी के महेन्द्र कविराज, मास्टर, हाजरा आदि।

— 4 : 21

04-10-84 आश्विन-कोजागर-पूर्णिमा। कलुटोले वाले नवीनसेन की बाड़ी। सन्ध्या के पश्चात्।

विषय — ब्राह्मभक्तों के साथ संकीर्त्तन और नृत्य। केशव की माता के निमन्त्रण में।

उपस्थित — नन्दलाल आदि केशव के भतीजे, ब्राह्मभक्तगण, बाबूराम, किशोरी, मास्टर आदि।

— 4 : 21 : 6

05-10-84 आश्विन-कृष्णा-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न।

विषय — हाजरा महाशय का तत्त्वज्ञान का अर्थ। अभ्यागत दो साधुओं के साथ

ठाकुर की बातें। गीता और निष्कामकर्म। श्रीमुख-कथित चरितामृत। संन्यासी का कठिन नियम। मणि के साथ कामिनी की बातें और सर्व-धर्म-समन्वय की बातें। मुखर्जियों के हरि के साथ बातें। देह का लक्षण। नीलकण्ठ और भक्तों के संग संकीर्त्तन और नृत्य।

उपस्थित मास्टर, हाजरा, बड़ा काली, बाबूराम, रामलाल, मुखर्जियों का हरि, दो साधु, नीलकण्ठ और उनके साँगोपांग, दीनानाथ खजांची। — 4 : 22

11-10-84 आश्विन-कृष्णा-सप्तमी। दक्षिणेश्वर। मध्याह्न के पश्चात्।

विषय प्रिय मुखर्जी, नाराण, मास्टर आदि के साथ बातें। सींथी के वेदान्त वागीश के साथ बातें। वेदान्त और आद्याशक्ति। काली-मन्दिर में ईशान मुखोपाध्याय के प्रति उपदेश, श्रीरामकृष्ण और कर्मकाण्ड।

उपस्थित मास्टर, प्रिय मुखर्जी, नाराण, ठाकुरों के घर का शिक्षक और कई लड़के, रामलाल, सींथी का पण्डित, ईशान मुखोपाध्याय, किशोरी, अधर।

— 2 : 19

12-10-84 आश्विन-अमावस्या। श्री कालीपूजा। दक्षिणेश्वर।

विषय ठाकुर माँ का नाम करते-करते मतवाले। राजनारायण के लड़कों के निकट गान। रामलाल की कालीपूजा। कमरे में ठाकुर— समाधिस्थ— बाबूराम, मास्टर, हाजरा आदि के संग में।

उपस्थित मास्टर, बाबूराम, छोटे गोपाल, हरिपद, किशोरी, निरञ्जन का रिश्तेदार लड़का, एंडेदाह का लड़का, रामलाल, राजनारायण के लड़के, हाजरा आदि।

— 2 : 20

19-10-84 कार्त्तिक-शुक्ला-प्रतिपदा। सींथी-ब्राह्मसमाज।

विषय त्रैलोक्य का गान और ठाकुर की समाधि। ब्राह्मभक्तों के प्रति उपदेश। सबजज और त्रैलोक्य के साथ बातें। त्रैलोक्य, विजय आदि ब्राह्मभक्तों के संग संकीर्त्तन और नृत्य। विजय के प्रति उपदेश। जगन्माता की पूजा। माँ।

उपस्थित विजय, त्रैलोक्य, ब्राह्मभक्तगण, सदरवाला (सब-जज), मास्टर, वेणीपाल आदि। — 1 : 12

20-10-84 कार्त्तिक-शुक्ला-प्रतिपदा और शुक्ला-द्वितीया। बड़े बाजार में मारवाड़ी-भक्तमन्दिर में।

विषय पण्डित जी और पण्डित जी के पुत्र के साथ बातें। गृहस्वामी मारवाड़ी के प्रति उपदेश— अन्नकूट महोत्सव और ठाकुर का आनन्द।

उपस्थित मास्टर, छोटेगोपाल, बाबूराम, रामचैटर्जी, मारवाड़ी भक्तगण, पण्डित जी और उनका पुत्र, गृहस्वामी आदि। — 2 : 21

26-10-84 कार्त्तिक-शुक्ला-सप्तमी। दक्षिणेश्वर।

विषय मनोमोहन और महिमाचरण के साथ बातें। यदुमल्लिक के फाटक के पास हृदय से भेंट। केशवसेन, देवेन्द्र ठाकुर व काप्तेन। ॐकार व नित्य लीला योग। हाजरा और मातृसेवा। ईशान।

उपस्थित मनोमोहन, महिमाचरण, मास्टर, ईशान, हृदय, हाजरा, लाटू, कोन्नगर के भक्तगण प्रभृति। — 1 : 13

09-11-84 कार्त्तिक-कृष्णा-सप्तमी। दक्षिणेश्वर। सन्ध्या के बाद।

10-11-84

विषय विजय गोस्वामी के प्रति उपदेश, महिमाचरण के साथ कथा। विजय प्रभृति के साथ संकीर्त्तन और नृत्य। मणि के साथ एकान्त में कथा। **अगले दिन** सोमवार को प्रात:काल मणि को गाने के बहाने उपदेश।

उपस्थित मास्टर, विजय, कुछेक ब्राह्मभक्त, महिमाचरण, नारायण, अधर, छोटे गोपाल, किशोरी, रामलाल प्रभृति। — 3 : 10

14-12-84 अग्रहायण-कृष्णा-द्वादशी। स्टार-थियेटर में प्रह्लाद-चरित्र।

विषय गिरीश आदि को उपदेश। नटियों के प्रति कृपा।

उपस्थित मास्टर, बाबूराम, नारायण, गिरीश, थियेटर की नटियाँ। — 3 : 11

27-12-84 पौष-कृष्णा-दशमी। दक्षिणेश्वर।

विषय पञ्चवटीमूले 'देवी चौधुराणी'-पाठ। पतिव्रता-धर्म।

उपस्थित मास्टर, प्रसन्न, केदार, राम, नित्यगोपाल, तारक, सुरेश मित्र प्रभृति। — 2 : 22

1885

22-02-85 फाल्गुन-शुक्ला-अष्टमी। जन्म-महोत्सव। दक्षिणेश्वर।

विषय नरोत्तम का कीर्तन। नरेन्द्र के घुटनों पर पैर लगाकर समाधि। नरेन्द्र का गान और ठाकुर का भाव। नरेन्द्र को शिक्षा— ज्ञान-अज्ञान के पार होओ। सुरेन्द्र के प्रति गृहस्थ और दानधर्म के उपदेश। गिरीश के साथ अवतार-तत्त्व-विषयक कथा।

उपस्थित नरेन्द्र, भवनाथ, मास्टर, राखाल, सुरेन्द्र, गिरीश, नित्यगोपाल, राम, मणिमल्लिक, महेन्द्र कविराज आदि। — 5 : 16

25-02-85 फाल्गुन-शुक्ला-एकादशी। गिरीश-मन्दिर में। बाद में स्टार थियेटर में वृषकेतु अभिनय-दर्शन।

विषय ज्ञान-भक्ति-समन्वय-कथा। नाना भावों में ईश्वर की पूजा। समाधि-तत्त्व। उपाय— भक्ति। उन्मना समाधि। यतीन्द्र और नरेन्द्र। गिरीश के साथ अवतारवाद-कथा। संसार और लहसुन की गन्ध, कैसे जाए।

उपस्थित गिरीश, नरेन्द्र, यतीन, मास्टर। — 5 : 17

01-03-85 फाल्गुन-पूर्णिमा। दोलयात्रा। दक्षिणेश्वर।

विषय महिमाचरण से हरिभक्ति की कथा। 'मैं' रूपी कुम्भ जाता नहीं। नरेन्द्र के प्रति संन्यास का उपदेश। दोलयात्रा में भक्तों के संग आनन्द। मास्टर के साथ गुह्य कथा। ठाकुर क्या अवतार?

उपस्थित महिमाचरण, राम, मनोमोहन, नबाई, नरेन्द्र आदि। — 2 : 23

07-03-85 फाल्गुन-कृष्णा-सप्तमी। दक्षिणेश्वर-मन्दिर।

विषय हरिपद, बाबूराम आदि के साथ कथा। समाधि। पल्टू, छोटे नरेन, बाबूराम प्रभृति के सम्बन्ध में महावाक्य। गुह्य कथा। अद्‌भुत संन्यास की अवस्था। बेलघर के तारक को कामिनी के सम्बन्ध में सावधान।

उपस्थित बाबूराम, छोटे नरेन, पल्टू, हरिपद, मोहिनीमोहन, जज अनुकूल मुखोपाध्याय के जमाई के भाई, तारक, तारक के बन्धु, मोहिनीमोहन का परिवार आदि। — 3 : 12

11-03-85 फाल्गुन-कृष्णा-दशमी। बसु बलराम-मन्दिर में। परे है गिरीश घोष का घर। मध्याह्न से रात के दस बजे तक।

विषय मास्टर से ऐश्वर्य-त्याग की कथा, बलराम के बैठकखाने में गिरीश, चुनिलाल, बलराम आदि के साथ कथा। तारापद का (चैतन्य-लीला का) गाना; ठाकुर का गाना— माँ का नाम। सन्ध्या के बाद ठाकुर की प्रार्थना। राजपथ और गिरीश का द्वारदेश। नरेन्द्र, गिरीश प्रभृति का अवतार के सम्बन्ध में विचार व ठाकुर की मीमांसा। ठाकुर की समाधि व नरेन्द्र के गान।

उपस्थित नरेन्द्र, गिरीश, बलराम, चुनि, लाटु, मास्टर, नारायण, सुरेश मित्र, तारापद, नित्यगोपाल, हरिपद, राम आदि। — 1 : 14

06-04-85 चैत्र-कृष्णा-सप्तमी। बलराम-मन्दिर में और देवेन्द्र के घर।

विषय बलराम-मन्दिर में मास्टर, पल्टू, विनोद आदि के संग। देवेन्द्र के घर राम, गिरीश, मास्टर आदि के संग। कीर्त्तन व समाधि।

उपस्थित मास्टर, क्षीरोद, पल्टू, विनोद, छोटे नरेन, राम, गिरीश, देवेन्द्र, अक्षय, उपेन्द्र आदि। — 3 : 13

12-04-85 चैत्र-कृष्णा-त्रयोदशी। बलराम-मन्दिर में चड़कपूजा।

विषय श्रीमुख-कथित चरितामृत। गिरीश, मास्टर, बलराम आदि के साथ कथा। ठाकुर का सात्त्विक, राजसिक और तामसिक साधन व नित्यलीला-योग। ठाकुर की महाभाव की अवस्था। सत्यकथा कलियुग की तपस्या। भक्ति का तम और ईश्वर-लाभ। महेन्द्र मुखर्जी को उपदेश। त्रैलोक्य का गान। त्रैलोक्य के साथ गिरीश का विचार। ठाकुर की मीमांसा।

उपस्थित गिरीश, मास्टर, बलराम, छोटे नरेन, पल्टू, द्विज, पूर्ण, महेन्द्र मुखर्जी, त्रैलोक्य, जयगोपाल, ब्राह्मभक्तगण, मुखर्जियों के हरि आदि।

— 3 : 14

24-04-85 वैशाख-शुक्ला-दशमी। गिरीश के कलकत्ता वाले मन्दिर (घर) में। मध्याह्न के बाद।

विषय बलराम के बैठकखाने में मास्टर, योगेन्द्र, बाबूराम, नरेन्द्र आदि के संग कथा। गिरीश का बैठकखाना। महिमाचरण और गिरीश के अवतार के सम्बन्ध में विचार। कीर्त्तन— पूर्वराग। नरेन्द्रादि सांगोपांगों को लेकर ठाकुर का कीर्त्तन और नृत्य। नरेन्द्र के साथ हाजरा की बातें। महिमाचरण और भवनाथ के साथ कथा।

उपस्थित मास्टर, योगीन, बाबूराम, राम, भवनाथ, नरेन्द्र, छोटे नरेन, गिरीश, महिमाचरण, चुनि, बलराम, कीर्त्तनिया। — 2 : 24

09-05-85 वैशाख-कृष्णा-दशमी। बलराम-मन्दिर में।

विषय बलराम का बैठकखाना। हिन्दुस्तानी भिखारी का गाना। नरेन्द्र के साथ हाजरा की कथा। नरेन्द्र, गिरीश, पल्टू, योगीन, मास्टर, भवनाथ प्रभृति के बीच अवतार के सम्बन्ध में विचार। ठाकुर की मीमांसा। पूर्ण को जल पिलाना। नरेन्द्र का गाना। ठाकुर की समाधि व भावावस्था की बात। ब्रह्मज्ञान के बाद भक्ति— भक्तों के निकट ठाकुर का अंगीकार।

उपस्थित नरेन्द्र, मास्टर, भवनाथ, पूर्ण, पल्टू, छोटे नरेन, गिरीश, राम, द्विज, विनोद प्रभृति। — 3 : 15

23-05-85 ज्येष्ठ-शुक्ला-दशमी। राम का घर। अपराह्न पाँच।

विषय राम के घर भक्तों का संवाद-ग्रहण। कीर्त्तन व ठाकुर की समाधि और नित्यगोपाल का भाव। महिमाचरण के साथ बातें।

उपस्थित महिमा चक्रवर्ती, नरेन्द्र , मास्टर, पल्टू, छोटे नरेन, भवनाथ, नित्यगोपाल, हरमोहन प्रभृति। — 3 : 16

13-06-85 ज्येष्ठ-शुक्ला-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर।

विषय पण्डितजी, मास्टर, द्विज आदि के साथ कथा। काप्तेन के गुण-वर्णन।

पुत्रकन्या वियोगजन्य शोक व शोकातुरा ब्राह्मणी। काप्तेन के साथ कथा— कृष्ण-चरित्र। ब्राह्मभक्त जयगोपालसेन व त्रैलोक्य के साथ कथा। आरती के बाद शरत आदि के साथ नरेन्द्र का आगमन और प्रणाम।

उपस्थित पण्डितजी, शोकातुरा ब्राह्मणी, किशोरी, मास्टर, द्विज, अखिल बाबू के पड़ोसी, आसामी लड़के, काप्तेन और उनके लड़के, जयगोपाल, त्रैलोक्य, नरेन्द्र प्रभृति। — 3 : 17

13-07-85 आषाढ़-शुक्ला-प्रतिपदा। बलराम का घर। रथयात्रा।

विषय श्रीमुख-कथित चरितामृत। बलराम, तेजचन्द्र, नारायण, अतुल, रसिक ब्राह्मण आदि के साथ कथा। भूमिकम्प के बाद हरिबाबू को उपदेश। काशी में शिव-दर्शन। शारदा, नरेन्द्र, गोपाल की माँ के साथ कथा। रथयात्रा में नरेन्द्र आदि के संग कीर्त्तन व नृत्य। घर में नरेन्द्र का गान व ठाकुर का नृत्य।

उपस्थित मास्टर, नारायण, तेजचन्द्र, बलराम, कर्त्ताभजा चन्द्र चाटूज्ये, गेरुआ पहने व्यक्ति, अतुल, तेजचन्द्र के भ्राता, रसिक ब्राह्मण प्रभृति। — 4 : 23

14-07-85 आषाढ़-शुक्ला-द्वितीया। बलराम का घर।

विषय सुप्रभात व ठाकुर का मधुर नृत्य व नामकीर्त्तन। बलराम, मास्टर, महेन्द्र मुखुज्ये, गिरीश आदि के साथ कथा।

उपस्थित मास्टर, महेन्द्र मुखुज्ये, हरि बाबू, छोटे नरेन, सारदा, नरेन्द्र, गोपाल की माँ, पूर्ण, नाराण, हरिपद, राम, गिरीश, वैष्णवचरण, कीर्त्तनिया, बनवारी कीर्त्तनिया, गिरीश के एक चश्मा पहने बन्धु, तुलसीराम आदि। — 4 : 23

15-07-85 आषाढ़-शुक्ला-तृतीया। भक्तसंगे गुह्य कथा। — 4 : 23 : 7

28-07-85 (i) आषाढ़-कृष्णा-प्रतिपदा। बलराम-मन्दिर में। नन्दवसु की वाटी। तीन बजे के बाद।

विषय नन्दवसु-वाटी पर ठाकुर का छवि-दर्शन। नन्दवसु और पशुपति।

उपस्थित विनोद, राखाल, मास्टर, छोटे नरेन, नन्दवसु, पशुपति, अतुल, प्रसन्न के पिता आदि। — 3 : 18

(ii) आषाढ़-कृष्णा-प्रतिपदा। शोकातुरा ब्राह्मणी की वाटी। शाम साढ़े पाँच।

विषय ठाकुर का शुभागमन, ब्राह्मणी का भावोल्लास।

उपस्थित ब्राह्मणी और उनकी भगिनी, मास्टर, नारायण, योगीनसेन, देवेन्द्र, योगीन, छोटे नरेन। — 3 : 19 : 1

(iii) आषाढ़-कृष्णा-प्रतिपदा। गणु की माँ की वाटी पर। रात्रि आठ के बाद।

विषय ऐक्यतान वाद्य और लड़कों का गान-श्रवण।

उपस्थित ब्राह्मणी, छोटे नरेन, मास्टर आदि। — 3 : 19: 2

(iv) आषाढ़-कृष्णा-प्रतिपदा। बलराम की वाटी। रात्रि ग्यारह।

विषय मणि के साथ एकान्त में कथा।

उपस्थित बलराम, योगीन, ब्राह्मणी आदि। — 3 : 19 : 3

09-08-85 आषाढ़-कृष्णा-चतुर्दशी। अमावस्या। दक्षिणेश्वर। अपराह्ण 3-4 व रात्रि।

10-08-85

विषय द्विज के पिता के साथ कथा। महिमाचरण, मास्टर आदि के पास ठाकुर मुक्त कण्ठ। राखाल का भाव। अनाहत शब्द और गम्भीर रात्रि। स्वप्न में ईश्वर-दर्शन।

उपस्थित द्विज, द्विज के पिता और भाई, मास्टर, महिमाचरण व उनके दो-एक संगी, राखाल, किशोरी, शोकातुरा ब्राह्मणी आदि। — 4 : 24

11-08-85 श्रावण-शुक्ला-प्रतिपदा। दक्षिणेश्वर।

विषय मौनावलम्बी श्रीरामकृष्ण। मायादर्शन।

उपस्थित राखाल, नारायण, श्री श्री माँ। — 5 : 18 : 1

16-08-85 श्रावण-शुक्ला-षष्ठी। दक्षिणेश्वर।

विषय शशधर पण्डित को उपदेश। ब्रह्म और आद्याशक्ति अभेद। समाधि, भोग और कर्म।

उपस्थित गिरीश, राम, नित्यगोपाल, किशोरी, शशधर तर्क चूड़ामणि प्रभृति। — 5 : 18 : 2

27-08-85 श्रावण-कृष्णा-द्वितीया। दक्षिणेश्वर। अपराह्ण पाँच।

विषय मधु डॉक्टर की चिकित्सा। समाधि और पण्डित श्यामापद के प्रति कृपा।

उपस्थित पण्डित श्यामापद, मास्टर, राखाल, लाटू आदि। — 4 : 25

28-08-85 श्रावण-कृष्णा-तृतीया। दक्षिणेश्वर। प्रात:काल।

विषय मणि के साथ यीशु क्राइस्ट (Jesus Christ) के सम्बन्ध में कथा।

उपस्थित मणि। — 4 : 25 : 2

31-08-85 श्रावण-कृष्णा-षष्ठी। दक्षिणेश्वर। रात्रि।

विषय मास्टर से सुबोध, क्षीरोद, भगवान डॉक्टर और निताई डॉक्टर की कथा।

उपस्थित मास्टर, गंगाधर आदि। — 4 : 26

01-09-85 श्रावण-कृष्णा-अष्टमी। जन्माष्टमी। दक्षिणेश्वर।
विषय गोपाल की माँ का खाना। बलराम के साथ श्यामापद भट्टाचार्य की कथा। कटवा के वैष्णव को उपदेश। (गिरीश का स्तव)। ठाकुर का उपदेश— दो प्रकार के भक्त।
उपस्थित मास्टर, राम, नरेन्द्र, गिरीश, गोपाल की माँ, बलराम, छोटे नरेन, नवगोपाल, कटवा के वैष्णव, राखाल, लाटू, पंजाबी साधु। — 4 : 26

02-09-85 श्रावण-कृष्णा-नवमी। नन्दोत्सव। दक्षिणेश्वर। अपराह्न।
विषय भगवान रुद्र से निज अवस्था-वर्णन।
उपस्थित भगवान रुद्र (एम० डी०), मास्टर, राखाल, लाटू आदि। — 4 : 26

20-09-85 भाद्र-शुक्ला-एकादशी। दक्षिणेश्वर।
विषय रोग क्यों? 'मैं' खोज नहीं पाया।
उपस्थित राखाल डॉक्टर, नवगोपाल, हरलाल, लाटू प्रभृति। — 5 : 18 : 3

24-09-85 भाद्र-पूर्णिमा। दक्षिणेश्वर।
विषय मास्टर को उपदेश। देह खोल।
उपस्थित मास्टर, रामलाल, द्विज के आत्मीय। — 5 : 18 : 3

18-10-85 आश्विन-विजयादशमी। श्यामपुकुर। प्रातः आठ।
विषय सुरेन्द्र के साथ कथा— 'माँ हृदय में रहो'। मणि के साथ श्री भगवद्गीता की कथा। मास्टर के साथ डॉक्टर सरकार, गिरीश व कालीपद की कथा। डॉक्टर सरकार को उपदेश, महावत नारायण। अवतार व सन्तानभाव (Son-ship)। विजया को भक्तों का गले मिलना और ठाकुर की पदधूलि ग्रहण करना। छोटे नरेन के आत्मीय के साथ कथा।
उपस्थित सुरेन्द्र, नवगोपाल, मास्टर, डॉक्टर सरकार, अमृत, हेम, नरेन्द्र, गिरीश, छोटे नरेन व उनके आत्मीय लड़के आदि। — 3 : 20

22-10-85 आश्विन-शुक्ला-चतुर्दशी। श्यामपुकुर। सन्ध्या सात।
विषय ईशान व डॉक्टर सरकार को उपदेश। अवतार-कथा और साईन्स (विज्ञान शास्त्र)। संन्यासी के कठिन नियम।
उपस्थित ईशान, डॉक्टर सरकार, गिरीश, मास्टर आदि। — 1 : 15

23-10-85 आश्विन-कोजागर-पूर्णिमा। मध्याह्न।
विषय छोटे नरेन आदि के साथ कथा। डॉक्टर के घर मणि के साथ डॉक्टर की बातें। श्यामपुकुर के घर में ठाकुर की परमहंस-अवस्था। आनन्द में क्रीड़ा और भयंकरा कालकामिनी-रूप-दर्शन। 'लाग भेल्की'। श्रीमुख-

कथित चरितामृत— जगन्माता के पास प्रार्थना। रामतारण का गाना। छोटे नरेन प्रभृति की भावावस्था। डॉक्टर सरकार के साथ कथा— 'पहाड़ के ऊपर खाल जमि'।

उपस्थित छोटे नरेन, मास्टर, डॉक्टर सरकार, लाटू, शशी, शरत्, पल्टू, भूपति, गिरीश, रामतारण आदि। — 4 : 27

24-10-85 आश्विन-कृष्णा-प्रतिपदा। श्यामपुकुर। एक से सन्ध्या के बाद तक।

विषय डॉक्टर सरकार के साथ कथा— Comparative History, Comparative Anatomy, Comparative Religion, ठाकुर का सर्व-धर्म-समन्वय। नरेन्द्र का गान, सन्ध्या के बाद समाधि। देवेन्द्र आदि के साथ नित्यगोपाल और नरेन्द्र की कथा। जपात् सिद्धिः।

उपस्थित नरेन्द्र, महिमाचरण, मास्टर, डॉक्टर सरकार, नित्यगोपाल, देवेन्द्र, कालीपद प्रभृति। — 4 : 28

25-10-85 आश्विन-कृष्णा-द्वितीया, रविवार, 10वाँ कार्त्तिक। प्रातः साढ़े छः से।

विषय डॉक्टर के घर डॉक्टर सरकार के साथ मास्टर की कथा। मध्याह्न के बाद ठाकुर के साथ डॉक्टर सरकार की बात। विजय, महिमाचरण, नरेन्द्र प्रभृति के साथ कथा। ठाकुर की समाधि। भूपति का स्तव। नरेन्द्र का गान और छोटे नरेन, लाटू, डॉक्टर सरकार आदि का भाव। नरेन्द्र और विजय का ईश्वरीय रूप-दर्शन-कथा।

उपस्थित मास्टर, डॉक्टर सरकार, डॉक्टर के बन्धु, विजय, कुछेक ब्राह्मभक्त, नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र, महिमा चक्रवर्ती, नवगोपाल, भूपति, लाटू प्रभृति। — 1 : 16

26-10-85 आश्विन-कृष्णा-तृतीया, सोमवार, 11 कार्त्तिक। श्यामपुकुर। प्रातः आठ।

विषय डॉक्टर और मास्टर-संवाद। परमहंसदेव व भक्तों के सम्बन्ध में कथा। मध्याह्न के बाद डॉक्टर सरकार से ठाकुर का विचार— मनुष्य क्या स्वाधीन है या ईश्वर कर्त्ता है। अहेतुकी भक्ति।

उपस्थित मास्टर, काली, डॉक्टर, बन्धु, गिरीश, छोटे नरेन, शरत् आदि। — 1 : 17

27-10-85 (i) आश्विन-कृष्णा-चतुर्थी। श्यामपुकुर। समय दस और उसके बाद।

विषय नरेन्द्र को तीव्र वैराग्य और संन्यास का उपदेश। छोटे नरेन के पास ताड़ित् यन्त्र-दर्शन। बागची प्रदत्त 'षड्भुजमूर्त्ति', 'अहल्या पाषाणी' आदि आलेख्य-दर्शन। नरेन्द्र का वैराग्यपूर्ण गान।

उपस्थित नरेन्द्र, मणि, छोटे नरेन, अतुल व उनके बन्धु, मुनसेफ, चित्रकार अन्नदा बागची आदि। — 4 : 29

(ii) आश्विन-कृष्णा-चतुर्थी। श्यामपुकुर। अपराह्ण साढ़े पाँच।

विषय — नरेन्द्र का गान व ठाकुर की समाधि। डॉक्टर सरकार, श्यामबसु, डॉक्टर दोकड़ि, गिरीश, नरेन्द्र आदि का विचार। गुरुपूजा और अवतारवाद।

उपस्थित — नरेन्द्र, डॉक्टर सरकार, श्यामबसु, गिरीश, डॉक्टर दोकड़ी, छोटे नरेन, राखाल, मास्टर आदि। — 1 : 18

29-10-85 आश्विन-कृष्णा-षष्ठी। श्यामपुकुर। वेला दस।

विषय — शांखारिटोला में डॉक्टर की बाड़ी पर उनके साथ ठाकुर के सम्बन्ध में मास्टर की कथा। डॉक्टर सरकार व डॉक्टर भादुड़ि को ठाकुर के उपदेश। सन्ध्या के बाद श्यामबसु आदि को उपदेश।

उपस्थित — डॉक्टर सरकार, मास्टर, डॉक्टर भादुड़ि, छोटे नरेन, श्यामबसु, डॉक्टर दोकड़ि आदि। — 2 : 25

30-10-85 आश्विन-कृष्णा-सप्तमी। श्यामपुकुर। समय नौ और उसके बाद।

विषय — मास्टर के साथ पूर्ण और मणीन्द्र के सम्बन्ध में कथा। डॉक्टर सरकार के घर ठाकुर के सम्बन्ध में कथा। श्यामपुकुर के घर डॉक्टर सरकार को उपदेश। ज्ञानी का ध्यान और अपराह्ण वेला पाँच के बाद अखण्ड-दर्शन के सम्बन्ध में एकान्त में कथा। 'किरणमयी'-लेखक को उपदेश।

उपस्थित — मास्टर, डॉक्टर, छोटे नरेन, प्रताप, नरेन्द्र आदि। — 3 : 21

31-10-85 आश्विर-कृष्णा-अष्टमी, 16 कार्त्तिक। श्यामपुकुर। वेला नौ के बाद।

विषय — हरिवल्लभ के साथ कथा। ईसाई मिश्र को देखकर भावावेश व उनको उपदेश— ठाकुर की समाधि। नरेन्द्र का गान।

उपस्थित — हरिवल्लभ, डॉक्टर सरकार, मास्टर, मिश्र (Quaker) — 4 : 30

06-11-85 आश्विन-अमावस्या। श्यामा-पूजा। श्यामपुकुर। वेला नौ व उसके बाद।

विषय — ठन्ठने की सिद्धेश्वरी का प्रसाद ग्रहण। राम, राखाल, निरञ्जन, कालीपद, मास्टर आदि के साथ कथा। दो बजे के बाद डॉक्टर के साथ कथा। उनको रामप्रसाद और कमलाकान्त के गानों की पुस्तक प्रदान। कालीपद और गिरीश का गान। हरिवल्लभ व अध्यापक नीलमणि को सम्भाषण। रात्रि 7 के बाद जगन्माता की पूजा। ठाकुर की समाधि व भक्तों की पूजा व स्तव।

उपस्थित — मास्टर, राम, राखाल, निरञ्जन, गिरीश, खोका (मणीन्द्र), लाटू, डॉक्टर सरकार, हरिवल्लभ, अध्यापक नीलमणि, शरत्, शशी, चुनिलाल, छोटे नरेन, बिहारी आदि। — 3 : 22

23-12-85 अग्रहायण-कृष्णा-द्वितीया। काशीपुर। प्रातः से ही।
विषय सकाले (प्रातःकाल) प्रेम की छड़ाछड़ि। मास्टर व निरञ्जन के साथ कथा। असुख के गुह्य उद्देश्य। श्रीमुख-कथित चरितामृत। मणि के पास मुक्तकण्ठ।
उपस्थित निरञ्जन, काली, चुनि, शशी, मास्टर, नवगोपाल। — 4 : 13

1886

04-01-86 अग्रहायण-कृष्णा-चतुर्दशी। सोमवार। काशीपुर। चार बजे के बाद।
विषय नरेन्द्र के साथ कथा। नरेन्द्र की ईश्वरजन्य व्याकुलता व तीव्र वैराग्य।
उपस्थित मणि, नरेन्द्र, बूढ़े गोपाल, निरञ्जन, शशि आदि। — 3 : 23

05-01-86 अग्रहायण-अमावस्या, मंगलवार, 22वाँ पौष। काशीपुर। चार बजे के बाद।
विषय मणि के साथ एकान्त में कथा। संसार और नरक-यन्त्रणा। 'वासना को आग देनी होती है'। बन्दोबस्त के लिए नरेन्द्र का घर जाना।
उपस्थित नरेन्द्र, मणि आदि। — 3 : 23

11-03-86 फाल्गुन-शुक्ला-षष्ठी। 28 फाल्गुन, 1292 (बंगला) साल, बृहस्पतिवार। काशीपुर। रात्रि प्रायः आठ।
विषय कालीबाड़ी के मुहर्रिर भोलानाथ से तेल लेने जाना। नरेन्द्र को उपदेश। 'मायावाद शुष्क'। 'नित्य में पहुँचकर लीला में रहना, यही पक्का मत'। महिमाचरण।
उपस्थित नरेन्द्र, शशी, मास्टर, बूढ़े गोपाल, शरत् आदि। — 4 : 32

14-03-86 फाल्गुन-शुक्ला-नवमी। रविवार, दूसरा चैत्र। काशीपुर। सन्ध्या के बाद।
विषय भक्तों की पदसेवा। क्यों असुख-कष्ट सहना?
उपस्थित नरेन्द्र, राखाल, मणि, गिरीश, उपेन्द्र डॉक्टर, नवगोपाल कविराज आदि। — 3 : 24

15-03-86 फाल्गुन-शुक्ला-दशमी। तीसरा चैत्र, सोमवार। काशीपुर। प्रातः 7/8 .
विषय मास्टर, राखाल, नरेन्द्र आदि के साथ कथा। क्यों लीला संवरण? नरेन्द्र को ब्रह्मज्ञान का उपदेश। नरेन्द्र का त्याग व वीरभाव की कथा। भक्तों के पास गुह्य कथा। ठाकुर श्रीरामकृष्ण कौन?
उपस्थित नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, लाटू, सींथी के गोपाल आदि। — 3 : 24

09-04-86 चैत्र शुक्ला-पञ्चमी। काशीपुर। शुक्रवार। वेला 5 के बाद।
विषय सेवक को शरीर की एक चादर और एक जोड़ा चटिजूता लाने का आदेश।

नरेन्द्र के साथ बुद्धदेव की कथा। गुरुकृपा-प्रयोजन। ठाकुर की पाँच प्रकार की समाधि।

उपस्थित नरेन्द्र, काली, निरञ्जन, मास्टर, लाटु, शशि आदि। — 3 : 25

12-04-86 चैत्र-शुक्ला-अष्टमी। चड़क संक्रान्ति। काशीपुर। वेला 5/6 .

विषय बण्टी (दरान्त), हाता (कड़छी), छुरि आदि चड़क की चीजें खरीदने का आदेश। सन्ध्या के बाद फकीर के पास अपराध-भञ्जन-स्तव-पाठ श्रवण। मणि को सफेद पाथरवाटी (पत्थर की कटोरी) लाने का आदेश।

उपस्थित शशी, मणि फकीर, तारक आदि। — 3 : 26

13-04-86 चैत्र-शुक्ला-नवमी। पहला वैशाख, मंगलवार— रामनवमी। काशीपुर। प्रात: 8 के बाद।

विषय राम के साथ पीड़ा की कथा। श्रीनाथ डॉक्टर, हलदार और राखाल के साथ बातें। पगली के सम्बन्ध में शशी और राखाल की बातचीत। नववर्ष के आरम्भ में चरणपूजा और दो छोटी लड़कियों का गाना। स्त्री के सम्बन्ध में नरेन्द्र की विरक्ति। संन्यासी के कठिन नियम। ठाकुर के निकट सुरेन्द्र का उच्छ्वास।

उपस्थित मणि, राम, श्रीनाथ डॉक्टर, डॉक्टर राजेन्द्र दत्त, हलदार, राखाल, शशी, छोटे नरेन, सुरेन्द्र आदि। — 3 : 26

16-04-86 चैत्र-शुक्ला-त्रयोदशी। शुक्रवार। काशीपुर। रात्रि।

विषय गिरीश के प्रति स्नेह और नाना कथा। गृहस्थ में क्या ईश्वर-लाभ होता है? शास्त्र और अवतार।— रामावतार और कृष्णावतार।

उपस्थित गिरीश, मास्टर, लाटू, शशी, बाबूराम, निरञ्जन, राखाल आदि।

— 2 : 26

17-04-86 चैत्र-शुक्ला-चतुर्दशी। शनिवार, 15वाँ वैशाख। काशीपुर। रात्रि।

विषय नरेन्द्र दक्षिणेश्वर से लौटे। भक्तों का ध्यान।

उपस्थित नरेन्द्र, तारक, काली, मणि आदि। — 4 : 33

18-04-86 चैत्र-पूर्णिमा। प्रात:।

विषय मणि के साथ बातें; लड़कियों का लज्जा ही भूषण है। ठाकुर की आत्मपूजा। नरेन्द्र की बौद्ध-धर्म और ईश्वर के अस्तित्व के सम्बन्ध में बातें। ठाकुर की मीमांसा। सुरेन्द्र की सेवा और उसे प्रसाद। पुष्करिणी के घाट पर संकीर्त्तन।

उपस्थित नरेन्द्र, मास्टर, मनोमोहन, शशी, निरञ्जन, डॉक्टर राजेन्द्र, सुरेन्द्र इत्यादि।

— 4 : 33

21-04-86 चैत्र-कृष्णा-तृतीया। बुधवार; 9वाँ वैशाख। काशीपुर।
विषय नरेन्द्र और ईश्वर का अस्तित्व, मणि के साथ बातें। रामलाल की सेवा। पूर्ण का गाड़ी-भाड़ा; सुरेन्द्र का खस-खस का पर्दा।
उपस्थित हीरानन्द, नरेन्द्र, राखाल, मणि, भवनाथ, रामलाल, गोपाल, सुरेन्द्र, राम, एकजन भक्त आदि। — 4 : 33

22-04-86 चैत्र-कृष्णा-चतुर्थी। बृहस्पतिवार। काशीपुर। अपराह्ण।
विषय राखाल, शशी और मास्टर का उद्यान-पथ में पादचारण और ठाकुर के सम्बन्ध में बातें। हालकमरे में डॉक्टर सरकार और डॉक्टर राजेन्द्र के संग कामिनी-काञ्चन के सम्बन्ध में बातें। भवनाथ के प्रति उपदेश। सिन्धुदेश के हीरानन्द के साथ बातचीत। नरेन्द्र का स्तव-पाठ और गान। हीरानन्द और मास्टर के साथ ठाकुर की गुह्य कथा।
उपस्थित राखाल, शशी, मास्टर, डॉक्टर सरकार, राजेन्द्र डॉक्टर, भवनाथ, हीरानन्द आदि। — 2 : 27

23-04-86 चैत्र-कृष्णा-पञ्चमी। Good Friday (गुड फ्राईडे)। काशीपुर। दूसरा पहर।
विषय हीरानन्द का काशीपुर-उद्यान में प्रसाद पाना। ठाकुर की पदसेवा। शाम को नरेन्द्र आदि भक्तों की मजलिस। सुरेन्द्र का अभिमान और ठाकुर की सान्त्वना। ब्राह्मभक्त अमृत के प्रति स्नेह।
उपस्थित हीरानन्द, मास्टर, नरेन्द्र, शरत्, शशी, लाटू, नित्यगोपाल, केदार, गिरीश, राम, सुरेन्द्र, ब्राह्मभक्त अमृत बसु आदि। — 2 : 27 : 5

24-04-86 चैत्र-कृष्णा-षष्ठी। काशीपुर।
विषय भक्त के स्त्री, पुत्र के प्रति स्नेह।
उपस्थित एकजन भक्त और उनकी स्त्री और बच्चा आदि। — 2 : 27 : 7

कथामृत के पाँचों भागों के परिशिष्टों में 1881 से 1887 तक के दैनिक चरित्र

श्रीरामकृष्ण और नरेन्द्र

Vivekananda in America and in Europe.

(विवेकानन्द अमेरिका और यूरोप में) — 5 : परिशिष्ट

01-01-81 दक्षिणेश्वर; ठाकुर का कमरा और पञ्चवटी।
विषय ज्ञानयोग और भक्तियोग की कथा। संकीर्त्तनानन्द; भोगान्त और व्याकुलता।
उपस्थित केशव और उनके शिष्यगण, हृदय। — 5 : परिशिष्ट-ख

जून-जुलाई-81 सुरेन्द्र का मकान। दोपहर दो।
विषय कृष्ण विषयक कथा और सुरेन्द्र का मालात्याग और फिर ग्रहण।
उपस्थित महेन्द्र गोस्वामी, सुरेन्द्र, मनोमोहन, त्रैलोक्य, भोलानाथपाल आदि।
— 5 : परिशिष्ट-ग

15-07-81 केशव के जहाज में— दक्षिणेश्वर से सोमड़ा और प्रत्यागमन।
विषय निराकार ब्रह्म की कथा।
उपस्थित केशव, त्रैलोक्य, गजेन्द्रनारायण, नगेन्द्र प्रभृति। — 5 : परिशिष्ट-च

07-12-81 मनोमोहन का घर।
विषय त्याग की कथा। गृहस्थी और भगवान-लाभ।
उपस्थित केशव, राजेन्द्रमित्र, राम, सुरेन्द्र, मनोमोहन, ईशान (भवानीपुर)
— 5 : परिशिष्ट-घ

10-12-81 मनोमोहन की बाड़ी से राजेन्द्रमित्र की बाड़ी। दोपहर 3 बजे से।
विषय ठाकुर की खड़े हुओं की फोटो लेना, राधाबाजार। गृहस्थ और भगवान-लाभ के उपाय। गुरुभक्ति। ब्राह्मसमाज और डूब देना। ब्रह्म और शक्ति। संकीर्त्तनानन्द में।
उपस्थित राम, मनोमोहन, केशव, राजेन्द्र, डॉक्टर दुकड़ि, शैलजाचरण मुखर्जी।
— 5 : परिशिष्ट-ङ

01-01-82 ज्ञान चौधरी की बाड़ी। शिमुलिया, ब्राह्ममहोत्सव दिवस। समय 5 से।
विषय उपाय साधुसंग। पक्का 'मैं'। केशव के साथ संकीर्त्तनानन्द में नृत्य।

उपस्थित केशव, राम, मनोमोहन, बलराम, नरेन्द्र, राजमोहन, ज्ञान चौधरी, केदार, राखाल, इंदेश के गौरी पण्डित आदि। — 5 : परिशिष्ट–च

06–12–84 अग्रहायण–कृष्णा–चतुर्थी। अधर का घर।
विषय युगल रूप की व्याख्या, 'श्याम, श्याम, श्याम, श्याश्याम श्याम'। प्रचार और आदेश। पाण्डित्य और कामिनी–काञ्चन। आगे ईश्वर; उपाय व्याकुलता।
उपस्थित अधर, बंकिम चैटर्जी, त्रैलोक्य, राखाल, शरत्, सान्याल आदि।
— 5 : परिशिष्ट–क

बराहनगर

21–02–87 फाल्गुन–कृष्णा–चतुर्दशी। शिवरात्रि। बराहनगर मठ। समय 9 से।
विषय तारक और शरत का शिवसंगीत। नरेन्द्र की कामिनी के सम्बन्ध में तीव्र विरक्ति। शशी की नित्यसेवा। मठ के बेलतला पर भक्तों का गीतापाठ और चारप्रहर की शिवपूजा। — 4 : परिशिष्ट

22–02–87 चतुर्दशी और अमावस्या। बराहनगर मठ। भोर।
विषय नरेन्द्रादि मठ के भाइयों का गंगास्नान। शिवरात्रि व्रत के पश्चात् नरेन्द्रादि का पारण (व्रत के पश्चात् का आहार)।
उपस्थित (21 और 22 को) नरेन्द्र, मास्टर, राखाल, तारक, शरत्, शशी, काली, बाबूराम, हरीश, सींथी के गोपाल, सारदा, भूपति आदि।
— 4 : परिशिष्ट

25–03–87 बराहनगर मठ। शुक्रवार। 12वाँ चैत्र।
विषय नरेन्द्र के साथ मास्टर की बातचीत। नरेन्द्र की पूर्वकथा और श्रीरामकृष्ण का प्यार। नरेन्द्र का अखण्ड का घर।
उपस्थित मास्टर, देवेन्द्र, शशी, नरेन्द्र आदि। — 3 : परिशिष्ट

08–04–87 पूर्णिमा। बराहनगर मठ। Good Friday (गुड फ्राईडे)। समय 8 का।
विषय शशी की पूजा। सन्ध्या के पश्चात् बरामदे में नरेन्द्र के साथ मास्टर का वार्तालाप।
उपस्थित मास्टर, नरेन्द्र, राखाल, शशी, बूढ़े गोपाल, हरीश, एक त्यागी भक्त और एक गृही भक्त, निरञ्जन आदि।
— 3 : परिशिष्ट

09–04–87 बराहनगर मठ। मध्याह्न के बाद।

विषय नरेन्द्र के साथ मास्टर की बातचीत। नरेन्द्र की पूर्वकथा। नरेन्द्र के प्रति लोकशिक्षा का आदेश और शक्ति-संचार।

उपस्थित नरेन्द्र, मास्टर आदि।

— 3 : परिशिष्ट

07-05-87 वैशाखी-पूर्णिमा और ज्येष्ठ-कृष्णा-प्रतिपदा। मास्टर की बाड़ी और बराहनगर
08-05-87 मठ।

विषय नरेन्द्रादि भक्तों की ईश्वर के लिए व्याकुलता और अनशन प्रसंग। नरेन्द्र के द्वारा मठ का तत्त्वावधान। सारदा और भवनाथ की बातें। मठ के भक्तों का योगवाशिष्ठ-पाठ। संकीर्त्तनानन्द और नृत्य। नित्यप्रति गंगास्नान और गुरुपूजा। दानवों का कमरा, ठाकुर-मन्दिर और काली तपस्वी का कमरा। शशी के पिता का आगमन। राखाल के साथ मास्टर का वार्तालाप। राखाल का वैराग्य। नरेन्द्र का गुरुगीता-पाठ। नरेन्द्र का सारदा के प्रति उपदेश और गाना। नरेन्द्र का मास्टर के साथ वार्तालाप। नरेन्द्र की काञ्चन में घृणा।

उपस्थित नरेन्द्र, मास्टर, सरत्, राखाल, शशी, प्रसन्न, मठ का भाई और उनका पिता, एकजन भद्रपुरुष, तारक, हरीश, छोटेगोपाल, बूढ़ेगोपाल आदि।

— 2 : परिशिष्ट

09-05-87 ज्येष्ठ-कृष्णा-द्वितीया। बराहनगर मठ। सोमवार। अपराह्ण।

विषय रवीन्द्र का मठ में आगमन। मणि के साथ रवीन्द्र की अकेले में बातें। कलकत्ते से नरेन्द्र, तारक और हरीश का प्रत्यावर्तन। नरेन्द्र का गाने में बहाने से रवीन्द्र को उपदेश।

उपस्थित नरेन्द्र, मास्टर, बूढ़ेगोपाल, रवीन्द्र, तारक, हरीश, शशी, राखाल, प्रसन्न आदि। — 1 : परिशिष्ट

10-05-87 ज्येष्ठ-कृष्णा-तृतीया। बराहनगर मठ। मंगलवार।

विषय जगन्माता की पूजा और तन्त्रमत में होम और बलि। स्नानान्ते नरेन्द्र का गीतापाठ और सुर से स्तवपाठ। 'चिदानन्दरूप: शिवोऽहं'।

उपस्थित नरेन्द्र, मणि, रवीन्द्र आदि। — 1 : परिशिष्ट

व्यक्ति सूची

प्रथमावस्था के भक्तगण

(पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें भागों की सम्मिलित)

(कथामृत-भाग के बाद संख्या के प्रथम अक्षर से खण्ड और दूसरे से परिच्छेद समझें)

सांगोपांगादि भक्तगण

(कथामृत-भाग के बाद संख्या के प्रथम अक्षर से खण्ड और दूसरे से परिच्छेद समझें)

श्री श्री माँ :

तीसरा : आजकल नहबत में हैं 12, 1; काशीपुर बागान में 1ला वैशाख, 1293 बंगला साल (1886 ईसवी), भक्तों का माँ को प्रणाम 26, 2

चौथा : श्री श्री माँ की ठाकुर की सेवा और ठाकुर का उनके प्रति नमस्कार 11, 2;

पाँचवाँ : ठाकुर बात नहीं कर रहे हैं, देखकर रो रही हैं, 18, 1

नरेन्द्र :

पहला : तू क्या कहता है 1, 6; महावत नारायण 1, 6; फुंकार करेगा 1, 6; नित्यसिद्ध, (होमापक्षी) 1, 7; गाना 'चिन्तय मम मानस' और ठाकुर की समाधि 1, 8; तेज बैल 1, 10; केशव के संग जहाज पर घूमने की गल्प सुनाना, 2, 10; गाना और ठाकुर की समाधि 7, 3; शुद्ध ज्ञान और शुद्धा भक्ति एक 7, 5; ईश्वर कोटि, कितने गुण 7, 6; अमृतसागर में डूब देना 10, 7; 11, 3; ईशान की बाड़ी में ठाकुर के संग 11, 1; ईश्वर क्या दयामय 11, 5; अवतार के सम्बन्ध में धारणा 14, 2; उसकी अन्न-चिन्ता 14, 2; 'भालो आछो बाबा' (अच्छे हो बेटे) 14, 5; गिरीश के संग विचार 14, 7; विशिष्टाद्वैतवाद 14, 7; काली का ध्यान 14, 8; ठाकुर का नरेन्द्र की देह पर हाथ फेरना और बाद में समाधि 14, 9; गाना— 'सब दु:ख दूर करिले'— ठाकुर की समाधि 14, 9; ब्रह्म एक-दो के परे, 16, 3; श्यामपुकुर में गाना और ठाकुर का भाव 16, 4; 'मैंने इसे अनेक बार निज देखा है' 16, 5; गाना— 'निबिड़ आँधारे मा गो' और ठाकुर की समाधि 18, 1; 'आग जल गई है' (आगुन ज्वले गेलो) 7, 4; दर्शनशास्त्र पढ़ना शेष होने पर पण्डित मूर्ख बनकर खड़ा रहता है 7, 5; नरेन्द्र किसी की भी Care (परवाह) नहीं करता 7,6 ; गुणवर्णना 14, 3; नरेन्द्र की

बेलघर का तारक :

तीसरा : साधु सावधान 12, 4।

चौथा : समाधि-अवस्था में छाती पर पाँव 23, 2; देखा (दीप) शिखावत् ज्वल-ज्वल करते-करते क्या बाहर निकल गया, उसके पीछे-पीछे 23, 2; मछली के हिसाब से 'मृगेल' 23, 7।

लाटु :

पहला : बलराम-गृह में 14, 1।

दूसरा : 'पान-वान दिया है' 26, 2; संसार घर से एकदम मुक्ति और धेई-धेई नाच 17, 3।

तीसरा : भाव 22, 2; 'नाटो (लाटु) बैठा हुआ है, वे ही जैसे बैठे हुए हैं' 24, 2।

चौथा : शीशी गिरकर टूट गई, 12, 3; नाटो चढ़ा ही रहा 14, 1; अधिक ध्यान करता है, मालूम होता है ? 16, 2; 'यह मिठाई दूँ ?' 18, 5; लालटेन को जला, एकबार चल 19, 4; नाटो गिनने पर इकतीस जन भक्त 31, 2; भक्तों को हरिनाम करने के लिए कहने भेजना 33, 2।

पाँचवाँ : दक्षिणेश्वर-मन्दिर में श्री ठाकुर के चरण तले, 12, 5।

तारक घोषाल (शिवानन्द) :

पहला : खोल बजाने की शिक्षा 9, 1; ठाकुर के रोग के सम्पर्क में 18, 3।

तीसरा : काशीपुर बागान में नरेन्द्र के संग में 26, 1।

चौथा : साधक पिता की सन्तान। ठाकुर का ठोढ़ी पकड़ कर आदर 5, 1; वृन्दावन से लौट आया 18, 2; नरेन्द्र के संग दक्षिणेश्वर में साधन 33, 1।

शरत् :

पहला : श्यामपुकुर के घर में 17, 3।

दूसरा : ठाकुर की चरणधूलि ली 27, 7।

तीसरा : नरेन्द्र के संग में ठाकुर का दर्शन 17, 4।

चौथा : देखा था ऋषि क्राइस्ट के दल में था 31, 2; दक्षिणेश्वर में भोलानाथ मुहर्रिर के पास तेल लेने जाना 32, 1।

पाँचवाँ : अधर के घर परिशिष्ट (क)।

पाँचवाँ : गान 6, 2; गिरीश घोष के साथ आलाप कर लेने पर थियेटर देख सकेंगे 16, 2; 'तो फिर छवि इसे ही दे दूँ' 18, 3।

केशव :

पहला : केशव के लिए माँ के पास रोता था 1, 3; आद्याशक्ति लीला-प्रसंग में 2, 4; चाँदनी में लैक्चर कथा 3, 7; 'तुम आद्याशक्ति को मानो' 6, 2; इसकी पूँछ झड़ गई है 13, 4; 'कितना सरल' 15, 3।

दूसरा : कमलकुटीर में ठाकुर के संग 10, 3; प्रथम दर्शन— आदिसमाज में ध्यानस्थ 19, 2।

तीसरा : 'इसी छोकरे का फाता (मछली पकड़ने की डोरी) डूब गया है' 14, 3; कहा था 'अहं त्याग करना होगा' 17, 4।

चौथा : ठाकुर का केशव की बाड़ी पर नववृन्दावन नाटक-दर्शन की कथा— योग-भोग 3, 1; 'देखा खूब राजसिक' 7, 4; केशव के शरीर-त्याग की कथा 12, 1; 'दोनों (पक्ष) ही रखने गया वैसा कुछ कर पाया नहीं' 13, 4; ठाकुर द्वारा केशव के प्रथम दर्शन की कथा 25, 3; 'माँ, यहाँ मत लाना' 20, 3; बाप भला न हो तो बच्चा ऐसा भक्त होता नहीं 21, 2; केशवबाबू के निकट ऐहिक-लोक-गमन विषयक कथा 22, 4; 'समाधि अवस्था में देखा— केशवसेन और उनका दल' 24, 3; संसार का कामकाज करके फिर ईश्वर-चिन्तन होता है या नहीं 29, 1।

पाँचवाँ : उनके घर श्रीरामकृष्ण 1, 3; ठाकुर की भिन्न-भिन्न-दर्शन की पूर्वकथा 1, 3; उनका असुख और ठाकुर की डाब चीनी की मन्नत 1, 3; Free Will की कथा 3, 2; घुटी में माछ 12, 5; पहले ईसाई-मत चिन्ता 13, 3; अब काली मानते हैं 13, 3; उनको ठाकुर नमस्कार करना सिखाते हैं 15, 4; आंष चुबड़ी (मछली वाली डलिया) 15, 4; यहाँ आता नंगे शरीर, फल हाथ में लेकर 15, 4।

विजय :

पहला : केशव के साथ मिलन 2, 7; कामिनी व दासत्व 4, 4; 'तुमने क्या वासा पकड़ लिया है ?' 8, 3; गुरुवाद 12, 8; ठाकुर के चरण वक्ष पर धारण 16, 3; ढाका में उनको देखा था शरीर छूकर 16, 5।

दूसरा : साधारण ब्राह्मसमाज में ईश्वरीय-कथा-प्रसंग में 15, 1; महाष्टमी-दिवस पर राम के घर ईश्वरीय-कथा प्रसंग में 16, 1; अधर के घर ईश्वरीय-कथा प्रसंग 18, 3।

प्रसन्न (सारदा) :

दूसरा : प्रथम-दर्शन 22, 1।

तीसरा : बच्चे का सा स्वभाव, मेरे सामने नग्न खड़ा हो गया 12, 4।

चौथा : खूब अवस्था हुई है 23, 4; परिशिष्ट : बराहनगर मठ, 1।

हरीश :

दूसरा : खूब कहता है कि यहाँ से सब चैक पास करवाकर ही बैंक से रुपए मिलते हैं 9, 2; महाष्टमी-दिवस पर राम के घर 16, 2।

तीसरा : सोने पर टोकराभर मिट्टी पड़ी है, वह मिट्टी उठा फेंकना 10, 2।

पाँचवाँ : दक्षिणेश्वर में वास कर रहे हैं 12, 5।

आशु (अगरपाड़ा के) :

चौथा : ठाकुर का उपदेश 1, 2।

भूपति :

पहला : ठाकुर का स्तव 16, 3।

चौथा : रोग न होता तो केवल भाड़े पर मकान लेने पर लोग क्या कहते 29, 1।

अतुल :

तीसरा : केदार बाबू (अतुल से)— 'जिस मीटिंग में ईश्वर ने सृष्टि का प्लान (plan) किया था, उस मीटिंग में मैं नहीं था' 18, 2।

चौथा : बलराम-भवन में 23, 2; श्यामपुकुर में 29, 1।

पाँचवाँ : तीव्र वैराग्य चाहिए 17, 2।

नबाई चैतन्य :

दूसरा : गान गा रहे हैं (दोलपूर्णिमा) 23, 3।

चौथा : कीर्त्तन 18, 3।

विनोद :

तीसरा : तुम कैसे हो ? 13, 1।

चौथा : स्त्री-संग 23, 2।

पाँचवाँ : दक्षिणेश्वर में महोत्सव-दिवस पर 16, 1; बाँधा आज होगा, गाना और एक दिन होगा 19, 2।

यज्ञेश्वर (दम्-दम् मास्टर) :

तीसरा : नवजीवन में बंकिम के लेख की कथा 17, 3।

बैकुण्ठ :

पाँचवाँ : परिशिष्ट (क), अधर के घर।

क्षीरोद :

तीसरा : (हरिणचक्षु) पदसेवा करना 13, 1; गंगासागर जाना, कम्बल खरीद देना 23, 3।

चौथा : प्रथम-दर्शन 26, 1।

मणीन्द्र :

तीसरा : प्रकृतिभाव 21, 1; भाव 22, 2।

अक्षय :

तीसरा : ठाकुर की पदसेवा 13, 4।

फकीर :

तीसरा : ठाकुर के सम्मुख अपराधभञ्जन स्तवपाठ 26, 1।

ब्राह्मणी : शोकातुरा—

तीसरा : जन्म-मृत्यु-तत्त्व-कथा 17, 2; ठाकुर को घर ले जाकर महोत्सव 19, 1; काशीपुर में ठाकुर को गान सुनाना 26, 2।

बिहारी :

तीसरा : कालीपूजा-दिवस पर स्तव 22, 3।

वेणीपाल :

पहला : उनके बाग में ठाकुर को लेकर उत्सव 3, 1; अर्थ का सद्व्यवहार 12, 9।

पाँचवाँ : बागान में महोत्सव 5, 1; दक्षिणेश्वर में 11, 1।

उपेन्द्र :

तीसरा : ठाकुर की पदसेवा 13, 4।

कामारहाटी की ब्राह्मणी :

चौथा : तुड़का खूब लगाइयो 23, 4; आनन्द से आँखों से जल पड़ रहा है 26, 2।

योगीन सेन— (कृष्णनगर के) :

तीसरा : शोकातुरा ब्राह्मणी का घर 19, 1।

गणु की माँ :

तीसरा : घर पर ठाकुर, ऐक्यतान वाद्य 19, 2।

दर्शक-भक्तगण

(संख्या के प्रथम अक्षर से कथामृत-भाग, दूसरे से खण्ड और तीसरे से परिच्छेद समझें)

कथामृत के सभी पाँच भागों में बंगला भाग-5 की सूची के और उससे अतिरिक्त गाने

(स्तव, मन्त्र, श्लोकों सहित)

(संख्या के प्रथम अक्षर से कथामृत-भाग, दूसरे से खण्ड और तीसरे से परिच्छेद समझें) ब्रैक्टों में कथामृत-1 के सन् 1998, 2 के 2008, 3 के 2009, 4 के 2010 और 5 के 2011 के संस्करणों की पृष्ठ संख्या भी दी गई है।

---

* दोनों गानों में फर्क

† भाग- 4, 5 में 'गो' के स्थान पर 'ओ' है।

* सम्पूर्ण कीर्तन पृष्ठ 163 से 166 तक।

* कीर्त्तन पृष्ठ 322 से 326 तक

1 पूरा गाना 3-22-2 (335)
2 पृष्ठ 322 से 326 तक कीर्तन का भाग

* कीर्तन पृष्ठ 322 से 326

पड़िये भवसागरे डुबे मा— 5-2-2(27), 5-5-4(63 दो पंक्ति)
पाड़ार लोके गोल करे मा— 5-10-1(129)
पी ले रे अवधूत हो मतवाला— 1-परिशिष्ट-1 (359), 2-परि०-2 (400) अर्थ नहीं है।
प्रसाद बोले मातृभावे— 1-12-9(222 दो पंक्ति)
प्रसाद बोले भक्ति मुक्ति उभय— 2-19-5 (256 दो पंक्ति), 3-7-1 (83 दो पंक्ति)
प्रभु मैं गुलाम, मैं गुलाम, मैं गुलाम तेरा— 2-परिशिष्ट-2 (396)
प्राण भरे आय हरि-हरि बोलि— 3-22-2 (337 दो पंक्ति)
प्रेम गिरि-कन्दरे— 4-12-2(134)
प्रेमधन बिलाय गोरा राय— 4-13-4(156)
पृथ्वीर धुलिते देव मोदेर जनम,— 2-परिशिष्ट-2 (395)

बोलो रे बोलो श्री दुर्गानाम— 2-4-2 (66 अधूरा)*
बोलो रे श्री दुर्गा नाम— 2-17-2 (217 पूरा)
बंशी बाजिलो ओइ विपिने— 1-2-6(63)
बांचलाम सखि, शुनि कृष्णनाम— 4-9-4 (96 एक पंक्ति)
ब्रजेजाइ कांगालवेशे कौपीनदाओ— 4-21-6(316 एक पंक्ति)

भबे आसा खेलते पाशा— 2-2-7 (37 चार पंक्ति), 4-13-1 (148)
भक्तमाल— 2-11-3 (132)
भवदारा भयहरा नाम शुनेछि तोमार— 3-4-2 (53), 4-7-1(49)
भवसिन्धु माझे मन उठछे, डुबछे— 3-18-2 (285 एक पंक्ति)
भाबिले भावेर उदय होय— 3-1-6(22), 4-18-3(224), 5-7-1 (88)
भाव होबे बै कि रे,— 2-18-2 (230), 5-10-1(128 पुराना), 5-11-2(145 दो पंक्ति)
भाव श्रीकान्त नरकान्तकारी रे— 3-11-3 (161), 4-8-1(69 एक पंक्ति)
भावो कि भेवे पराण गेलो— 4-9-4(98 चार पंक्ति), 5-10-1(126)
भावछो कि मन एकला बोसे— 5-3-1(34)
भुवन भुलाइलि मा हरमोहिनी— 3-4-2 (52)
भुवनरञ्जन रूप नदे— 4-17-1(210 तीन-चार पंक्ति)

* मामूली से अन्तर के साथ पूरा गाना कथामृत-2 के पृष्ठ 217 पर

* पृष्ठ 204, 88 पर 6-6 पंक्ति, पृष्ठ 216 पर 10 पंक्ति

* 4-13-1(147) पर 'उड़ाच्चो' है

1 कीर्तन पृष्ठ 162 से 166 तक

2 'सत्यं शिवं सुन्दरं....'(131) के अन्तर्गत भी यही गाना है।

कथामृत के पाँचों भागों में
जिन कथाओं का उल्लेख है

(श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत भाग-V बंगला में दी गई सूची के अनुसार)

(संख्या के प्रथम अक्षर से कथामृत-भाग, दूसरे से खण्ड और तीसरे से परिच्छेद समझें)

एक ही बर्तन से नाना रंगों के कपड़े रंगवाना— 1:15:2; 1:17:2; 5:10:2
आगे बढ़ो— 1:10:6; 2:21:3; 3:1:6; 4:20:3
शव-साधन— 1:4:1
पेड़ पर गिरगिट— 1:3:5; 1:15:2; 2:15:1; 5:10:2
गोपाल गोपाल, केशव केशव— 1:17:3; 4:13:2; 5:परिशिष्ट-क:6
जमीन खोदकर जल लाना— 1:4:3; 4:12:2
चिट्ठी व कुटुम्ब-घर तत्त्व— 1:14:3; 1:16:3; 3:9:2; 4:20:5; 5:16:2
चील के मुँह में माछ— 1:8:3; 5:15:1
ज्ञानी का पुत्रशोक— 1:13:6; 2:7:2
छोटे साँप का मेंढक को पकड़ना— 1:4:5; 3:12:3
पहाड़ पर चींटी का घर— 1:10:7
वनपथ पर तीन चोर— 1:6:2; 4:13:1; 5:5:2
बारह सौ नेड़ा, तरेह सौ नेड़ी— 1:4:4
मेंढक की पुकार— 1:4:6
ब्रह्मचारी व साँप— 1:1:6
महावत नारायण— 1:1:6; 3:20:4; 4:26:2
राम की इच्छा व जुलाहा— 1:13:4; 4:1:2; 5:6:5
स्वाती नक्षत्र का वृष्टि का जल— 1:13:3; 3:17:4
स्वामी (पति) आने का आनन्द— 1:18:2
हालदारपुकुर में बाह्य जाना— 1:2:8; 5:परिशिष्ट-क:2
अन्धों का हाथी-दर्शन— 2:2:5
अकबर से शिक्षा— 2:23:2; 3:10:1
कसाई की गो-हत्या— 2:19:7
कपड़े के खूँट पर रामनाम लिखना— 1:1:7

सम्मतियाँ

7 फरवरी, 1889 को अन्तपुर* से लिखे पत्र में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा :—

"मास्टर महाशय, कोटि-कोटि धन्यवाद। तुमने रामकृष्ण को सही पकड़ा है। ओह, उन्हें बहुत कम जन समझ पाए हैं।"

"मेरा हृदय खुशी से नाच रहा है... और आश्चर्य है कि मैं पागल नहीं हो जाता जब मैं किसी को ठाकुर के सिद्धान्तों में सम्पूर्ण रूप से डूबे हुए देखता हूँ जिनके माध्यम से आने वाले समय में पृथ्वी पर अमृतमय सुखशान्ति की सुखद वर्षा होगी।"

— नरेन्द्र नाथ
(स्वामी विवेकानन्द)

अन्तपुर
7 फरवरी, 1889 ईसवी

अक्तूबर, 1897 — C/o लाला हंसराज, रावलपिण्डी

प्रिय 'म'

अब तुम बिल्कुल ठीक कर रहे हो। लग जाओ भाई! सारा जीवन निद्रा नहीं— समय भागा जा रहा है। शाबाश! यही तो एकमात्र पथ है!

तुम्हारे प्रकाशन के लिए बार-बार धन्यवाद। मुझे बस यही भय है कि इस पैम्फ्लेट से काम नहीं चलेगा। ...कोई बात नहीं, चले या न चले, इसे (कथामृत

* अन्तपुर = हुगली जिले में अन्तपुर एक गाँव है— स्वामी प्रेमानन्द का जन्म स्थान। स्वामीजी, श्री 'म' तथा उनके कई गुरुभाई इस समय अतिथि रूप में स्वामी प्रेमानन्द (बाबूराम) के मकान में ठहरे हुए थे। जब स्वामीजी ने यह पत्र लिखा, उनका मौन व्रत चल रहा था।

को) प्रकाश में आना ही चाहिए। तुम्हें अनेक आशीर्वाद प्राप्त होंगे तथा बहुत अधिक अभिशाप भी— किन्तु वह तो सदा से ही संसार की रीति रही है। यही समय है।''

— विवेकानन्द

❄ ❄ ❄

देहरादून,
24 नवम्बर, 1897

मेरे प्रिय 'म'

आपके दूसरे लीफलैट के लिए बार-बार धन्यवाद। यह वास्तव में विलक्षण है। जो कार्य आपने आरम्भ किया है वह पूर्णरूप से मौलिक है। कभी भी किसी महान शिक्षक का जीवन लेखक की निजी मान्यताओं और पूर्वाग्रहों के स्पर्श से मुक्त होकर इस रूप में जनता के सामने प्रकाशित नहीं हुआ, जैसा कि आप कर रहे हो। भाषा भी प्रशंसातीत है— बहुत ही सरस, हृदय-स्पर्शी, उपयुक्त, सीधी-सादी तथा सरल है। मैं उपयुक्त शब्दावली में व्यक्त नहीं कर सकता कि इससे मैं कितना और कैसे आनन्दित हुआ हूँ। जब भी मैं इसे पढ़ता हूँ, समाधिस्थ हो जाता हूँ। आश्चर्य! नहीं क्या? हमारे गुरु महाराज कितने मौलिक थे! हम में से भी प्रत्येक को मौलिक होना होगा या फिर मिट जाना होगा। अब मैं समझा कि हम में से किसी अन्य ने उनका जीवन-चरित पहले क्यों नहीं लिखा। यह महान कार्य तो आपके लिए ही सुरक्षित था। वे निश्चय ही आपके साथ हैं।

स्नेह तथा नमस्कार सहित,

गुरु महाराज के श्रीचरणों में,
स्वामी विवेकानन्द

पुनश्च: सुकरात के संवादों में तो सर्वत्र प्लेटो छाया हुआ है। परन्तु (ठाकुर के संवादों में) आप बिल्कुल अज्ञात हैं। और फिर नाटकीय अंश तो अतीव सुन्दर हुआ है। सभी ने इसे बहुत सराहा है— यहाँ भी तथा पश्चिम में भी।

— विवेकानन्द

❄ ❄ ❄

श्री गिरीश चन्द्र घोष अपने 22 मार्च, 1900 के पत्र में कहते हैं :—

''यदि मेरी सम्मति का कोई महत्व है तो मैं न केवल स्वामी विवेकानन्द की सम्मति का समर्थन करता हूँ, अपितु उच्च स्वर से और भी कहता हूँ कि कथामृत तो मेरे गत तीन वर्षों की लम्बी बीमारी में मेरे जीवन का आधार ही रही है। इस कार्य के लिए समस्त मानव-जाति अन्त तक तुम्हारे प्रति कृतज्ञ रहेगी।''

❄ ❄ ❄

पहले बेलुड़ मठ और तत्पश्चात मद्रास मठ के स्वामी रामकृष्णानन्द (शशि महाराज) अपने 27 अक्तूबर, 1904 के पत्र में कहते हैं;
''...तुमने ईश्वर के अवतारवरिष्ठ की श्रेष्ठतम ज्ञान-राशि से परिपूर्ण इस अमूल्य ग्रन्थ को प्रकाशित करके समस्त विश्व को अपना ऋणी बना लिया है।''

❄ ❄ ❄

श्री एन० घोष ने कथामृत के सम्बन्ध में 19 मई, 1902 के 'इण्डियन नेशन' नामक पत्र में लिखा— ''श्री म द्वारा रचित श्रीरामकृष्ण कथामृत (भाग I) अत्यधिक मूल्यवान एवं रुचिकर ग्रन्थ है। उन्होंने यह ऐसा कार्य कर दिया है जिसे इससे पहले किसी बंगाली ने तो क्या, जहाँ तक हमें ज्ञात है, किसी भी भारतीय ने नहीं किया है। इतिहास में ऐसा केवल एक बार, बोसवॅल के द्वारा हुआ है। परन्तु वह केवल एक विद्वान, एक सहृदय व्यक्ति का अमर जीवन-चरित है। जबकि यह कथामृत एक साधु के कथनों का उल्लेख है। एक शुद्ध, सच्चे भक्त के दिव्य उपदेशों के समक्ष किसी महान डॉक्टर की सांसारिक बुद्धिमत्ता क्या? इन भक्त के उपदेशों का अमित मूल्य है। कथनों व उपदेशों की बात हम नहीं करते क्योंकि इन गुरु का चरित्र और उनके उपदेश जगत-प्रसिद्ध हैं। ये हमें आध्यात्मिक भूल भुलैया में से न ले जाकर सीधे सच्चाई की ओर ले जाते हैं। इनकी अभिव्यक्ति बाइबल जैसी सहज है। यदि श्री कृष्ण, बुद्ध,यीशु, मोहम्मद, नानक और चैतन्य की समस्त वाणी इसी प्रकार सुरक्षित होती तो जगत को कितना विशाल भण्डार मिलता!''

श्रीरामकृष्ण *[मणि (श्री म) के प्रति]*— योगी का मन सर्वदा ही ईश्वर में रहता है— सर्वदा ही ईश्वर में आत्मस्थ— चक्षु अर्ध निमीलित— आधे बन्द, आधे खुले। देखते ही पता लग जाता है। जैसे पक्षी अण्डे सेता है— पूरा मन उसी अण्डे की ओर होता है। ऊपर नाम मात्र को देखता है। अच्छा, मुझे ऐसी छवि (चित्र) दिखा सकते हो?

मणि— जी, जो आज्ञा। चेष्टा करूँगा यदि कहीं से मिल जाए।

दक्षिणेश्वर— 24 अगस्त, 1882

श्री 'म' के ठाकुर-दर्शन

श्री 'म' (महेन्द्रनाथ गुप्त) ने ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव जी के जितने शुभ-दर्शन लाभ किये उनमें से 174 बार के शुभदर्शनों का वर्णन श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत के मूल बंगला के पाँचों भागों में आता है। श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत (मूल बंगला कथामृत के प्रत्येक शब्द का ज्यों का त्यों हिन्दी अनुवाद) के पाँचों भागों में आए शुभदर्शनों का विवरण पृष्ठत: इस प्रकार है :—

क्र.सं.	दिनांक	भाग	क्र.सं.	दिनांक	पृष्ठ
1.	26-02-1882	प्रथम	20.	19-11-1882	पञ्चम
2.	28-02-1882	प्रथम	21.	26-11-1882	पञ्चम
3.	05-03-1882	प्रथम	22.	12-1882	पञ्चम
4.	06-03-1882	प्रथम	23.	12-1882	पञ्चम
5.	11-03-1882	पञ्चम	24.	14-12-1882	प्रथम
6.	03-1882	पञ्चम	25.	01-01-1883	चतुर्थ
7.	03-1882	पञ्चम	26.	18-02-1883	पञ्चम
8.	02-04-1882	पञ्चम	27.	25-02-1883	चतुर्थ
9.	05-08-1882	तृतीय	28.	09-03-1883	पञ्चम
10.	13-08-1882	पञ्चम	29.	11-03-1883	द्वितीय
11.	24-08-1882	तृतीय	30.	29-03-1883	प्रथम
12.	16-10-1882	द्वितीय	31.	07-04-1883	चतुर्थ
13.	17-10-1882	द्वितीय	32.	08-04-1883	द्वितीय
14.	22-10-1882	तृतीय	33.	15-04-1883	द्वितीय
15.	24-10-1882	तृतीय	34.	22-04-1883	पञ्चम
16.	27-10-1882	प्रथम	35.	02-05-1883	चतुर्थ
17.	28-10-1882	प्रथम	36.	13-05-1883	पञ्चम
18.	15-11-1882	पञ्चम	37.	20-05-1883	पञ्चम
19.	16-11-1882	पञ्चम	38.	27-05-1883	पञ्चम

क्र.सं.	दिनांक	पृष्ठ
39.(a)	02-06-1883	पञ्चम
39.(b)	02-06-1883	द्वितीय
40.	04-06-1883	द्वितीय
41.	05-06-1883	द्वितीय
42.	08-06-1883	चतुर्थ
43.	10-06-1883	पञ्चम
44.	15-06-1883	द्वितीय
45.	17-06-1883	पञ्चम
46.	18-06-1883	चतुर्थ
47.	25-06-1883	पञ्चम
48.	14-07-1883	पञ्चम
49.	21-07-1883	तृतीय
50.	22-07-1883	प्रथम
51.	18-08-1883	पञ्चम
52.	19-08-1883	प्रथम
53.	20-08-1883	तृतीय
54.	07-09-1883	तृतीय
55.	09-09-1883	तृतीय
56.	22-09-1883	पञ्चम
57.	23-09-1883	पञ्चम
58.(a)	26-09-1883	द्वितीय
58.(b)	26-09-1883	पञ्चम
59.	10-10-1883	पञ्चम
60.	16-10-1883	पञ्चम
61.	26-11-1883	प्रथम
62.(a)	28-11-1883	द्वितीय
62.(b)	28-11-1883	प्रथम
63.	09-12-1883	द्वितीय
64.	10-12-1883	द्वितीय

क्र.सं.	दिनांक	पृष्ठ
65.	14-12-1883	द्वितीय
66.	15-12-1883	चतुर्थ
67.	16-12-1883	चतुर्थ
68.	17-12-1883	चतुर्थ
69.	18-12-1883	पञ्चम
70.(a)	19-12-1883	चतुर्थ
70.(b)	19-12-1883	पञ्चम
71.	21-12-1883	पञ्चम
72.	22-12-1883	पञ्चम
73.	23-12-1883	चतुर्थ
74.	24-12-1883	चतुर्थ
75.	25-12-1883	चतुर्थ
76.	26-12-1883	पञ्चम
77.	27-12-1883	तृतीय
78.	29-12-1883	चतुर्थ
79.	30-12-1883	चतुर्थ
80.	31-12-1883	चतुर्थ
81.(a)	02-01-1884	पञ्चम
81.(b)	02-01-1884	चतुर्थ
82.	04-01-1884	पञ्चम
83.	05-01-1884	चतुर्थ
84.	02-02-1884	चतुर्थ
85.	03-02-1884	चतुर्थ
86.	24-02-1884	चतुर्थ
87.	02-03-1884	तृतीय
88.	09-03-1884	पञ्चम
89.	23-03-1884	चतुर्थ
90.	05-04-1884	द्वितीय
91.	24-05-1884	पञ्चम
92.	25-05-1884	चतुर्थ
93.	15-06-1884	प्रथम

क्र.सं.	दिनांक	पृष्ठ	क्र.सं.	दिनांक	पृष्ठ
94.	20-06-1884	चतुर्थ	125.	11-03-1885	प्रथम
95.	25-06-1884	प्रथम	126.	06-04-1885	तृतीय
96.	30-06-1884	तृतीय	127.	12-04-1885	तृतीय
97.	03-07-1884	चतुर्थ	128.	24-04-1885	द्वितीय
98.	03-08-1884	चतुर्थ	129.	09-05-1885	तृतीय
99.	06-09-1884	चतुर्थ	130.	23-05-1885	तृतीय
100.	07-09-1884	चतुर्थ	131.	13-06-1885	तृतीय
101.	14-09-1884	चतुर्थ	132.	13-07-1885	चतुर्थ
102.	19-09-1884	चतुर्थ	133.	14-07-1885	चतुर्थ
103.	21-09-1884	द्वितीय	134.	15-07-1885	चतुर्थ
104.	26-09-1884	द्वितीय	135.(a)	28-07-1885	तृतीय
105.	28-09-1884	द्वितीय	135.(b)	28-07-1885	चतुर्थ
106.	29-09-1884	द्वितीय	136.	09-08-1885	चतुर्थ
107.	01-10-1884	द्वितीय	137.	10-08-1885	चतुर्थ
108.	02-10-1884	चतुर्थ	138.	11-08-1885	पञ्चम
109.	04-10-1884	चतुर्थ	139.	16-08-1885	पञ्चम
110.	05-10-1884	चतुर्थ	140.	27-08-1885	चतुर्थ
111.	11-10-1884	द्वितीय	141.	28-08-1885	चतुर्थ
112.	18-10-1884	द्वितीय	142.	31-08-1885	चतुर्थ
113.	19-10-1884	प्रथम	143.	01-09-1885	चतुर्थ
114.	20-10-1884	द्वितीय	144.	02-09-1885	चतुर्थ
115.	26-10-1884	प्रथम	145.	20-09-1885	पञ्चम
116.	09-11-1884	तृतीय	146.	24-09-1885	पञ्चम
117.	10-11-1884	तृतीय	147.	18-10-1885	तृतीय
118.	06-12-1884	पञ्चम	148.	22-10-1885	प्रथम
119.	14-12-1884	तृतीय	149.	23-10-1885	चतुर्थ
120.	27-12-1884	द्वितीय	150.	24-10-1885	चतुर्थ
121.	22-02-1885	पञ्चम	151.	25-10-1885	प्रथम
122.	25-02-1885	पञ्चम	152.	26-10-1885	प्रथम
123.	01-03-1885	द्वितीय	153.(a)	27-10-1885	चतुर्थ
124.	07-03-1885	तृतीय	153.(b)	27-10-1885	प्रथम

श्री 'म' ट्रस्ट के प्रकाशन

1. श्री म दर्शन

बंगला संस्करण— भाग 1 से 16— स्वामी नित्यात्मानन्द

श्री म दर्शन महाकाव्य में ठाकुर, माँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द तथा अन्यान्य संन्यासी एवं गृही भक्तों के विषय में नूतन वार्ताएँ हैं। और इसमें है कथामृतकार श्री 'म' द्वारा 'कथामृत' के भाष्य के साथ-साथ उपनिषद्, गीता, चण्डी, पुराण, तन्त्र, बाईबल, कुरान आदि की अभिनव सरल व्याख्या।

2. श्री म दर्शन

हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 16

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता द्वारा बंगला से यथावत् हिन्दी-अनुवाद।

3. श्री म दर्शन

अंग्रेज़ी संस्करण— ('M'— The Apostle and the Evangelist)

श्री 'म' दर्शन ग्रन्थमाला का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता ने 'M'— The Apostle and the Evangelist नाम से किया है। ट्रस्ट के पास प्रथम ग्यारह भाग तो उपलब्ध भी हैं। शेष पाँच भाग अभी मुद्रण-प्रकाशन-प्रक्रिया में हैं।

4. Sri Sri Ramakrishna Kathamrita Centenary Memorial

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता और पद्मश्री डी०के० सेनगुप्ता द्वारा अंग्रेज़ी में सम्पादित वृहद् ग्रन्थ, जिसमें ठाकुर श्रीरामकृष्ण, 'कथामृत', श्री 'म' और 'श्री म दर्शन' पर श्रीरामकृष्ण मिशन के संन्यासियों समेत अनेक गणमान्य विद्वानों के शोधपूर्ण लेख हैं।

5. A Short Life of Sri 'M'

स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के मन्त्र-शिष्य और श्री म ट्रस्ट के फाऊँडर सैक्रेट्री प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा अंग्रेज़ी में लिखी गई श्री म की संक्षिप्त जीवनी।

6. **Life of M. and Sri Sri Ramakrishna Kathamrita**

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा लिखित श्री म के जीवन तथा 'कथामृत' पर शोध प्रबन्ध

7. **श्री श्री रामकृष्ण कथामृत**

हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 5

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त ने ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के श्रीमुख-कथित चरितामृत को अवलम्बन करके ठाकुरबाड़ी (कथामृत भवन), कोलकता-700 006 से 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' का (बंगला में) पाँच भागों में प्रणयन एवं प्रकाशन किया था।

इनका बंगला से यथावत् हिन्दी अनुवाद करने में श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने भाषा-भाव-शैली— सभी को ऐसे सरल और सहज रूप में संजोया है कि अनुवाद होते हुए भी यह ग्रन्थमाला मूल बंगला का रसास्वादन कराती है।

8. **Sri Sri Ramakrishna Kathamrita**

English Edition

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के हिन्दी-अनुवाद से प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा कथामृत का अंग्रेज़ी-अनुवाद। चार भाग प्रकाश में आ चुके हैं। पाँचवाँ भाग प्रकाशनाधीन है।

9. **नूपुर**

वार्षिक स्मारिका

श्री म ट्रस्ट के संस्थापक और हम सब के पूजनीय गुरु महाराज स्वामी नित्यात्मानन्द जी के 101वें जन्मदिन पर उनकी स्मृति में 'नूपुर' नाम से सन् 1994 ईसवी में एक स्मारिका का प्रकाशन हुआ था। उसी स्मारिका ने अब वार्षिक पत्रिका का रूप ले लिया है, जिसमें

अन्य बातों के अतिरिक्त ठाकुर रामकृष्ण परमहंस, माँ सारदा, श्री म, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी नित्यात्मानन्द, 'श्री म दर्शन' आदि के बारे में प्रचुर सामग्री रहती हैं। साथ ही कथामृतकार श्री म के द्वारा 'श्री म दर्शन' में कही उन बातों को भी प्रकाश में लाया जाता है, जो 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' में नहीं हैं।

❖